व
न्दे
मा
त
र
म्

रवीन्द्र नाथ बहोरे 'अज्ञात'

व न्दे मा त र म्

रवीन्द्र नाथ बहोरे 'अज्ञात'

श्री 'अज्ञात' की अन्य कृतियाँ :–

बहती नदियाँ जलते किनारे

क़ैदी और ज़ंजीरें

महल और खण्डहर

राख का ढेर

यह बस्ती है शहीदों की

अप्रकाशित ग्रन्थ :–

नर पिशाच ड्रैकुला (अनूदित उपन्यास)

कहानी व उपन्यास कला

नारी समाज का मनोवैज्ञानिक विवेचन

वन्देमातरम

[स्वतंत्रता के महान् सेनानी नेताजी सुभाष चन्द्र बोस द्वारा संगठित आजाद हिन्द फौज पर आधारित एक क्रांतिकारी राष्ट्रीय उपन्यास]

रवीन्द्र नाथ बहोरे 'अज्ञात'

मंजु प्रकाशन

चौपटिया रोड

लखनऊ—३

आवरणकार : बी० के० मित्रा

मूल्य : १२ रुपये मात्र

प्रथम संस्करण : १ जनवरी १९६७

प्रकाशक : रमाकान्त त्रिपाठी,
मंजु प्रकाशन, ७६ चौपटिया रोड,
लखनऊ –३ ।

मुद्रक : वर्मा प्रिंटिंग प्रेस,
गंगा प्रसाद रोड, लखनऊ ।
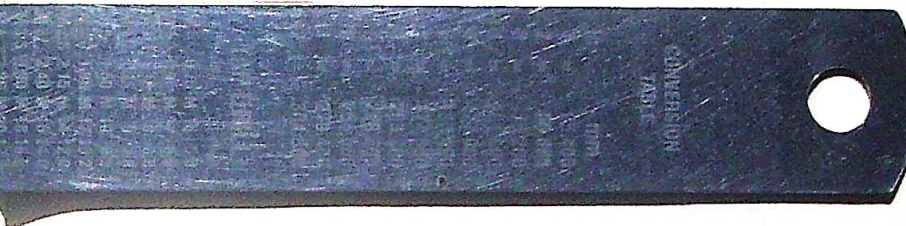
स्नेहमयी बहन बीना और भाभी कमल को ही

सुजलां सुफलां मलयज शीतलाम्,
शस्य श्यामलां मातरम्,
शुभ्र ज्योत्सनां पुलकित यामिनीम्,
फुल्ल कुसुमित द्रुम-दल शोभनीम्,
सुहासिनीं सुमधुर सुभाषिणीम्,
सुखदां वरदां मातरम् ।
वन्देमातरम् !

— बङ्किम चन्द्र चट्टोपाध्याय ।

१

सन् १९४२ !

दिसम्बर का महीना !

स्वतन्त्रता का आन्दोलन अपने पूरे यौवन पर था। देश के कोने-कोने में अपनी मातृभूमि, गौरवपूर्ण भारत, की स्वतन्त्रता की अग्नि ने प्रचण्ड रूप धारण कर लिया था। भगत सिंह का विद्रोह और उसकी फाँसी का चित्र भारतवासियों के सामने हर समय नाच रहा था। भगत सिंह की लगाई हुई चिन्गारी ने इस समय भयंकर रूप धारण कर लिया था। अंग्रेज बुरी तरह से घबराये हुये थे, क्योंकि आन्दोलन दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा था और बढ़कर उसने एक महान् सशस्त्र क्रांति का रूप ले लिया था—नाम था 'अगस्त-आन्दोलन' ! एक तरफ महात्मा गाँधी थे, तो दूसरी तरफ नेताजी सुभाष चन्द्र बोस !

एक नरम-दल के नेता थे, तो दूसरे गर्म-दल के !

एक यदि अहिंसा से स्वराज्य चाहता था, तो दूसरा बलपूर्वक !

मगर फिर भी चाहते दोनों ही स्वराज्य थे। आजादी के दीवाने जो ठहरे !

क्या बच्चा, क्या जवान, क्या बूढ़ा और क्या स्त्री-पुरुष ! सभी इस समय आजादी के दीवाने हो रहे थे। वे आजादी चाहते थे और उसे

पाने के लिये वे हर तरह की क़ुर्बानी देने को तैयार थे। वे इस समय सब कुछ भूल गये थे—खाना-पीना, ऊँच-नीच, छूत-अछूत !

अगस्त सन् '४२ की सशस्त्र क्रांति से सारा देश जाग उठा था। देश की रगों में बहने वाला रक्त आज उबला पड़ रहा था। आज वह सारे भेद-भाव भूल कर एक हो चुका था।

इन्सानों का मजहब एक हो गया था........।

मन्दिर-मस्जिद एक हो गये थे........।

हिंदू-मुस्लिम एक हो गये थे .....।

इन्सान एक था........।

सब जगह एक ही नारा बुलन्द होता था—वन्देमातरम् !

वे इस समय एक थे........

उनके विचार एक थे ....

उनका जाति-धर्म एक था........

उनका नारा भी एक था—

"'हिन्दोस्तान हमारा है !"........"भारत-छोड़ो !" .... "हमें आज़ादी चाहिए !"........ "भारत माता की जय !" .... "आज़ादी लेकर रहेंगे !".... ...... "आज़ाद-हिन्द-फ़ौज ज़िन्दाबाद !"............ "इन्क़लाब-जिन्दाबाद !!"

आज वह आज़ादी के लिये मरना चाहते थे ! वह भारत को आज़ाद जो देखना चाहते थे !!

ऐसी ही थी वह रात........

दिसम्बर की रात ! कुहासे और अँधियारे से भरी रात थी। ठंडक इतनी कि दाँत बज रहे थे।

ऐसी भयानक रात और मसवापुर का बड़ा-सा वीरान स्टेशन !

मसवापुर स्टेशन पर चार प्लेटफार्म हैं, जो इस समय सुनसान

नजर आ रहे थे लेकिन फिर भी उन पर दिन की-सी रोशनी छाई हुई थी। चारों ओर कुली और मुसाफिर अपने-अपने कम्बलों में लिपटे पड़े थे। लेकिन उस भयावह, कड़कड़ाती रात में भी एक बेंच पर दो व्यक्ति खद्दर के कुर्त्ते और धोती में बैठे थे। उनके सिरों पर खद्दर की ही टोपी शोभित थी। वे दोनों बातों में लगे हुए थे। अचानक स्टेशन का घंटा बोला—"टन् !"—और साथ ही ट्रेन की सीटी उस वीरान वातावरण में गूँज गई। सारा स्टेशन गूँज गया। कुली हड़बड़ाकर जाग उठे। वे दोनों व्यक्ति भी बेंच से उठकर टहलने लगे। वे दोनों ही लगभग तीस वर्ष के समवयस्क और एक ही क़द के थे। एक बोला—

"शायद, गाड़ी आ रही है ?"

"हाँ कमल, अब तुम जाओ।" दूसरे ने उत्तर दिया।

"मैं तो चला ही जाऊँगा, गोपाल भय्या।" हँसकर कमल नामक व्यक्ति ने कहा।

"वह तो ठीक है। लेकिन कमल, मैं तुम्हें किसी की निगाह में नहीं चढ़ने देना चाहता, क्योंकि तुम्हारे ऊपर ही पूरी पार्टी की……"

"आप अधीर न हों गोपाल भय्या, मैं अपने 'घर' की रक्षा में कोई कसर नहीं उठा रक्खूंगा।" कमल ने आश्वासन दिया—"हाँ, आप वापस कब आ रहे हैं ?"

"अभी कुछ कह नहीं सकता। शायद, दो-चार दिन रुकना पड़ जाये।"

"ठीक है, मैं संभाल लूँगा। आप इस चीज से निशाखातिर रहें।"

"मुझे तुमसे यही आशा थी कमल……और हाँ, देखो, कल रात ……भूल मत जाना !"

"नहीं-नहीं गोपाल भय्या, यह कैसे हो सकता है ?" कहते हुए कमल की दृष्टि पूर्वांचल की ओर उठ गई जहाँ ट्रेन की रोशनी साफ़

झलक रही थी। कमल ने गोपाल के गम्भीर चेहरे की ओर ताकते हुए कहा—

"अच्छा गोपाल भय्या, आपकी गाड़ी तो आ गई।"

"हां, अब तुम जाओ।"

"अच्छा गोपाल भय्या, जयहिन्द !"

"जयहिन्द !"

प्रत्युत्तर पाकर कमल तेज़ी से स्टेशन के फ़ाटक की ओर बढ़ गया और गोपाल ट्रेन की प्रतीक्षा में पुनः टहलने लगा।

ट्रेन आकर प्लेटफ़ार्म पर हाँफती हुई ठिठककर रुक गई और गोपाल प्रथम-श्रेणी के डिब्बे में जाकर आराम से बैठ गया।

पूर्वांचल में प्रातःकालीन श्वेती व्याप्त हो चुकी थी। सूर्य ने अपनी स्वर्णिम किरणों द्वारा सम्पूर्ण विश्व को आलोकित कर, आच्छादित कर दिया था।

गोपाल कम्पार्टमेण्ट में बैठा अपने भाषण के विषय में सोच रहा था, जो उसे कानपुर में देना था। सोचते-सोचते अचानक उसकी दृष्टि सामने सीट की ओर उठ गई जिस पर एक नवयौवना स्त्री सो रही थी। उसका रूपाकर्षण बार-बार गोपाल को अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। गोपाल के उस कम्पार्टमेण्ट में चढ़ने के पहले से ही 'वह' वहाँ पर सो रही थी। गोपाल को स्वतः अपने ऊपर झुंझलाहट हो रही थी कि वह बेकार क्यों उसकी ओर देखता है ? जबकि उसे 'उससे' कोई सारोकार नहीं था; कोई मतलब नहीं था। वह उसके जान-पहचान की भी न थी, और नहीं उसे गोपाल ने पहले कभी देखा था।

अचानक गाड़ी एक सिसकता हुआ झटका देकर रुक गई, जिसकी वजह से उस नवयुवती की आँख खुल गई। गोपाल उस समय बाहर

देख रहा था। उस नवयुवती ने चारों ओर से बेखबर हो एक घातक अँगड़ाई ली और उठकर बैठ गई।

"कोई स्टेशन है क्या ?" उस युवती ने उनींदे स्वर में पूछा।

"...... ."

"क्यों मिस्टर, कोई स्टेशन है, क्या ?" उसने दुबारा प्रश्न किया।

"जी·······जी हाँ !" सिर अन्दर करते हुये गोपाल ने उत्तर दिया।

"कौन-सा ?" गोपाल की इस हड़बड़ाहट से उसके होंठों पर मुस्कुराहट आ गई।

"मालूम नहीं !"

"कानपुर यहाँ से कितनी दूर होगा ?"

"अगले चार स्टेशन बाद·······"

"हूँ ! आप कदाचित कानपुर जा रहे हैं ?"

"जी हाँ, आपको कैसे मालूम ?" गोपाल का दिमाग एक क्षण के लिए घूम गया।

"अरे, आप तो घबरा गये ! ·······इस बात को तो लगभग हर व्यक्ति जानता है कि आज के चौथे दिन वहाँ एक बहुत बड़ा सम्मेलन होगा जिसमें मुख्यत: मसवापुर के प्रसिद्ध नेता श्री गोपालदास जी का भाषण होगा और वही उसकी अध्यक्षता भी करेंगे।"

"ओह, तो आप सब जानती हैं ?"

"जी हाँ, और यह भी जानती हूँ, जैसा कि आपकी वेशभूषा बता रही है, कि आप क्रांतिकारी दल से सम्बन्धित हैं·······"

"आप कहाँ जा रही हैं ?" बात टालने की गरज़ से गोपाल ने बात बदल दी।

"वहीं भाग लेने।" युवती ने अत्यन्त सरल शब्दों में, एक मधुर मुस्कान बिखेरते हुए, कह दिया।

"तो क्या आप भी ·····"

"जी हाँ, आपने कुमारी आशा मेहरोत्रा का नाम सुना होगा।"

"सुना तो बहुत है मगर दर्शन का सौभाग्य अब तक नहीं प्राप्त हुआ।"

"क्या अब भी नहीं ?"

"तो ......तो क्या आप ही......"

"जी हाँ, गोपाल जी !" आशा की मुस्कुराहट खिलखिलाहट में बदल गई।

"आपको मेरा नाम......"

"मैंने आपकी फ़ोटो कई बार अखबारों में देखी है। मैंने तो आपको पहले ही पहचान लिया था।"

"चलो अच्छा ही हुआ, ईश्वर-जो करता है ठीक ही करता है।"

इसी प्रकार दोनों में बातें होने लगीं। समय का पता ही न चला कि कब दस बजे और कब गाड़ी ने कानपुर में प्रवेश किया ? जब गाड़ी कानपुर के स्टेशन पर रुकी तो दोनों को होश आया कि उन लोगों को उतरना भी है। आशा स्टेशन पर उतर गई और गोपाल सामान उतरवाने में मदद करने लगा। अभी वह वहाँ से हटकर प्लेटफार्म पर आया ही था कि एक अंग्रेज अफ़सर दौड़ता हुआ पीछे से आया और गोपाल को धक्का देकर कम्पार्टमेन्ट में घुसने लगा। धक्के के कारण गोपाल फ़र्श पर गिर पड़ा और उसकी टोपी आगे जा गिरी। गोपाल की लाल-अंगारे सदृश आँखें जो ऊपर उठीं तो उन्होंने देखा कि वह अफ़सर टोपी पर जूते रखे उसे मसलता हुआ कह रहा था—

"व्हाट आर यू ? इंडियन मैन......ब्लैक डाग......तुम देख कर नाईं खड़े होने कों सकता ?......यू स्टूपिड......"

उस अफ़सर की आँखों में घृणा को नाचते देख गोपाल का खून खौल उठा। उसकी धमनियों में रक्त प्रवाह तीव्र हो गया और उसकी आँखें अपमान से दहक उठीं।

दूसरे ही क्षण गोपाल ने उसकी कालरों को पकड़कर एक घूंसा

उसकी कनपटी पर मारा। चोट लगते ही वह अंग्रेज बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा

"तड़ाक् !"

"तड़ाक् ....धम् ! ....धम् !!"

मशीन की भाँति गोपाल के पैर चल रहे थे और जूतों में लगी नालों के द्वारा उसका सिर लहू लुहान हो उठा था, पर गोपाल के हाथ पैरों की फुर्ती कम न हुई। चारों ओर कोहराम मच गया। आनन-फ़ानन में पुलिस को टेलीफ़ोन खड़कने लगे। पुलिस का नाम सुनते ही प्लेटफ़ार्म पर उपस्थित लोगों के पसीने छूट गये। लेकिन वे वहाँ से हिल न सके बस चुपचाप तमाशा देखते रहे।

गोपाल लगातार जूते मारता ही चला जा रहा था। एक स्थान पर वह रुका और उसने स्तब्ध खड़ी आशा को आँख से कुछ संकेत किया जिससे वह तुरन्त ही भीड़ में गायब हो गई। थोड़ी ही देर में वहाँ सहस्त्रों की संख्या में ब्रिटिश सेना के सिपाही एकत्र हो गये और गोपाल पकड़ लिया गया। वह गिरफ़्तार हो गया ! लेकिन अब हो भी क्या सकता था—'अब पछताए होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत !'

यानी पुलिस के आने के पूर्व ही वह अंग्रेज अफ़सर मर चुका था और रह गई थी, केवल उस अंग्रेज की लाश !

पर वहाँ तो लाश भी नहीं थी........

वहाँ थे, माँस के नुचे हुए लोथड़े ! जो चीख-चीखकर कह रहे थे—'भारतीय आन के प्यारे होते हैं, जान के नहीं !' जिसका जीवित प्रमाण गोपाल और उस अंग्रेज आफ़िसर की लाश थी।

गोपाल का संकेत पाते ही आशा वहाँ से नौ-दो-ग्यारह हो गई। उसकी घबड़ाहट बहुत तीव्र हो उठी थी, जो उसकी गौरांग आकृति से प्रकट हो रही थी। उस समय तो वह पूर्णतया घबरा गई थी जिस

समय गोपाल विदेशी शासक के उस गुर्गे को जूतों से पीट रहा था।

अत्यधिक तीव्रता से वह स्टेशन के बाहर निकली। रास्ते में वह कई स्थान पर लोगों से टकराते-टकराते बची। किसी ने 'अन्धी' की उपाधि दी, तो किसी ने भूखी निगाहों से ताका और किसी ने राय दी 'सम्हल कर चलो बेटी!' किसी ने उसे कुछ कहा तो किसी ने कुछ।

लेकिन आशा........

वह तो बेतहाशा भाग रही थी।

उसे किसी के कुछ भी कहने की चिन्ता न थी........

यदि कोई चिंता थी तो एक ?

गोपाल ?

वह सीधे बाहर आकर रुकी। उसकी दृष्टि किसी को खोज रही थी। अचानक एक कार को देखकर उसने शांति की साँस ली और बहुत तेज़ी से कार की ओर बढ़ गई। ड्राइवर कदाचित् उसे पहचानता था, अतः उसने तपाक से कार का द्वार सम्मानपूर्वक खोल दिया। वह बिना कुछ कहे-सुने ही कार में पीछे की सीट पर निढाल होकर पड़ गई! ड्राइवर उसकी आकृति देखते ही समझ गया कि जरूर कुछ-न-कुछ गड़बड़ी हुई है, अतः वह भी चुपचाप अपनी सीट पर बैठ गया और कार बिना आवाज़ किये आगे बढ़ गई।

कार के अन्दर बैठी आशा का मन बुरी तरह से अस्थिर था। उसका मस्तिष्क इस समय विचारों के भँवर में फंसा हुआ था। वह सोच रही थी—"अब वहाँ क्या हो रहा होगा ? शायद अब तक पुलिस आ गई हो और गोपाल पकड़ लिया गया हो........या हो सकता है कि अभी पुलिस ही न आई हो।" उसके मन ने स्वतः प्रश्न का उत्तर दे दिया।

"पुलिस अब तक अवश्य ही पहुंच गयी होगी, क्योंकि यह ऐसी बात है जो आग की तरह फैल गई होगी। और 'वह' अवश्य पकड़ लिया गया होगा।"

"मालूम नहीं, उस अंग्रेज का क्या हुआ ?" दूसरा प्रश्न उभरा।

"मर गया होगा —और क्या ?" उत्तर में लापरवाही थी।

"सम्भव है, बच गया हो !"

"असम्भव ! तुमने देखा नहीं था कि गोपाल कितनी तेजी से उसके चेहरे को तोड़ रहा था।"

"तो ···तो····क्या····?"

"हाँ, अब तक तो वह मर भी गया होगा !"

"अब क्या होगा ?"

इस प्रश्न का उत्तर सोचते ही वह सिर से पैर तक काँप गई, क्योंकि इस प्रश्न का एक ही उत्तर था—फाँसी !

"नहीं-नहीं !"

आशा एकदम से चीख पड़ी और स्वयं ही आश्चर्य करने लगी कि क्या वह स्वप्न देख रही थी—एक जागृत-स्वप्न ? इसका उत्तर भी उसे तुरन्त प्रश्न रूप में मिल गया—

"क्या हुआ, बहन जी ?"

"कुछ नहीं, यूँ ही तबियत ठीक नहीं है।" आशा ने टाल दिया।

"अच्छा।"

कहकर ड्राइवर भी आशा की अनिच्छा समझकर चुप हो गया। उसे ज्यादा पूछने का अधिकार भी तो नहीं था, ड्राइवर जो ठहरा। आशा कार के बाहर देख रही थी। कार कानपुर के रंगीन बाजार 'माल-रोड' से होकर गुज़र रही थी। 'माल-रोड' प्रातः होने के साथ ही रंगीन हो उठता है। वह इस समय भी रंगीन था, लेकिन आशा के मन पर किंचित मात्र भी प्रभाव न डाल पा रहा था। आशा का मस्तिष्क बार-बार गोपाल की ओर उड़ा जा रहा था।

तभी कार ने माल रोड पर स्थित भगवान चन्द्र चटर्जी की कोठी में प्रवेश किया और पोर्टिको में जाकर रुक गई। झपट कर चौकीदार ने कार का दरवाज़ा खोला। आशा ने बाहर निकलते हुए पूछा—

"साहब कहाँ हैं ?"

"अन्दर, मजिस्ट्रेट साहब से बातें कर रहे हैं।"

"ओह !"

कहकर आशा सीधे अपने, निश्चित, कमरे की ओर बढ़ गई और चौकीदार उसका एकमात्र सामान अटैची लेकर उसके कमरे की ओर चल दिया।

सुधांशु चटर्जी कलकत्ते के प्रसिद्ध व्यापारियों में ा एक थे और उनका जूट काव्यापार था, इस कारण उनकी गणना नगर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में होती थी। ईश्वर ने उन्हें सब कुछ दिया था, संसार की समस्त वैभव-श्री उनके चरण चूमती थी। किन्तु वे हर समय उदास रहा करते थे, क्योंकि उनका जीवन भार्या-विहीन था। कहने को तो उन्होंने विवाह भी किया था, पर उसका (पत्नी का) समुचित प्यार उनके भाग्य मे शायद बदा ही न था, तभी तो वे विवाह के तीन ही वर्ष पश्चात् एक शिशु छोड़कर स्वर्गवासिनी हो गईं। वही शिशु कालान्तर में भगवान चन्द्र कहलाया। हाँ तो, अब सुधांशु चटर्जी का समस्त ध्यान उस शिशु की ओर केन्द्रित हो गया। समय बीतते देर नहीं लगी और भगवान चन्द्र को पढ़ने के लिए वाराणसी के एक प्रख्यात विद्यालय में भर्ती करा दिया गया। इस समय सुधांशु चटर्जी की आयु तीस को पार कर चुकी थी, किन्तु आकृति से नवयुवक ही लगते थे। उसी समय देश में एक महान् नेता ने अंग्रेजों को हिन्दोस्तान से बाहर करने का बीड़ा उठाया। फ़िरंगी शासन उसके अहिंसात्मक आन्दोलन से डोल उठा। उस महान् नेता का नाम सुधांशु चटर्जी ने भी 'कलकत्ता टाइम्स' में पढ़ा—मोहनदास करमचन्द्र गांधी ! नाम का प्रभाव उनके मस्तिष्क पर कुछ ऐसा पड़ा कि वे डाँडी जाने के लिए विवश हो गए। उनके मस्तिष्क में गाँधी की एक कल्पित आकृति घूम गई और वे उसी दिन विमान से डाँडी के लिये रवाना हो गये।

डाँडी पहुंचकर उन्होंने गाँधीजी के द्वारा 'नमक के क़ानून' को भंग करने का दृश्य देखा और उनका ध्यान बरबस ही देश-भक्ति की ओर आकर्षित हो गया। कुछ दिन तक तो वे महात्मा गाँधी के साथ रहे और फिर कलकत्ता वापस आ गये, किन्तु उनके हृदय में एक भयंकर चिन्गारी जन्म ले चुकी थी। उन्हीं दिनों इनकी भेंट बंगाल के महान् नेता सुभाष चन्द्र बोस से हुई और सुधांशु चटर्जी परोक्ष रूप से आन्दोलन में भाग लेने लगे।

समय बीतता गया.......

बीतता गया........

भगवान चन्द्र को सुधांशु दा ने अमेरिका भेज दिया और स्वतः आन्दोलन में सक्रिय रहे।

दो वर्ष पश्चात् ....

सन् १६३१ !

सुधांशु चटर्जी अब तक प्रत्यक्ष रूप से आन्दोलन के मैदान में उतर आये थे। वह अपना सर्वस्व देशान्दोलन में अर्पित कर देना चाहते थे। उनका कथन था—'तन-मन-धन राष्ट्र पर अर्पण करो।'

जनवरी में—सुधाँशु दा ने अपनी समस्त धन-राशि का आधा भाग अपने एकमात्र पुत्र भगवान चन्द्र के नाम कर दिया और शेष आधा भाग आन्दोलन के लिये संस्था के अध्यक्ष को दान दे दिया तथा आन्दोलन में खुलकर भाग लेने लगे।

२ फरवरी को—उन्होंने बंगाल के गवर्नर की कोठी में टाइम-बम लगा दिया। भाग्य से, गवर्नर तो बच गया लेकिन कोठी न बच सकी, उसके चीथड़े उड़ गये।

१२ मार्च को—पुनः गवर्नर की कोठी में बम रक्खा गया और कोठी के साथ-साथ गवर्नर भी उड़ गया! सुधांशु दा पुनः पार्टी में छुपकर आ गये। किन्तु बंगाल का गुप्तचर विभाग सक्रिय हो चुका था। और फिर........

२० मार्च को—जब वे अपने पुत्र को लेने दमदम हवाई अड्डे जा रहे थे, पुलिस ने उन्हें पकड़ लिया।

२५ मार्च का—जिस दिन उन्हें सज़ा मिलने वाली थी, एक कागज प्राप्त हुआ। जिस पर लिखा था—

"बंगाल के वीर !

"पंजाब के तीन अमर वीर—सरदार भगतसिंह, सुखदेव व राजगुरू—जिन्हें २४ मार्च को दिन में फाँसी दी जाने वाली थी। उन्हें २४ के स्थान पर २३ मार्च की रात ठीक साढ़े सात बजे ही फाँसी दे दी गई और उनके शवों को सतलज में फेंक दिया गया। उनके शहीद होने का दृश्य नीचे की कविता से तुम्हें मिल जायेगा :—

"२३ मार्च १६३१ सन्, दिन छुपे बाद ;
जब फाँसी पर ले गये, तीनों को जल्लाद।
देख भगतसिंह फाँसी को, खुश हो आगे जाने लगे;
तब राजगुरू ने पकड़ बाँह, सप्रेम उन्हें समझाने लगे।
तुम हो एक सरदार सिपाही, पहले कैसे फाँसी पर ?
कर रहे थे बातें दोनों ये, सुखदेव पहुंच गया फांसी पर.
झूल गया वह 'भारत-माता की जय' कह कर।
विस्मृत कर दी बातें, सुखदेव का अब ध्यान आया;
गर्व से छाती फूल गई जब, क़ुर्बानी का ध्यान आया।
लाश हटी इधर सुखदेव की, फाँसी के तख्ते पर से,
दौड़ भगतसिंह ने, डाला फंदा निज हाथों से।
धरती काँपी, आकाश फटा, गरदन झूली तख्ता हटा;
'वन्देमातरम्' गूँज गया, बलिवेदी पर जब तख्ता हटा।
बारी आई राजगुरू की, मुँह उदास उसका हुआ—
'माँ आया मैं भी पीछे रहा, मैं क्या वीर से कायर हुआ?'
हाथों से अपने डाला फंदा, राजगुरू ने गर्दन में,
भारत मां का जय घोष था, गूंज गया उस स्थल में।

यूँ तीनों हैं हो गये, माता पर क़ुर्बान;
लाशें तीनों की ले गये, सतलज के दरम्यान ।।

"आशा है तुम इस पत्र का आशय समझ गये होगे । कदाचित् देश-द्रोही का दण्ड तुमको भी मिले.......

"बस ! फिर मिलेंगे—

"वन्देमातरम् !

"आज़ाद भारत"

पत्र पढ़कर सुशांशु दा की आँखों से अश्रु की दो बूँदें बन्दीगृह के धरातल पर टपक गईं—उन तीनों शहीदों के सम्मान में, तथा एक अपूर्व तेजोमयी दृढ़ता उनकी सौम्य आकृति पर छा गई ! तभी जेल के वार्डर की रोबदार आवाज़ बंदीगृह में गूंज उठी और वह उठकर चल दिये उसके साथ—अपना निर्णय सुनने !

३१ मार्च को—प्रात:काल की बेला में सुधांशु दा भी शहीद हो गये ।

पिता की अन्त्येष्टि करने के पश्चात् भगवान चन्द्र अपनी समस्त पूंजी के साथ कानपुर आ गए और कपड़े का एक कारखाना खोल कर जीवन की महायात्रा का शुभारम्भ किया ।

पिता की भाँति भगवान चन्द्र के भी हृदय में देश के लिए कम प्रेम न था, किन्तु किन्हीं कारणोंवश वह कुछ वर्षों तक शान्त रहे । लेकिन, फिर वह भी इस विस्तृत मैदान में उतर आये । उन्होंने अपनी कोठी के तहखाने में बम बनवाने शुरू कर दिये और छुपे तौर पर क्रांतिकारी दल के नेता बन गये । उनका सबसे सुरक्षित कदम था—ब्रिटिश सरकार के उच्चाधिकारियों की आड़ !

मैजिस्ट्रेट से वार्तालाप करने के उपरान्त, भगवान चन्द्र को उनके

नौकर ने आशा के आने की ख़बर दी और वह उसके कमरे की ओर चल दिये।

आशा भगवान चन्द्र के एक मित्र की बहन थी, जिसे वह बहनवत् ही स्नेह करते थे। मित्र की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने उसे अपने ही पास रख लिया और देश के प्रति अत्यधिक प्रीत देखकर उसे भी क्रांतिकारी दल की सदस्या बना लिया था। इसके अतिरिक्त अधिकतर कार्य भी उन्होंने उसे सौंप दिया था।

जिस समय वह आशा के कमरे में पहुंचे, आशा उन्हीं की प्रतीक्षा कर रही थी। मुखाकृति का रंग उड़ा हुआ था। आशा की यह दशा देखकर वह चौंके—

"क्या बात है आशा, तबियत तो ठीक है न ?"

"हाँ दादा, मुझे क्या हुआ ?" मुस्कुराने की उसने एक असफल-सी चेष्टा की।

"तेरा चेहरा बता रहा है कि कुछ हुआ जरूर है।"

"बता दूं ?"

"हाँ, हाँ !"

"तो सुनिये; मसवापुर के गोपाल पकड़ लिये गये।"

"ऐं ! कब, कहाँ ?" उन्हें पैरों तले जमीन खिसकती मालूम हुई।

"आज, अभी स्टेशन पर।"

"कैसे ?"

भगवान चन्द्र के पूछने पर आशा ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। सब सुनकर भगवान चन्द्र के जान में जान आई।

"बहुत ठीक किया।"

"क्या ? उन्हें फाँसी हो जाएगी दादा !" कहा आशा ने।

"तो रोती काहे को है पगली, अभी मैं जो जिन्दा हूं।" आशा की आँखों में अश्रु-बिन्दु देखकर भगवान चन्द्र ने उसे स्नेहसिक्त आश्वा-

सन दिया क्योंकि अब उनके दिमाग़ में सारा किस्सा फ़िल्म की भाँति घूम रहा था और उनके कुछ-कुछ समझ में आ रहा था। किन्तु वह भी विवश थे क्योंकि गोपाल ने हत्या की थी।

हत्या !

·······और वह भी एक अंग्रेज अफसर की।

१

"हत्या ?"

"हत्या ?"

"........और वह भी एक अंग्रेज अफसर की !"

चारों ओर कानाफूसी हो रही थी, लेकिन गोपाल बेतहाशा उसे मारता ही चला जा रहा था। तभी शोर सुनाई पड़ा—'पुलिस........ पुलिस........भागो........'

गोपाल यकायक स्तब्ध रह गया और दूसरे ही क्षण उसके हाथों में हथकड़ियाँ पड़ चुकीं थीं; किन्तु उसकी आकृति शर्म से या ग्लानि से लाल होने के बजाय गर्व से उन्नत थी। उसे अपने किये पर तनिक भी क्षोभ न था, क्योंकि उस अफसर ने उसकी इज्जत पर आक्रमण किया था।

सिर ऊँचा किये पुलिस में घेरे में वह स्टेशन से बाहर निकला और जीप में बैठकर कोतवाली की ओर चल दिया।

थोड़ी ही देर में वह कोतवाली पहुंच गया, जहाँ पुलिस-विभाग एवं राज्य के उच्चाधिकारी पूर्व से ही उपस्थित थे। गोपाल इन्सपेक्टर के साथ स्वाभिमानपूर्वक वहाँ पहुंचा। शहर कोतवाल की आज्ञा से उसकी हथकड़ियाँ खोल दी गईं और वह उन्हीं के संकेत पर सामने की

कुर्सी पर बैठ गया। उसके नेत्रों में रक्त के स्थान पर अब शांति विद्यमान थी और आकृति से गर्व तथा स्वाभिमान टपक रहा था। शहर के उच्चायुक्त ने प्रश्न किया—

"आपका नाम ?"

"गोपाल दास !" संक्षिप्त सा उत्तर था।

"पिता का नाम ?"

"श्री श्याम नारायण !"

"जाति ?"

"आजाद-भारतवासी !" व्यंग्यात्मक उत्तर था।

"निवास-स्थान ?"

"जेल !"

"ओह !" उच्चायुक्त की आकृति से झुंझलाहट प्रदर्शित हो रही थी—"क्या आप यह बताने का कष्ट करेंगे कि आपने यह हत्या क्यों की ?"

"इसका उत्तर आपको न्यायालय में ही मिलेगा।" दृढ़स्वर में उत्तर मिला।

"हूं, इन्सपेक्टर !"

उच्चायुक्त ने संकेत किया। गोपाल इस संकेत का अर्थ समझ गया था, अतः उठ खड़ा हुआ और इन्सपेक्टर के पीछे चल दिया।

इन्सान जब बन्दीगृह या अन्य कठिनाइयों के मध्य घिरा होता है तब उसे अपने गृह की स्मृति स्वतः ही हो आती है। यही गोपाल के साथ भी हुआ और वह अपने परिवार तथा गत-जीवन में पूर्णतः डूब गया ......

बालक गोपाल अभी दस ही वर्ष का था जब उसको अपने देश का ज्ञान हुआ। उसके परिवार में केवल दो ही व्यक्ति थे—पिता और माँ !

चूंकि वह उनकी एकमात्र सन्तान था, अतः उनका समस्त प्यार उसी पर केन्द्रित था। उसके पिता ब्रिटिश साम्राज्य के एक अच्छे पद पर थे—पाँच सौ रुपये मासिक वेतन और इतनी ही लगभग ऊपरी आय थी। शान से रहते थे। एक दो घोड़ों वाली काली टमटम थी जिस पर पिता-पुत्र और एक फिरंगी अफसर प्रतिदिन सुबह-शाम टहलने जाया करते थे। वे दोनों परस्पर इधर-उधर के आंदोलन और उसके दबाने के विषय पर वार्त्तालाप करते और बालक गोपाल उन दोनों के वार्त्तालाप को बहुत ही ध्यान से सुनता रहता। उसका हृदय उस फिरंगी ही नहीं वरन् सम्पूर्ण साम्राज्य के प्रति घृणा से पूरित होता जा रहा था और आंदोलन के प्रति श्रद्धा बढ़ती जा रही थी। उसके बाल-मस्तिष्क में उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं था, जो सदैव उसके मस्तिष्क में घूमते रहते थे—'यह आंदोलन क्या है·······लोग इसे क्यों इतना महत्व दे रहे हैं?·······अंग्रेज लोग इनसे घृणा क्यों करते हैं?······वे इन बेचारों पर कोड़े और बन्दूकें क्यों बरसाते हैं? ······· आखिर क्यों?" ये कुछ ऐसे प्रश्न थे जो बालक के मस्तिष्क को मथते रहते थे, परन्तु वह पिता के अतिरिक्त किसी अन्य के साथ बाहर निकल ही नहीं सकता था; और दूसरे उसका ज्ञान भी सीमित था।

समय बीतते देर नहीं लगती। इस समय वह चौदह वर्ष का बालक था और दसवीं की परीक्षा देकर इलाहाबाद आगे पढ़ने जा रहा था। अब उसका मस्तिष्क उन प्रश्नों का समुचित उत्तर देने में समर्थ था। क्योंकि यह सत्य है, कि आयु के साथ-साथ मस्तिष्कके ज्ञान में भी वृद्धि होती है। फिर वह इतिहास का विद्यार्थी था, अतः उसके नेत्रों के समक्ष सदा ही भारत की दुर्दशा के चित्र घूमते रहते थे।

दसवें का परीक्षाफल प्रकाशित हुआ। वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ और इलाहाबाद के एक विद्यालय में भर्ती हो गया तथा छात्रावास में रहने लगा। यहाँ उसे नित्य प्रति नवीन पत्रिकाएँ प्राप्त होतीं जिनमें वह अत्यधिक रुचि लेता और देश के आंदोलन के प्रति ज्ञान में वृद्धि

करता। वर्ष का अन्त भी शीघ्रता से समीप आ गया। विद्यालय की पत्रिका में उसका एक लेख छपा। शीर्षक था —"पराधीन भारत और स्वतन्त्रता संग्राम या आंदोलन।" इस लेख के अन्तर्गत लिखा गया संक्षिप्त विवरण इस प्रकार था—

'देश के नौजवान साथियो ! आज हमारे देश में फिरंगियों ने डेरा डाल रक्खा है। पिछले कई वर्षों से हम उसके दास हैं लेकिन अब समय आ गया है मेरे दोस्तो, जब हमें वर्षों से पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ी भारत माँ को आजाद कराना है। हमको अपना सर्वस्व न्योछावर करके भी माँ के प्राचीनतम गौरव एवं ऐश्वर्य को कायम रखना है और इसके लिये यह आवश्यक है कि हम सब मिलकर इन मक्कार फिरंगियों को देश से बाहर निकाल दें। और यह तभी संभव है जबकि हम सब एक हों ·······भारतवासी एक हों ·······

'आज हमको गांधी के नेतृत्व में आगे बढ़ना है ·······नेता जी के साथ चलना है ताकि हमारा देश स्वतन्त्र हो सके। इसके लिए हमें अपना बलिदान करना होगा जिससे हम स्वतन्त्र हो सकें ! हमें सरदार भगतसिंह का सपना पूरा करना है·······

'आज हमें सरदार भगतसिंह की ललकार पर बढ़ना है ! आज हमको नाना साहब बुला रहे हैं·······तांत्याँ टोपे की क्रांति के बिगुल बज रहे हैं ·······झांसी की रानी की आवाज हमारे कानों को चीर रही है·······हमें झांसी बचानी है·······भारत को आजाद कराना है·······

·······भारत के वीरों बढ़ो ? छत्रसाल, शिवा और प्रताप बढ़ो ! देखो, माँ तुम्हें बुला रही है—

माँ बुला रही है वीरों, आगे बढ़ो।
इन फिरंगियों के सीने पे चढ़ो॥

तुमको है वीरों, अपने देश की कसम;
वीरों की आन, बान और शान की कसम,
धरती धरा वसुन्धरा महान् की कसम।

राणा शिवा की आन देखो तो वो आ रही,
झांसी की रानी घोड़े पे देखो तो वो आ रही,
भगत सिंह व राजगुरू की आन चली आ रही।
वन्देमातरम्—वन्देमातरम् !'

पत्रिका विद्यालय की परीक्षा के पश्चात् निकली और विद्यालय ग्रीष्मावकाश के लिये बन्द हो गया। जिसने भी इस लेख को पढ़ा उसके हृदय में एक अपूर्व दृढ़ निर्णय समा गया। उसके हृदय में देश की स्वतन्त्रता की भावना जागृत हो उठी।

पलक झपकते ही दो माह ब्यतीत हो गये और अगला वर्ष भी कालान्तर में समाप्त हो गया। अब गोपाल विश्वविद्यालय में बी० ए० का छात्र था और साथ ही उसका देश-प्रेम भी दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा था।

विश्वविद्यालय में गोपाल के कुल पांच ही मित्र थे—जितेन्द्र नाथ, कमल, गुरू नारायण, रवीन्द्र नाथ एवं बृज भूषण !

जितेन्द्र नाथ के ऊपर 'जथा नाम तथा गुणों भवति' वाली कहावत चरितार्थ होती थी। शक्ति और बुद्धि दोनों ही उसे ईश्वर की ओर से प्राप्त हुई थी। चार-पाँच व्यक्तियों को तो वह कुछ समझता ही न था। नित्य प्रातः उठकर कम से कम चार सौ दण्ड-बैठक लगाना, उसकी दिनचर्या का प्रथम कार्य था। तत्पश्चात् अढ़ाई सेर कच्चा दूध और आधा सेर बादाम का नाश्ता करना। पढ़ने को तो इस समय वह गत तीन वर्षों से उसी बी० काम० के प्रारम्भिक वर्ष में पढ़ रहा था। उसके लिये यह विख्यात था कि उसके मुताबिक उसे खाना दिये जाओ और जो भी काम हड़ताल, मारपीट अथवा हिंसात्मक कार्यों इत्यादि का हो उससे करवा लो। इन सबमें वह सबसे आगे ही रहेगा। हिंसात्मक कार्यों में अंग्रेजों का तो वह पक्का दुश्मन था—जानी दुश्मन !

कमल—वह तो बस कमल ही था। मध्यमवर्गीय परिवार का एक नवजवान। लम्बा, किन्तु दुबला-पतला गोरा शरीर और वैसा ही मुख। कब क्या करना है, कैसे किया जावे ? इन सबका ब्यौरा और योजनाएं उससे बनवा लीजिए और तब उसे किसी काम में जुटा दीजिए; फिर न तो वह आगा सोचता था और न पीछा, बस जुट ही जाता था; कोल्हू के बैल की भाँति। काम पूरा हो या न हो, इससे उसे कोई सारोकार नहीं। उसे तो बस काम चाहिए -केवल काम !

गुरू नारायण – यह तो पूरे गुरू ही थे. राजनीति शास्त्र के ! राजनीति पर किस तरह चला जावे यह इनसे पूछ लीजिए। इनका तो सिद्धांत था —'कहो नीति करो अनीति, इसी का नाम है राजनीति।' ऐंठू इतने. कि अगर किसी बात पर अड़ गये तो फिर चाहे वह गलत ही क्यों न हो, सही होकर रहेगी। दुनिया में कौन सी ऐसी ताकत है जो उन्हें गलत साबित कर दे।

रवीन्द्र नाथ—यह थे बेचारे साहित्यकार ! न मालूम कहाँ से और कैसे बेचारे आकर इस क्रांतिकारी पार्टी में फँस गये। सीधे-सादे, भोले-भाले, न किसी से लेना एक न देना दो। उपनाम था भाई का, 'अज्ञात।' वास्तव में यह बिल्कुल ही 'अज्ञात' थे। कालेज जीवन में इनके चार-पाँच उपन्यास भी निकल चुके थे और चूंकि यह गोपाल के व्यक्तित्व से अत्यधिक आकर्षित थे और आजादी के दीवाने भी थे, अतएव पार्टी में सम्मिलित हो गये। आजकल यह एक नवीन उपन्यास भी लिख रहे थे—'वन्देमातरम्'। जिसका मुख्य पात्र था—असाधारण व्यक्तित्वशाली गोपाल !

बृज भूषण —यह थे 'गोपाल-मित्र-मण्डली' के अन्तिम सदस्य। इनको यदि बृज भूषण के स्थान पर 'मण्डली-भूषण' कहा जावे तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। क्योंकि इसके मुख पर सदैव ही मुस्कुराहट छाई रहती थी और मित्र-मण्डली कहकहों में डूबी रहती थी। मंडली के अन्दर इनकी तकरार राजनीति-शाला के महापंडित गुरू नारायण और

उसे छपवा लिया जावे और विद्यालय में बंटवा दिया जावे।" कमल ने अपनी राय व्यक्त की।

"नहीं, यह गलत है, क्योंकि हम लोग एक महान् आंदोलन के लिये संगठित होने जा रहे हैं जो पूर्ण रूप से एक राजनीतिक आँदोलन है और इससे हम पर आँच आ सकती है।" यह गुरू नारायण की आवाज थी।

"तो आप आँच से डरते हैं गुरू जी, क्यों?" जितेन्द्र ने व्यंग्य किया—"ऐसा ही था तो यहाँ आये ही क्यों?"

"जी नहीं, जितेन्द्र बाबू! मैंने ओखली में सिर डाला है फिर मूसलों से डर काहे का? मैं तो स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राण अभी और यहीं दे सकता हूँ; लेकिन बिना कुछ किये हुये नहीं, कुछ करके ही! यह राजनीति का विषय है और बिना राजनीति के चल ही नहीं सकता!"

"तो फिर किस प्रकार किया जावे?" कमल ने प्रश्न किया।

'गुप्त रूप से!"

"और नहीं तो क्या खुले रूप में होगा?" जितेन्द्र ने पुनः व्यंग्य किया, किन्तु गुरू चुप ही रहा। गोपाल ने पूछा—

"क्यों भाई बिरजू और अज्ञात जी आपका क्या विचार है?"

"हम लोग कमल भाई से सहमत हैं।"

बृजभूषण और साहित्यकार महोदय ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया।

"ठीक है, एक प्रश्न तो हल हुआ, किन्तु दूसरी समस्या यह है कि इसे छापेगा कौन?" गोपाल की गंभीरता में वृद्धि हो गई।

"........" सब चुप।

'मैं बताऊँ?" दूसरे ही क्षण जितेन्द्र के होंठों पर मुस्कुराहट की हलकी-सी परत तैर रही थी।

"गोपाल भय्या !" जितेन्द्र ने कहा—"वह जो तुम्हारे क्लास में बीना पढ़ती है, न; उससे कहो। शहर में उसकी प्रेस भी है। वही छपवा सकती है।"

"यह असंभव है !" गोपाल की दृढ़ आवाज़ थी—"मैं किसी और से कह सकता हूँ, किन्तु उस लड़की से नहीं।"

"क्यों ?" रवीन्द्र का प्रश्न था।

"........."

"देखो गोपाल भय्या ! मानता हूँ कि वह तुम्हारे कार्यों की अथवा तुम्हारी हँसी उड़ाती है, किन्तु इस समय तुम्हें उसी से काम करवाना है। यह अच्छी तरह से समझ लो कि शहर में उसके अलावा न कोई इसे कर सकता है, और न ही कोई तैयार होगा।"

"लेकिन तुम सोचो तो रवीन्द्र, जब मैं उसके पास जाऊंगा तो वह मेरी कितनी खिल्ली उड़ायेगी ?"

"लेकिन गोपाल, तुम अपने लिये नहीं, अपनी माँ के लिये जा रहे हो। वह खिल्ली तुम्हारे लिये आर्शीवाद बन जावेगी। मुझे विश्वास है कि तुम उसके किये अपमान को विस्मृत कर दोगे।"

"मैं जाऊंगा, रवीन्द्र भाई ! तुमने मुझे राह दिखाई है, मैं अवश्य उस पर अमल करूंगा।.........अरे, तीन बज रहे हैं ? अच्छा दोस्तों अब चलना चाहिये, फिर किसी समय मिलेंगे। जयहिन्द !"

"जयहिन्द !"

और सभा समाप्त हो गई।

दूसरे दिवस—विश्वविद्यालय में जब गोपाल पहुंचा तो दस बज चुके थे और विद्यालय लग चुका था, किन्तु बीना अपनी कुछ [illegible] की घास पर बैठी बातें कर रही थी। गोपाल [illegible] उलझन में फ़ंसा हुआ था कि वह बीना से

उसे छपवा लिया जावे और विद्यालय में बंटवा दिया जावे।" कमल ने अपनी राय व्यक्त की।

"नहीं, यह गलत है, क्योंकि हम लोग एक महान् आंदोलन के लिये संगठित होने जा रहे हैं जो पूर्ण रूप से एक राजनीतिक आँदोलन है और इससे हम पर आँच आ सकती है।" यह गुरू नारायण की आवाज थी।

"तो आप आँच से डरते हैं गुरू जी, क्यों?" जितेन्द्र ने व्यंग्य किया—"ऐसा ही था तो यहाँ आये ही क्यों?"

"जी नहीं, जितेन्द्र बाबू! मैंने ओखली में सिर डाला है फिर मूसलों से डर काहे का? मैं तो स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राण अभी और यहीं दे सकता हूँ; लेकिन बिना कुछ किये हुये नहीं, कुछ करके ही! यह राजनीति का विषय है और बिना राजनीति के चल ही नहीं सकता!"

"तो फिर किस प्रकार किया जावे?" कमल ने प्रश्न किया।

"गुप्त रूप से!"

"और नहीं तो क्या खुले रूप में होगा?" जितेन्द्र ने पुनः व्यंग्य किया, किन्तु गुरू चुप ही रहा। गोपाल ने पूछा—

"क्यों भाई बिरजू और अज्ञात जी आपका क्या विचार है?"

"हम लोग कमल भाई से सहमत हैं।"

बृजभूषण और साहित्यकार महोदय ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया।

"ठीक है, एक प्रश्न तो हल हुआ, किन्तु दूसरी समस्या यह है कि इसे छापेगा कौन?" गोपाल की गंभीरता में वृद्धि हो गई।

"........" सब चुप।

"मैं बताऊँ?" दूसरे ही क्षण जितेन्द्र के होंठों पर मुस्कुराहट की हलकी-सी परत तैर रही थी।

"गोपाल भय्या !" जितेन्द्र ने कहा—"वह जो तुम्हारे क्लास में बीना पढ़ती है, न; उससे कहो। शहर में उसकी प्रेस भी है। वही छपवा सकती है।"

"यह असंभव है !" गोपाल की दृढ़ आवाज़ थी—"मैं किसी और से कह सकता हूँ, किन्तु उस लड़की से नहीं।"

"क्यों ?" रवीन्द्र का प्रश्न था।

"........."

"देखो गोपाल भय्या ! मानता हूँ कि वह तुम्हारे कार्यों की अथवा तुम्हारी हँसी उड़ाती है, किन्तु इस समय तुम्हें उसी से काम करवाना है। यह अच्छी तरह से समझ लो कि शहर में उसके अलावा न कोई इसे कर सकता है, और न ही कोई तैयार होगा।"

"लेकिन तुम सोचो तो रवीन्द्र, जब मैं उसके पास जाऊंगा तो वह मेरी कितनी खिल्ली उड़ायेगी ?"

"लेकिन गोपाल, तुम अपने लिये नहीं, अपनी माँ के लिये जा रहे हो। वह खिल्ली तुम्हारे लिये आर्शीवाद बन जायेगी। मुझे विश्वास है कि तुम उसके किये अपमान को विस्मृत कर दोगे।"

"मैं जाऊंगा, रवीन्द्र भाई ! तुमने मुझे राह दिखाई है, मैं अवश्य उस पर अमल करूंगा।.........अरे, तीन बज रहे हैं ? अच्छा दोस्तों अब चलना चाहिये, फिर किसी समय मिलेंगे। जयहिन्द !"

"जयहिन्द !"

और सभा समाप्त हो गई।

दूसरे दिवस—विश्वविद्यालय में जब गोपाल पहुंचा तो दस बज चुके थे और विद्यालय लग चुका था, किन्तु बीना अपनी कुछ सहेलियों के साथ लॉन की घास पर बैठी बातें कर रही थी। गोपाल रात से ही इस मानसिक उलझन में फंसा हुआ था कि वह बीना से

किस प्रकार बात शुरू करे ? क्या बीना तैयार हो जायेगी ? क्या वह मेरी बात मान ही लेगी ? और अगर कहीं उसने मेरा अपमान किया और इस काम को पूरा करने के लिये राजी न हुई तो ....? इसके आगे सोचने पर उसका मस्तिष्क भन्ना जाता था क्योंकि इस विचार के साथ ही उसके नेत्रों के समक्ष भारत माँ की, परतंत्रता की बेड़ियों से जकड़ी आकृति कौंध जाती और वह निरूपाय-सा हो जाता था। अंत में वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि चाहे कुछ भी हो वह बीना को कैसे भी में राजी करके ही रहेगा, क्योंकि यहाँ बात उसके मान-अपमान की ही नहीं वरन् उसकी माँ की है। आज वह माँ को स्वतन्त्र कराने के लिये एक महत्वपूर्ण पग उठाने जा रहा है और भविष्य की सफलता इसी पर निर्भर करती है। यही सब सोच-विचार कर और निश्चय करने के उपरांत उसने आज विद्यालय में प्रवेश किया। इसीलिए वह आज बीना के पास स होकर गुजरा, किन्तु लड़कियों के बीच से बीना को बुलाने में उसकी हिम्मत जवाब दे गई। जाते-जाते भी उसके कान में कुछ भनक पड़ी—

"आखिर वह दिन आ ही गया !" एक बोली।

"कौन-सा ?" दूसरी ने पूछा।

"आज तो परवाने भी शमा के पास चक्कर लगा रहे हैं।' पहली ने दूसरी की बात अनसुनी करते हुए कहा।

"क्या मतलब ?" बीना का आश्चर्यचकित स्वर था।

"परवाने से पूछो न ?" उसी पहली लड़की ने कहा।

"ऐसी अपनी किस्मत कहाँ ?" बीना ने सीने पर हाथ रखकर कहा—"किसी शायर का कहना है कि मरते हैं परवाने, शमा की मोहब्बत में जलते हैं........ लेकिन यहाँ पर तो उलटा ही हिसाब-किताब है—जल रही है शमा उनके लिये, मगर परवाने हैं कि आते ही नहीं।"

"गलत कह गई !"

"क्यों ?"

"आओ बताऊं।" कहकर उनका जत्था भी गोपाल से दो-चार कदम पीछे रहकर चल दिया। अर्थात् आगे गोपाल और पीछे-पीछे वह लोग चल रही थीं।

"हाँ, अब बताओ, उसमें क्या गलत था ?" बीना ने पूछा।

"तुमको कहना चाहिये था : 'मर रही है वीणा उनके लिए, मगर वो हैं कि बजाते ही नहीं।"

"धत्त !"

बीना झेंप गई और गोपाल का मस्तिष्क कुछ विकृत-सा होने लगा, अतः वह तीव्र गति से आगे बढ़ा। किन्तु साथ ही उसे, अतिरिक्त बीना के, अन्य लड़कियों की मिश्रित हंसी की ध्वनि सुनाई पड़ी और उसका रोम-रोम भभक उठा इस अपमान की आग से ! किन्तु उसने धैर्य से काम लिया और बात को टाल गया। अन्त में उसने निश्चय किया कि आज वह बीना से उसके बंगले पर ही मिलेगा।

+ + +

संध्या को लगभग सात बजे गोपाल बीना के बंगले पर पहुंचा। उस समय वह विचित्र वीणा बजा रही थी, किन्तु कुछ गा नहीं रही थी। उसी समय उसकी नौकरानी ने उसके कमरे में प्रवेश किया।

"क्या है ?"

वीणा के तारों को ठीक करते हुये बीना ने पूछा।

"एक साहब आपसे मिलना चाहते हैं।" उत्तर मिला।

"नाम पूछा ?" बिना सिर उठाये प्रश्न किया बीना ने।

"जी, बीबी जी। उन्होंने अपना नाम गोपाल बताया........"

"क्या ?"

उँगलियाँ तार ठीक करते-करते रुक गईं।

"जी, बीबी जी !"

"अच्छा, उन्हें बिठाओ और कहो कि मैं अभी आ रही हूँ।"

"जी, बीबीजी।"

"और हाँ, चाय-पानी........"

"समझ गयी !"

कहकर नौकरानी चली गयी और बीना की गोद से वीणा उतर गई। बीना ने उठकर एक क्षण के लिये अपने अस्त-व्यस्त वस्त्रों को ठीक किया और कमरे से बाहर निकल गई।

"नमस्ते गोपाल बाबू !" कमरे में प्रवेश करते ही बीना ने कहा।

"नमस्ते ! मैं जरा ए ...एक........" गोपाल की आवाज़ थोड़ी-सी काँप गई।

"अरे, आप खड़े क्यों हो गये ? बैठिये, बैठिये। कहिये, क्या पीजिएगा—चाय या काफी ?" बीना ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"कुछ भी नहीं।" गोपाल की वाणी संयत थी।

"यह तो संभव नहीं है, आप पहली बार मेरे घर आये हैं इसलिये ......"

"ठीक है, आपकी इच्छा !"

गोपाल ने बात टालते हुए कहा और बीना बाहर चली गई, किन्तु गोपाल के मस्तिष्क को झकझोर के। गोपाल के आगे भारत माँ और बीना की तुलनात्मक आकृति कौंध गई।

"बीना का वह कुछ लम्बा एवं कुछ गोल-सा साँवला चेहरा जैसे काश्मीर प्रदेश..........उसकी कुन्तल राशि यथा हिमराज की पर्वत शृंखलाएं ....बाम भुजा सदृश बंगाल एवं दाहिनी भुजा सदृश पंजाब प्रदेश ... ...उन्नत उरोज मानो वे उरोज न होकर उत्तर-प्रदेश का विस्तृत क्षेत्र हो........देहली उसका हृदय हो...... मध्य प्रदेश था उसका मध्य भाग अर्थात् कटि प्रदेश.......हैदराबाद था उसकी रानें .... मैसूर था उसके घुटने और.......रामेश्वरम् था उसके दोनों चरण !...."

सोचते-सोचते गोपाल श्रद्धा से नत हो गया एवं बीना के विषय में

उसके जो भी गलत विचार थे वे क्षण भर में ही तिरोहित हो गये और रह गया केवल एक विचार—माँ और बीना !

बीना और माँ !

थोड़ी ही देर के पश्चात् बीना के साथ ही नौकरानी ने कमरे में प्रवेश किया और चाय की ट्रे लाकर उसके सम्मुख रख दी। ट्रे रखकर वह बाहर चली गई तथा बीना उसके समक्ष बैठकर चाय बनाने लगी।

"गोपाल बाबू !"

"जी कहिये।" श्रद्धा से पूर्ण स्वर था।

"आज प्रात: की बात का बुरा मत मानियेगा। उनकी ओर से मैं क्षमा मांग रही हूं। आशा है, आप मुझे माफ़......."

"नहीं बहन, इसमें माफ़ी का कोई सवाल ही नहीं है।"

"नहीं भाई साहब, अब जब आपने मुझ जैसी बदतमीज़ लड़की को बहन बनाया है तो माफ करना ही होगा।" स्नेह एवं अश्रुसिक्त स्वर में बीना ने कहा।

"अच्छा भई, चलो माफ़ कर दिया। अब तो खुश ?"

"हाँ ! अब चुपचाप चाय और वह नाश्ता......"

"चाय पी सकता हूं, किन्तु नाश्ता नहीं !"

"क्यों ?"

"क्योंकि चाय के साथ मैं कुछ भी नहीं......."

"लेकिन फिर भी खाना ही पड़ेगा।"

"यह कोई ज़बरदस्ती......."

"जी बिल्कुल है !" बीना की आकृति पर असीम प्रसन्नता एवं स्नेह का भाव अंकित था।

"ठीक ही कहा है किसी ने......."

"क्या ?"

"कि नारी-जाति के हठ के आगे दुनिया भी झुकती है।"

"हूं !"

बीना के चेहरे पर विजय का कमल खिला हुआ था।

विजय का कमल ?

विजय-कमल !

विजय-कमल ?

जी हाँ ! विजय का कमल खिला हुआ था, गोपाल के मुख पर। उसे स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि बीना बिना उसकी बातों की खिल्ली उड़ाये हुये ही उसकी बात स्वीकार कर लेगी। बीना के बंगले से बाहर निकलकर वह एक रिक्शे पर बैठ गया और अपने विद्यालय की ओर चल दिया।

थोड़ी-ही देर पश्चात् उसका रिक्शा विश्वविद्यालय के, छात्रावास के प्रवेश-द्वार पर जाकर रुका। उसका कमरा चूँकि दूसरी मंजिल पर था अतः वह अभी सीढ़ी चढ़ ही रहा था कि उसे ऊपर से रवीन्द्र आता हुआ दिखा उसने गोपाल को रोककर कहा—"गोपाल भय्या !"

"क्या हुआ ?"

"तुम्हारे पिताजी आए हैं।"

"कहाँ ?" आश्चर्यचकित स्वर था।

"ऊपर तुम्हारे कमरे में बैठे हैं। बहुत ज्यादा गुस्से में हैं।"

रवीन्द्र के कहने पर गोपाल ने कुछ भी उत्तर न दिया और सीधा ऊपर चढ़ गया। ऊपर उसके पिताजी कमरे के अन्दर बैठे हुए आराम से चुरूट पी रहे थे और धुएं के छल्ले आसमान में पहुंचने के लिये कमरे की छत से टकरा रहे थे।

"पिताजी प्रणाम !" पाँव छूते हुए गोपाल ने कहा।

"उठो, उठो।" हाथ से पकड़कर कहा श्याम नारायण ने—"मेरे साथ चलोगे ?"

"कहाँ पिता जी ?"

"मेरे एक मित्र ने खाने के लिए कहा था। वहीं चलना है।" कुछ रूक्ष-सा स्वर था उनका।

"चलिये।"

कहा गोपाल ने, और अपने कमरे पर एक उड़ती नज़र डालते हुए पिताजी के साथ बाहर निकल आया। वह कमरे की दशा देखकर ही समझ गया था कि उन्होंने कमरे में रहकर सारे कागजों को और किताबों को उलट-पुलट कर देखा है। यही कारण है जो उनका पारा सातवें आसमान पर है। बाहर आकर उसने कमरे की चाभी जितेन्द्र को दी और पिताजी से साथ छात्रावास के बाहर निकल आया। उसके पिता ने एक टैक्सी बुलवाई और उसे जगह बताकर चलने को कहा। रास्ते में गोपाल ने ही बात शुरू की–

"पिताजी, माँ वगैरह ठीक तो हैं न ?"

"हूं !" संक्षिप्त-सा उत्तर था।

"आप तो अभी रुकेंगे ?"

"नहीं, मैं आज ही साढ़े बारह की गाड़ी से वापस लौट जाऊंगा।"

"ओह !" गोपाल के प्राण वापस आये।

"देखो मैं वास्तव में तुमसे कुछ बातें पूछना चाहता हूं।"

"पूछिये !"

"तुम इसे चाहे मेरी राय समझो या आदेश। तुम जो चाहे करो, किन्तु यदि मेरी बात मान लोगे तो तुम्हारी जिन्दगी कुछ बन जायेगी नहीं तो फिर बाद मैं मुझे गालियाँ मत देना।"

"........" गोपाल चुप रहा।

"तुम इस आंदोलन से हाथ खींच लो।"

"क्यों ?" न चाहते हुये भी प्रश्न निकल ही गया।

"क्योंकि इस रास्ते पर तुम्हें सिर्फ काँटे ही मिलेंगे, फूल नहीं; तुम जेल तक जा सकते हो।" उनकी वाणी में प्यार था।

"मुझे स्वीकार है। मैं केवल काँटों को ही चाहता हूं, फूलों को

नहीं, पिताजी। मुझे वह सुख नहीं चाहिये, जिसमें अपनी आकांक्षाओं का गला घोंट देना पड़े। मैं ऐसे सुखों पर लात मारता हूं जो पराधीनता में मिल रहे हों। मैं स्वतन्त्रता चाहता हूं, अपनी ही नहीं वरन् पूरे देश की………"

"तो क्या तुम समझते हो कि वह तुम्हें मिल जायेगी ?" गोपाल की बात बीच ही में कट गई।

"बिल्कुल।" गोपाल दृढ़ स्वर था।

"यह तुम्हारी भूल है, गोपाल। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। तुम अकेले क्या करोगे ?"

"मैं अकेला नहीं हूं पिताजी, मेरे साथ पूरा भारतवर्ष है जो इस समय स्वतन्त्रता की आग में धधक रहा है।"

"लेकिन यह भी मत भूलो कि अंग्रेज़ों की गोलियों की बाढ़ के समान पानी इसे बुझा भी सकता है।"

"अंग्रेज़ों की गोलियाँ पानी नहीं बल्कि घी का काम करेंगी !"

"तो क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारी बूढ़ी माँ और तुम्हारा बूढ़ा बाप तड़प-तड़प कर मर जावे ?"

"यह मैंने कब कहा ?"

"तुमने नहीं कहा, लेकिन तुम्हारी बातें तो यही कह रही हैं। मेरा नहीं तो कम-से-कम अपनी माँ का ही ख्याल करो बेटा, जिसने तुम्हें नौ महीने तक अपना खून पिला-पिलाकर अपने पेट में रक्खा और हर तरह की तक़लीफें सहीं; फिर तुम्हें अपना दूध पिला-पिलाकर पाला।" श्याम नारायण जी के नेत्र अश्रुपूरित हो गये।

"…………" गोपाल धर्म संकट में फंसा था। उसका हृदय व मस्तिष्क एकबारगी ही डोल उठा। उसकी समस्त इच्छाएं, समस्त सुख स्वप्न धुंधले पड़ गये, स्वतन्त्रता के जोश के आगे कोहरा छा गया………कर्त्तव्य के आगे माँ की ममता का आवरण जो पड़ गया था ! वह विक्षिप्त हो उठा ममता के बवन्डर में फंसकर ! तभी अचानक

उसे एक प्रकाश की किरण दिखाई पड़ी।

प्रकाश की किरण ?

हाँ, कर्त्तव्य रूपी प्रकाश की किरण।

उस किरण के आगमन के साथ ही उसके मस्तिष्क और हृदय पर छाया अन्धकार काई की भांति फट गया। वह दृढ़ स्वरों में बोला—

"पिताजी, हर इन्सान की दो माँ होती हैं। एक वह जो जन्म देती और दूसरी वह जो पालती है। लेकिन जन्म देने से पालने वाली का अधिकार बालक पर अधिक रहता है। मुझे जन्म तो माँ ने दिया, है, लेकिन पाला नहीं है!"

"क्या मतलब ?" श्याम नारायण जी चौंके।

"मतलब यह है कि मुझे पालने वाली हैं केवल मेरी भारत माँ! आज वह बेड़ियों में जकड़ी है, मुझे उसने आवाज दी है और अब दुनिया की कोई भी ताकत मुझे नहीं रोक सकती। माँ की आजादी के लिये मैं जेल जाना तो क्या प्राण भी त्याग सकता हूं।"

गोपाल की बात दृढ़ स्वरों में सुनकर श्याम नारायण जी समझ गये कि पानी सिर से ऊँचा हो चुका है और अब पानी का घटना मुश्किल ही नहीं वरन् असंभव-सा है। अतः वह कुछ निराश हो गये। किंतु टैक्सी के रुकते ही उनके दिल में फिर कुछ आशा की किरण जागी। टैक्सी से उतरकर एवं पैसे चुकाकर गोपाल से बोले—

"देखो, यह मेरे मित्र राय साहब का मकान है, जिनकी लड़की से तुम्हारी सगाई बचपन में ही हो चुकी है, इसलिए जरा कायदे से बात करना।"

"जी अच्छा!"

गोपाल समझ गया था कि अब वह नहीं बच सकता। लेकिन फिर भी उसने आशा की डोर नहीं छोड़ी और अपने पिता के साथ राय साहब की कोठी के अन्दर चल दिया।

रायसाहब की कोठी प्राचीन ढंग से बनी हुई थी, किन्तु बाहर के

रंग-रोगन के कारण वह एक आधुनिक ढंग का महल ही दृष्टिगोचर होता था। कोठी के बाहर अच्छा-खासा लान था जिसमें भिन्न-भिन्न देशों से मँगाये गये विभिन्न रंगों के पुष्प मुखरित हो कोठी की शोभा बढ़ा रहे थे। उस समय बागीचे में रात की रानी अपने पूरे यौवन के साथ महक रही थी। बागीचे के बाद पड़ता था पोर्टिको, जो किसी समय बग्घी इत्यादि के रुकने के काम आता था, मगर अब कार रुकने के काम में प्रयोग किया जाता था।

श्याम नारायण जी, गोपाल के साथ अपनी गर्वित चाल से चलते हुये पोर्टिको पारकर सदर द्वार पर पहुंचे। द्वारपाल उन्हें पहचानता था, अतः वह सम्मान से एक ओर हट गया और वे दोनों अन्दर चल दिये। थोड़ी दूर पर, सदर द्वार के बाद, गलियारा पड़ता था, जिसमें दोनों ओर दीवारों पर राय साहब के शिकारी जीवन की विचित्र घटनाओं के वर्णन चित्रित थे जैसे—शेर का मुख, जंगली भैंसे और सुवर का मुख, हिरण की खाल, चीते की खाल और बारहसिंघे के सींग इत्यादि। बीच में प्राचीन युग का प्रतीक फानूस लटक रहा था। गलियारे की लम्बाई कठिनता से आठ-नौ फुट रही होगी। उसके बाद एक बड़ा कमरा (हाल) था, जो कोठी का मुख्यालय था। इसी के बाद कोठी का अन्य वृहत भाग था। यह कमरा अतिथियों से वार्तालाप करने हेतु काम में आता था। राय साहब वहीं बैठे उस समय कोई अंग्रेजी की मैगज़ीन देख रहे थे। भरी-पुरी स्वस्थ आकृति, जिससे ऐश्वर्य-विलास और रुआब टपकता था। उनकी आकृति पर सबसे प्रभावशाली तो उनकी मूँछें थीं, जिन्हें देखकर ही भय लगता था। कमरा फ्रांसीसी ढंग से निर्मित कर लिया गया था और उसी ढंग से विद्युत का प्रबन्ध भी था अर्थात् दीवारों से ही प्रकाश का स्रोत निकल रहा था। तात्पर्य यह कि दीवारों में स्थान-स्थान पर शीशे लगे हुये थे, जिन पर भी शिकार के ही दृश्य चित्रित थे और उन्हीं के पीछे से विद्युत के कुमकुमे, कमरे को प्रकाशित कर रहे थे। पूरे कमरे में दिन का-

सा प्रकाश छाया हुआ था। फ़र्श पर मख़मली ईरानी कालीन बिछा हुआ था। बीचोबीच पाश्चात्य सभ्यता का प्रदर्शक सोफ़ा-सेट पड़ा हुआ था, जिस पर राय साहब विराजमान थे। कमरे की दीवारों पर राय साहब के पूर्वजों के बृहत तैल-चित्र लगे थे और इधर-उधर टंगी थीं राइफ़लें। जैसे ही राय साहब ने श्याम नारायण जी को देखा वह लपक कर उठे और बोले —

"वाह भई ! बहुत जल्दी आए ?"

"क्या बताऊँ साहबजादे की वजह से......" श्याम नारायण जी उत्तर देना चाहा।

"कोई बात नहीं..........नमस्ते, नमस्ते बैठो बेटा !" राय साहब ने गोपाल से कहा।

गोपाल कोच पर एक ओर बैठ गया।

"किस क्लास में पढ़ रहे हो ?" प्रश्न हुआ।

"जी, बी० ए० में।" गोपाल ने अत्यन्त नम्रतापूर्वक उत्तर दिया।

"मेरी बेटी नीना भी इस साल इन्टर कर रही है। फ़ाइनल इयर हैं, उसका।......अरे नीना........ओ, नीना बेटी........।"

"कमिंग डैडी !"

अन्दर से एक महीन आवाज़ सुनाई पड़ी और साथ ही एक षोड़शा सुन्दरी पास के द्वार से निकली, जो पूर्णतया पाश्चात्य सभ्यता का जीता-जागता प्रमाण थी। इस समय वह काली सलमेदार साड़ी और काला ही ब्लाउज़ पहने थी और सीने से चिपकी थी उसकी प्यारी बिल्ली, लिली।

"हैलो अंकल, गुड इवनिंग !"

"यह हैं बेटी श्याम नारायण जी के सुपुत्र गोपाल.......और गोपाल यह है मेरी बेटी नीना।" राय साहब ने परिचय कराया।

"हैलो मि० गोपाल !" नीना ने हाथ बढ़ाया, किन्तु गोपाल ने दोनों हाथ जोड़कर 'नमस्ते' की, जिससे नीना झेंप गई। थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें होती रहीं और फिर राय साहब तथा श्याम नारायण जी

उठकर दूसरे कमरे में चले गये एवं रह गये वहाँ केवल नीना और गोपाल !

"तो आप ही हैं वह मि० गोपाल, जिन्होंने यूनीवर्सिटी में अच्छा-खासा तहलका मचा दिया है ?" नीना ने मौनता भंग की ।

"शायद !" व्यंग्य का आशय समझकर गोपाल ने कहा ।

"ओह ! डैडी हम दोनों को यहाँ अकेले क्यों छोड़ गये हैं, जानते हैं आप ?" कहती हुई नीना उठ खड़ी हुई ।

"जी हाँ, शायद एक दूसरे को समझने के लिये, लेकिन यह पूर्णतः असंभव है ।" गोपाल ने वैसे ही कहा—"लेकिन यह असंभव ......"

"क्यों ?" स्पष्ट रूप से प्रश्न हुआ । गोपाल ने देखा कि इस प्रश्न के होने पर भी उस भारतीय नारी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा जैसा कि होना चाहिए था । 'क्या वह भारतीय सभ्यता में पली नारी नहीं है अथवा फिर ··· " वह उलझकर रह गया । किन्तु प्रश्न का उत्तर तो देना ही था ।

"क्योंकि मैं पूर्वीय सभ्यता का पुजारी हूँ और आप पाश्चात्य सभ्यता की·······"

"पुजारिन हूँ !" वाक्य पूरा हुआ और साथ ही खनकता हुआ अट्टहास गूँज उठा –"तो फिर आप यहाँ क्यूँ आये हैं ?"

"आपसे केवल एक बात कहने ।"

"कहिये !" नीना ने रूक्ष स्वर में कहा और बिल्ली को पुचकारने लगी; जैसे गोपाल वहाँ था ही नहीं ।

"देखिये, वास्तव में बात यह है कि कदाचित् मेरे पिताजी और आपके डैडी ने मेरी और आपकी शादी बचपन में ही तय कर दी थी किन्तु········"

"किन्तु क्या ?" बात मध्य में ही कट गई—"कर लीजिए न, क्या मैं सुन्दर नहीं हूँ या मैं औरत नहीं हूं ?" सोफे में धँसते हुए एक मोहक मुस्कान उसने बिखेर दी ।

"आह ईश्वर ! क्या भारतीय नारी पाश्चात्य सभ्यता में रंग कर इतनी गिर गई है ?························इतनी चरित्रहीन हो गई है कि आज वह किसी भी व्यक्ति के समक्ष प्रणय-प्रस्ताव अथवा वैवाहिक प्रस्ताव रखते हुये अपने में थोड़ा-सा भी संकोच का अनुभव नहीं करती ?······ हे भगवन् ! हमारी प्राचीन नारी का वह गौरवशाली चरित्र और नारीत्व का भूषण कहाँ गया ? क्या आधुनिक नारी ने इन दोनों वस्तुओं का पूर्णरूपेण हार्दिक-त्याग कर दिया है ?" यह सब गोपाल एक ही पल में सोच गया और उसका मस्तिष्क विकृत हो उठा। उसकी आकृति रक्तिम हो गई। उसने उत्तर दिया —

"नहीं मिस नीना, बात वास्तव में यह है कि मैं विवाह करना ही नहीं चाहता।"

"या केवल मुझी से विवाह नहीं करना चाहते !"

"संभव है, आपका विचार सत्य हो।" कुछ कठोरता आ गई थी स्वरों में।

"लेकिन क्यूँ ?"

"आपने अभी स्वयं कहा था कि·······" प्रश्न को अनसुना करते हुए कहा गोपाल ने —"आप सुन्दर नहीं हैं अथवा औरत नहीं हैं तो इसका एक ही उत्तर है कि आप बेहद सुन्दर है, किन्तु औरत किसी कीमत पर नहीं !"

"ह्वाट नानसेन्स !"

"मैं उचित ही कह रहा हूं, मिस नीना। क्योंकि हर औरत में 'लज्जा' अपना एक विशेष स्थान रखती है, जो आप में नहीं है; नहीं तो आप स्वयं ही अपने विवाह की बात अपने ही मुख से नहीं कह सकती थीं।" स्वर पूर्ववत नम्र हो गया था।

"आप मुझे जलील कर रहे हैं, मि० गोपाल !" मद्धिम स्वर में, किन्तु क्रोध के कारण काँपते हुए, चीखी नीना।

"सम्भव है।" उसकी मुस्कुराहट ने नीना की क्रोधाग्नि में घृत का

कार्य किया।

"ह्वाट इज़ पासिबुल ?"

"पहली बात तो यह है कि मैं आपसे विवाह कर ही नहीं सकता .... " गोपाल ने कहा।

"मैं आपके ऊपर थूकती हूं !" नीना का क्रोध अपने आपे से बाहर होता जा रहा था।

"धन्यवाद !"

गोपाल ने व्यंग्यात्मक मुस्कान बिखेर दी। इससे नीना और अधिक जल गई। वह कुछ कहने ही जा रही थी कि राय साहब ने श्याम नारायण जी के साथ कमरे में प्रवेश किया और वह तीव्रता के साथ पास वाले कमरे में चली गई। गोपाल मुस्कुराता रहा क्योंकि उसकी चाल सफल हो गई थी। गोपाल की मुस्कुराहट देखकर वे दोनों भी मुस्कुरा पड़े— एक दूसरे को देखकर और न जाने क्या सोचकर।

"आओ बेटा खाना खा लें !" रायसाहब ने कहा।

"चलिए।" कहकर गोपाल दोनों के पीछे चल दिया।

दोनों के पीछे-पीछे चलता हुआ गोपाल एक कमरे में प्रविष्ट हुआ जिसके बीचोबीच एक मेज पड़ी थी और उस पर भोजन का पूरी तौर पर, पाश्चात्य ढंग से, प्रबन्ध था।

"नीना !" रायसाहब ने नीना को वहाँ न पाकर आवाज़ लगाई, जिसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

"मैं अभी आता हूँ।"

कहकर राय साहब वहाँ से सीधे नीना के शयन-कक्ष में पहुंचे जहाँ गुदगुदे पलंग पर नीना पेट के बल लेटी हुई थी। उसके पास पहुंचकर एवं उसके केशों को सहलाते हुए राय साहब ने पुकारा—

"नीना।"

"यस डैडी !"

"क्या बात है, कुछ रुष्ट नज़र आ रही हो ?"

"यस डैडी, मैं उस नीच, लफंगे से शादी हर्गिज-हर्गिज नहीं कर सकती।"

"क्यों बेटा ?"

"वह बहुत ही बदतमीज़ है ! उसने मुझको बहुत ज़लील किया है। पता नहीं वह अपने आपको क्या समझता है ? न सूरत है और न सीरत ! हुं !!"

"फिर भी बेटा, वह तेरा मंगेतर है !"

"ख़ाक डालिए उस पर, डैडी।"

"मैंने उसके पिता को ज़ुबान दी थी……"

"तो मुझे केवल जहर ही दे दीजिए !"

"अच्छा, अच्छा ! मत करना उससे शादी। लेकिन इस समय तो भोजन पर साथ दे दो, नहीं तो……"

"चलिए।"

कहकर नीना, राय साहब के साथ भोजन के कमरे में आई और फिर भोजन शुरू हो गया।

"गोपाल बेटा !" राय साहब का खाते हुए प्रश्न था।

"हाँ, चाचा जी।"

"तुम दोनों में कुछ झगड़ा हुआ है ?"

"नहीं तो।" गोपाल टाल गया।

"नीना तो कह रही थी।"

"क्या ?" श्याम नारायण जी ने टोका।

"कुछ नहीं ! बच्चों का मामला है, तुम चुप रहो……हाँ गोपाल तुम कुछ स्पष्ट करो !" रायसाहब ने एक न्यायाधीश की भांति कहा और श्याम नारायण जी चुप हो गये।

"मेरी बात यह थी, मैंने मिस नीना से केवल यही कहा था कि

मैं अभी विवाह नहीं कर सकता।"

"क्यों ?"

"मैं अभी आंदोलन चला रहा हूं और इसके पश्चात् ही मैं इस विषय पर कुछ सोच सकता हूं।"

"लेकिन यह आंदोलन समाप्त कब होगा ?"

"कह नहीं सकता !"

'तो क्या तब तक नीना क्वाँरी बैठी रहेगी ?"

"यही मैंने भी कहा था।"

गोपाल के उत्तरों पर श्याम नारायण जी के नेत्र अग्नि उगल रहे थे मगर न जाने क्या सोचकर वे चुप थे।

"तो क्या तुम 'इसे' छोड़ नहीं सकते ?"

"क्या आप अपने पूर्वजों द्वारा बनवाई हुई इस हवेली को छोड़ सकते हैं ?" प्रश्न में ही उत्तर दिया।

"........" राय साहब चुपचाप खाते रहे।

"ठीक उसी प्रकार से मैं भी इसे नहीं छोड़ सकता। कोई भी व्यक्ति अपनी माँ को बन्दी के रूप में कभी नहीं देखना पसन्द करता, आज मेरी माँ बन्दी है। ....मैं क्या कोई भी भारतवासी, जिसके हृदय में भारत का प्यार जागृतावस्था में है कभी इसे स्वीकार नहीं करेगा, कि उसकी मां बन्दी के रूप में रहे......वह मां जो केवल उसे जन्म ही नहीं देती बल्कि उसे पालती भी है।"

"यह तुम्हारी गलतफ़हमी है, बेटे !"

"हर बेटा, जो दूसरों के सहारे.......दूसरों के नमक पर पल रहा हो, अपनी माँ के लिए गलतफ़हमी में पड़ा रहता है।"

"क्या मतलब ?"

"गुस्ताखी माफ़, छोटे मुँह बड़ी बात कहने जा रहा हूँ कि आप अंग्रेजों से प्राप्त पेंशन पर ही अपनी जीविका चला रहे हैं। इसलिए आप अपनी जीवनदायिनी माँ को भी विस्मृत कर बैठे हैं।"

"तुम्हारी माँ के स्वतन्त्र होने का स्वप्न तुम्हेंअन्धकार में ले जाकर पटक देगा।" रायसाहब का स्वर पूर्ववत् नम्र था। भोजन समाप्त हो चुका था और शेष दोनों व्यक्ति वार्तालाप को सुन रहे थे।

"वह मेरे लिये स्वर्ग से भी बढ़कर होगा, राय साहब। यह मेरा सदा से सिद्धांत रहा है – 'जननी जन्म-भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी....'। प्रत्येक भारत का लाल अपनी माँ के लिये अपने जीवन का उत्सर्ग कर देगा। आज माँ की आर्त्त-पुकार देश के कोने-कोने में गूँज उठी है राय साहब........! आज भारत का हर 'लाल' अपने को माँ पर बलिदान कर देना चाहता है। कुपुत्र वही होते हैं, जो माँ की आबरू को बचाने के स्थान पर और भी नीचे मूल्यों में बेच देते हैं।"

"तो तुम भारत माँ के लिये क्या कर सकते हो. अकेले ?"

"मैं अकेला कब हूँ ? मेरे साथ अड़तीस नहीं तो बीस करोड़ और भी ऐसे हैं, जो अपनी प्यारी माँ के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने को हर घड़ी तैयार हैं। हमारे साथ सत्य है और सत्य की विजय हमेशा हुई है।"

"उनमें कुछ ऐसे भी होंगे जो शादी-शुदा हैं, क्यों ?"

"बिल्कुल।"

"तो तुम भी शादी करके आंदोलन चलाओ।"

"नहीं चाचाजी !" गोट फँसती देख गोपाल ने पलटा खाया—"वास्तव में विवाह एक ऐसा झंझट है जिसमें फँस कर इन्सान सब कुछ भूल जाता है। अतः फिलहाल मैं अभी तो विवाह करना ही नहीं चाहता क्योंकि आज मुझे केवल एक ही चिन्ता है कि मेरी माँ वन्दी है........पराधीन है !"

"शाबाश गोपाल ! मुझे दिली खुशी हुई तुम्हारे इन विचारों को सुनकर। काश ! आज मैं वह न होता जो हूं........" राय साहब का हाथ गोपाल के कन्धे पर था।

"क्या ?"

श्याम नारायण जी चौंके।

"हाँ श्याम, तुम्हें फ़ख्र होना चाहिए ख़ुद पर, कि तुम्हारा बेटा अपने देश की भलाई के काम में लगा है।" राय साहब की आँखों में आँसू थे।

गोपाल चकित था और नीना उठकर चली गई थी।

"तुम्हें हो क्या गया है राय ?"

"कुछ भी तो नहीं! आज गोपाल ने मेरी वर्षों से बन्द आंखें खोल दी हैं—आज़ाद हिन्द ज़िन्दाबाद !"

श्याम नारायण जी भी आश्चर्यचकित थे कि उनका दोस्त जो अंग्रेजों का पक्का तरफदार था आज……आज उसे हो क्या गया है ?

"गोपाल मैं तुम्हारी इज़्ज़त करता हूं। हिन्दोस्तान जरूर आज़ाद होगा……जब देश में इतने दृढ़ निश्चयी युवक हैं तो किसकी मजाल है जो इसकी तरफ आँख उठाकर भी देख सके।"

राय साहब ने गोपाल को खींचकर अपने कलेजे से लगा लिया, बोले—"बेटा, वास्तव में मैं और तुम्हारा बाप अपनी माँ को भूल गया था। तू महान् है……तुझे जन्मने वाली देवी भी महान् है।"

राय साहब रो रहे थे!

श्याम नारायण भी रो रहे थे!

और रो रहा था गोपाल भी!!

तीनों के नेत्रों अश्रुसिक्त थे।

गोपाल के नेत्रों में आनन्द के अश्रु थे और श्याम नारायण तथा राय साहब के नेत्रों में थी एक नवीन जीवन की नवीन आशा!

नवीन जीवन की नूतन आशाओं का संचार राय साहब और श्याम नारायण जी के जीवन में हुआ। उनके नेत्र वास्तव में खुल गये और वह देख रहे थे, भारत की दुर्दशा और अत्याचार……उनके सामने भारत

मां की लौह-शृङ्खलाओं से जकड़ी मूर्ति खड़ी थी जो उन्हें पुकार रही थी।

कुछेक पलों के पश्चात् राय साहब की कार हवेली से निकलकर स्टेशन की ओर दौड़ पड़ी। किन्तु नीना ......वह तो अपने शयन-कक्ष में पलंग पर पड़ी मस्तिष्क के अर्न्तद्वन्द में फँसी थी। उसके अर्न्तद्वन्द्व का कारण था—गोपाल व उसका असाधारण व्यक्तित्व! उसके नेत्रों के समक्ष गोपाल की आकृति पल भर के लिये चित्र की भाँति घूम गई—

"उसकी वह दुबली-पतली काया, जिस पर चमकता हुआ भारतीय श्वेत चर्म.... भरी मुखाकृति.......नेत्रों में अद्भुत तेज और दृढ़ निश्चय की आभा.......शरीर पर खद्दर का कुर्ता और पैजामा...... वास्तव में वह एक महान् आकृति थी।"

"यह क्या नीना, तू तो उस पर थूक रही थी, फिर उसी पर रीझ गई?" प्रश्न हुआ।

नीना ने चौंक कर सिर उठाया तो उसे अपनी ही प्रतिच्छाया दृष्टिगत हुई।

"उस तेजोमय आकृति पर इतना आकर्षण है कि मैं तो क्या विश्व की समस्त स्त्रियाँ उसकी ओर आकर्षित हो सकती हैं।" बुदबुदायी नीना।

"लेकिन तू यह क्यों भूल जाती है कि उसने तुझे स्त्रियों से अलग श्रेणी में रख दिया है।"

"उसका भी कारण है। मैंने उससे अत्यन्त ही निर्लज्जतापूर्वक ढंग से बात जो की थी। मैं नारीत्व की सीमा को पार कर चुकी थी.."

"अब तू क्या करेगी?"

"पाश्चात्य सभ्यता का त्याग!"

"क्या यह संभव हो सकेगा?"

"असंभव शब्द तो तेरे जैसे मूर्खों के शब्दकोश में मिलता है।

एक नारी के लिये सब कुछ संभव है। मैं उसको पाने के लिये पाश्चात्य सभ्यता तो क्या, सम्पूर्ण विश्व और अपने जीवन का भी त्याग कर सकती हूँ।"

"उसने तेरा अपमान किया था!"

"ईश्वर द्वारा किया गया अपमान भी भक्त के लिये वरदान सिद्ध होता है, पगली।"

"लेकिन क्या वह तुझे स्वीकार करेगा?"

"कदाचित् नहीं, किन्तु मैं पूरा जीवन उसी के आदर्शों का अनुकरण करके तथा उसी की प्रतीक्षा में व्यतीत कर दूँगी। उसके आदर्श मेरे आदर्श हैं, उसका लक्ष्य मेरा लक्ष्य है।"

"कैसा लक्ष्य?"

"देश की स्वतँत्रता!"

नीना की वाणी से दृढ़ता, सम्मान व गर्व टपक रहा था। उसकी आकृति पर तेज था। एक प्रण था—

गोपाल को पाने के लिये!

अपने परमेश्वर को!!

पति-परमेश्वर को!!!

"भारत के नवजवान साथियो!

"आज़ादी हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और रहेगा। चाहे इसके लिये हमें कितनी ही बड़ी क़ुर्बानी क्यों न देनी पड़े। हम स्वतन्त्रता लेकर रहेंगे। आज हम सारी दुनिया को दिखा देंगे कि सदियों से गुलाम भारतवासियों का मनोबल किसी भी आज़ाद मुल्क के लोगों से नीचा नहीं है। इतिहास गवाह है हमारा, कि हमने गुलामी के खिलाफ़ हमेशा आवाज़ बुलन्द की है। यह दूसरी बात है कि हम असफल हो गये हों, लेकिन फिर भी विदेशियों का हमने डटकर विरोध

किया है और उन्हें मुँह की खानी पड़ी है। हम गुलामी की जंजीरों में कैद होने पर भी हाथ पर हाथ रखकर कभी चैन से नहीं बैठे हैं। आज़ादी के लिये हमारे एक के बाद एक प्रयास होते ही रहे हैं।

"भारत सदा से ही आध्यात्मिक विचारों और दार्शनिकों का देश रहा है और अपने इसी आध्यात्मवाद तथा दार्शनिक विचारों के कारण ही इसकी सभ्यता विश्व के सर्वोच्च शिखर पर पहुंच गई थी और यह 'सोने की चिड़िया' कहलाया। 'सोने की चिड़िया' को देखकर आस-पास के देशों के मुँह में पानी भर आना नामुमकिन नहीं था और यही पानी विदेशियों के आक्रमण का कारण बना। किन्तु हमने भी डटकर उनका मुक़ाबला किया और उनके दाँत खट्टे कर दिये। जब सिकन्दर ऐसा वीर यूनानी हमारा सामना न कर सका तो यह अंग्रेज क्या कर सकेंगे ?

"गोलियों की बड़ी से बड़ी बाढ़ भी हमारे इस जुनून और जाश को न रोक सकेगी ! हम तोपों के दहानों में अपना सर डालकर शहीद हो जायेंगे ! !

"साथियो ! आज तुम्हें अपने राम-रहीम की सौगन्ध.......गीता-क़ुरान की सौगन्ध.......काबे और काशी की कसम.......वतन व मातृ-भूमि की कसम है,देश के प्यारो; ताकि अंग्रेजी-शासन की भी चूलें काँप उठे ! दीवारें भरभरा कर ढह जावें !! आओ हम सब एक हों.......हमारी आवाज एक हो—

"एक है अपनी ज़मीं, एक है अपना गगन;
एक है अपना जहाँ, एक है अपना वतन।
अपने सभी सुख एक हैं, अपने सभी दुख एक हैं,
आवाज़ दो....आवाज़ दो हम एक हैं.......॥
ये वक़्त खोने का नहीं, ये वक़्त सोने का नहीं;
जागो वतन खतरे में है, सारा चमन खतरे में है;
फूलों के चेहरे ज़र्द हैं, ज़ुल्फ़े फ़िज़ाँ भी गर्द हैं;
उभरा हुआ तूफ़ान है, गर्दिश में हिन्दुस्तान है;

दुश्मनसे नफ़रत फ़र्ज है, घरकी हिफ़ाज़त फ़र्ज है;
बेदार हो, बेदार हो, आमादय पैकार हो।
आवाज़ दो.......॥

"ये है हिमालय की ज़मीं, ताजो अजन्ता की ज़मीं;
संगम हमारी आन है, चित्तौड़ अपनी शान है;
गुलमर्ग का महका चमन, जमुना का तट
गोकुल का बन;
गंगा के धारें अपने हैं, ये सब हमारे अपने हैं;
कह दो कोई दुश्मन नज़र, उट्ठे न भूल से इधर;
कह दो कि हम बेदार हैं, कह दो कि हम तैयार हैं।
आवाज़ दो.......॥

"उट्ठो जवानो ऐ वतन, बांधे हुये सर से कफ़न;
उट्ठो दखिण की ओर से, गंगो-जमन की ओर से;
पंजाब के दिल से उठो, सतलज के साहिल से उठो;
महाराष्ट्र की ख़ाक से, दिल्ली की अर्ज़ पाक़ से;
बंगाल से गुजरात से, कश्मीर से मद्रास से;
नेफा से राजस्थान से, कुल ख़ाके हिन्दोस्तान से।
आवाज़ दो....आवाज़ दो हम एक हैं....हम एक हैं॥"
"—आज़ाद भारत।"

यह था उस प्रकाशित पत्र का वक्तव्य जो गोपाल ने बीना की सहायता से प्रकाशित करवाया था और रात ही रात गोपाल ने अपनी मण्डली के अन्य सदस्यों की सहायता से शहर के समस्त घरों में डलवा दिया था। फलतः शहर में स्वतन्त्रता की आग ने अच्छी तरह से जोर पकड़ लिया था।

ब्रिटिश सरकार के हाथों से तोते उड़ गये। क्योंकि उस पत्र के अंत में कहीं भी किसी व्यक्ति-विशेष का नाम न था। उसी दिन, संध्या के

आठ बजे गोपाल, जितेन्द्र, कमल, गुरू और ब्रजभूषण आगे का कार्यक्रम बनाने में व्यस्त थे। अचानक किवाड़ खटके।

"कौन ?" जितेन्द्र की आवाज गूँजी।

"मैं रवीन्द्र !"

और जितेन्द्र ने साँकल खोल दी।

"गोपाल भय्या..........!"

किवाड़ों को पुनः तीव्रता से बन्द करते हुये कहा रवीन्द्र ने।

"क्या है ? इतने घबराये हुये क्यों हो ?" गोपाल ने प्रश्न किया।

"भय्या, यहाँ से जितनी शीघ्र हो सके दूर चले जाओ नहीं तो........"

"क्यों, बात क्या है ?" गोपाल के चेहरे पर दृढ़ता थी।

"बात ! हम छहों के नाम 'वारन्ट-इशू' हो चुके हैं।"

"क्या ?"

सबके मुँह से निकला।

"हाँ, किसी ने हमारे साथ विश्वासघात किया है। इसलिये अब जितनी भी जल्दी हो सके, हमें यह शहर छोड़ देना चाहिये।"

"मगर क्यों ?" गोपाल ने पुनः प्रश्न किया।

"यह ठीक ही कह रहा है, गोपाल भय्या !" गुरू ने रवीन्द्र की बात का समर्थन किया—"ताकि हम लोग पुलिस से बचकर और अन्य शहर में रहकर अपने आगे के कार्यक्रम बना सकें तथा अपना यह स्वप्न पूर्ण कर सकें।"

"ठीक है।"

गोपाल ने धीरे से इस बात को स्वीकार कर लिया।

और फिर ....

आधे घन्टे बाद जब पुलिस ने वहाँ सशस्त्र सैनिकों के साथ छापा मारा तो चिड़िया वहाँ से उड़ चुकी थी और वह लोग हाथ मलकर रह गये।

वहाँ से उड़कर चिड़िया ने अड्डा बनाया, मसवापुर !
मसवापुर !
जहां किसी की दृष्टि भी न पहुंच सके !

———

३

गोपाल अभी विस्मृत स्मृतियों की अथाह गहराइयों में ही डूबा हुआ था कि अचानक उसे आवाज सुनाई दी—

"गोपाल·······गोपाल भय्या !"

"कौन ?" गोपाल चौंका।

"मैं !"

आवाज बिलकुल पीछे से आई थी और साथ ही उसके कन्धे पर किसी व्यक्ति के हाथ का दबाव भी पड़ा था।

"माफ़ कीजियेगा मैंने आपको·······" गोपाल मुड़ा।

"कोई बात नहीं।"

उस व्यक्ति ने कहा और वहीं बैठ गया। उसकी आँखों में वीरानियाँ झाँक रहीं थीं। दाढ़ी बढ़ी हुई थी। शरीर पर वही बन्दियों की-सी पोशाक थी। जिस पर बन्दी संख्या पड़ी हुई थी। गोपाल बड़े गौर से उसकी ओर देख रहा था। उसने इस व्यक्ति को कहीं देखा है, ऐसा उसे प्रतीत हो रहा था। किन्तु कहाँ ? यही एक प्रश्न था जो गोपाल के मस्तिष्क को मथे डाल रहा था। अचानक उस रहस्यमय व्यक्ति के होंठों पर मुस्कुराहट उभरी—

"नहीं पहचाना ?"

"नहीं, असफल रहा।"

"भूल गये रवीन्द्र को········अपने साथी को······· अपने अज्ञात को भूल गये क्या ?" उस रहस्यमय व्यक्ति, जो कि मैं स्वयं था, के नेत्र अश्रुसिक्त हो गये। वाणी मेरी भर्रा उठी।

"नहीं भाई, तुम्हें कैसे भूल सकता हूं !" गोपाल की आकृति पर प्रसन्नता थी। क्योंकि 'एक से भले दो और दो से भले चार' वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। —"कहो कैसे हो ? कैसी गुजर रही है ?"

"सब ठीक है, बस 'माँ' का आशीर्वाद है।"

"तुम्हारा उपन्यास तो पूरा हो ही गया होगा ?"

"कौन-सा ?"

"अरे वही ! भला-सा नाम था········अरे हां, याद आया—वन्देमातरम् !"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"अभी कहानी ही आगे नहीं बढ़ी।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि अभी हमारा आंदोलन ही कहाँ खत्म हुआ है ?······हमें अपनी प्यारी स्वतन्त्रता कहाँ मिली है ?········हमारी माँ की बेड़ियाँ भी अभी कहाँ कट पाईं हैं ?"

"हाँ, रवीन्द्र !" निरर्थक-सा गोपाल का उत्तर था।

कुछ देर तक चुप्पी छाई रही और अन्त में उसे गोपाल ने ही तोड़ा—"इतने दिनों तक कहाँ रहे, रवीन्द्र ?"

"लखनऊ में !" मैंने कहा।

"और कोई ख़बर भी नहीं दी ?"

"ख़बर ? पता तक तो मालूम नहीं था, न मुझे ही मालम था और न ही तुम्हें, फिर कैसे संभव........?" मैं हँसा।

"हाँ भाई !" गोपाल झेंप गया। — "लेकिन फिर यहाँ कैसे ?",

"क्रांतिकारी दलों के मध्य में दो वर्ष तक घूमता रहा और फिर 'आज़ाद हिन्द फ़ौज' में भर्ती हो गया था। किन्तु उसी दिन मुझे दल से आज्ञा मिली गवर्नर की कार में बम रखने की। और मैं उस समय गिरफ्तार कर लिया गया। जबकि मैं उस भीड़ से रफूचक्कर होने की कोशिश में था। अचानक एक अफसर की निगाह मेरी ओर ठहर गई लेकिन जब तक वह मेरी ओर बढ़ता-बढ़ता कार के चीथड़े उड़ गये। गवर्नर तो किसी तरह बच गया मगर मुझे पीछा करके पकड़ लिया गया। जल्दबाजी में किसी ने तलाशी भी न ली और यहाँ भेज दिया.......।" मैं अट्टहास कर उठा। ऐसी हँसी, जिसमें एक भयानक राज़ छिपा हुआ था। एक ऐसा रहस्य, जिसे यदि वे क्रूर अंग्रेज पा जाते तो शायद ख़ुशी के मारे पागल हो जाते।"

"तो क्या......?"

"हाँ भय्या, तनिक धीरे बोलो।" मैंने गोपाल के कान में फुस-फुसाते हुए कहा। और अंधेरे की ओर संकेत किया—"आओ उधर चलें !"

गोपाल एक यन्त्रचालित व्यक्ति की भांति मेरे पीछे आकर अंधेरे में बैठ गया। मैंने पुनः कहना शुरू किया—

"जानते हो वह रहस्यमय वस्तु क्या थी ?"

"........"प्रश्न सूचक दृष्टि उठी।

"वह था यहाँ से रंगून जाने का नक्शा और ट्रांसमीटर !"

"क्या ?"

"हाँ गोपाल, यह सत्य है और यदि विश्वास न हो तो मैं तुम्हें दिखा भी दूँगा।"

"लेकिन कब ?"

"आज रात में लगभग बारह बजे के आस-पास......और हाँ, एक बात बताओ कि यहां छुटकारा पाओगे ?"

"मुक्ति ?" स्वर आश्चर्यपूर्ण था।

"हाँ, हाँ मुक्ति !"

"भला यह कैसे संभव हो सकता है ?"

"संभव !.... हः .... हः .... हः ! गोपाल, कदाचित् तुम भूल गये कि असम्भव शब्द मूर्खों के शब्दकोष में मिलता है। तुम एक महान् आंदोलन के अग्रणी नेता हो। और ऐसे व्यक्ति के मुख से 'असम्भव' शब्द का निकलना शोभा नहीं देता है......तुम एक ऐसे क्रांतिकारी हो जो प्रति-पल प्राण हथेली पर लेकर घूमता है, अपने एक महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिये। जब हम सामने से आती हुई गोलियों के सामने सीना तान कर खड़े हो सकते हैं .....गोलियों की बाढ़ को सीने के फौलाद पर रोक सकते हैं तो हमारे सामने यह चहारदीवारी तो कागज की दीवार है। अगर हममें आत्मबल मौजूद है तो चहार-दीवारी क्या पर्वतों को भी लाँघकर हम अपने नेता सुभाष चन्द्र बोस से मिलेंगे और अगर हममें आत्मबल ही न होगा तो यही दीवारें हमारे लिये कालकोठरी बनकर सर्प की भाँति हमें डस लेंगी और हम जीवित रहते हुये भी मृत होकर रह जायेंगे। और फिर दुनिया की कोई भी ताक़त हिन्दोस्तान को आज़ाद नहीं करा सकती। हमारा वह प्यारा स्वप्न केवल स्वप्न बन कर ही रह जायेगा और तब ......और तब यथार्थ हमसे कोसों दूर होगा, जहाँ हम पहुंचने में भी असमर्थ होंगे।"

"मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ, रवीन्द्र !" गोपाल का सिर लज्जा और ग्लानि से नत हो गया।

"आज से कुछ माह पूर्व, मई में, नेता जी ने बर्लिन रेडियो पर अपना एक वक्तव्य दिया था, जो हमारे दल के प्रत्येक व्यक्ति ने सुना था।" मैंने एक निःश्वास खींचकर कहा। "वह कह रहे थे—

'अंग्रेज लोगों के इतने प्रचार के बावजूद सोचने समझने वाले हर हिन्दुस्तानी के लिए यह बात बिल्कुल साफ है कि इस दुनिया में हिन्दुस्तान का सिर्फ एक दुश्मन है और वह है ब्रिटिश साम्राज्यवाद, जो सौ बरस से ज्यादह से हिन्द का शोषण करने और खून चूसने में लगा है........जब ब्रिटिश साम्राज्यवाद पछाड़ दिया जायेगा, हिन्द को आज़ादी मिल जायगी। यदि इसके विपरीत कहीं ब्रिटिश साम्राज्यवाद इस लड़ाई में जीत गया, तो हिन्दुस्तान की गुलामी की जंजीर हमेशा के लिए मज़बूत हो जायेगी। इसलिए हिन्दुस्तान के सामने आज़ादी और गुलामी में से एक चीज़ को चुन लेने का सवाल है और उसको यह चुनाव कर ही लेना चाहिये।....ब्रिटिश साम्राज्यवादी मुझे दुश्मन का एजेंट कहते हैं। जब मैं अपने देशवासियों से बोलता हूं तो मुझे अपनी सच्चाई साबित करने के लिए किसी के वक़ालतनामे की जरूरत नहीं है।........मैंने अपनी तमाम ज़िन्दगी देश की खिदमत में लगाई है और मरते दम तक देश सेवा ही करता रहूंगा। दुनिया के किसी भी हिस्से में मैं रहूं, मैं सिर्फ हिन्दुस्तान के प्रति वफ़ादार रहा हूं, यदि लड़ाई के अलग-अलग मैदानों पर आप ग़ौर करें तो आप इसी नतीजे पर पहुंचेंगे कि दुनिया की कोई भी ताक़त अब ब्रिटिश साम्राज्यवाद को बिखरने से नहीं रोक सकती। हिन्द महासागर की चौकियां पहले ही ब्रिटिश जहाजी ताकत के हाथ से निकल चुकी हैं। माँडले भी उनके हाथ से जा चुका है। ....देश भाइयो! जबकि ब्रिटिश साम्राज्य खत्म हो रहा है, जब हिन्दोस्तान की आज़ादी का दिन नजदीक आ रहा है, तब मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि आज़ादी की पहली लड़ाई १८५७ में शुरू हुई थी और अब मई १९४२ में हमारी आज़ादी की आख़िरी लड़ाई शुरू हुई है। कमर कस लीजिए। हिन्दुस्तान की लड़ाई की मुक्ति की घड़ी नजदीक ही है'........"

"तुमने मेरी आंखें खोल दीं हैं, रवीन्द्र! मुझे तुम नेताजी से

मिलाओगे ? मैं आजाद हिन्द फौज में भर्ती होकर देश के लिए अपने रक्त की आखिरी बूंद भी बहा दूंगा !"

गोपाल का चेहरा आवेश से लाल हो रहा था।

"सच ?"

"हाँ रवीन्द्र, मैं भारत माँ की सौगन्ध खाता हूँ कि कभी भी अपने इस वचन से पीछे न हटूंगा।"

"बस फिर हम आजाद हो जायेंगे।"

और फिर दोनों आजादी के दीवाने एक दूसरे से लिपट गये।

"अच्छा, रात को बारह बजे तैयार रहना।"

"अच्छा !"

और मैं वहाँ से चला आया। गोपाल सोचता रहा—

'आज की रात······बारह बजे ?"

हाँ, बारह बजे !

बारह बजने वाले थे।

रात्रि का यौवन अपनी पूर्णता पर था। अम्बर पर आज रजनीश भी न था। अवनि तल पर गहन अन्धकार एवं नीरवता का साम्राज्य व्याप्त था। कहीं से किसी भी प्रकार का शब्द नहीं श्रवित हो रहा था, सिवाय झींगुरों की मद्धिम "चीं-चीं" के। यदाकदा प्रहरी के बूटों की तीव्र व मद्धिम ध्वनि श्रवित हो जाती थी। किन्तु धीरे-धीरे वह ध्वनि भी आनी बन्द हो गई। हर थोड़ी देर पश्चात् प्रहरियों की मिश्रित तीव्र वाणी श्रवित हो जाती थी—"जागते रहो······चौकस रहो······सावधान !"

"टन् ! ··टन् !!··· टन्····"

कारागार के घन्टे ने बारह बजने की सूचना दी। एकवारगी ही प्रहरियों की चहलकदमी पुनः तीव्र हो उठी, किन्तु फिर तुरन्त ही रात्रि

की नीरवता के मध्य सो-सी गई।

कारागार शान्त हो रहा !

निद्रा की मोहक नींद में वह भी डूब गया !!

और रात्रि ने नीरवता की मोहक सुखमय चादर फैला दी कारागार के विशाल प्रांगण पर !!!

कारागार अंधकार की पर्त्तों में दब चुका था। विश्व वृहत् प्रांगण में रात्रि अठखेलियाँ कर रही थी। प्रहरी भी उनींदें हो जम्हाईयों द्वारा आलस्य को दूर भगाने की चेष्टा कर रहे थे। स्वाधीनता का पुजारी गोपाल भी निद्रा देवी की गोद में विश्राम कर रहा था। सम्पूर्ण बन्दी-गृह में यदि कोई व्यक्ति जाग रहा था तो वह था, मैं··· केवल मैं !

मेरे नेत्रों में तनिक भी निद्रा न थी। अत्यन्त कठिनतापूर्वक मैंने यह समय काटा था। जैसे ही बारह बजे मैंने पासकी दीवार से एक ईंट टटोल कर बाहर निकाल ली, और फिर कुछ ही क्षणों के उपरान्त मेरे हाथ में कुछ कागज और एक दियासलाई के बड़े डिब्बे के आकार का काले रंग का डिब्बा था। मैंने उन दोनों वस्तुओं को सावधानीपूर्वक छिपा लिया और फिर चुपके से मैं उठा और गोपाल के पास पहुंचा। गोपाल गहन निद्रा में निमग्न था। उसके होंठों पर गर्वयुक्त मुस्कान खेल रही थी। कोठरी के बाहर विद्युत का कुमकुमा बाहरी भाग को अपने पीतवर्णीय प्रकाश से प्रकाशित कर रहा था, जिसका कुछ अंश कोठरी के अन्दर भी सीखचों से छनकर आ रहा था। कुछ क्षणों के लिये मैं किसी अनजाने भय से कम्पित अवश्य हो गया, किन्तु तुरन्त ही संतुलित होकर आगे बढ़ा और गोपाल के पास जाकर चुपके-से लेट गया। अभी मैंने गोपाल को जगाने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि प्रहरी की पदचाप सुनाई दी जो क्रमशः बढ़ती ही जा रही थी और फिर आकर हमारी ही कोठरी के पास बन्द हो गई। प्रहरी ने एक अंगड़ाई ली और 'जागते रहो' की एक तेज आवाज लगाकर वह वहीं,

हमारी कोठरी की ओर, पीठ करके तथा संगीन को समीप की दीवार से टिकाकर बैठ गया और अपने लिये चुन्हई* बनाने लगा।

कुछ देर मैं आहट लेने के लिए रुका और चुपचाप गोपाल की बगल में लेटा रहा—केवल इसी विचार से कि अब शायद, यह गया काम से और फिर अपना काम पूरा। क्योंकि मेरे मस्तिष्क में विद्युत् गति से एक विचार कौंध गया था, जिसके कारण मैं किंचित मुस्कुरा उठा। थोड़ी ही देर में प्रहरी सो गया और उसके खर्राटे वहाँ मद्धिम आवाज़ में गूंजने लगे, जिससे गोपाल की नींद स्वतः उचट गई और वह उठ बैठा। वह प्रहरी को कुछ कहने ही जा रहा था कि मैंने उसके मुख पर हाथ रख दिया। गोपाल यकायक चौंका—

"तुम ?"

"हाँ, तैयार हो न !" मैं फुसफुसाया।

"क्यों ?"

"भागने के लिए।"

"भागने के लिये ? लेकिन यह होगा कैसे ?"

"सुनो"......"

कहकर मैंने अपना विचार गोपाल के कान में बता दिया और वह सहमत भी हो गया।

"हाँ, यही ठीक रहेगा।"

गोपाल ने कहा और मैं तथा वह योजना को कार्यरूप में परिणत करने के लिये तत्पर हो गये।

प्रहरी सो रहा था और हम दोनों चुपचाप उसी की ओर दीवार के सहारे बढ़ रहे थे.........बढ़ते जा रहे थे। गोपाल ने सीखचों के पास

---

*चुन्हई—एक प्रकार की विशेष तम्बाकू जिसे चूने के साथ हाथ पर रगड़ कर बनाते हैं एवं तब उसका रसपान करते हैं। ऐसी तम्बाकू को ग्रामीण भाषा में 'चुन्हई' कहते हैं।

पहुंचकर धीरे से अपना हाथ बाहर निकाला ही था कि अचानक प्रहरी ने संगीन उठा ली और मद्धिम किन्तु खनकती हुई आवाज़ में अट्टहास कर उठा।

दिसम्बर की उस ठंडी रात में भी हम दोनों के शरीर पूर्णत: पसीने से भीग गये। माथे पर बड़ी-बड़ी बूंदे चुहचुहा आईं कि अब क्या होगा ?

"भागना चाहते थे ? लेकिन यह तुम लोगों का दुर्भाग्य था जो मेरी आँख खुल गई !"

"........" हम दोनों ही चुप थे। चुपचाप उस प्रहरी की ओर ताक रहे थे जिसके बायें हाथ ने हरकत की और जेब से चाभियों का गुच्छा निकलकर हाथ में आ रहा। 'खट्' की हल्की सी ध्वनि हुई और बन्दीगृह का द्वार खुल गया।

"बाहर आओ !"

आवाज़ सुनाई पड़ी और हम दोनों चुपचाप यन्त्रचालित पुतलों की भांति बाहर आ गये। द्वार पुन: बन्द हो गया। चाभियों का गुच्छा पुन: जेब में पहुँच गया था।

"मेरे पीछे आओ लेकिन याद रहे कि कोई भी......"

प्रहरी ने कहा और हम लोग उसके पीछे चल दिये। हमारा मस्तिष्क बिलकुल बेकार हो चुका था। हमारी सम्पूर्ण चेतना लुप्त हो चुकी थी और हम दोनों का यही विचार था कि बुरे फंसे।

अचानक प्रहरी ठहर गया। हम दोनों चकित थे, क्योंकि उस समय हम लोग कारागार की चहारदीवारी के बिल्कुल समीप थे और हमारे ऊपर था, अशोक का वृक्ष। जिसकी घनी छाया के मध्य हम तीनों लुप्तप्राय से हो चुके थे। प्रहरी गोपाल की ओर मुड़ा—

"गोपाल भय्या यहीं रुको, मैं अभी आया !" आवाज़ में परिवर्तन हो चुका था, जिसे हम दोनों ही पहचानते थे।

"जितेन्द्र तुम ?" गोपाल ने प्रश्न किया।

"हाँ भय्या !"

"तुम यहाँ कैसे ?"

"बाद में बताऊँगा, पहले यह वर्दी ......"

"अच्छा जाओ, लेकिन जरा जल्दी !"

"बस, अभी आया !"

कहकर जितेन्द्र एक ओर लुप्त हो गया। मैंने पूछा—

"यह जितेन्द्र था न ?"

"अब भी संदेह है क्या ?" गोपाल मुस्कराया।

"नहीं, अच्छे अवसर पर आ गया। लेकिन कैसे........"

"सब ईश्वर की माया है, वह जो कुछ भी करता है अच्छा ही करता है।"

"हाँ भाई।"

कहकर मैं चुप हो गया। हम दोनों मौन रहकर जितेन्द्र की प्रतीक्षा करने लगे। कुछ ही क्षणोपरान्त उस गहन अन्धकार के मध्य एक छाया की प्रतिमूर्ति उभरी जो वस्तुतः जितेन्द्र की ही थी। समीप आकर उसने हम लोगों को पेड़ पर चढ़ने को कहा। कुछ ही क्षणों में हम लोग ऊपर थे। पेड़ की एक टहनी चहारदीवारी के पार गई थी, जिसके द्वारा तीनों ही व्यक्ति एक-एक कर नीचे कूद गये। जितेन्द्र ने एक सीटी बजाई और तुरन्त ही प्रत्युत्तर में सीटी सुनाई दी। जितेन्द्र के हाथ में वही संगीन थी। उसने हमको इशारा किया और मैं तथा गोपाल चुपचाप उसके पीछे चल दिये।

कुछ ही दूरी पर एक जीप खड़ी थी। तीनों व्यक्ति जाकर चुपचाप उस पर बैठ गये और जीप चल दी अपनी अनजानी मंजिल की ओर !

सब चुप थे, किन्तु सभी सोच रहे थे।

क्या ?

अपने भविष्य तथा वर्तमान के विषय में !

सबके हृदय आह्लाद से परिपूर्ण थे—एक नवीन योजना के अन्तर्गत ! लेकिन योजना क्या थी, इसे केवल दो ही व्यक्ति जानते थे जो उसी में विचारमग्न थे ।

........और जीप भागी जा रही थी......

अपनी अनजानी मंजिल की ओर !

अनजानी मंजिल ?

अनजानी मंजिल थी, भगवान चन्द्र की कोठी !

दरबान ने जीप को देखते ही फाटक खोल दिया क्योंकि वह ड्राइवर को पहचानता था जो स्वयं भगवान चन्द्र ही थे । जीप पोर्टिको में जाकर रुक गई ।

"गोपाल, तुम लोग अन्दर चलो ।" भगवान चन्द्र ने कहा ।

"जी अच्छा !"

गोपाल, भगवान चन्द्र को पहचानता था । वह, मैं तथा जितेन्द्र चुपचाप अन्दर चले गये । थोड़ी ही देर बाद भगवान चन्द्र भी वहाँ आ गये ।

"रवीन्द्र तुम्हारा ही नाम है ?" मेरी ओर संकेत था ।

"जी !" मैंने कहा ।

"अच्छा, तुम और जितेन्द्र मेरे साथ आओ, तहखाने में चलो.... और तुम गोपाल ऊपर चौथे कमरे में जाओ, आशा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही होगी ।"

"आशा ?" गोपाल चिहुँका ।

"हाँ !"

"अच्छा ।"

कहकर गोपाल बाहर निकल गया और कमरे से बाहर आकर वह

चुपचाप आशा के कमरे की ओर चल दिया। आशा का कमरा दूसरी मंजिल पर था।

गोपाल को स्वप्न में भी विश्वास न था कि घटनाचक्र इस तीव्रता से चलेगा। किन्तु वही स्वप्न अब यथार्थ में परिवर्तित हो चुका था — यही उसे आश्चर्य था। यह सत्य है कि जब कोई व्यक्ति स्वप्न देखता है तो उसे आभास भी नहीं होता कि वही स्वप्न यथार्थ में भी परिवर्तित हो सकता है, किन्तु जब वही स्वप्न यथार्थ में परिवर्तित हो जाता है तो उसे कितनी प्रसन्नता और आश्चर्य होता है इसका अनुमान केवल वही व्यक्ति लगा सकता है। यही दशा गोपाल की भी थी क्योंकि अब वह मुक्त था और नेता जी सुभाष चन्द्र बोस से मिलने का स्वप्न, जो उसे रवीन्द्र ने दिखाया था, पूरा होने जा रहा था।

आशा का कमरा दूसरी मंजिल पर था। वह कब आशा के कमरे के पास आ गया इसका भी उसे ज्ञान न था। आशा के कमरे का अनुमान उसने इस तरह लगाया कि उसके कमरे में अभी भी प्रकाश हो रहा था। एक क्षण के लिए उसके समक्ष आशा का वह मुस्कुराता हुआ और भय से पीला पड़ा हुआ चेहरा नृत्य कर गया। अनजाने में ही उसके ओंठों पर मुस्कुराहट आ गई। उसका हृदय न जाने क्यों आशा का विचार आते ही प्रसन्नता से उछलने लगा और उसने उसी दशा में द्वार खटखटा दिया।

"कौन ?"

आशा की दुखित वाणी सुनाई दी।

"मैं⋯⋯गोपाल !"

"गोपाल ?"

साथ ही द्वार खुला और आशा ने झपटकर उसको अपनी भुजाओं में कस लिया। किन्तु जैसे ही उसे स्थिति का ज्ञान हुआ वह गोपाल से पृथक हो गई। उसके नेत्र लाज से पृथ्वी पर गड़ गये और कपोलों पर रक्त छलक आया।

"आशा ! अन्दर आने को भी न कहोगी ?" गोपाल मुस्कुराया।

"ओह ! मैं तो भूल ही गई थी...."

"यह भूलने का रोग कब से पाल लिया ?"

"........"

आशा चुप ही रही। किन्तु एक बार उसके नेत्र उठे, गोपाल के नेत्रों से टकराये तथा पुन: पूर्ववत् हो गये मानो कह रहे हों जब से तुम्हें अपना आराध्यदेव मान लिया है। गोपाल को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया और वह प्रसन्नता से गद्गद् होता हुआ कुर्सी पर बैठ गया। आशा ने रेफ्रीजिरेटर से भोजन निकालकर उसके सम्मुख लगा दिया और स्वत: सामने बैठ गई।

"खाइये !"

"और तुम ?"

"मैं तो खा चुकी !"

"झूठ ! तुम्हारा चेहरा बता रहा है कि सबेरे से तुमने खाना तो दूर रहा, एक बूंद पानी भी नहीं पिया है।"

"........" आशा का चेहरा झुक गया।

"यह तुमने अपने साथ नहीं आशा, वरन् मेरे साथ अन्याय किया है ....नहीं, नहीं; यह बहुत बुरी बात है। तुमको मेरे साथ खाना ही पड़ेगा।"

"लेकिन........"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, चलो मुँह खोलो।"

आशा का हृदय एक नैसर्गिक आनन्द से झूम उठा और मुस्कुराती हुई आशा ने गोपाल के हाथ से पहला कौर खा लिया और फिर स्वत: खाने लगी।

"अच्छा एक बात बताओगी ?" भोजनोपरान्त गोपाल ने मुस्कुराते हुए आशा से प्रश्न किया।

"हूं।" संक्षिप्त-सा उत्तर था।

"जैसे ही मैंने कमरे में प्रवेश किया था, वैसे ही तुमने……"

"हटिये, आप बड़े 'वो' हैं !" आशा लाज के सागर में डूब गई।

"तो क्या तुम मुझे……देखो आशा, मैं तुम्हें भलीभांति बता देना चाहता हूं कि मेरा जीवन नीरस रहा है और रहेगा; किन्तु वह नीरस जीवन ही मेरे लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि मैं मातृभूमि के सम्मुख किसी भी वस्तु को अधिक महत्व नहीं देता। तुमने मेरे नीरस जीवन में प्यार के रस का जो निर्झर उत्पन्न किया है वह भी केवल वहीं तक सीमित रहेगा जहाँ तक वह मेरी देश-भक्ति के समक्ष बाधक न होगा। देश के सम्मुख मैं अपने प्यार तक को बलिदान कर दूँगा। …… मैं समझ रहा हूं कि तुम क्या कहना चाहती हो, फिर भी मैं तुम्हें यह बता दूं कि मेरे विद्यार्थी जीवन में भी कई युवतियों ने मेरा सामीप्य प्राप्त करने का यत्न किया था किन्तु परिणामस्वरूप उन्हें मिली क्या—असफलता ! क्योंकि मेरे अन्तर में प्यार का पुष्प मुखरित होना उतना ही दुष्कर कार्य था जितना कि रेगिस्तान में पुष्प का खिलना। लेकिन …लेकिन तुममें न जाने कौन-सी ऐसी आकर्षण शक्ति थी जिसके कि कारण तुम्हारी ओर देखते ही मैं अवश हो उठा।" गोपाल भावना में बह गया।

"नहीं, नहीं गोपाल ! मैं तुम्हारे मार्ग में अवरोधक का कार्य नहीं करूँगी। लेकिन एक प्रार्थना है कि अब से मैं सदा तुम्हारे साथ ही रहूँगी।"

"नहीं आशा ! यह सम्भव नहीं है।" गोपाल उठकर आशा की कुर्सी के पीछे आ गया।

"क्यों ?……इसीलिये न, कि मैं नारी हूं !"

"हां आशा, तुम समझो तो सही !"

"तुमने अभी तक नारी को अबला ही समझा है, गोपाल। लेकिन नारी का सबल रूप नहीं देखा है। यह सत्य है कि नारी अबला और असहाय होती है, लेकिन जब वही प्रणयरूपी नारी, शक्ति-रूप धारण कर

लेती हैं, तब ब्रह्माण्ड की बड़ी से बड़ी शक्तियां भी कम्पित हो उठती हैं। इतिहास में ऐसी नारियों की कमी नहीं है जो समय पड़ने पर अपने स्वामी और अपने देश की शक्ति हुई हैं। सावित्री तो अपने पति को यमराज तक से छीन लाई थी ! रानी लक्ष्मीबाई ने झांसी के लिये अपने प्राणों को भी तुच्छ समझा और प्राणों की परवाह न करते हुए भी जीते-जी झांसी की रक्षा की थी !!"

"मैं हार गया, आशा।" गोपाल के स्वर में असमर्थतापूर्ण स्वीकृति का भाव था।

"सच ?" आशा प्रसन्नता से झूम उठी।

"हाँ, आशा ! मुझे नारी के इस रूप का बिल्कुल भी ध्यान न था।"

"तो तुम्हारा वायदा रहा........पक्का ?"

"कहो तो सिर के बल खड़े होकर कहूं।"

"नहीं, टाँगों के बल ही खड़े रहो।"

"अच्छी बात है। चलो यह भी सही।"

"हूं ! चलो अब चुपचाप सो जाओ। तुमतो बिल्कुल बच्चे हो !" मुस्कुराती हुई बोली आशा।

"लेकिन अकेले ?.......डर लगता है।"

"हुश् ! शरीर कहीं के।"

कहते-कहते भी वह गोपाल की भुजाओं में बँध गई। उसकी आँखें एक नैसर्गिक आनन्द की प्राप्ति के कारण न खुल पा रही थीं, क्योंकि वे तो स्वर्ग के कल्पित लोक में विचरण कर रही थीं।

........और इधर गोपाल ?

उसके नेत्रों में चिन्ता भी थी, किन्तु मिश्रण के रूप में ! वह सोच रहा था कि "क्या हुआ होगा ?"

'कहाँ ?" मस्तिष्क ने पूछा।

"मसवापुर में।"

" चिन्ता की क्या बात, प्रातः स्वतः ही ज्ञात हो जायेगा !"

"ठीक ही तो है। प्रातः देखूंगा !"

फिर आशा और गोपाल दोनों ही निद्रा के वशीभूत हो गये।

एक नई आशा को साथ लेकर !

प्रातःकाल की नवज्योति स्वच्छ नीलाकाश में विस्तृत हो चुकी थी। चारों ओर नवजीवन का सन्देश सूर्य की प्रथम किरणों द्वारा प्रसारित किया जा चुका था।

कारागार के वातावरण में विचित्र-सी व्याकुलता व्याप्त थी। वहाँ से दो क्रान्तिकारी, कारागार के प्रहरियों की आँखों में धूल झोंककर भाग गयेथे। अपने कमरे मेंकारागाराध्यक्ष(जेलर) व्याकुलता से चहल-कदमी कर रहा था। यह एक अंग्रेज था। उसका गोरा मुख इस समय क्रोध के कारण बाल-सूर्य हो रहा था। नेत्रों में अग्नि स्पष्टरूप से झलक रही थी। क्रोध के कारण वह रह-रहकर काँप उठता था। अचानक वह ठहरा और उसके हाथों में उसका चिरपरिचित कोड़ा झूल उठा। उसी समय वहाँ एक व्यक्ति ने प्रवेश किया। और वह दहाड़ा—

"सिक्सटीन नम्बर की कोठरी पर कल कौन ठा ?"

"मैं था, सर !" आगन्तुक भय से कम्पित हो उठा।

"टुम ?"

"यस सर !"

"टो टुम राट को क्या करटा ठा ?.........टुमारी ड्यूटी सिक्सटीन नम्बर पर ठा और टुमको जागने का रहना ठा, फिर टुम सोया कैसे ?"

"सर....सर....मैं...." आगन्तुक बौखला गया।

"ह्वाट सर एन्ड ह्वाट मैं ?" वह कड़का—"टुम अपनी ड्यूटी नाईं अडा करने सकटा ठा, टो फिर हमको क्यूँ बोला ठा ?"

"सर, हमको धोखा दिया गया।"

"ह्वाट !....ब्लफ़ ?"

"यस सर ! रात में क़रीब ग्यारह बजे जब मैं पेशाब करने गया था, तो उस समय मैंने अच्छी तरह से कोठरी का ताला देख लिया था। जैसे ही मैं वहाँ पहुंचा मेरे ऊपर दो आदमी टूट पड़े और मेरे मुँह में कपड़ा ठूंसकर मुझे बेबस कर दिया। फिर मेरे हाथ-पांव बाँध दिये गये और मेरी ही राइफल के कुन्दे मुझे बेहोश कर दिया गया सर ! और जब मुझे होश आया तो देखा कि वहाँ का जमादार मेरी रस्सियों को खोल रहा है। मैंने अपनी राइफल को ढूंढ़ा, लेकिन बदमाश उसे भी साथ लेते गये थे। यह देखते ही मैं कोठरी की तरफ दौड़ा और जब उन दोनों को वहाँ से नदारद पाया तो वहीं पर बेहोश होकर गिर पड़ा और........"

"ओह ! ग्रेट ब्लफ !! ...आलराइट, टुमने सई-सई बटा दिया.... आम टुमको माफ करटा है....जाओ।"

"ओ० के० सर !"

कह कर प्रहरी ओठों में मुस्कुराता हुआ कमरे के बाहर आ गया। अन्दर वह जेलर किसी गहन विचार के अन्तर्गत डूब गया था।

"मूर्ख....हः ! ....हः !! ....हः !!! ...."

प्रहरी अट्टहास कर उठा।

४

सम्पूर्ण भारत में एक प्रकार की सशस्त्र क्रांति अपने पूर्ण वेग से गतिशील थी। क्रांतिकारी भारत से विदेशियों का बहिष्कार करने का पूर्ण निश्चय कर चुके थे और ब्रिटिश भारत-सरकार क्रांतिकारियों के दमन का पूर्ण निश्चय कर चकी थी। क्रांतिकारी दल इधर अपना कार्य कर रहे थे तो उधर सरकार अपना दमन चक्र चला रही थी। इस सशस्त्र क्रांति में चूंकि भारत की सम्पूर्ण जनता भरपूर साथ दे रही थी इसीलिये इसको 'जन-युद्ध' अथवा 'अगस्त-आन्दोलन' का नाम दे दिया गया था। भारत के एक-एक शहर, एक-एक गाँव में यह क्रांति गत वर्ष से व्याप्त थी। और व्याप्त था—भारत सरकार का नग्न व्यभिचार युक्त दमन चक्र! हर स्थान पर एक ही सशक्त वाणी की गूंज थी—'भारत छोड़ो!'

मसवापुर भी इस क्राँति से अछूता न था। वहाँ भी क्रांति के शोले भयंकर रूप से धधक रहे थे। जिनके ऊपर पानी डालने का असफल प्रयत्न सरकार लगातार कर रही थी, किन्तु वही पानी वहाँ घी का कार्य कर रहा था। नित्यप्रति कोई न कोई ऐसा काण्ड अवश्य हो जाता, जिससे सरकार को हानि उठानी पड़ती थी। सरकार क्रांतिकारियों

के अड्डे का पता लगाने के लिये चारों ओर से प्रयत्न कर रही थी, किन्तु हर प्रयत्न में असफलता पाकर वह खीझ उठी थी और जनता पर मनमाना अत्याचार करने लगी, जिसकी पराकाष्ठा असीमित थी।

सूर्य डूब चुका था। पृथ्वी की विशाल एवं विस्तृत छाती पर रात्रि का गहन अन्धकार छाता जा रहा था। किन्तु अब क्रांतिकारियों का प्रातःकाल हुआ था। अपने अड्डे पर कमल और गुरू नारायण कमरे में बैठे योजना के कार्य-क्रम की पुनः जाँच कर रहे थे।

"हाँ, तो गुरू जी क्या विचार है ?"

"सब ठीक है। हम लोग यहाँ से रात्रि को यदि पौने ग्यारह बजे चल दें, तो साढ़े ग्यारह बजे वहाँ पहुंच ही जायेंगे। ठीक बारह पर वहाँ से ट्रेन गुज़रेगी और ठीक उसी स्थान पर, जहाँ हम लोग छिपे होंगे, आकर स्वतः रुक जायेगी .... ।"

"वह कैसे ?" कमल ने बात काटी।

"क्योंकि एंजिन पर बिरजू पहले से ही उपस्थित होगा जो........"

"समझ गया, अब आगे ?"

"ट्रेन के धीमे होते ही सीटी बजेगी और हम लोग........"

"बस, बस ! यही ठीक........"

अभी वह कह भी न पाया था कि कमरेमें एक स्त्री-आकृति ने प्रवेश किया, जिसकी आकृति पर विषाद का गहन आवरण पड़ा हुआ था।

"क्या बात है बीना ? कोई खास बात है क्या ?" कमल ने आगन्तुक स्त्री को समीप की कुर्सी पर बिठाते हुए पूछा।

"हाँ।"

बीना ने कुर्सी की पीठ पर सिर टिकाते हुए मर्माहत स्वर में कहा।

"क्या ?" गुरू नारायण और कमल दोनों चौंके।

"आज सायंकालीन समाचार-पत्र पढ़ा ?"

"नहीं तो ! क्या हुआ ?"

"कानपुर के प्लेटफ़ार्म पर आज प्रातः एक सरकारी अंग्रेज अफ़सर

की हत्या कर दी गई और हत्यारा वहीं रंगे हाथों गिरफ्तार भी कर लिया गया।"

"तो इसमें दुःख की क्या बात है?"

"केवल यही कि आप जानते हैं, वह हत्यारा कौन है?"

"नहीं तो।"

"वह हत्यारा, हमारे गोपाल भय्या हैं!"

"तो क्या........" गुरू नारायण की वाणी कम्पित थी।

"चिन्ता मत करो बीना, उनका कुछ भी न बिगड़ेगा।" कमल ने आश्वासन दिया।

"आप तो ऐसे कह रहे हैं मानो यह हत्याकाण्ड न होकर बच्चों की गेंद का झगड़ा हो।" बीना की वाणी में उपेक्षा स्पष्ट थी।

"यही सत्य है बीना!"

"कैसे?"

"मुझे पहले ही भय था कि गोपाल भय्या के कानपुर पहुंचने पर वहाँ कोई न कोई उपद्रव अवश्य ही होगा, तभी........"

"तभी आपने उन्हें अकेले भेजा ताकि वहाँ पर उनसे कोई काण्ड हो जाए और वह जब फांसी पर चढ़ जाएं तब आप यहाँ निर्विरोध नेता बनकर कार्य कर सकें। क्यों?" बीना की वाणी में उपेक्षा थी और आँखों में थे आँसू!

"आह माँ!....बीना, मुझे इतना कष्ट न दो ताकि मैं जीवित भी न रह सकूं। तुमने मुझे गलत समझा है। मैं प्रमाणित कर दूँगा कि गोपाल भय्या का कुछ भी न बिगड़ेगा। मुझे भारत माँ की सौगन्ध है जो यदि मेरे हृदय में गोपाल भय्या के प्रति तनिक भी अपवित्र विचार उत्पन्न हुए हों। मैंने भय्या के साथ ही पृथक डिब्बे से जितेन्द्र को भेज दिया था जो उन्हें हर प्रकार की मुसीबत से किसी भी मूल्य पर बचाएगा। चाहे इस प्रयत्न में उसके......."

"सच कमल!"

"हाँ बीना !"

"मुझे माफ़ कर दो कमल, मैंने भ्रातृ-स्नेहवश हो तुम्हें.... "

"नहीं बीना।" कमल ने बीना की बाँह पकड़ कर उसे खड़ा कर दिया—"मैं क्या दल का कोई भी व्यक्ति गोपाल भय्या के बिना जीवित नहीं रह सकता ! फिर उनके प्रति अपवित्र विचारों के स्थान का तो प्रश्न ही नहीं उठता !"

"मुझे माफ़ कर दो. मेरे देवता !"

कहकर बीना कमल के सीने से लग गई और कमल की मुस्कुराहट के बीच उसके दो आँसू टपक पड़े पृथ्वी पर !

गुरू पहले ही वहाँ से जा चुका था, अपनी योजना को कार्य रूप देने की तैयारी करने हेतु !

अमावस की गहन अन्धकारयुक्त रात !

रजनी का यौवन पूर्णत: निखार पर था। किन्तु रजनीश लुप्त था। चहुँओर भयङ्कर गहन कालिमायुक्त अन्धकार पृथ्वी पर विस्तृत था। ऊपर रजनी ने अपनी काली उडगनयुक्त साड़ी का आँचल इस प्रकार से फैलाया हुआ था, मानो कोई माँ अपने बच्चों के ऊपर अपना आँचल फैलाए हो। उस पर ठण्डी हवा की गूँज इस प्रकार प्रतीत हो रही थी, मानो रजनी अपने बच्चों को लोरियाँ गा-गाकर उन्हें निद्रावश करने हेतु प्रयत्नशील हो। इसी रजनी के कालिमाँचल में भारत माँ के लाल अपने प्राणों को न्योछावर कर देने के लिये प्रतिपल तत्पर थे।

मसवापुर से लगभग बीस मील उत्तर-पूर्व में एक भयानक जंगल पड़ता था। जिसका नाम था, टिकैतपुर का जंगल ! इसी जंगल के मध्य से होकर रेलवे-लाइन जाती थी। जंगल के मध्य में कुछ जंगल साफ़ करके वहाँ एक छोटा-सा स्टेशन बना लिया गया था और

कुछ ही फलांग की दूरी पर था एक छोटा सा पचीस-तीस परिवारों का गांव — टिकैतपुर !

टिकैतपुर केवल इसीलिये बसाया गया था ताकि आस-पास के शहरों में लकड़ी का अभाव दूर किया जा सके। कमल व दल के अन्य साथियों ने अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिये टिकैतपुर से दो मील पहले ही एक स्थान ढूंढ़ लिया था। जहाँ वे इस समय छिपे हुए थे। जंगल से भयङ्कर जंगली जानवरों की बोलियाँ जब-तब सुनाई पड़ जातीं थी जिसके कारण वातावरण और भी भयावह हो जाता था। अचानक ट्रेन की सीटी उस निस्तब्ध वातावरण में गुञ्जित हुई। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे ट्रेन अभी बहुत दूर हो। कमल अपने स्थान से बाहर आया और लाइन पर कान लगाकर कुछ सुनने लगा। यकायक वह तनकर खड़ा हो गया। उसके कण्ठ से उल्लुओं की सी तीव्र ध्वनि निकली। प्रत्युत्तर में वैसी ही अन्य ध्वनियाँ उस वातावरण में गूँज गईं। यह ध्वनियाँ इस बात की सूचक थीं कि दल का प्रत्येक सदस्य अपने काम के लिये पूरी तौर पर तैयार है। पूर्णतः सन्तुष्ट होकर कमल एक ऊँचे वृक्ष पर चढ़ गया एवं मसवापुर की ओर अपनी आँखें बिछा दीं।

कठिनता से अभी कुछ ही पल व्यतीत हुये होंगे कि ट्रेन की खड़-खड़ाहट उस वीरान वातावरण में गुञ्जित होने लगी जो क्रमशः मन्द गति से समीप आती जा रही थी। वह ध्वनि समीप होती गई........

समीप........

........और इतने समीप कि उसके इञ्जन से निकलता हुआ प्रकाश स्पष्ट होने लगा। जिसे देखकर समस्त क्रांतिकारी सजग हो गये।

रेल की गति क्रमशः मन्द होती जा रही थी ......होती जा रही थी.......गति क्रमशः इतनी मन्द हो गई थी मानो वह अब रुकी और तब रुकी .... और रुक भी गई वह........एक तीव्र सीटी देकर !

रेल में अधिकांश यात्री तो निद्रा निमग्न थे किन्तु जो इक्का-दुक्का बैठेऊँघ रहे थे वे बाहर झाँककर देखने लगे कि कौन-सा स्टेशन आ गया अथवा क्या बात है ? किन्तु इन सबसे दूर रेल के पश्च भाग में जो तीन डिब्बे लगे थे उनमें क्रांतिकारी दल के सदस्य प्रवेश कर चुके थे।

घटना वास्तव में इस प्रकार घटित हुई—

ज्यों ही रेल ने अपनी गति धीमी की, त्यों ही क्रांतिकारियों ने पिछले तीन डिब्बों को घेर लिया। क्योंकि उन तीन में से बीच के डिब्बे में ही पाँच सहस्र रुपया, पाँच सशस्त्र सिपाहियों के संरक्षण में रक्खा गया था और वह डिब्बा था, तीस अन्य सिपाहियों के संरक्षण में—जो पन्द्रह-पन्द्रह की संख्या में दो भागों में विभक्त कर दिये गये थे !

मध्य के रक्षकों के अतिरिक्त अन्य सभी, तीस रक्षक निद्रा के संरक्षण में निमग्न थे। रेल के रुकते ही उन्होंने कारण ज्ञात करने के लिये ज्योंही सिर बाहर निकाला, त्योंही उनके शीशों पर लाठी के तीव्र प्रहार हुए जिनके कारण उनमें से चार ठण्डे हो गये किन्तु पाँचवे ने गिरते-गिरते भी एक फ़ायर झोंक दिया और गोलीजो अन्दर प्रवेश कर रहे कमल के बांए बाज़ू को फाड़ती हुई बाहर निकल गई। किन्तु इसके पश्चात् ही वह भी ठण्डा हो गया। कमल ने लहू के बहने से भी अचिंतित होकर 'वह पेटी', जिसमें रुपया रक्खा हुआ था, उठाकर नीचे खड़े गुरू को पकड़ा दी और दूसरे ही पल जब तक कि आस-पास के सैनिक अंधियारे में गोली चलावें तब तक वह लोग गोली की बाढ़ से अत्यधिक दूर हो गये········

········और क्रमशः दूर होते गये········

रेल पर बैठा अङ्गरेज अफसर क्रोध के कारण कांप रहा था। क्योंकि उसके समक्ष ही पाँच सहस्त्र सरकारी रुपया लूट लिया गया और वह उन लोगों का कुछ भी न बिगाड़ सका, केवल उन निरपराध

सैनिकों को दो-चार गोलियाँ ही सुना सका। तत्पश्चात् उसने अपने सैनिकों को वहीं पर छोलदारी लगाने की आज्ञा दी। उसका विचार अगले दिवस उक्त घटना की पड़ताल करने का था। जिसे हल करने का वह स्वप्न देख रहा था।

स्वप्न ?

हाँ, और नहीं तो क्या! यह स्वप्न नहीं तो और क्या कहा जायेगा? उसे इन सब बातों से कोई तात्पर्य नहीं था। वह तो प्रातः-काल की प्रतीक्षा कर रहा था, अत्यन्त ही व्याकुलता के साथ!

प्रातःकाल और विगत घटना!

दोनों ही अफसर के लिये एक काल्पनिक वस्तु थीं!

पूर्णतः काल्पनिक—जिसका कोई आधार-भूत आधार न हो!

प्रातःकाल हुआ। पूर्वांचल के नीलाकाश में प्रातःकाल की श्वेती व्याप्त हो गई। जो क्रमशः सम्पूर्ण नीलाकाश में आच्छादित होती गई। कुछ ही पलों में ऊषा ने श्वेती की श्वेत साड़ी के ऊपर अपना रक्तिम रंग बिखेर दिया। जो मन्द गति से टिकैतपुर के गहन-तम वन के ऊपर विस्तृत होता गया। वन-पक्षियों ने सुमधुर कण्ठ से प्रातःकालीन गायन प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु उस अंग्रेज अफसर को तो मानो प्रकृति से कुछ लगाव ही नहीं था, क्योंकि वह तो गत रात्रि में घटित घटना को हल करने के मद में चूर था। वह सीधे टिकैतपुर के गाँव में जा धमका। उस अफसर का नाम था, जा़न आफ़र्ड। जा़न आफ़र्ड को भारत आए अभी पूर्णतः एक वर्ष भी नहीं व्यतीत हुआ था। अभी दो माह पूर्व ही वह मसवापुर में शहर-कोतवाल के स्थान पर नियुक्त किया गया था, किन्तु इन्हीं दो मास में उसने अपनी क्रूरता के द्वारा अपना आतंक जनता के हृदय पर इतना बिठा दिया था कि जनता

केवल उसका नाम सुनकर ही भय से कम्पित हो उठती थी। फिर उसकी मुखाकृति देखने के उपरान्त का तो अकथनीय ढंग से प्रभाव पड़ता होगा।

वही प्रभाव टिकैतपुर के ग्राम वासियों पर भी पड़ा। फिर ग्राम-वासियों के युवकों का तो कहना ही क्या? क्योंकि उनमें से अधिकांश क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। यह प्रभाव ग्रामवासियों पर दो भागों में विभक्त हो पड़ा। प्रथम वर्ग तो उन नवयुवकों (जो सदस्य थे) का था, जो इस अफसर के साक्षात्कार से मन ही मन प्रसन्न और दृढ़चित्त हो गये थे। द्वितीय वर्ग में वे अन्य समस्त व्यक्ति थे जो उसके ग्राम में पदार्पण करने मात्र से ही भय के कारण थर-थर काँप रहे थे।

जान आफ़ोर्ड ने गाँव में पहुंचकर पंचायत घर के चौपाल में डेरा डाला एवं एक सिपाही को ग्राम के मुखिया के पास भेजा। कुछ ही पलों में ग्राम का मुखिया दौड़ता हुआ वहाँ उपस्थित हो गया। भय के कारण उसकी आकृति पर इतनी ठण्डक के पश्चात् भी, स्वेद बिन्दु चमक रहे थे। आकर वह दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया—

"आज्ञा माई-बाप"

जान आफ़ोर्ड ने अपने एक सिपाही को दुभाषिया बनाकर प्रश्न किया—

"तुम्हारे परिवार में कितने व्यक्ति हैं?"

"चार हजूर! एक तो मैं हूं, मेरी बुढ़िया है, एक बेटवा और ऊकेर बहू है।"—

"तुम्हारा नाम?"

"चौधरी रामभजन सिंह, सरकार!"

"तुम्हारे बेटे का?"

"बहादुर सिंह।"

"बुलाओ!" कहकर उसने एक सिपाही को संकेत किया और पुनः वृद्ध चौधरी से प्रश्न किया—

"देखो चौधरी ! यदि तुमने ईमानदारी से एक सवाल का उत्तर दे दिया तो हम तुम्हें सरकार से सौ रुपिये माहवार पेंशन के रूप में दिलवायेंगे । लेकिन शर्त यह है कि तुम सत्य कहोगे ?"

"दया हुइहै सरकार ! यदि अइसा हुइ जाए ।"

"हो जायगा । लेकिन एक प्रश्न का उत्तर तुम्हें देना होगा ?"

"काहे नाहीं । पूँछौ सरकार । एक काहे दुइ पूँछौ ?"

"कल रात को गोली चलने की आवाज़ सुनी थी ?"

"हाँ हजूर ! मुला हम समझेन कि कउनौ मनई शिकार खेलत बा.......हाँ सरकार, यही हमार बेटवा है जउन ...."

"चुप रहो !"

जान अफ़र्ड ने चौधरी को डाँटा और एक भेदक दृष्टि बहादुर सिंह पर डाली जिसकी आकृति पर एक अद्वितीय आभा विद्यमान थी । उसकी दृढ़ता देखकर एकबार वह स्वतः विचलित हो उठा, किन्तु दूसरे ही पल प्रश्न किया अंग्रेजी में—

"तुम्हारा ही नाम बहादुर सिंह है ?"

"हाँ श्रीमान् ।" अंग्रेजी में ही उत्तर मिला !

"ओह, तो तुम पढ़े-लिखे भी मालूम होते हो ?"

"जी हां, श्रीमान् इण्टर द्वितीय श्रेणी में पास किया था ।"

"तब ठीक है । हमारा मतलब जल्दी समझ लोगे ।"

"मैं श्रीमान् का तात्पर्य नहीं समझा ?"

"तुम किस दल के सदस्य हो ?" स्वर कुछ कठोर हुआ ।

"श्रीमान् यदि कुछ स्पष्ट करें तो........"बहादुर सिंह शान्त था ।

"मतलब यह कि तुम किस क्रांतिकारी दल में कार्य करते हो ?"

"क्षमा कीजियेगा श्रीमान् ! सम्पूर्ण भारत का एक दल है जिसका एकमात्र ध्येय जो कुछ भी है आप उस ध्येय से अनभिज्ञ नहीं हैं ।"

"ओह, नवजवान ! तुम अभी शायद मुझे नहीं जानते ?"

"बहुत अच्छी तरह से श्रीमान् ! साथ में यह भी जानता हूं कि

जान ऑफर्ड का आतंक मसवापुर के आस-पास के शहरों तक में फैला हुआ है जिसके नाम से ही जनता कांप उठती है।"

"तुम आग से खेल रहे हो नवजवान !" जान ऑफर्ड बहादुर सिंह के इस व्यंग्य-बाण से तिलमिला उठा।

"चिन्ता नहीं है, भारत के नवजवानों ने शेर के दांत गिनना सीखा है, गीदड़ भभकियों से डरना नहीं। हम भारतीय आन पर मिट कर आग में जलना भी जानते हैं, मि० जान अफिर्ड ? बहादुर सिंह की आकृति पर गर्व चमक रहा था।

"नवजबान !" वह चिल्लाया।

"डर गये क्या ?" बहादुर सिंह की मुसकराहट में स्वाभिमान झलक रहा था—"दिखाओगे नहीं अपनी क्रूरता ?"

"क्रूरता देखोगे, क्यों नवजवान – तो देखो।"

वह बुदबुदाया और एक सिपाही से बोला—"सामने के पेड़ से इसे बांध कर इस पर कोड़े बरसाओ।"

कहकर उसने एक सिपाही को पास बुलाया और कान में कुछ कहा। जिसे सुन कर वह एक ओर चल दिया।

उधर बहादुर सिंह स्वतः जाकर पेड़ से बँध गया।

"सड़ाक !.........सड़ाक !! सड़ाक.........."

कोड़े पर कोड़े बरसते गये किन्तु बहादुर सिंह के मुख से एक 'आह' भी प्रतिध्वनित न हुई।

"सड़ाक !"

"वन्देमातरम् !"

"सड़ाक !!"

"वन्दे....मातरम् !!"

"सड़ाक !!!"

"व....न्दे....मा....त....र....म् !

प्रत्येक कोड़े के साथ सड़ाक की ध्वनि गुँजित होती थी लेकिन 'वन्देमातरम्' की तीव्र ध्वनि के साथ ही, जो क्रमशः मद्धिम पड़ती गयी। बहादुर सिंह के सम्पूर्ण तन से रक्त प्रवाह बराबर हो रहा था। वस्त्र तार-तार हो गये थे किन्तु आकृति की आभा अब भी पूर्ववत् थी। प्यास के कारण उसका कण्ठ शुष्क हो रहा था। वह इस समय पूर्णतः अचेतनावस्था में था।

"पानी !"

बहादुर सिंह मूर्छितावस्था में कराहा।

"अब भी बता दो!"

पानी पिलाने के पश्चात जान अॉफर्ड के कहने पर सिपाही ने प्रश्न किया। प्रश्न सुनते ही बहादुर सिंह की आकृति तन गई—

"यह असम्भव है!"

"किन्तु मैं सम्भव कर दूँगा।"

कहते हुए जान अॉफर्ड ने दो सिपाहियों को संकेत किया जिन्होंने उस वृद्ध चौधरी (अर्थात बहादुर सिंह के पिता) को दोनों हाथों में उठा लिया। बहादुर सिंह निर्निमेष दृष्टि से ताक रहा था। किन्तु वृद्ध चेतना विहीन हो चुका था जॉन अॉफर्ड के कहने पर उन्होंने उसे ले ले जाकर समीप ही गाड़े गये एक चार फिट ऊँचे नुकीले खम्भे पर, जो कंटीले तार बांधने के लिए लगाया गया था, बिठा दिया।

"अब भी समय है ?"

"नहीं !" कहकर बहादुर सिंह ने अपने नेत्र बन्द कर लिये।

"इस बूढ़े के कन्धे पर शक्ति का प्रयोग करो !"

आज्ञा प्राप्त होते ही उन दोनों सिपाहियों ने चौधरी के दोनों कन्धों को दबाना शुरू किया।

"आह ! ईश्वर ! ...."

एक हृदयद्रावक चीत्कार वायु मंडल में गूँज गया। बहादुर सिंह

के नेत्र स्वतः ही खुल गये किन्तु वे अधिक समय तक उस दृश्य पर टिके न रह सके। कारण कि उस स्थान पर अत्याचार का नग्न नृत्य हो रहा था।

वृद्ध चौधरी के कन्धों पर दबाव पड़ने के कारण वह लौह-स्तम्भ उसके मलद्वार से, नीचे से, उनको चीरता हुआ सिर फोड़कर ऊपर एक फिट निकल आया था एवं उनका निर्जीव शव पृथ्वी से एक फिट ऊपर उठा हुआ था। मलद्वार एवं सिर से रक्त-प्रवाह धारों के रूप में हो रहा था, जो वहाँ पर हुए अत्याचार के ताण्डव नृत्य का स्पष्ट रूप अङ्कित कर रहा था। समस्त उपस्थित ग्राम-वासी भय से आतङ्कित थे? किन्तु जॉन आफिर्ड अट्टहास कर रहा था। उसी समय उसकी दृष्टि एक अत्यन्त रूपवती स्त्री पर पड़ी जिसे एक सिपाही पृथ्वी पर घसीटता हुआ ला रहा था। उसका रूप देख कर वह एक क्षण को अपनी वासना-पूर्ति के विषय में सोचने लगा, पर दूसरे ही क्षण बहादुर सिंह की ओर बढ़ा—

"अब भी बता दो बहादुर सिंह!"

"नहीं!" बहादुर सिंह का दृढ़ स्वर था।

"अभी जी नहीं भरा, जो अपनी पत्नी को बरबाद करने पर तुले हो?"

"मिस्टर जान, देश के ऊपर मैं पत्नी को तो क्या स्वर्ग भी न्योछावर कर सकता हूँ। बहादुर सिंह से भेद खुलवाना इतना सरल नहीं है ...."

"सो इतना कठिन भी नहीं है, बहादुर सिंह!"

जॉन ऑफर्ड के कहने के साथ ही वायुमण्डल में एक तीव्र उलूक-वाणी गूंज गई। बहादुर सिंह की आकृति गर्व से तन गई। किन्तु जान ऑफर्ड की चाल में कोई अन्तर न हुआ। वह भोग की

मदेच्छा में लगातार उस स्त्री की ओर अग्रसर होता जा रहा था। अचानक उसके हाथ में स्त्री का आंचल आ गया। एक भीषण अट्टहास के साथ स्त्री की साड़ी 'सर्र ...ऽ ...ऽ....ऽ....' की ध्वनि के साथ उसके हाथ में आई और पृथ्वी पर गिर गई। स्त्री इस समय केवल कँचुकी एवं साये में थी, अतः वह भरसक अपनी लाज बचाने की चेष्टा कर रही थी। किन्तु हर बार असफल हो रही थी। वासना रूपी हैवान लगातार अट्टहास करता हुआ अग्रसर हो रहा था और वह देवी अपने को सुरक्षित रखने की असफल चेष्टाएं कर रही थी कि अचानक........

"धांय !"

"....धांय !!"

दो फायर हुए और जॉन अफिर्ड तुरंत मुँह के बल गिरा और समाप्त हो गया। भय से वह देवी किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गई थी।

"अपनी-अपनी बन्दूकें पृथ्वी पर डाल दो, नहीं तो चारों ओर से भून दिये जाओगे।"

वहां एक प्रकट व्यक्ति हुआ जो सिर से पैर तक एक काले लबादे से ढंका हुआ था। उस लबादे के वक्षस्थल पर एक तिरंगा झण्डा श्वेत वस्त्र की पट्टियों से बना हुआ था। उसके हाथों में एक देशी राइफल शोभित हो रही थी। सिपाहियों ने बन्दूकें डालकर चुपचाप वहां से भाग जाने में ही अपनी भलाई समझी। अतः वे वहां से ऐसे गायब हुए जैसे गधे के सिर से सींग।

उनके भागते ही उस व्यक्ति ने अपना लबादा उलट दिया। बहादुर सिंह की दृष्टि जैसे ही उस व्यक्ति पर पड़ी वह लगभग चीख सा उठा—

"गुरू भैया !"

"हां !"

कहकर उस व्यक्ति ने, जो वास्तव में गुरु नारायण था, बहादुर

सिंह के बन्धन खोल दिए और बोला—

"माफ करना बहादुर, मैं समय पर न आ सका अन्यथा यह काण्ड कभी न हो पाता……"

"भय्या ! गोस्वामी जी ने कहा है—'होनहार बिरवान के होत चीकने पात।' इसलिए भय्या जो होना था वह तो हो ही चुका। होनी को टाला थोड़े ही जा सकता है।" दुखित स्वर में वह बोला।

"हाँ और क्या ? मैं अभी आता हूँ पार्टी को साथ लेकर, ताकि तुम्हारे पिता के दाह-संस्कार में सम्मिलित हो सकूं।"

"अच्छा भय्या, लेकिन इस लाश को……"

"जंगल में फिकवा दो ताकि जानवरों का……नहीं, नहीं इसे बाकाएदा दफना दो। हमें गोरे इन्सान से नहीं बल्कि उसके कामों से नफरत है।"

कहकर गुरू ने वे बन्दूकें समेटीं और एक ओर चल दिया। वह निरीह नारी भी अब अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ चुकी थी, और अपने ससुर की मृत्यु पर आँसू बहा रही थी।

टिकैतपुर से भागे हुए सिपाहियों में एक मुसलमान इन्सपेक्टर भी था। नाम था—मोहर्रम अली ! भागते समय भी उसके पास पर रिवाल्वर मोजूद था। गाँव से यह लोग भाग कर सीधे स्टेशन पहुँचे। अधेड़ स्टेशन मास्टर अपने छोटे से टीन पड़े हुए कमरे में बैठा सिग्रेट पी रहा था। मोहर्रम अली के प्रवेश करते ही वह, इन्सपेक्टर की मोहर्रमी सूरत देखकर ही, कुछ-कुछ स्थिति को भाँप गया। चालीस साल का अनुभव भी तो कुछ होता है। उसने प्रवेश करते ही स्टेशन मास्टर से पूछा—

"मेल निकल गया क्या ?"

"अभी नहीं। अभी तो बीस मिनट बाकी हैं, बैठिए !" स्टेशन मास्टर ने अत्यन्त नम्रतापूर्वक सामने की कुर्सी पर बैठने का इशारा किया।

"हूं !" कहकर मोहर्रम अली बैठ गया।

"सिगरेट ?"

"हाँ, जुरूर !"

कहकर उसने बढ़े हुए सिगरेट केस से एक सिगरेट निकाल कर अपने लाइटर से सुलगा लिया और आराम से कश लेने लगा। किन्तु फिर भी भांति-भांति की दुश्चिताओं के कारण उसकी मुखाकृति कुछ चिंतित, उदास और क्रोधित प्रतीत हो रही थी। वहां बैठकर वह अपने-आप को बहुत सुरक्षित महसूस कर रहा था और यही सत्य भी था क्योंकि गाँव वालों ने भी उनका पीछा नहीं किया था। वह अपने आप में मग्न था। अन्त में स्टेशन-मास्टर ने ही इस नीरवता को भंग किया—

"माफ कीजिएगा इन्सपेक्टर साहब, गांव की वजह से मैं आपको चाय वगैरह न पिला....."

"कोई बात नहीं—कोई बात नहीं !"

मोहर्रम अली ने अपने आप को पूर्ण रूप से संभाल लिया था।

"यह गांव में अभी क्या बलवा (झगड़ा) हुआ था। क्योंकि गोली चलने की आवाज़ें सुनाई पड़ी थी। मैं जाता तो अवश्य, किन्तु अकेला होने की वजह से न जा सका....कोई मरा-वरा तो नहीं ?"

"नहीं, कोई नहीं।" इन्सपेक्टर ने बात पलटी—"दरअसल हम लोगों को मुखबिरी के जरिए यह खबर मिली थी कि यहां कुछ 'आजादी के दीवाने' छिपे हुए हैं। जिसकी वजह से हमको यहां आना

पड़ा। कल रात को जो खजाना लूटा गया था, उसी की खोज में...."

"अभी कुछ पता नहीं चला ?....क्या क्रांतिकारियों से मुठभेड़ हुई थी ?"

"नहीं, अभी तो कुछ भी सूराग हाथ में नहीं आया, लेकिन बहुत जल्दी पकड़ में आ जाएंगे !"

ईश्वर करे कभी न आयें !" स्टेशन-मास्टर बुदबुदाया।

"आपने कुछ फर्माया ?" नम्रतापूर्वक पूछा इन्सपेक्टर ने।

"हां, मैं यह बुदबुदा रहा था कि ईश्वर करे वे शीघ्र ही पकड़े जायें ताकि हमारी सरकार उन्हें उचित दण्ड दे।"

"आप अंग्रेजी सरकार को बहुत पसन्द करते हैं ?"

"जी हां !" अनिच्छापूर्वक कहा।

"तब ठीक है, मैं आपको पूरा इनाम दिलवाऊँगा।"

"आपकी इनायत होगी !"

कुटिल मुस्कान के साथ बोला स्टेशन-मास्टर। कुछ देर बाद मेल आ गया, जिसे रुकवाकर मोहर्रमअली मसवापुर की ओर चल दिया; साथ में थे उसके सब साथी !

लेकिन कौन जानता है कि मोहर्रम अली पलट कर भी आएगा या नहीं। क्योंकि वह एक ऐसे व्यक्ति के पास जा रहा था, जो क्रोध में आकर जाने क्या कर बैठे ?—

इन्सपेक्टर मोहर्रम अली जिस समय कोतवाली पहुँचा, उस समय दिन के एक बज रहे थे। असिस्टेंट-शहर-कोतवाल एक गोरा था, जिसका नाम था-मिस्टर मिटफोर्ड। मिटफोर्ड ऑफिस में ही नाश्ता कर रहा था। जैसे ही उसे खबर मिली कि टिकैतपुर से मोहर्रम अली वापस आ गया है, फौरन उसे बुला भेजा।

"मि० जॉन कहाँ है ?"

इन्सपेक्टर के घुसते ही सवाल हुआ।

"सर''''वह''''वह''''" कहता हुआ मोहर्रम अली घुटनों के बल हाथ जोड़ कर बैठ गया।

"व्हाट् सर? व्हेयर इज़ जॉन?" वह चीखा।

"सर''''सर''''"

"सर''''सर''''क्या होता है?"

"वह मारे गए, सर।"

"कैसे?"

"उनको 'आज़ाद-भारत' की पार्टी ने गोली से मार दिया''''"

"और तुम खड़े-खड़े मुँह देखते रहे, क्यों?"

"तुम साले''''नमकहराम''''धांय!''''धांय!!''''धांय!!!"

कहने के साथ ही तीन गोलियाँ निकलीं और इन्सपेक्टर मोहर्रम अली लहरा कर ढेर हो गया।

थोड़ी ही देर बाद मिटफोर्ड अपने साथ पचास गोरे टामियों को लेकर टिकैतपुर की ओर जीप द्वारा बढ़ता जा रहा था।

इधर गुरुनारायण जब मसवःपुर पहुँचा तो दिन के दो बज रहे थे। पार्टी के लगभग सभी सदस्य रात्रि के थके होने के कारण अपनी-अपनी थकान उतारने के लिए आराम कर रहे थे। किन्तु पार्टी के प्रमुख सदस्यों को आराम कहाँ? उनको तो सबसे ज्यादा चिन्ता थी कि उस डकैती के कारण बेचारे गाँव वाले पुलिस के द्वारा बुरी तरह से सताए जायेंगे। यही कारण था कि काल ने गुरु को टिकैतपुर भेजा था, केवल हाल-चाल लेने के लिए। साथ ही यह भी आदेश था कि यदि अवसर पड़े तो वह केवल हवाई फायर द्वारा पुलिस का वह डरा-धमका। कर भगा भी सकता था। किंतु हुआ क्या, इसका किसी को तनिक भास भी न था। वे तो गुरू की आराम से प्रतीक्षा कर रहे थे।

समय काटने के लिए उन्होंने ताश खेलना शुरू कर दिया था। किन्तु चैन किसी को न था। सबके ही नेत्रों के समक्ष टिकैतपुर की काल्पनिक दुर्दशा नृत्य कर रही थी। साथ ही उनका मस्तिष्क व्यस्त था—गोपाल के विषय में !

अभी वे लोग सोच ही रहे थे कि गुरू ने कमरे में प्रवेश किया।

"क्या हुआ ?" कमल का प्रश्न हुआ।

"शहर-कोतवाल जॉन अॉफर्ड मारे गए ?" शान्त स्वर था।

"कैसे ?" कमल का तुरन्त छूटते ही प्रश्न हुआ।

"मैंने मार डाला !"

"तुमने मार डाला, लेकिन क्यों ?" स्वर में झुँझलाहट थी।

"हाँ, और इस लिए कि उसने टिर्कतपुर के वृद्ध चौधरी राम भजन सिंह को बहुत बुरी तरह से सजा देकर उसे मौत के घाट उतार दिय था और उसकी बहू, यानी बहादुर सिंह की पत्नी, की इज्जत लूटने पर पूर्ण रूप से उतारू हो गया था। ईश्वर की कृपा से, मैं समय पर पहुँच गया जिससे उस देवी की इज्जत बचाई जा सकी अन्यथा आज अनर्थ हो जाता''' पूरे गाँव की बहू-बेटियों की इज्जत खुले-आम लूटी जाती''"

"हूँ, यह तो बहुत ही ज्यादा बुरा हुआ''''" कमल कुछ स चने लगा।

"वह तो अब भी लूटी जाएगी गुरू भय्या !" बीच में ही बीना बोली। उसका स्वर गंभीर था।

"क्या ?"

गुरू के साथ-साथ कमल भी बुरी तरह से चौंका।

"हाँ यह एक ऐसा सत्य है, जो होकर रहेगा।"

"वह कैसे ?" गुरू बोला।

"खबर आग की तरह से फैलती है। जिस तरह से कुछेक पलों में ही गाँव के गाँव खाक हो जाते हैं, उसी तरह

है खबर उड़ते देर नहीं लगती है।"

"हाँ, यह तो है।"

गुरू ने बीना की बात को स्वीकार किया किन्तु बीना आगे बोली—

"जैसे ही खबर पुलिस को लगेगी, वैसे ही वह टिकैतपुर जा धमकेगी और वहाँ पर पुलिस के आत्याचार अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच ताण्डव नृत्य प्रारम्भ कर देंगे।" —

"इसको जैसे भी हो सके रोकना चाहिए क्योंकि इसका सारा श्रेय आएगा उस केस पर !" गुरू ने रास्ता सुझाया।

"हाँ, सबको चलने के लिए तैयार होने को कह दो !" बीना ने आज्ञा दी।

सब तैयार होने चले गए। रह गए वहाँ पर केवल तीन ही व्यक्ति कमल, बीना और गुरू नारायण !

"एक समाचार और है, कमल।" गुरू बोला।

"क्या ?"

"गोपाल भय्या जेल से भाग निकले।"

"क्या ?····कब ?····कैसे ?····"

कमल व बीना प्रसन्नता से उछल पड़े।

"कल रात को ही शायद भागे होगें, क्योंकि पेपर में तो अभी आया नहीं है। वैसे तुम रवीन्द्रनाथ को तो भूले नहीं होगे जो कालेज में हमारे लोगों के साथ पढ़ता था····"

"कौन····वह तो नहीं जो झक्की उपन्यासकार के नाम से कालिज में प्रसिद्ध था ?"

बीना, कमल के इस दिए उपनाम पर, खिलखिला कर हँस पड़ी। बोली—

"तो वह क्रक्की था, क्यों ? इतने बढ़िया-बढ़िया उपन्यास....."

"हाँ तो, उसे क्या हुआ ?" कमल ने बात काट दी।

"उसी के साथ तो भागे हैं।"

"सच ?"

"हाँ, यह देखो !"

कहकर गुरु नारायण ने जेब से एक कागज निकाला। कागज पर दो फोटो छपी हुई थीं, और नीचे लिखा था—

'असबापुर और लखनऊ के दो खतरनाक़ क्रांतिकारी कानपुर-जेल से भाग निकले हैं—जिनके नाम क्रमशः गोपाल दास और रवीन्द्र नाथ 'अज्ञात' हैं। जनता को सूचना दी जाती है कि इन आदमियों को जिन्दा या मुर्दा पकड़ाने वाले को २०००) नक़द इनाम दिया जाएगा।'

"यह तुम्हें कहाँ से मिला ?"

कमल ने सम्पूर्ण सूचना पढ़ने के पश्चात् प्रश्न किया।

"स्टेशन पर चिपका हुआ था। लोगों की निगाह बचा कर मैंने इसे जेब में रख लिया और........"

"शाबाश !"

"अच्छा अब चलो नहीं तो देर हो जाएगी।"

"हाँ, मैं अभी आया।"

कहकर गुरु बाहर चला गया और कमल ने बीना की ठोढ़ी के ऊपर उठाते हुए पूँछा—

"क्यों जी, अब तो खुश हो न ?"

"बिल्कुल।" आँखों में आँखे डाल कर मुस्कुराती हुई बोली वह।

"अब तो कभी मुझसे झगड़ा नहीं करोगी ?"

"धत् !"

उसके हाथ से कटार छीन ली और बोला—

"टामसन, इसे पूरी तौर से नंगी कर दो!"

"आलराइट सर!"

कहकर टामसन आगे बढ़ा और उसने धोती पकड़ कर 'सर्रं' से खींच ली और फिर···दुःशासन ने द्रौपदी का चीर हरण कर लिया किन्तु द्रोपदी का आर्त्त-स्वर कृष्ण तक न पहुंच सका। ठीक उसी समय उसकी अन्धी सास ने वहां क़दम रखा—

"बहू···बहू····कौन आया है री, बोलती क्यों नह···हीं····"

"धांय·!·धांय···!!···"

दो फायर हुए और वह बिना कुछ आगे कहे ही मुंह के बल गिर पड़ी। बहादुर सिंह की पत्नी चीख उठी....और····मिटफोर्ड अट्टहास कर उठा—

"हिन्दुस्तानी औरत का मजा ही दूसरा है···"

और फिर दोनों गोरे दरिन्दों ने जबरदस्ती बहादुर सिंह की पत्नी को उसकी सास की लाश पर लिटाया और········

वह बेहोश हो चुकी थी। किन्तु मिलफोर्ड ने इस पर भी संतोष न किया और टामसन से राइफल लेकर फायर उसके····में किया गोली बाहर न निकली और वह भारतीय नारी एक बार तड़फ कर सदा के लिए शान्त हो गई।

मिटफोर्ड ने अट्टहास किया और घर से बाहर निकल आया। सामने ही गांव के पंडित का घर था। मिलफोर्ड ने कुण्डी खटखटाई किवाड़ खुला। घर पर केवल पण्डित जी की लगभग पन्द्रह सोलह वर्ष की एक मात्र लड़की लावण्यलता थी। वास्तव में उसके लता सदृश कोमल शरीर पर जैसे लावण्य की बारिश हुई हो। देहाती वेश भूषा में देखकर मिटफोर्ड के मुंह में पानी आ गया। जब तक लड़की पूछे-पूछे

कि वह कौन है मिटफोर्ड ने उसे अपनी बाँहों में उठा लिया और उसके होंठों पर अपने होंठ रख दिये । लावण्यलता तिलमिला गई, लेकिन कर भी क्या सकती थी वह बेचारी ?

उन दोनों अंग्रेजों ने उसे वहीं जमीन पर लिटा दिया और खूब जी भर कर व्यभिचार किया ।

पन्द्रह- सोलह वर्ष की वह सुकुमार बालिका तड़पती रही और वे दोनों दानव उसके शरीर से निर्भयता पूर्वक खेलते रहे । अन्त में जब वह सहन न कर सकी तो तड़प कर शान्त हो गई ।

जमीन पर पड़े रक्त को देख कर मिटफोर्ड की रक्त-पिपासा तीव्र हो उठी और उसने चाकू से उस बालिका के दोनों स्तन काट कर वहीं पास में रख दिए और अट्टहास करता हुआ बाहर आ गया ।

□

लगभग डेढ़ घण्टे तक टिकैतपुर में अंग्रेजों के अत्याचारों का नग्न—ताण्डव नृत्य होता रहा । किसी भी घर की कोई स्त्री न शेष रही । उन खूनी दरिन्दों ने सात साल की बच्ची से लेकर साठ साल की वृद्धाओं तक के साथ व्यभिचार किया । जिनमें से जो जीवित रहीं उन्हें उसने (मिटफोर्ड ने) चौपाल के सामने लगे खम्भों में नंगा करके बँधवा दिया । इन सब, अपनी समझ से शुभ, कार्यों को पूरा करने के उपरान्त वह चौपाल में बैठ कर पाइप सुलगाने लगा । अभी वह पाइप का पहला कश ही ले रह था कि अचानक····

····भयानक एक फायर हुआ और उसका एक सिपाही लुढ़क गया । परिस्थिति का ज्ञान हो चुका था । उसने आर्डर दिया—

"मोर्चा संभालो !"

साँझ का झुटपुटा धीरे-धीरे अंधेरे में बदल रहा था । वहां

पर कमल के क्रांतकारी दल के सदस्य पहुँच चुके थे, परन्तु वे लोग मिबफोर्ड के उन साथियों से पूर्णत: अनभिज्ञ थे जो गांव के बाहर फैले हुए थे।

"धांय!....धांय-धांय!!....धांय!....धांय-धांय...."

फायरों की आवाजों से सम्पूर्ण वन-प्रान्त गूंज उठा और वे लोग सजग हो गए जो दाह-क्रिया कर वापस लौट रहे थे। उनमें से जो दल से सम्बन्धित थे वे तो अपनी-२ लाठी लेकर एक रास्ते से दौड़ और जो लाठी-विहीन थे वे दूसरे रास्ते से, गांव की ओर!

गोलियों का आदान-प्रदान अभी जारी ही था कि क्रान्तिकारी दल के लोग घबड़ा गए। क्योंकि मिटफोर्ड के फैले हुए सिपाहियों ने पीछे से भी मार शुरू कर दी थी। दुतरफा मार के कारण वे घबड़ा गए और भागने का रास्ता खोजने लगे। किन्तु भाग केवल तीन ही पाए। शेष पकड़े गए। साथ में वे गांव वाले भी जो लाठी लेकर दौड़े थे।

मिटफोर्ड के चेहरे पर गर्व की मुस्कान नाच उठी और वह कैदियों के साथ जीप में बैठ कर चल पड़ा मसवापुर की ओर!....

मिटफोर्ड के जाते ही, जैसे ही गांव वालों ने वहां कदम रक्खे बेहोश हो-होकर गिर पड़े। क्योंकि सड़कों या गलियों के हर मुहाने पर किसी न किसी स्त्री की व्यभिचारित चीथड़ा लाश पड़ी हुई थी; जो अपने ऊपर हुये नंगे अत्याचारों की कहानी चीख-चीख कर कह रही थी।

और इधर.........

इधर मिटफोर्ड टिकैतपुर को मिटाकर मसवापुर की ओर जा रहा था। उसके होंठो पर तृप्ति और विजय की अमिट मुस्कान थी जो शायद उसे....

लेकिन.......

"विजय ?"

"कैसी विजय ?.... किसकी विजय ?....कहाँ की विजय ?"

इन सब सवालों के जवाब में विचारमग्न मिटफोर्ड जीप पर बैठा मसवापुर चला जा रहा था। पीछे दो जीपों पर उसके बन्दी मौजूद थे, जिन्हें वह टिकैतपुर से ला रहा था। वह खुश था कि उसने एक अंग्रेज की मौत का बदला पूरे गाँव को बरबाद करके ले लिया था। और अब उस बदले का यानी अपनी इस बहादुरी का डंका पीटने वह मसवापुर जा रहा था।

लेकिन कौन जानता है कि इस बहादुरी का डंका पिट भी पाएगा या नहीं।

रात अपनी किशोरावस्था ग्रहण कर चुकी थी और यौवन के आँगन में सितारों जड़ी चुनरी ओढ़कर और शरद-ऋतु के चन्द्रमा की टिकली (बिन्दिया) लगा पदार्पण कर रही थी। रात्रि के दस बज चुके थे। चारों ओर गहन नीरवता पूर्ण अन्धकार व्याप्त था, जिसे भंग कर रही थी—चन्द्र की मद्धिम, किन्तु शीतल ज्योत्सना!

मिटफोर्ड सब प्रकार के खतरों से अनजान होकर मसवापुर की ओर बढ़ता चला जा रहा था। अचानक सब जीपों को अपने आप रुक जाना पड़ा। सड़क पर एक बड़ा सा पेड़ गिरा हुआ था।

जीपें रुक गईं!

इससे पूर्व कि मिस्टर मिटफोर्ड कोई आर्डर दे सके, सामने दो आकृतियाँ प्रकट हुईं, जिनमें से एक छाया स्त्री-छाया थी और दूसरी कौन थी, इसे मिटफोर्ड न समझ सका! क्योंकि दूसरी छाया एक नकाबपोश थी। अभी मिटफोर्ड पिस्तौल चलाने की सोच ही रहा था कि अचानक वह स्त्री-छाया चीखी—

"डैडी, प्लीज़ डोण्ट फायर !"

"कौन ? डेला !" मिटफोर्ड का हाथ रुक गया।

"यस डैडी !"

"ओह, मगर तुम यहाँ........"

"हः.........हः.........हः.........घबरा गए, मिस्टर मिटफोर्ड ?"

नकाबपोश का अट्टहास उस नीरव वातावरण में गूँज गया।

"तुम कौन हो और.........और क्या चाहते हो ?" वास्तव में मिटफोर्ड घबरा गया था क्योंकि वह उस आवाज को वह कुछ-कुछ पहचान रहा था।

"मैं ?.........लो तमन्ना पूरी कर लो।" कहते हुए नकाब उलट दी उसने।

"कौन ? मि० ब्रजभूषण ! आप.........आप मुझसे क्या चाहते हैं जो आप मेरी लड़की को...." मिटफोर्ड बुरी तरह से घबड़ाया हुआ था।

"सिर्फ कैदियों को, मि० मिटफोर्ड।"

"लेकिन यह असम्भव है।"

"मि० मिटफोर्ड ! तुमको याद है न कि मैंने तुम्हारी 'लाइफ' दो बार बचाई है ? और तीसरी बार आज तुम्हारी लड़की डेला की इज्जत बचाई है। जानते हो वो कौन थे ?"

"कौन ?" स्वतः प्रश्न हुआ।

"तुम्हारे परम प्रिय मित्र जिला मैजिस्ट्रेट मिस्टर डगलस !"

"यू शटअप !" मिटफोर्ड पूरी ताकत से चीखा।

"विश्वास न हो तो डेला से खुद पूछ लो। यदि मैं समय पर न पहुँचता तो अब तक तुम्हारी डेला लुट चुकी होती।"

"इज इट करेक्ट डेला ?" मिटफोर्ड नर्वस हो गया।

"यस डैडी इट इज ट्रयू।" डेला का मद्धिम स्वर था।

"क्या ?.....उसकी यह हिम्मत ?.....मैं उसका खून कर दूंगा !!"

"ठहरो मिटफोर्ड, जल्दी का काम शैतान का ! पहले अपने इन गोरे साथियों को बिदा करो।" व्रजभूषण ने समझाया।

"मैं इनको इस दुनिया से ही विदा कर दूंगा !"

"क्या मतलब ?" व्रजभूषण चौंका।

"मतलब यह कि अब मुझे अपनी इस कमीनी जात से नफरत हो गई है। इनको मारने के बाद मैं खुद अपने आप गोली"..........मिटफोर्ड की दृढ़ आवाज थी।

"नहीं ! तुम इनको वापस जाने को कहो।"

"क्यों ?"

"अभी बताता हूं।"

व्रजभूषण के कहने पर मिटफोर्ड ने उन्हें वापस जाने को कहा जिस पर मिटफोर्ड से नीची श्रेणी के अफसर ने प्रश्न किया—

" आल राइट सर ! बट दीज पीपुल.........."

"यू सेट देम फ्री।"

"बट सर....."

"आई से, डोन्ट टेल मी लॉ। इट इज आर्डर।" मिटफोर्ड उसके प्रश्नोत्तरों से बुरी तरह झुंझला गया था। लेकिन फिर भी वह अपने आप पर काबू किये था।

"ओ० के० सर !"

उसने सैल्यूट मारा और सबको स्वतंत्र करके अपने साथियों के साथ मसवापुर की ओर चल दिया।

जैसे ही मिटफोर्ड के साथी विदा हुए, बहादुर सिंह आगे बढ़ा और बोला—

"बिरजू भय्या ! गाँव वालों की राय है कि यह व्यक्ति उन्हें दे दिया जाय।"

"क्यों ?"

"इसने हमारे पूरे गाँव को बरबाद कर दिया है। हमारी स्त्रियों, बहनों व माताओं की इज्जत को लूटा है। हमारे गाँव को जला कर खाक कर दिया है। हम····हम ऐसे पापी इन्सान को जिन्दा नहीं रहने देगें।"

"ओह नो !" डेला चीख कर अपने डैडी से लिपट गई।

"ठहरो भाइयो।" व्रजभूषण का मस्तिष्क भी इस स्थिति में डोल उठा—"मैं मानता हूँ मिस्टर मिटफोर्ड ने यह सब किया है किन्तु क्या आप समझते हैं कि मि० मिटफोर्ड की हत्या से आप लोगों का जो नुकसान हुआ है वह पूरा हो जायगा ? आप लोगों में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही हैं। आप लोग अपने-अपने ग्रन्थों-गीता, वेदों, कुरान, रामायण इत्यादि—को पलटिए उन सबमें यही लिखा है कि यदि कोई व्यक्ति पाप करने के पश्चात् अपने हृदय में ग्लानि और शर्म का अनुभव करता है है तो उसके लिए सबसे बड़ी सजा यही है कि वह पश्चात्ताप के कारण फिर कभी उस पाप को दुबारा न करे। भगवान बुद्ध ने कहा था—'जिस चीज को तुम दे नहीं सकते, उसको लेने का भी तुम्हें अधिकार नहीं है।' मैं जानबूझ कर यह घृणित कार्य कभी न होने दूंगा।"

"लेकिन बिरजू भय्या, आप समझते क्यों नहीं कि···"

"मैं सब समझता हूँ बहादुर सिंह ! किन्तु तुम्हें यह भी याद होना चाहिये कि मैं अपनी प्राचीन सभ्यता का शुरू से ही पुजारी रहा हूं। रामायण में गोस्वामी तुलसी दास ने भगवान राम के माध्यम से कहा है—

तदपि शरण संमुख मोहिं देखी; छमि सब करिहहिं कृपा बिसेखी।
और सुनो—शरणागत दीनार्त-परित्राण-परायणे। इसी बूते पर मैं आपसे कह रहा हूँ।"

"लेकिन...."

"मैं कुछ नहीं जानता। आपने नहीं सुना, गांधी जी ने एक बार कहा था कि किसी व्यक्ति के लिये सबसे बड़ी सजा यही है कि उसे क्षमा कर दिया जावे। क्षमा से बढ़कर विश्व के विधान में भी कोई और दण्ड नहीं है। हमारे यहाँ तो प्राचीन काल से ही यही वाक्य गूँजता आ रहा है— अहिंसा परमो धर्मः। यदि हमको कोई एक तमाचा मारे तो हम बजाये उसे मारने के अपना दूसरा गाल भी उसके सामने कर दें।"

"किन्तु अब हम अहिंसा के पुजारी ...."पीछे से आवाज आई।

"चुप रहिए!" ब्रज-भूषण चीख पड़ा — "मैं नहीं चाहता था कि मैं आपको अपने अधिकारों का वास्ता दूँ किन्तु आप लोगों ने मुझे विवश कर दिया है। और अब मैं आपको दल के नेता की हैसियत से आज्ञा देता हूँ कि आप लोग जीप द्वारा या जैसे भी चाहें अपने घर लौट जाएँ और आगे के लिए आदेश की प्रतीक्षा करें।"

"क्यों?" लाख रोकते हुए भी व्यक्ति के मुँह से अन्त में निकल ही पड़ा।

"मैं समझता हूँ कि आप पार्टी की शपथ को भूल कर नियम भंग कर रहे हैं और इसका दण्ड आप स्वतः जानते हैं।"

सबके चले जाने के बाद ब्रज-भूषण ने घिटफोर्ड से कहा— "आइये चलें।"

और फिर तीनों बैठकर चल दिए—मसवापुर की ओर!

मसवापुर की जनता में रातों-रात टिकैतपुर में की गई हत्याओं और बलात्कार की निर्मम कहानी अत्यन्त ही आक्रोशपूर्ण ढंग से फैला दी गई। यह कार्य पार्टी द्वारा अत्यन्त ही कुशलतापूर्वक किया गया और इन सबका उत्तरदायी ठहराया गया— जिला मैजिस्ट्रेट मिस्टर डगलस को। मोहर्रम अली के खून से जनता कुछ तो यूं ही उत्तेजित थी और बाकी कार्य कर दिखाया, पार्टी ने।

जनता बुरी तरह से उत्तेजित हो उठी। उसने अपने भाइयों के खून का बदला लेने की ठान ली। फलस्वरूप परिणाम यह हुआ कि प्रातः काल होते-होते मसवापुर के तमाम सरकारी दफ्तर फूंक डाले गए। अनेक थानों को जला दिया गया। पचासों अँग्रेज कत्ल कर डाले गए। सेना के आगमन को रोकने के लिए पटरियाँ उखाड़ दी गईं। टेलीफोन के तार काट डाले गए। आदि-आदि।

इन सबके बाद नम्बर आया शहर-कोतवाली का ! जिस पर अब भी यूनियन जैक लहरा रहा था और जिसके अन्दर पचासों गोरे छिपे हुये थे।

सूर्य की प्रथम किरण के साथ ही जनता की भारी भीड़ ने कोतवाली की ओर बढ़ना शुरू किया। भीड़ मे सबसे आगे तीन व्यक्ति थे—मिस्टर मिटफोर्ड, उनकी बेटी डेला व ब्रज-भूषण ! मिस्टर मिटफोर्ड के हाथ में भारतीय तिरंगा झण्डा था और उनके साथ लोग नारे लगा रहे थे—

"मि० डगलस...हाय-हाय !"

"अंग्रेजी सत्ता...हाय-हाय !!"

"यूनियन जैक मुर्दाबाद...."

"भारत माता की जय !"

"आजाद-ए-हिन्द जिन्दाबाद !"

"आजादी है अधिकार हमारा, छोड़ो हिन्दोस्तान हमारा !!"

"हिन्दू-मुस्लिम ... भाई-भाई ।"

"एक है हमारा नारा, छोड़ो कुत्तों, देश हमारा ....."

जुलूस तूफान की भाँति आगे बढ़ रहा था अचानक सामने रुकावट आई । एक अंग्रेज अफसर अपने कुछ देशी-विदेशी थोड़े से सशस्त्र सैनिकों के साथ खड़ा हुआ था, बोला—

"आप लोग जुलूस भंग करके शांतिपूर्वक अपने-अपने घरों को लौट जाएँ वर्ना हमें मजबूर होकर गोली चलानी पड़ेगी ।"

"तो आप गोली चलाइए न ' हम गोली खाने के लिए ही तो आए हैं ।" मिटफोर्ड की तेज आवाज गूँजी ।

"मैं आप ही का लिहाज कर रहा था, मिस्टर मिटफोर्ड, वर्ना...."

"तब ठीक है, आप हमें रास्ता दीजिए ।" मिटफोर्ड ने कहा ।

"यह असम्भव है !"

"तो यह भी असम्भव है । इन्कलाब-जिन्दाबाद - इन्कलाब जिन्दाबाद भारत माता की जय ....."

"मैं आपको लास्ट वार्निंग देता ....."

"यूनियन जैक मुर्दाबाद !"

"फायर !"

इससे पूर्व कि वह अंग्रेज अफसर उक्त आर्डर सके, डैला ने जेब से एक हैण्डबम निकाल कर सामने उछाल दिया और....

धाय !....धाँय !!

इन दो आवाजों के साथ ही उस अँग्रेज अफसर और दो अन्य सैनिकों के चीथड़े हवा में उड़ते दीख पड़े। धूल साफ हुई। नारा लगा-

"अँग्रेजी सत्ता का नाश हो....इन्कलाब-जिन्दाबाद....भारत माता की जय!"

नारों के साथ जुलूस आगे बढ़ा।

सामने कोतवाली थी। पार्क के उच्च स्तम्भ पर यूनियन जैक अपनी गर्वीली शान से हवा में लहरा रहा था। जुलूस स्तम्भ के पास रुका। डेला आगे बढ़ी। उसने यूनियन जैक को उतारना शुरू किया। तभी एक रोबदार आवाज आई—

"खबरदार! जिसने भी जैक को हाथ लगाया उसकी खाल खींच ली जाएगी।"

"खाल? मारो साले को!"

चारों तरफ से आवाजें आना शुरू हुईं। मि० डगलस अभी कुछ बौखलाए हुए तो थे ही कि एक तेज चमक से उनकी आँखें चौंधिया गईं और साथ ही सुनाई पड़ा—एक धमाका....और मि०डगलस की धज्जियाँ उड़ गईं। यूनियन जैक अभी आधा ही उतरा चुका था कि चारों ओर से गोलियों की बौछारें आनी शुरू हो गईं।

जैक के उतरते ही डेला के सीने में गोली लगी और वह वन्दे-मातरम् कहकर गिर पड़ी। उसकी जगह ली ब्रज-भूषण ने। मिट-फोर्ड भारतीय तिरंगे को ऊपर चढ़ा रहे थे और ब्रज-भूषण........

ब्रज-भूषण आग लगा रहा था जैक में! जनता गोलियों के बीच में खड़ी होकर नारे लगा रही थी।

जैक जल रहा था और तिरंगा लहरा रहा था!

तभी मिटफोर्ड और व्रज-भूषण गिरे और शान्त हो गए। उनके मुँह से निकला—'वन्देमातरम्'।

\+ \+ \+

असवापुर पर सेना का कब्जा हो गया। जनता को भाँति-भाँति के कष्ट दिए गए। किन्तु जनता का मनोबल न टूटा। उनकी आँखों में अब भी तिरंगा लहरा रहा था।

कानों में अब भी जय घोष गूँज रहा था—

"वन्देमातरम !"

५

प्रातः काल सूर्य की प्रथम किरण । ने जब खिड़की के शीशे को पार कर कमरे में प्रवेश किया तो लाजवश वह कुछ लाल हो गई। आशा और गोपाल दोनों ही बेखबर हो निद्रा के वशीभूत थे। यह 'बेखबरी' किरण से देखी न गई और उसने झकझोर कर आशा क जगा दिया । आशा की नींद टूट गई और वह धीरे से गोपाल के हाथ को अपने से अलग कर पलँग से उतर पड़ी । अस्त-व्यस्त वस्त्रों को ठीक किया और एक मादक अँगड़ाई ली । कमरे की दीवारें चुँधिया गईं। उसकी नज़र गोपाल के चेहरे पर पड़ी, जिसके माथे पर बालों की एक लट गिर आई थी । उसने आगे बढ़ कर उस लट को हटा दिया, फिर अपने आप ही गत रात्रि की बात याद कर लजा गई और फिर गोपाल के माथे को हौले से चूम कर वह शर्माती हुई बाथ-रूम में भाग गई । इधर गोपाल इन सबसे बेखबर हो सो रहा था ।

थोड़ी देर बाद आशा नहा धोकर बाहर निकली । गोपाल अभी भी सो रहा था । एक नजर उस पर डाल वह कमरे के बाहर जैसे ही, निकली, भगवान चन्द्र से सामना हुआ । उसकी आँखें स्वतः झुक गईं।

"गोपाल क्या कर रहा है ?" प्रश्न हुआ ।

"सो रहे हैं ।"

"अभी तक ?"

"जी, वह....."कुछ कहना चाहा आशा ने।

"ओह, समझ गया।" भगवान चन्द्र हँसे—"अब जल्द से जल्द तेरी शादी करनी होगी वर्ना........."

"दादा !"शर्मा गई वह।

"पगली !"

कहकर वह चले गये और आशा मुदित मन गुनगुनाती हुई रसोई घर की तरफ बढ़ गई।

थोड़ी देर बाद जब वह लौटी तो उसके हाथ में नाश्ते की ट्रे थी। वह जैसे ही कमरे में पहुँची, गोपाल बाथ-रूम से बाहर निकला।

"आप जग गए ?"

"देर हुई।"

"नाश्ता !"

"तुम से देर में जागा।" मुस्कुराते हुए कहा गोपाल ने।

"अच्छा, अब नाश्ता फिर बातें !"

और दोनों नाश्ता करने लगे। नाश्ते के फौरन बाद ही वे दोनों भगवान चन्द्र के पास चल दिए।

रात्रि का समय था। लगभग ग्यारह बजे होंगे। उस समय पूरा का पूरा कानपुर नींद्रा में डूबा हुआ था। केवल सड़कों पर विद्युत स्तम्भों का प्रकाश ही फैला हुआ था और आकाश में सुशोभित हो रहे थे तारे—जिनके बीच शरद ऋतु का बाल-चन्द्र यूँ सुशोभित था जैसे देवताओं के मध्य देवराज इन्द्र !

यदा-कदा सड़कों पर गश्त लगाने वाले सिपाहियों की सीटियों की आवाजें, कुत्तों के भौंकने की आवाजों के साथ मिलकर सुनाई पड़ जातीं थीं। कभी-कभी जब कोई ट्रक अथवा कार सड़क से होकर गुजर जाती तो फुटपाथ पर सोये भिखारियों अथवा मजदूरों के मुँह से एक भद्दी गाली और भुनभुनाहट निकलती और फिर उन्हीं फटे हुए कम्बलों के मध्य दब कर शान्त हो जाती।

ठीक इसी प्रकार से माल-रोड भी शान्त थी और उसके किनारों पर बनी आलीशान कोठियाँ भी।

भगवान चन्द्र की भी कोठी बाहर से पूर्णतः शान्त थी किन्तु अन्दर तहखाने में हो रहा था विवाह— !

विवाह ?

जी हाँ, गोपाल और आशा का ! चूँकि यह विवाह खुले रूप में नहीं हो सकता था क्योंकि गोपाल एक फरार व्यक्ति था, अतः भगवान चन्द्र ने अपने एक पंडित मित्र को बुलवा लिया था और गुप्त रूप से यह शुभ कार्य सम्पन्न करवा दे रहे थे। गोपाल को जेल से भागे हुए चार दिन व्यतीत हो चुके थे। उसके नाम वारंट कटा हुआ था और तलाश जारी थी। कानपुर को चप्पा-चप्पा छान मारा गया किन्तु गोपाल तो क्या पुलिस को गोपाल की हवा भी न मिल सकी कि वह अपने एक साथी के साथ आखिर लुप्त कहाँ हो गया।

लगती भी कैसे ? गोपाल तो भगवान चन्द्र के अतिथि-गृह में पहुँच चुका था जहाँ उसके जीवन का एक नया अध्याय शुरू होने जा रहा था। बारातियों में केवल दो ही व्यक्ति थे—मैं और जितेन्द्र। कार्यक्रम भलीभाँति चल रहे थे। मन्द स्वर में मन्त्रोच्चार के द्वारा वह गुप्त-गृह (तहखाना) गूँज रहा था। अचानक वहाँ का लाल बल्ब स्पार्क करने लगा अर्थात् जलने बुझने लगा। यह देख भगवान चन्द्र बोले—

"कोई आया है।"

"इस असमय में कौन हो सकता है ?" मैंने पूछा।

"पता नहीं। मेरी सूचना प्राप्त होते ही तुम लोग गुप्त रास्ते से बाहर निकल जाना।"

"अच्छा।"

गोपाल ने कहा और भगवान चन्द्र अपने कमरे में आ गए। बाहर सन्तरी खड़ा था।

"क्या है ?"

"साहब, दो आदमी और एक औरत आपसे मिलना चाहते हैं। मैंने कहा भी कि इस समय साहब सो रहे हैं। लेकिन वह नहीं माने, और बोले, कि जाकर मैं आपको जगा दूँ और कहूँ कि तीन आदमी मसवापुर से आए हैं।"

"मसवापुर ?"

"जी हाँ !"

"परिचय दिया ?"

"जी हाँ, एक का नाम कमल, दूसरे का नाम गुरू तथा तीसरी स्त्री का नाम बीना है।"

"अच्छा बुला लाओ।"

संतरी चला गया और भगवान चन्द्र वहाँ से ड्राइंग-रूम में आ गए। लगभग दो तीन मिनट के अन्दर ही संतरी वहाँ आ गया। उसके साथ तीन व्यक्ति थे। जिनके चेहरे कम्बलों से ढके हुए थे। कमरे में आते ही उन्होंने अपने-अपने कम्बल उतार लिए। कम्बलों में जगह-जगह पैबन्द लगे हुए थे।

"बैठिए; मैं आप लोगों की क्या सेवा कर सकता हूँ ?" भगवान चन्द्र ने कहा।

"मेरा नाम कमल है, इनका गुरू तथा इस लड़की का नाम बीना है। हम लोग मसवापुर से आ रहे हैं।"

"इसमें मैं क्या कर सकता हूँ ? आप लोगों को कोई धर्मशाला ढूँढ़ना चाहिए था।"

"हम लोग धर्मशाले में ही टिके हुए थे, किन्तु सायंकाल छोड़ दिया।" कमल ने व्यंग्य के ऊपर कोई ध्यान न देते हुए कहा।

"क्यों ?"

"इसलिए कि गोपाल भय्या ने हमको आपका ही पता दिया था कि वह आपके यहाँ ठहरेंगे किन्तु दुर्भाग्यवश वे हत्या के अपराध में गिरफ्तार हो गए और जेल भेज दिए गये। कहावत चरितार्थ हुई—'जाको राखे साइयाँ, मार सके न कोय।' अर्थात् वे जेल से निकल भागे। साथ में उनके दो आदमी—रवीन्द्र और जितेन्द्र भी थे।"

"किन्तु आपका गोपाल से क्या सम्बन्ध है ?"

"सम्बन्ध !" कमल झुँझला गया—"क्या आपको हम लोगों के ऊपर शक है....देखिए !"

कहते हुए कमल ने अपना बाँया सीना खोल दिया जिस पर गुदा हुआ था—"आजाद भारत !"

"अब भी आपको शक है क्या ?"

"जी नहीं, किन्तु क्या करूँ विवश था।"

"अब कृपया आप कष्ट करके इतना बता दें कि गोपाल भय्या कहाँ हैं ?"

"क्या कोई जरूरी काम है ?"

"जी हाँ, कुछ ऐसा ही समझिए।"

"क्या आप लोग कल प्रातः तक प्रतीक्षा........"

"ज्यादा अच्छा हो कि आप हम लोगों को बहलाने की कोशिश न करें। क्योंकि कुछ सूचनाएँ उनके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।"

"अच्छी बात है, आइये।"

कहकर भगवान चन्द्र आगे-आगे तथा वे लोग पीछे-पीछे चल दिए।

तहखाने में पहुँचते ही इनकी दृष्टि गोपाल पर पड़ी, जो मण्डप के मध्य बैठा हुआ वैवाहिक विधियाँ पूर्ण कर रहा था। इनको देखते ही खड़े होकर बोला—

"कमल, यहाँ कैसे आए ?"

"गोपाल भय्या !" दौड़कर बीना गोपाल से बेसाख्ता लिपट गई—"चुपके-चुपके शादी भी कर ली और हमें पूछा भी नहीं!"

"मजबूरी थी बीना, लेकिन अब तो तू आ ही गई है।"

"हूँ !"

कहकर बीना मुस्कुरा उठी।

"क्यों कमल वहाँ पर सब ठीक है न ?" पुनः बैठते हुए पूछा गोपाल ने कमल से।

"जी हाँ !"

"क्या मतलब ?" गोपाल चौंका।

"बाद में।"

"अच्छा !"

कहकर गोपाल पुनः वैवाहिक कार्यों में योग देने लगा और इधर कमल और गुरू, बीना सहित आकर मेरे और जितेन्द्र के पास आकर बैठ गए। फिर हम लोग बीते दिनों की बातें याद करने लगे और उधर..................

उधर रात सरकती रही............

और.................

........वैवाहिक कार्य-क्रम चलता रहा !

पहले मंत्रोच्चार, फिर भाँवरें........कन्यादान वगैरह, वगैरह।

मतलब यह कि रात के साथ ही विवाह भी सम्पूर्ण हुआ और गोपाल तथा आशा दाम्पत्य-सूत्र में बँध गए।

सुहागरात के लिए भगवान चन्द्र ने तहखाने का ही एक कमरा उचित समझा था, क्योंकि अपने आदमियों द्वारा प्राप्त सूचनानुसार उन्हें अब कानपुर की पुलिस पर विश्वास नहीं रह गया था अर्थात खतरे की तलवार सर पर लटक रही थी। इस कारण उन्होंने गंगातट पर अपनी मोटर-बोट भी तैयार करवा दी थी, जो मौका आने पर काम आ सके।

गोपाल ने जिस समय कमरे में कदम रक्खा, रात के दस बज चुके थे। दस बजे तक गोपाल अपने साथियों के साथ बैठा गप्पें लड़ाता रहा था। वह आने वाले खतरे की ओर से पूर्णतः निश्चिन्त था, किन्तु अन्य नहीं।

कमरे में केवल, बीचोबीच, एक पलंग पड़ा हुआ था जिस पर चमेली के ताजा फूल बिछे हुए थे। उनकी महक से सारा कमरा महक रहा था। पलंग के ऊपर नव-विवाहिता आशा घूंघट काढ़े बैठी हुई थी।

बगल में मेज के ऊपर टेबिल-लैम्प जल रहा था, जिसकी मद्धिम रोशनी से सारा कमरा आलोकित था। एक ओर शृंगार-दान रक्खा हुआ था तथा कुछ दूरी पर एक सोफा-सेट रक्खा हुआ था। कमरे में कदम रखते ही गोपाल का मस्तिष्क चमेली के सुगन्ध से महक उठा और वह हृदय में एक अजीब सी गुदगुदी लिए पलंग की ओर बढ़ा।

"आशा !"

पलंग पर आशा के पास ही बैठता हुआ बोला गोपाल।

"…. ……"

"आशा !" कोई उत्तर न पाकर पुनः पुकारा।

"हूं !"

"यह हूँ-हूँ क्या लगा रक्खी है। ……अरे भाई, जरा आज तो जी भर के देख लेने दो।"

"……………"

"अच्छा न हटाओ यह घूँघट !" कहते हुए उसकी चीख निकल पड़ी, "आह !"

"क्या हुआ ?"

एकदम से घूँघट हट गया।

"कुछ नहीं।"

वह मुसकरा दिया।

"हुस्स !" कहती हुई आशा लजा गई और उसका सिर गोपाल के सीने से टिक गया। गोपाल कुछ क्षणों तक निर्निमेष दृष्टि से आशा के उस अछूते सौन्दर्य को देखता रहा। और जब अपने पर काबू न रख सका तो उसके अतृप्त अधर आशा के तपते लाल अधरों की ओर बढ़ चले। लेकिन कौन जानता था कि वे मिल भी पायेंगे

या नहीं ? अधर परस्पर मिलने ही जा रहे थे कि दरवाजे पर दस्तक हुई।

"कौन ?" गोपाल ने प्रश्न किया।

"मैं हूँ भय्या, जल्दी दरवाजा खोलिए !" आवाज आई।

"क्यों ? क्या बात है बीना ?" दरवाजा खोलते हुए पूछा गोपाल ने।

"पुलिस ने घेर लिया है।"

"अब ?"

"समय नहीं है आइए !"

कहते हुए बीना गोपाल और आशा का हाथ पकड़ कर बाहर खींच ले गई। उनके जाते ही एक दूसरी स्त्री उसी लिबास में कमरे के अन्दर घुस गई।

बीना ने दूसरे कमरे में, जहाँ गोदाम था, पहुँच कर एक बटन दबाया। तुरन्त उस दीवार में रास्ता हो गया और उनके अन्दर जाते ही वह दीवार पुनः बराबर हो गई।

"लेकिन हम लोग चल कहाँ रहे हैं?" गोपाल ने पूछा।

"गंगा-किनारे ! यह सुरंग गंगा-तट पर निकलेगी।" आशा ने उत्तर दिया।

"लेकिन बाकी सब ?"

"पहुँच चुके ! हम लोगों को आज ही कलकत्ता रवाना होना है। वहां पर हमें मोटर-बोट तैयार मिलेगी।" बीना ने गम्भीर स्वर में कहा।

"तो क्या गंगा के रास्ते ?"

"हाँ; और कोई चारा ही नहीं है।"

"हूँ !"

कहकर गोपाल चुप हो गया।

लगातार लगभग आधे घण्टे चलते रहने के बाद ये लोग गंगा के रेत पर निकले। सुरंग का मुँह जंगली घास व अन्य पेड़-पौधों की वजह से ढँक सा गया था

सामने पानी में मोटर-बोट तैयार खड़ी थी। इनके पहुँचते ही जितेन्द्र तथा गुरू ने इन्हें ऊपर चढ़ा लिया।

"रवीन्द्र कहाँ है?"

"चालक के केबिन में!"

"ओह!"

तभी मोटर-बोट पानी का सीना चीरती हुई निःशब्द, किन्तु तीव्र गति से, आगे की ओर बढ़ चली।

उधर तो क्रांतिकारी दल गुप्त-मार्ग से बाहर निकल गया, किन्तु इधर..................

इधर भगवान चन्द्र की कोठी घेर ली गई। भगवान चन्द्र ने पुलिस इन्सपेक्टर के सामने पहुँचते ही कुछ रूक्ष स्वर में कहा—

"कहिए?"

"आई एम सारी सर! मैं मजबूर हूँ।" नम्र स्वर में इंस्पेक्टर ने उत्तर दिया।

"आप अपना काम बताइये?"

"आपके नाम तलाशी का वारण्ट है।"

"लेकिन क्यों?" कुछ चौंके।

"गवर्नमेण्ट को आपके ऊपर शक है कि आपने अपने घर में दो फरार कैदियों को छिपाया हुआ है।"

"लेकिन इन्स्पेक्टर, यह शक तो बिल्कुल बेबुनियाद है। मैं सरकार पर दावा करूँगा।"

"वह ठीक है सर, लेकिन मुझे तो अपनी ड्यूटी पूरी ही करनी है। हम तो एक तरह से कानून के गुलाम हैं।"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं! मैं खुद कानून की इज्जत करता हूँ। आप खुशी से तलाशी ले सकते है, आइए।"

"थैंक्यू सर!"

कहता हुआ इन्स्पेक्टर भगवान चन्द्र के साथ ही तलाशी लेने लगा। पूरे मकान की तलाशी लेते लेते एक घण्टा बीत गया, लेकिन वहाँ कैदी तो क्या उनकी बू तक नहीं आई।

"आइए, अब आप शायद ऊपर की तलाशी ले चुके, चलकर गोदाम भी देख लीजिए।"

"गोदाम?"

"जी हाँ, इसी मकान में एक तहखाना भी है।"

"ओह, चलिए!"

कहकर वह भगवान चन्द्र के पीछे-पीछे चल दिया।

तहखाने में इन्सपेक्टर कुत्तों की तरह से सूँघता हुआ इधर-उधर फिर रहा था। अचानक ही वह एक कमरे के सामने रुक गया—

"इस कमरे में क्या है?"

"मेरी वाइफ!"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि कुछ दिन पूर्व मैंने चुपचाप अपनी सेक्रेट्री से शादी कर ली थी। लेकिन कुछ झंझटों से 'हनीमून' न मना सका और अब जब मैंने यही मनाने का निश्चय किया तो आज आप लोगों ने बीच में बखेड़ा खड़ा कर दिया।"

"ओह !" मुस्कुराया इन्सपेक्टर।

"आपको शक हो तो आप देख सकते हैं।"

कहते हुए भगवान चन्द्र ने धक्का देकर कमरे के किवाड़ खोल दिए जहाँ सामने पलँग पर एक नव-विवाहिता बैठी हुई थी।

"आई एम सॉरी सर ! मैं देख चुका, आइए !" इन्सपेक्टर बुरी तरह से झेंप गया और फिर बाहर आकर बोला—

"माफ कीजिएगा सर, आपको हमने बहुत कष्ट दिया।"

"अरे नहीं इन्सपेक्टर, इसमें कष्ट की क्या बात ? ड्यूटी इज ड्यूटी।"

"जी हाँ, जी हाँ ! यह साली पुलिस की नौकरी कुछ है ही ऐसी। यह कुछ नहीं देखती, चाहे अपराधी सगा बाप ही क्यों न हो !"

"होना भी चाहिए।"

"अच्छा सर, गुडनाइट।"

"गुड नाइट।"

इन्सपेक्टर के जाते ही भगवान चन्द्र अट्टहास कर उठे—"मूर्ख। छापा मारने आए थे""और वह भी भगवान चन्द्र की हवेली में ?"

६

मोटर-बोट पानी का सीना चीरती हुई चली जा रही थी। मोटर बोट को कानपुर से चले आज लगभग दो सप्ताह बीत चुके थे और अब शाम को वह हावड़ा-पुल के पास पहुँची थी। रास्ते में कोई भी उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। केवल जितेन्द्र ईंधन लेने के लिए कहीं-कहीं पर उतरता और बोट फिर चल पड़ती।

रात्रि के आठ बजे हावड़ा के तट पर बोट लगी। गंगा के तट पर भीषण सन्नाटा छाया हुआ था, जिसे झींगुरों की मद्धिम आवाज कभी-कभी भंग कर देती थी, अथवा कोई कार या ट्रक उस सन्नाटे को थोड़ी देर के लिए कोलाहल पूर्ण कर देती थी। किनारे पर सरकारी लैम्प-पोस्ट अपनी मद्धिम रोशनी सहित खड़े किनारे को आलोकित कर रहे थे। बोट एक लैम्प पोस्ट के सामने खड़ी थी।

अचानक बोट से आदमियों का निकलना शुरू हुआ। सबकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी जिसके कारण सभी के चेहरे बदल चुके थे। इनमें एक स्त्री चुस्त शिकारियों की सी पोशाक पहने हुई, किन्तु दूसरी स्त्री साधारण वस्त्रों में थी। सबने अपना-अपना सामान कन्धे पर लादा और पहली स्त्री के पीछे-पीछे चलने लगे।

"भाभी जी, बाजार कितनी दूर होगा यहाँ से ?" मैंने पीछे से ही आवाज लगाई।

"क्यों, थक गए क्या ?" वीना अर्थात दूसरी स्त्री ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"न····न····नहीं तो !"

"झूठ !" दोनों खिलखिला पड़ीं और आशा बोली—"डैंच भाई साहब, आप चाहे कुछ भी कहें लेकिन आप थक जरूर गए हैं।"

"अच्छा, चलिए यही सही कि मैं थक गया हूं और कहिए ?"

"आप तो बुरा मान गए !" वह फिर खिलखिला पड़ी—"अभी एक मील है बाजार यहां से।"

"मर गए !" मेरे मुँह से लाख रोकते हुए भी निकल पड़ा।

"किस पर ?" गोपाल ने तुरन्त पूछा।

"तुम पर !"

इस उत्तर पर पुनः एक ठहाका गूँज गया और इस प्रकार हँसते हुए हमारा कारवाँ लगभग आधे घण्टे बाद बाजार पहुँचा। वहाँ से दो टैक्सियों के द्वारा हम लोग चल दिए कलकत्ते की ओर !

कलकत्ता !

जहाँ से हमें रंगून रवाना होना था।

लेकिन कब ?

पाँच महीने बाद—मई १९४३ में !

मई १९४३ !

गोपाल-मण्डली को कानपुर से कलकत्ता आए लगभग पाँच महीने बीत चुके थे। इन पाँच महीनों में तीन आदमियों का कोठी से बाहर निकलना पूर्णतः निषेध था। भगवान चन्द्र की आज्ञा ही कुछ

ऐसी थी। ये तीन आदमी थे—गोपाल, मैं और जितेन्द्र। हम तीनों के साथ-साथ कमल व आशा भी बाहर बिल्कुल नहीं निकले। बाहर निकलने वालों में केवल बीना और गुरू ही थे। जिनका काम केवल इतना ही था कि वे आस-पास होने वाली घटनाओं की सूचना देते रहें। बाकी सब काम करने वाले नौकरों में केवल एक ही नौकर था—जीप का ड्राइवर, जिसके अतिरिक्त अन्य सबको सुरक्षा की दृष्टि से हटा दिया गया था। अब हम लोगों का अज्ञात-वास काल लगभग समाप्त हो रहा था और जिसकी समाप्ति के लिए भगवान चन्द्र की उपस्थित आवश्यक थी। उन्हीं की प्रतीक्षा थी। उनके आते ही हम लोगों का रंगून के लिए रवाना हो जाना था।

इन पाँच महीनों में देश के अन्दर जो घटनाएं घटित हुईं वे बीना और गुरू के द्वारा प्राप्त सूचनाओं के अनुसार मुख्य रूप से यह थीं—

१—१ जनवरी को महात्मा गांधी ने वायसराय लार्ड लिनलिथगो को एक पत्र लिखा कि—"इन दिनों सरकार देश में जो दमन कर रही है, वह अनुचित है। वह मुझको ही इन सबका उत्तरदायी ठहरा रही है, किन्तु इस बात की उत्तरदायी है, स्वयं सरकार। क्योंकि कोई भी सत्याग्रह बिना सरकार को पत्र लिखे नहीं आरम्भ किया गया है। इसके बाद भी सरकार ने वार्ता-लाप का कोई अवसर न देकर सारे देश में गिरफ्तारियाँ कर लीं। फल यह हुआ कि बिना नेताओं की जनता इसके अतिरिक्त और कर ही क्या सकती थी?" इन दिनों महात्मा जी पूना के आगाखाँ के महल में नजरबन्द थे।

२—१० फरवरी से, महात्मा जी ने, जब उन्होने उक्त पत्र की सरकार पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होते देखी तब से आत्म-शुद्धि के लिए २१ दिन का उपवास प्रारम्भ किया।

३ - ३ मार्च को महात्मा जी का यह उपवास समाप्त हुआ। इन २१ दिनों के बीच महात्मा जी कुछ अस्वस्थ भी हो गए, किन्तु सरकार ने अपनी नीति में कोई परिवर्तन न किया। वह चारों ओर से चौकन्नी हो गई थी। और महात्माजी के विषय में किसी भी प्रकार की 'रिस्क' लेने के लिए पूरी तौर से तैयार थी। यह मामला लार्ड लिनलिथगो की कार्य कारिणी में भी उठाया गया, किन्तु वे जरा भी टस से मस न हुए। इस बात से असंतुष्ट होकर निम्न तीन सदस्यों ने प्रतिवाद स्वरूप अपने त्यागपत्र दे दिये - लोकनायक बापू जी अणे, सर नलिनीरंजन सरकार और सर भामा।

४—''''फरवरी १९४३ में जापानी जनरल इवाकुरो ने आजाद हिन्द फौज के सब अफसरों (लगभग ३००) को बिदादरी में बुला कर एक लेक्चर दिया। क्योंकि वहां दिसम्बर १९४२ में कप्तान मोहन सिंह की अंग्रेजों द्वारा की गई गिरफ्तारी से पहले की आजाद-हिन्द फौज तोड़ दी गई थी। इसी लेक्चर के दूसरे दिन जापानी जनरल ने मेजर जनरल शाह नवाज खाँ से मुलाकात की थी।

× × × ×

इन समाचारों को हम लोग पढ़ते और दिन-रात योजनाएं बनाने में व्यस्त रहते। क्योंकि इन दिनों हमारे पास कोई भी कार्य नहीं था, सिवाय पुतस्कों के अध्ययन करने के !

प्रातःकाल का समय था। और गर्मी का मौसम। वैसे तो कलकत्ता में सदा ही गर्मी पड़ती है, परन्तु अप्रैल, मई, जून में तो सूर्यदेव की विशेष रूप से कृपा हो जाती है।

हम लोग आज तड़के ही जाग उठे थे और जितेन्द्र व गुरु के अतिरिक्त अन्य सभी भोजन के कमरे में उपस्थित थे। जितेन्द्र व गुरु

स्टेशन गए हुए थे। क्योंकि भगवान चन्द्र आज आठ बजे वाली गाड़ी से आ रहे थे।

हम लोग बड़ी बेसब्री से उनका इन्तजार कर रहे थे और घड़ी थी कि बहुत ही धीमी चाल से चल रही थी। बार-बार हमारी दृष्टि घड़ी की ओर उठती और पुन: झुक जाती। मन घड़ी को कोस रहा था कि वह आज तेज क्यों नहीं चलती ! हम लोग सोच रहे थे कि अब गाड़ी वहाँ होगी''''अब वहाँ होगी''''अब वहाँ होगी। फिर शङ्का होती कि अगर भगवान चन्द्र आज न आए—तो ? तो क्या, कल तो आएगें ही। यही सान्त्वना हृदय को होती पर्याप्त प्रतीत और मन शान्त हो जाता।

विचार धारा आगे बढ़ती रही''''

और साथ में घड़ी भी बढ़ती रही।

बढ़ती रही''''

और आठ बजे''''

फिर पौने नौ''''

और कम्पाउन्ड में गाड़ी रुकने की आवाज सुनाई दी। एक क्षण के लिए हमारे दिलों की धड़कनें बढ़ गईं। किन्तु हम चाहते हुए भी न उठ सके।

कुछ ही क्षणों के उपरान्त कमरे के द्वार पर वही चिर परिचित आकृति दृष्टिगोचर हुई। आकृति पर वही सौम्य भाव, वही मुसकराहट और वही तेज विद्यमान था।

"दादा !"

कहकर आशा दौड़कर उनके सीने से लग गई।

"आशा !"

आवाज कुछ भारी सी हो गई थी। आँखों में आँसू और होंठो पर मुसकुराहट। अजब था, भाई-बहन का यह मिलन !

"सब ठीक है न ?"

"हूं !" संक्षिप्त उत्तर व सिसकियों ने स्नेह स्पष्ट कर ही दिया ।

"धत्त् पगली; रोती है ?—अरे, यह क्या ? यहाँ तो किसी को पहचाना ही नहीं जा सकता ।"

"क्यों ?" गोपाल मुस्कुराया ।

"तुम लोगों की दाढ़ी ..."

"हाँ .."

गोपाल के कहने के साथ ही सब वेग से हँस पड़े और वह जैसे ही कमरे में आकर बैठे, द्वार पर एक और नारी-मूर्ति दृष्टिगत हुई । भगवान चन्द्र बोले—

"आओ - आओ नीना ! इन लोगों के बारे में तो जानती ही हो ?"

"जी, आपने बताया था !"

"और साथियो, ये हैं मेरी सेक्रेटरी मिस नीना, जिनकी वजह और दिमाग से ही आप लोग कानपुर से भाग कर यहाँ तक पहुँच सके हैं ।"

"धन्यवाद !"

नीना के बैठते ही गोपाल ने कहा । दोनों ही एक दूसरे को पहचान चुके थे । और पाठक भी संभवतः राय साहब की लड़की नीना को नही भूले होंगे जिसका परिचय हम द्वितीय परिच्छेद में करा चुके हैं ।

गोपाल के नेत्रों में संकोच था और नीना के नेत्रों में ईर्ष्या । नारी जो ठहरी । एक नारी कभी भी अपने पति अथवा देवता अथवा एक ऐसे व्यक्ति को जिसकी वह पुजारिन हो, किसी दूसरी नारी के संसर्ग में नहीं देख सकती । यह प्राकृतिक नियम है और साथ ही साथ नारी जाति का स्वभाव भी ! वह अपनी प्रकृति से मजबूर हो जाती है । कौन व्यक्ति चाहेगा कि उसकी चीज कोई दूसरा ले जाए ।

यानी किसी भूखे व्यक्ति के सामने भोजन की थाली रखी हो और कोई दूसरा व्यक्ति उस व्यक्ति की थाली को खींच ले जाए ?

यही हालत उस समय नीना की थी। उसकी आँखों में अतृप्ति और ईर्ष्या अपने सम्पूर्ण वेग से हिलोरे मार रही थीं, किन्तु गोपाल की आँखें संकोच से झुकी हुई थीं। क्योंकि उसने नीना को जो वचन दिया था, कि वह स्वतंत्रता-प्राप्ति से पूर्व विवाह करेगा ही नहीं, वह उस वचन को पूरा नहीं कर सका और अब तो वचन के विरुद्ध काम हो ही चुका था

रात के दस बज चुके थे, किन्तु सड़कों पर चहल-पहल अब भी पर्याप्त थी। भगवान चन्द्र की कोठी के बाहर कम्पाउण्ड में शिकारी कुत्ते छोड़ दिए गए थे और प्रवेश-द्वार पर दो गोरखा सिपाही (चौकीदार) मुस्तैदी से राइफल लिए टहल रहे थे। इन दो बातों का मुख्यत: स्पष्ट ध्येय यही था कि कोठी के अन्दर कोई प्रवेश न कर सके। क्योंकि इस समय अन्दर कोठी में एक गुप्त सभा हो रही थी।

हाल में इस समय केवल वही आठ व्यक्ति उपस्थित थे अर्थात गोपाल, गुरू, कमल, जितेन्द्र, भगवान चन्द्र, आशा, वीना व नीना ! सभा की अध्यक्षता कर रहे थे—भगवान चन्द्र !

"हाँ तो साथियो, आप लोगों की योजना क्या है ?" भगवान चन्द्र ने प्रश्न किया।

"हमारी योजनाएँ आपके सम्मुख व्यर्थ सिद्ध हो जाएगीं।" मैंने कहा।

"क्यों ? मेरी अपेक्षा आप लोगों द्वारा निर्मित योजनाएँ अधिक सुलभ और सुलझी हुई होंगीं।"

"वह कैसे ?" गोपाल ने बात काटी।

"क्योंकि आप लोगों को तो यह पाँच महीने का अच्छा खासा सोचने के लिए टाइम मिला था...और इस पाँच महीने में आप लोगों ने कुछ सोचा न हो यह मैं तो क्या कोई भी नहीं मान सकता। हाँ, अगर केवल मि० गोपाल की बात होती तब तो माना जा सकता था कि अब यह सोचने के लिये नाकाबिल हो चुके हैं।" भगवान चन्द्र मुसकराए।

"क्यों ?" गोपाल के अतिरिक्त सभी इस कथन के आशय को भली भाँति समझ गए थे।

"शादी के बाद ऐसा ही होता है !"

"हूँ !"

और सब एक साथ ही अट्टहास कर उठे।

"हाँ तो साथियो; आप जानते हैं कि मेरे पास योजना बनाने का समय ही नहीं था। यदि आप लोग योजना बतावें तो उसे कार्यान्वित मैं करने का उत्तरदायित्व ले सकता हूँ वरना योजना बनाने के लिए मैं आपसे एक सप्ताह की अनुमति चाहूँगा।"

"ठहरिए भाई साहब !" गुरू ने कहा।

"अरे वाह, गुरू जी के रहते और योजना न बनी हो—यह असम्भव है।" मेरे मुँह से लाख रोकने पर भी निकल ही गया।

"हाँ, हां, बताओ तो कोई छोटी-मोटी योजना।" भगवान चन्द्र ने गुरू के उत्साह में वृद्धि की।

"भाई साहब, हमने और कमल ने मिल कर बहुत ही छोटी सी एक योजना बनाई है और कदाचित् उससे सहज अन्य कोई योजना नहीं हो सकती।"

"वह क्या ?"

"योजना का प्रथम अंश इस प्रकार है, कि सर्वप्रथम हमें एक ऐसा नक्शा दिया जावे जिसकी सहायता से हम यहां से रंगून पहुँच सकें अथवा भारत की सीमा के बाहर हो सकें।"

गुरू ने जैसे ही कहना शुरू किया हाल में सन्नाटा छा गया। जितेन्द्र ने जब यह यह देखा कि मामला कुछ गंभीरता पकड़ रहा है। तो वह चुपचाप उठ कर बाहर चला गया। सबने देखा किन्तु व्यर्थ की बाधा के कारण सब मौन रहे।

"रवीन्द्र, तुम्हारे पास एक नक्शा था। वह कहां है ?" भगवान चन्द्र ने मुझसे कहा।

"लीजिए !"

कहकर मैंने जेब से एक नक्शा निकाल कर उन्हें दे दिया। कुछ क्षणों तक तो वे उसे ध्यान से देखते रहे और फिर गुरू की ओर ओर बढ़ा दिया।

"देखो, इससे तुम्हारा मतलब हल हो सकता है कि नहीं। अगर यह ठीक है तब तो कोई बात नहीं। और अगर न हो, तो फिर कोई दूसरा प्रबन्ध किया जाएगा।"

"जी !"

कहकर गुरू ने नक्शा ले लिया और मेज पर फैला कर उसका सूक्ष्म अध्ययन करने लगा। कमल के साथ लगभग आधे घन्टे तक लगातार उस पर परिश्रम करने के उपरान्त वह बोला—

"ठीक है। अपना काम हल हो जायेगा।"

"यह तुम्हारी योजना में सहायक हो सकेगा ?"

"जी हां ! अगर कोई एतराज न हो तो क्या मैं यहां सिगरेट पी सकता हूँ ?" गुरू ने पूछा।

"शौक से।"

भगवान चन्द्र के कहने के साथ ही उसने सिगरेट की डिब्बी निकाल कर मेरी और अन्य व्यक्तियों की ओर बढ़ाई। सबने सिगरेट सुलगाई—केवल भगवान चन्द्र और गोपाल को छोड़कर! गुरू ने एक गहरा कश खींच कर धुंआं छत की ओर उंडेल दिया और फिर कुछ सेकेन्ड सोचने के बाद बोला—

"आप लोग अपनी-अपनी कुर्सियाँ मेज के करीब खिसका लें तो ज्यादा अच्छा होगा। नक्शे के कारण हमारी योजना अब बहुत ही ज्यादा आसान हो गई है।"

सबने चुपचाप कुर्सियाँ मेज के पास सरका लीं। गुरू के हाथ में इस समय एक लाल पेंसिल चमक रही थी। उसके द्वारा वह नक्शे पर निशान लगाता हुआ बोला—

"यह देखिए। हम लोग यहाँ से छिपकर इम्फाल पहुँचेंगे और वहाँ से बाहर निकलने में हमको कुछेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। जिनका हल परिस्थिति के अनुसार ही वहाँ पर निकल आएगा। वही कठिनाई हम लोगों के लिए पहाड़ बन सकती है, क्योंकि द्वितीय विश्व महायुद्ध के कारण ब्रिटिश साम्राज्य हर समय जापान से भयभीत रहा करता है।''' फिर अब तो उसके शत्रुओं में नेताजी की आजाद हिन्द-फौज का नाम और बढ़ गया है। इस संगठन के इरादे भविष्य में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लिए खतरनाक साबित होंगे। यही कारण है कि वह अब चारों ओर चौकन्ना हो गया है। सीमा पर फौजें लगा दी गई हैं।''''सिंगापुर के साथ-साथ बर्मा में करारी हार पाने के कारण अब ब्रिटिश साम्राज्य पहले से भी ज्यादा खतरनाक हो गया है। कोई भी व्यक्ति सीमा के बाहर नहीं निकल सकता, लेकिन हम लोग निकल जाएगें।" अंतिम वाक्य गुरू ने बड़े इतमीनान से कहा।

"वह कैसे ?" नीना का अकस्मात ही प्रश्न हुआ।

"मुझे अपनी तरकीबों पर पूरा विश्वास रहता है नीना। और जिस तरकीब पर मुझे जरा भी सन्देह होता है, मैं तुरन्त उस के स्थान पर कुछ और सोच लेता हूँ।"

"फिर भी····वह तरकीब क्या हो सकती है ?"

"वह तरकीब तो परिस्थिति देखकर ही निर्मित की जा सकती है, बहन !"

"ओह।"

नीना चुप हो गई।

भारतीय सीमा पार करने बाद, अर्थात इम्फाल के बाद, हम लोग सिंगापुर आसानी से पहुँच सकते हैं।" गुरू ने यह कहते हुए अपनी योजना समाप्त कर दी।

"हूँ!" भगवान चन्द्र की आकृति विचार-सागर में डूब गई— "ठीक है, मैं एक ट्रक खरीद लेता हूँ, जिसमें जूट भरा होगा। जहाँ उचित समझना ट्रक का जूट निकाल कर फेंक देना ड्राइवर का काम जित्तू के हाथों सौंप कर तुम क्लीनर का काम संभाल लेना और बाकियों को पीछे जूट के अन्दर छिपा देना। क्यों ठीक है न ?"

"जी हां !" सबका एक स्वर था।

"तब ठीक है। कल शाम को चार-पांच बजे तक ट्रक मय-माल के आ जाएगा और शाम का सात बजे तुम लोग यहाँ से चल दोगे।"

"ठीक है।"

"तुम लोगों के साथ यह नीना भी जाएगी।"

"जी !"

सब एकदम से चौंक पड़े।

"हाँ भई, इसने मुझे विवश कर दिया है, नहीं तो मैं कभी न कहता।"

"लेकिन........" गोपाल ने कुछ कहना चाहा।

"मैं जानता हूँ गोपाल कि संख्या बहुत हो जाएगी। लेकिन क्या करूँ? इसके स्नेह ने मुझे विवश कर दिया है।"

"ठीक है।"

सबकी स्वीकारोक्ति मिलने पर गोपाल ने भी अपनी स्वीकारोक्ति दे दी। दल में अब छः के स्थान पर सात व्यक्ति हो गए थे—चार पुरुष व तीन स्त्रियाँ।

इस निश्चय के पश्चात् उस दिन की यह अन्तिम महत्त्वपूर्ण सभा विसर्जित हो गई।

सबों के हृदय में क्या था, यह तो मैं नहीं जानता। किन्तु मेरे हृदय में अत्यन्त आकुलता थी—आने वाले कल के लिए!

कल?

कल!

अर्थात आज - अर्थात बीते हुए दिन का अगला दिन!

शाम के चार बजकर कुछ ही मिनट हुए होंगे कि एक ट्रक लिए हुए जित्तू (जितेन्द्र) ने कोठी के प्रांगण में प्रवेश किया। उसकी सूरत पूरी तौर से ड्राइवर जैसी लग रही थी—शरीर पर खाकी रंग की एक बुशर्ट और उसी रंग की पतलून थी, जिस पर तमाम काले-काले कालिख के दाग लगे हुए थे। ट्रक को एक किनारे खड़ा करके वह कोठी के अन्दर आ गया और अपने कपड़े उतार कर गुरु की ओर

बढ़ाता हुआ बोला—"ले बेटा क्लीनर, यह तुम्हारे हक में आए हैं। अपन राम तो साफ ही रहेंगे।"

"ठीक है यह भी चलेगा। अपनी-अपनी किस्मत हैं, कोई जीते कोई हारे। क्यों है न ?" गुरू ने एक बनावटी निःश्वास खींचकर कहा।

"हाँ और क्या—फिसल पड़े तो हर गंगे नहीं तो हर-हर महादेव तो है ही—।" मुस्कराते हुए जितेन्द्र ने कहा और अपनी पोशाक पहनने लगा।

"कह लो बेटा, तुम्हारा ही तो जमाना है। जो जी में आए कह लो।"

गुरू अभी शायद और भी कुछ कहता या जित्तू ही कुछ जवाब देता कि लेकिन उसी समय कमरे में गोपाल के प्रवेश करने से बात रुक गई। उसके साथ बीना भी थी।

"जित्तू ले आए ?" गोपाल ने पूछा।

"क्या ?" जितेन्द्र अनजान बन गया।

"मूर्ख न बनाओ जित्तू भय्या ! यह कपड़े जो गुरू जी........"

"धत्तेरे की ! देख बीना तू हम लोगों के बीच न बोला कर नहीं तो........"

"नहीं तो क्या, भय्या ?" बीना ने पुनः पूछा।

"तेरी इन दोनों त्रुटियों को मैं खाट से बांध दूंगा !" जित्तू ने पुनः स्नेहयुक्त धमकी दी।

"ए....ऽ....ऽ....ऽ........." कहकर बीना ने जबान निकालकर उसे चिढ़ा दी। और जैसे ही जित्तू उसे पकड़ने के लिये उठा वह ठेंगा दिखाती हुई बाहर भाग गई। जित्तू ने उसे सुनाते हुए गोपाल से कहा—"संभाल लो गोपाल भय्या तुम अपनी लाड़ली को, नहीं तो मैं इसकी वह ठुकाई करूँगा कि बस हाँ ! बताए देता हूँ।"

"अच्छा, अच्छा; छोड़ो भी वह तो पागल है।" गोपाल ने झिड़का दी; लेकिन बीना सुन रही थी, बोली—"ए भय्या ! जबान संभालकर जो मुझे पागल कहा…… ……"

"अच्छा जा भाग यहाँ से !"

और वह खिलखिलाती हुई वहाँ से भाग खड़ी हुई। अब गोपाल फिर जित्तू की तरफ मुखातिब हुआ—

"हाँ जित्तू, सही बताओ क्या हुआ ? हमें तो बाहर झांकने तक के लिए भी मनाही कर दी है। यह कपड़े………"

हाँ भय्या, ले तो आया हूँ। लेकिन अब चलना कब है इसे तो गुरू ही बता सकेगा—क्यों बे गुरू ! क्या प्रोग्राम है ?" जित्तू ने अपना सारा बोझ गुरू के सिर धर दिया।

"आज तो शायद पूर्णमासी है ?" गुरू अब तक अपने कपड़े पूरी तौर पर बदल चुका था।

"हाँ !" गोपाल ने कहा। इधर गुरू ने जेब से सिगरेट निकाल कर सुलगाई। देखा-देखी जित्तू ने भी गुरू से एक सिगरेट माँग कर सुलगा ली।

"तब तो फिर आप लोग, अगर अंधेरा होते ही और चाँद निकलने से पहले ही उसमें बैठ जायें, तो ज्यादा अच्छा होगा।" गुरू की भाषा गंभीर थी।

"ऐसा क्यूँ ?"

"क्योंकि हम लोग जिस काम को करने जा रहे हैं उसमें कदम-कदम पर खतरा ही खतरा है। और जाहिर है कि हम लोग इस वक्त किसी भी प्रकार का अनावश्यक खतरा किसी भी कीमत पर मोल लेने को तैयार नहीं है। क्यों जित्तू, हम लोग जान-बूझ कर आग में क्यों कूदें जब कि हमें मालूम है कि यह आग है ?"

"बिल्कुल ठीक !" दोनों के मुँह से निकला—"जाहिर है कि हम इस तरह की बेवकूफी कभी न करेंगें।"

"तब फिर ठीक है। ट्रक के आगे का जूट हम, यानी मैं और, जित्तू, रात को आठ बजे तक निकाल देंगे और साढ़े आठ बजे तक आप लोग उसमें बैठ जाइयेगा। और हाँ, यह ध्यान रहे कि ट्रक के अन्दर चारों ओर एक-एक गाँठ अवश्य होनी चाहिए ताकि खुदा-न-खास्ता अगर वारदात हो हो जाए तो उससे हम लोगों को कोई नुकसान न पहुँचे। कमल को कह दीजिये कि अगर संभव हो सके तो वह किसी रईस आदमी के भेष में हम लोगों के साथ ही बैठ जाए, क्योंकि इससे आगे बहुत फ़ायदा मिल सकता है। पैट्रोल आप लोग अपने साथ काफी रख लीजिएगा। वैसे हम लोग तो रक्खेंगे ही और यह भी, जिसकी हमें किसी भी समय जरूरत पड़ सकती है।........और हाँ, सामान में सिर्फ भोजन और पानी के अलावा और कुछ नहीं होना चाहिए—किसी भी कीमत पर नहीं।"

"अच्छा !"—

कहकर गोपाल कमरे से बाहर निकल कर भगवान चन्द्र के कमरे की ओर चल दिया, किन्तु वह किसी कार्यवश बाहर चले गये थे। अतः गोपाल रसोई की तरफ बढ़ गया, जहाँ कि आशा, बीना और नीना मिलकर मार्ग के लिए भोजनादि की व्यवस्था कर रही थीं। गोपाल उन्हें आवश्यक बातें ठीक से समझा। बुझा कर पुनः उसी उसी कमरे में लौट आया जहाँ कि गुरु और जित्तू में हँसी-मजाक चल रहा था। कमल भी कहीं गया हुआ था। इसलिये वह भी कुछ देर बाद वापस आकर उनमें सम्मिलित हो गया।

शाम के सात बज चुके थे। भगवान चन्द्र के साथ ही सब लोग बैठकर भोजन कर रहे थे। बीच-बीच में हँसी-मजाक भी चल रहा

था। भोजन परोसने के लिए सभी मौजूद थे, क्योंकि आशा, बीना और मीना ने पूरा खाना बना कर एक ही साथ मेज पर लगा दिया था, इस कारण जिसको भी जरूरत पड़ती वह अपने ही हाथ से निकाल कर अपनी थाली में रख लेता था।

कहकहों के बीच, लगभग साढ़े सात बजे के आस-पास, भोजन का कार्यक्रम समाप्त हुआ। जित्तू ने बाहर आकर देखा चारों ओर घना अन्धकार छाया हुआ था। कोठी के बाहर की कोई भी बत्ती नहीं जल रही थी, केवल सड़क पर लगे बिजली के लट्टुओं का पीला मरियल सा प्रकाश थोड़ी दूर तक फैला हुआ था। जिसमें कुछ दूर पर क्या है, यह देख पाना बिल्कुल ही असम्भव था। फिर ट्रक भी ऐसी जगह पर खड़ा था जहाँ जल्दी किसी की निगाह ही न पहुँचे।

परिस्थिति का भली भाँति अध्ययन करके वह पुनः अन्दर चला गया। थोड़ी ही देर बाद, वह अपने साथ गुरू और कमल को लेकर बाहर आया और उनकी सहायता से उसने जूट की गाँठों को बाहर निकालना शुरू किया। जब अन्दर काफी जगह हो गई तो उसने उन दोनों की सहायता से ट्रक की दीवारों से सटा-सटा कर एक-एक गांठ रखना शुरू की और आगे दो-दो गांठों की 'मजबूत' दीवार खड़ी कर दी। उस दीवार में फर्श से लगा हुआ केवल एक छेद ही खुला हुआ था, जिसकी सहायता से अन्दर जा कर आराम से बैठा जा सकता था। ट्रक बड़ा था और साथ ही ऊपर छत भी थी।

इतना करने के बाद कमल और गुरू अन्दर गए। जितेन्द्र केवल वहीं रह गया। धीरे-धीरे करके आवश्यक सामान आना शुरू हुआ। थोड़ा सा सामान था - तीन दिन का खाना-पानी; गिनती की सात राइफलें और कारतूस की पेटियाँ तथा कुछ हैण्डबम, जो एक मजबूत पेटी में रखे हुये थे और सात-आठ पीपों में पैट्रोल ! जितेन्द्र ने दो पेटियों को तो ट्रक के नीचे उनकी जगह पर रख दिया और

बाकी को अन्दर। इसके पश्चात् वे अन्दर गए और चलने को कहा। आशा भगवान चन्द्र के सीने से लगकर फफक पड़ी।

"भय्या !"

"पगली, रोती काहे को है ? तू तो एक महान् कार्य को करने के लिए जा रही है...... जा, बहन जा ! ईश्वर करे, तुम लोगों को सफलता मिले ...और....और जब तुम लोग दुबारा वतन में कदम रक्खो तो....तो हमारी माँ की बेड़ियाँ कट....चुकी हों।" कहते-कहते उनका भी गला रूँध गया था, अतएव वह आगे न बोल सके।

प्रत्युत्तर में आशा केवल सिसकियाँ ही भरती रही। उसे रोता देखकर वीना और नीना के भी आँसू आ गए। कौन कह सकता था कि दुबारा भाई-बहन का यह मिलाप होगा भी या नहीं ? करीब-करीब सभी रो पड़े। जब मुझसे यह न देखा गया तो मैंने ही मौन भंग करने की जुरत की—

"अरे भाभी जी ! अगर आप इसी तरह से रोती रहीं तब तो कल्याण ही हो जायगा। और अपने गुरूजी का प्लान म्लान हो जाएगा।"

मेरे इतना कहने पर वातावरण में कुछ तो मुस्कुराहट आई, लेकिन उतनी नहीं जितनी कि मैं चाहता था। फिर भी कुछ तो मौसम चेंज हुआ ही था। थोड़ी ही देर में बादल भी छंट गये और हम लोग भगवान चन्द्र से अंतिम विदा लेकर बाहर आ गये। वह हम लोगों को छोड़ने बाहर नहीं निकले थे, न जाने क्यों ?

कमल, गुरू और जितेन्द्र के अलावा सभी लोग जब ट्रक के अन्दर पहुँच गए तब उन तीनों ने मिलकर उस रास्ते को भी दो गाठों के जरिये बन्द कर दिया और वे तीनों आगे जाकर बैठ गए। 'भारत माँ' का मन में ही जयघोष करके जितेन्द्र ने ट्रक स्टार्ट की।

ट्रक थोड़े से हिचकोले देकर कोठी के बाहर निकल गई और मणिपुर की सड़क पर बढ़ चली।

उस समय रात्रि के ठीक नौ बजे थे।

सबके कोठी से बाहर जाते ही भगवान चन्द्र का मन अत्यन्त दुखित हो गया। ठीक भी तो था, वर्षों से वह आशा और नीना के मध्य घिरे हुये। इस प्रकार से रह रहे थे कि उन्हें यह कभी अनुभव ही नहीं हुआ कि उनका कोई परिवार नहीं है, अथवा जीवन में वह बिलकुल अकेले हैं। उनका अगर कोई परिवार था तो आशा, नीना और दो बहुत पुराने नौकर—एक तो था माली और दूसरा चौकीदार। चौकीदार घर की रखवाली भी करता था और साथ ही घर के अन्य काम भी। इसी प्रकार से माली उनके लॉन को भी ठीक करता रहता था और कार की ड्राइविंग भी करता था। इन पांच व्यक्तियों के अलावा उनके घर में कोई भी छठा व्यक्ति न था। भगवान चन्द्र ने नौकर और बढ़ाने की कोशिश कई बार की लेकिन वे नौकर थे कि किसी को भी वहाँ टिकने ही नहीं देते थे, कहने लगते—"अरे मालिक, का हम लोग मर गयेन हैं, जोन आप औरे नौकरिया आदमी चहत हो?"

"नहीं काका, यह बात नहीं है!" भगवान चन्द्र चौकीदार को 'काका' कह कर ही पुकारते थे। उन्होंने उसे कभी चौकीदार या ड्राइवर कहकर नहीं बुलाया था। वह भी पचास से ऊपर हो चुका था, लेकिन हट्टा-कट्टा इतना कि उसके आगे अच्छे-अच्छे दो भी बेकार साबित हो जायें।

"फिर का बात है जवन........"

"कुछ भी नहीं काका, दर असल बात यह है कि तुम लोगों की मेहनत देखकर भई मेरा तो·······"

"कछु ना सुनब मालिक, मुला हमका तो तुम्हार ही काम करके मजा आवत है। तुम देवता हो मालिक, देवता! और हम कहे देइत है कि अगर कउनो आदमी इहाँ नौकरी करन आवा तो हम ऊका ठहरे न देब, एको दिन। ई हमार बतकही तुम अपन कान खोल के खोल सुन लेओ······ हाँ! बड़े आए नौकर रक्खै वाले!"

चौकीदार की बातों में इतनी आत्मीयता रहती थी कि भगवान चन्द्र कभी भी उसके मन के खिलाफ नहीं जाते थे। और न ही कोई नौकर रखने की बाद में कभी कोशिश की। एक बार नौकर रक्खा भी गया तो कुछ ही दिन बाद दोनों ने मिलकर उसे भगा दिया और भगवान चन्द्र, आशा तथा नीना हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

इसी प्रकार एक बार उन्होंने, जब कि वह आशा और नीना के साथ खाना खाने बैठे थे, आशा को सम्बोधित करते हुये कहा - "तुम लोगों को तो बड़ी तकलीफ होती होगी?"

"क्यों?" छूटते ही नीना ने प्रश्न किया, क्योंकि आशा मुँह चलाने में जुटी हुई थी, अतः जवाब न दे पाई।

"इसलिए कि तुमको (तुम लोगों को) मेरे खाने-आने को····"

"भय्या! अब कभी ऐसी बात कही तो मैं रूठ जाऊँगी।" दोनों ने ही एक साथ मान से कहा।

"क्यों? मैंने कोई गलत बात कही?"

"और नहीं तो क्या! आपके कहने का यही मतलब है न कि आप की वजह से होने वाली तकलीफों से तंग आकर हम लोग एक नौकरानी रख लें?"

"हां, हां—बिल्कुल यही। यू आर राइट!" खाते-खाते गर्दन हिला दी।

"बट इट इज क्वाइट रांग। क्योंकि इस प्लान से हमलोग आपके प्यार से वंचित रह जायेंगे.........नहीं, नहीं भय्या, हमको आपकी यह बंडल किस्म तरकीब बिल्कुल भी पसन्द नहीं। क्यों आशा तुम्हारी क्या राय है?

"जो तुम्हारी है।" कहकर आशा आसानी से छुट्टी पा गयी।

"भई मेरे कहने का मतलब वैसे यह नहीं था कि तुम लोग नाराज हो जाओ।"

"फिर क्या था?" प्लेट में चावल डालते हुए आशा ने पूछा।

"मतलब यह था कि तुम लोग आजकल के माडर्न फैशन में पली हो और पाश्चात्य सांचे में ढली हो.......बुरा न मानना, मेरी तो साफ कहने की आदत ही है और साफ सुनना ज्यादा पसन्द करता हूँ इसी लिए कह रहा हूँ कि संभव है तुम लोगों को घर के कामों में रुचि न हो....... नहीं, नहीं, यह बात इसरी है कि तुम लोग क्रांतिकारी दल में हो। वैसे भी तुम लोग पाश्चात्य सभ्यता मे पली हो।"

"लेकिन भय्या कुछ तो अंश भारतीय या पूर्वी सभ्यता का है ही। फिर हम स्त्रियां बनाई इसीलिए गई हैं कि........." आशा ने तर्क पेश किया।

"कि वे पुरुषों की गुलामी कर सकें—क्यों?" इतना कहकर भगवान चन्द्र तेजी से हँस पड़े। लेकिन आशा ने अपनी बात पर दृढ़ रहते हुए कहा—"भय्या स्त्रियों को पुरुष के अण्डर में ही रहना चाहिए क्योंकि अगर वह.......उसके ऊपर नियंत्रण न रखा जायगा तो वह उच्छृङ्खल हो जायगी जैसे कि बिना खूंटी के गाय।....... फिर हमारा तो यह धर्म है कि हम अपने घर में रहकर अपने परिवार को सुखी करें, न कि क्षणिक सुख के लिए होटलों में घूमकर या फैशन के

रंगों में रंग कर अपने घर को ही भूल जाएं। हमारा फैशन है गृहस्थी ; और सच्चा सुख है—मातृत्व !" कहते हुए वह झेंप गई। लेकिन कैसे हार मान ले ? इसलिए उसने एक गिलास पानी पीकर पुनः बोलना शुरू कर दिया—"अगर हम भविष्य में अपनी गृहस्थी और मातृत्व को भूल जायेंगे तो वही दिन हमारे लिए पतन-द्वार होगा जहाँ गिर कर बाहर निकलना कम से कम नारी के वश में तो नहीं है।.........मेरा कहने का मतलब सिर्फ भारतीय नारियों पर ही चरितार्थ हो सकता है—पाश्चात्य पर नहीं पश्चिम, पश्चिम है और पूर्व, पूर्व। सूरज कभी पश्चिम से नहीं निकलेगा, अगर उदय होगा तो पूरब से ही, नहीं तो उदय ही नहीं होगा।"

"इतनी बहस से कुछ फायदा हुआ ?"

"हाय राम ! अभी तक आपकी कुछ समझ में ही नहीं आया ?" बीवा ने अपने माथे पर हाथ मारते हुए कहा।

"हुआ कैसे नहीं ?" आशा उछल पड़ी—"मेरे इतना बकने-झकने का मतलब सिर्फ इतना है कि एक औरत के अन्दर तकलीफों को सहन करने की असीमित शक्ति होती है। बड़े से बड़े तूफान उसके हृदय से गुजर जाते हैं और वह चुपचाप सहन कर लेती है। जब हम लोग इतनी तकलीफें सह सकते हैं तो यह तो बहुत ही.........उई माँ।"

वह आगे कुछ कहने ही जा रही कि नीना के चुटकी काट लेने से एकदम से उछल पड़ी और भगवान चन्द्र 'हो हो' करके हँसते हुए उठ खड़े हुए। अब आशा को ख्याल आया कि वह कहने क्या जा रही थी, यह सोचते हुए उसने अपने कान पकड़ लिये क्योंकि बातों के प्रवाह में वह बहुत दूर बह गई थी। वहाँ से किनारे तक खींच कर लाने का श्रेय था नीना को। दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्करा दीं।

तब तक खाना भी खत्म हो गया था।

\+ + + +

भगवान चन्द्र का हृदय रह रह कर उद्विग्न हो उठता था, आशा के लिए। वह रह रहकर सोचते कि उस बेचारी ने क्या कुसूर किया था जो उसे एक ऐसे व्यक्ति के साथ बंधना पड़ा, जिसकी जिन्दगी का कोई ठिकाना नहीं ...... जिसके नाम वारन्ट इशू हो चुका था ... जो किसी भी समय शासकों की गोली का निशाना बन सकता था। क्या करें, उस बेचारी की किस्मत ही खराब थी। सोचते सोचते वह अपने सर को झटक देते– क्या बेकार की बातें वह सोच रहे हैं ? उसे तो एक न एक दिन अपने घर जाना ही था। हर लड़की का एक अलग घर-बार होता है और किसी भी हालत में उसे वहाँ जाना ही पड़ता है। फिर यह फिजूल है आशा एक लड़की है जो समय से अपने घर चली गयी ...."

"लेकिन क्यों ? वह यहाँ भी तो रह सकती थी।" मन ने प्रश्न किया।

"भगवान चन्द्र तुम पुरुष हो। तुम्हें शायद नारी की प्रवृत्ति के विषय में तनिक भी ज्ञान नही है ? वह केवल बहन ही नहीं होती है जैसा कि तुम सोचते हो। तुम्हारा यह सोचना उतना ही गलत है जितना रात्रि में सूर्य का उदय होना। ...... प्रत्येक नारी बहन-बेटी के सिवा कुछ और भी होती है। जीवन के दूसरे पहर यौवन में कदम रखते ही उसकी आकांक्षाएँ दूसरी ओर मुड़ जाती हैं और ...... और वह ... उसकी निगाहें किसी ऐसे व्यक्ति को ढूंढ़ने लगती हैं जिसे वह अपना साथी बना सके और जिन्दगी की राह पर उसके साथ चलकर मंजिल तक पहुंच सके। इसी आकांक्षा के साथ ही उसकी आकांक्षाओं की सीमा खत्म नहीं हो जाती बल्कि उसकी अन्तिम सीमा होती है— मातृत्व का पूर्ण होना। और यह तभी संभव हो सकता है जबकि वह किसी एक की हो सके अन्यथा नहीं। कोई भी नारी इस भावना से पृथक नही होती। दुनिया की हर नारी चाहती है कि वह माँ बने...... और माँ

बनने के लिये भारतीय समाज में विवाह का होना निहायत जरूरी है। जब तक वह विवाह नहीं करेगी, पुरुष के संसर्ग में नहीं आयेगी; और ऐसी हालत में वह मा नहीं बन सकती। ·········दुनिया की कोई भी नारी अपने जीवन से इस भावना को जुदा नहीं कर सकती। अगर वह बिना विवाह किये ही, ब्रह्मचर्य को पालन करते हुये, जीवन को व्यतीत करना चाहे तो यह बिल्कुल ही असभव है। कुछ स्त्रियां ऐसी होती हैं जो ऐसा चाहती हैं और पालन भी करती हैं; लेकिन बाद में उम्र के साथ उन्हें यह अच्छी तरह से मालूम हो जाता है कि यह कितना दुष्कर कार्य है।" मन के प्रश्न का उत्तर मस्तिष्क ने दिया।

"क्यों ?" पुन: प्रश्न उभरा।

'ब्रह्मचर्य एक ऐसा व्रत है जिसका पालन कम से कम स्त्री नहीं कर सकती। ब्रह्मचर्य का अर्थ है इच्छाओं का दमन और इच्छा का नाम है वासना! वासना, क्या स्त्री और क्या पुरुष, हर जीव-धारी में होती है। किन्तु 'सेक्स' एक दूसरी ही प्रकार की वासना होती है, जिसका दमन एक बहुत ही कठिन कार्य है क्योंकि यह प्रकृति-प्रदत्त गुण है। इस गुण की अवहेलना करना आत्महत्या करना है, जो एक निकृष्ट कार्य माना गया है। अत: इस गुण की अवहेलना नहीं की जा सकती। इसकी पूर्णता के लिये संसर्ग आवश्यक है और संसर्ग के लिये विवाह!"

"हूँ!" मन में कुछ शांति सी अनुभव हुई, फिर भी तूफान था।

"तुम्हें तो गर्व होना चाहिये कि आशा ने ऐसे आदमी से शादी की है, जो अपने देश के सिवाय और किसी में भी अनुरक्त नहीं है; और न ही हो सकता है। ········वे लोग अपने देश और अपनी आजादी के लिये प्राणों की बाजी लगाने को तैयार हैं और तुम उनके लिये परेशान हो········तुम कायर हो········।"

कुछ देर पश्चात् भगवान चन्द्र के हृदय में उठने वाला तूफान भी धीरे-धीरे शान्त हो गया और वह सो गये। लेकिन नींद में भी वह आशा और नोना को भूल नहीं पाये। स्वप्न में भी वह एक कविता की निम्न पंक्तियाँ दोहरा रहे थे—"जाने वाले कभी नहीं आते, जाने की याद आती है ....।"

दूसरे दिन वह भी कलकत्ता का भीषण कोलाहल छोड़कर कानपुर के लिए रवाना हो गये।

७

आसाम पहुँचकर गोपाल-पार्टी ने तीन दिन आराम किया। यह तीन दिन उन्होंने, मणिपुर की सीमा से लगभग डेढ़ सौ मील पहले, एक छोटे से गांव में बिताए। गांव का मुखिया एक दयालु व्यक्ति था था इसलिये उसने हम लोगों के ठहरने के लिये पास की एक झोपड़ी खाली करवा दी थी, जिसमें दो कमरे थे। एक पर तो हम लोगों ने अधिकार किया और दूसरे पर तीनों लड़कियों ने। खाना हम लोगों के लिये मुखिया ही तैयार करवा देता था। तीन दिन हम लोगों ने आस-पास की स्थिति को समझने और प्रकृति के मनोरम दृश्यों को देखने में बिताये। साथ ही आगे के स्वप्न देखते रहे और भवितव्य की कल्पना करते रहे।

चौथे दिन प्रातः हम लोगों को वह गांव छोड़ देना था। रात में एक मीटिंग बैठी, करीब ११-१ का समय होगा। चारों ओर घना जंगल 'सांय-सांय' कर रहा था। गांव से कभी-कदा कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनाई दे जाती थी। और जंगली जानवरों की दहाड़ों से दिल तो क्या गांव भी दहल जाता था। छोटे-मोटे जानवर तो गांव के अन्दर ही घूमा करते थे, जिनकी आहटें रात के सन्नाटे में पूर्णतया स्पष्ट हो जाती थीं।

उस छोटी सी मीटिंग में केवल पुरुष ही थे, स्त्रियां पास के कमरे में आपसी हंसी-मजाक के बाद थक कर सो गईं थीं। मीटिंग

का विषय था—ट्रंक से बूट को निकाल कर कहीं फेंक देना! यह विचार मैंने ही गोपाल के सम्मुख रक्खा था, जिससे वह सहमत भी हो गया था। कारण यही था कि उसके अन्दर हम लोगों का दम घुटने लगता था। और तब हमें ऊपर की छत खुली रखनी पड़ती थी। जिससे कभी भी खतरा पैदा हो सकता था। सबके सामने गोपाल ने ही प्रस्ताव रक्खा—

"मैं समझता हूँ कि हम लोग खतरे की हद से पूरी तौर पर बाहर आ गये हैं।

"क्यों?" जितेन्द्र इस अचानक प्रश्न पर सभी चौंक पड़े।

"क्योंकि अब हम लोग मणिपुर के बिल्कुल करीब आ गये हैं, जहाँ से आसानी से रंगून पहुँचा जा सकता है।"

"ठीक है," जितेन्द्र का स्वर बेतरह गंभीर था—"लेकिन अभी खतरा टला नहीं है। क्योंकि मणिपुर की राजधानी इम्फाल पर अब भी ब्रिटेन का ही राज्य है।"

"लेकिन फिर भी........."गोपाल ने कहा।

"देखो गोपाल, मैं नहीं चाहता कि हम लोग किंचित मात्र भी खतरे में पड़ें। कारण इसके कई हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं—सबसे पहला कारण है, तुम और रवीन्द्र जेल से भागे हुये हो। दूसरा, कानपुर में ही कोठी पर हमारे ऊपर छापा पड़ चुका है, जिससे हम लोग बिल्कुल बाल-बाल बचे हैं। तीसरा, कलकत्ते में ही हमारे पीछे एक सी० आई० डी० आफिसर लगा हुआ था, जिसे गुरू ने बड़ी सफाई से अपने रास्ते से काट दिया था। चौथा, तुम दोनों और साथ ही साथ हम लोगों की भी फोटो पुलिस के पास है, जो तुम्हारे जेल से भागते समय ही सीमाओं पर भेज दी गई होगी। पाँचवा और सबसे प्रमुख कारण है कि हमारे साथ तीन-तीन लड़कियाँ हैं,

जिन्हें साथ लेकर हम लोग भाग भी नहीं सकते, क्योंकि वे लोग बहुत जल्द मुसीबत से घबड़ा जायेंगी।......नहीं, नहीं, मेरा कहने का यह मतलब बिल्कुल नही है कि उनमें हिम्मत नहीं है। उनमें हिम्मत है और बहुत हिम्मत है। अगर उनमें हिम्मत और उत्साह न होता तो वह कभी भी हमारे दल में न शामिल होती उनमें देश-प्रेम भी कूट-कूट कर भरा हुआ है, जिससे प्रेरित होकर वे अपनी मातृ-भूमि तक छोड़ने को तैयार हुईं। इतना बड़ा जोखिम उठाना कोई हँसा-ठट्ठा नहीं हैं। लेकिन इतना सब होते हुये भी वे औरत हैं; और औरत की उन कमजोरियों से वे अलग नहीं हैं जो कि सेंट-परसेंट हर औरत में होती हैं। अब मैं आपके ऊपर यह निर्णय छोड़ता हूँ कि इन बातों को समझते-बूझते हुये भी इतना भारी खतरा मोल लेने को तैयार हैं, आप?" इतना कहते हुये जितेन्द्र थोड़ा-सा उत्तेजित हो उठा।

"नहीं, नहीं; हम ऐसा कब चाहेंगे?" सब एक स्वर में बोले। किन्तु गोपाल का स्वर इन सबसे अलग था—"देखो जित्तू! सुई को कभी छोटा न समझना चाहिये, क्योंकि कभी-कभी सुई के आगे तलवार भी बेकार सिद्ध हो जाती है और बड़े से बड़ा काम सुई कर दिखाती है। तुम यह मत समझ लेना कि मैं तुम्हारी बात काट रहा हूं। लेकिन चूंकि तुम लोगों ने मुझे बड़ा बनाया है—अपना नेता बनाया है—इसी-लिये समझा रहा हूँ। औरत में अगर कुछ कमजोरियां हैं तो उसमें खूबियाँ भी हैं। अगर उसमें अवगुण हैं तो गुण भी हैं। अगर वह युद्ध-बिभीषिका (खतरे) से डरती है तो अवसर मिलने पर दुर्गाबाई और लक्ष्मीबाई भी बन जाती है। एक औरत खतरे से लड़ने के लिये हमसे ज्यादा और हर समय तैयार रहती है। उसे छोटा समझना भूल है। खैर यह तो थी औरत की बात; अब जहां तक खतरे का सवाल है तो खतरा मोल लेकर ही हम लोग यहाँ तक आ सके हैं। जेल से भागते समय, कानपुर से भागते समय और कलकत्ता छोड़ते समय भी हमारे

जानें हथेली पर थीं। जब हम लोग अपने वतन को आजाद कराने के लिये इतना बड़ा खतरा मोल लेकर वतन के बाहर जाने के लिये विचार बना सकते हैं तो अगर इसके लिये जान भी चली गई तो कोई परवाह नहीं। मर्द वही है जो जिन्दगी में आने वाले खतरों का सामना हँसते हुये करे और जो नहीं कर सकता वह चूड़ियाँ पहन कर घर बैठ जाये। क्या खतरों से डर कर हम घुट-घुट कर मरें? यह असम्भव है। समुद्र को जीतने वाले तूफानों से डरते नहीं, बल्कि उनसे डट कर मुकाबला करते हैं। यह संभव है कि वे असफल हो जायें, लेकिन फिर भी वे शहीद कहलाते हैं और जो सफल हो जाते हैं, उनका तो कहना ही क्या? इसलिये खतरों से डरना कैसा? हम उनका मुकाबला करेंगे, हँसते हुये। और भारत माँ के आशीर्वाद से सफलतापूर्वक अपनी मंजिल तक पहुँच भी जायेंगे।"

गोपाल की दलीलें सुनकर मैं हतप्रभ हो गया और बाकी सब नतमस्तक हो गये। इसके बाद मीटिंग समाप्त हो गई और सब लालटेन गुल करके सोने के लिये लेट गये, तब गोपाल ने जितेन्द्र से पूछा —"जित्तू, नाराज हो गये क्या?"

"नहीं भय्या, इस तरह की बातों में कहीं नाराज भी हुआ जाता है? फिर आपने तो हम लोगों को एक नया मोड़ दिया है। आपकी इस बात पर अगर मैं नाराज होता हूँ तो यह मेरी बेवकूफी होगी।"

"अच्छा अब सो जाओ, सबेरे तड़के ही हमें यहाँ से चल देना है—इम्फाल के लिये।"

और फिर सब सो गये। उस समय रात्रि का अंतिम प्रहर प्रारम्भ हो चुका था और प्रात:कालीन समीर चलने लगा था।

प्रात:काल हो रहा था। क्योंकि पक्षियों के मधुर कलरवों से सम्पूर्ण गाँव गूँजने लगा था। आसमान का अंधेरा फीका हो चला

था और तारे मलीन । शायद निशा ने अपनी तारों वाली चूनरी उतार देने का पूरा फैसला कर लिया था। पक्षियों के कलरव के साथ सबसे पहले आशा की नींद खुली ।

नींद के खुलते ही उसने जंगल की तरफ खुलने वाली खिड़की की तरफ निंदासी आँखों से निहारा । वस्त्र ठीक किये और अर्द्ध-सुप्तावस्था सी चाल से वह खिड़की के पास आ गई। आसमान में सुबह की सफेदी फैलने लगी थी। बाँहें उठाकर उसने एक मादक अंगड़ाई ली और उसी अवस्था में न जाने क्या सोचकर मुस्करा दी। वक्ष पर से सरक गये आँचल को ठीक करती हुई वह अपनी दोनों सहेलियों के पास आई। बीना स्वप्न में ही मुस्कुरा रही थी जब कि नीना का चेहरा कुछ तमतमाया हुआ लाल-सा था। कुछेक क्षणों तक तो आशा उन्हें निहारती रही और फिर दोनों को गुदगुदा दिया। दोनों ही हड़बड़ा कर उठ बैठी और एक साथ मादक अंगड़ाई लीं ।

"अरे वाह, भई मुझे तो माफ ही करो।" आशा ने व्यंग्य किया।

"क्यों ?' दोनों ने एक ही स्वर में पूछा।'

"क्या दो-दो बिजलियाँ मेरे ऊपर एक ही साथ गिरेंगी ?"

आशा के इस वाक्य पर दोनों ही खिलखिला पड़ीं। लेकिन आशा इतनी आसानी से मानने वाली नहीं थी, बोली—

"किसके ख्वाब देखे जा रहे ? बीना तो कमल का ख्वाब देख रही होगी। लेकिन नीना, तू किसका ख्वाब देख रही थी ? कौन है वो ?"

"तू !" नीना भला कब चूकने वाली थी।

"मैं ? अरी बावली, मुझे मूर्ख बनाना इतना आसान नहीं है, जितना तू समझती है। बता तो सही कि........"

"फिर कभी बताऊँगी।" नीना फटी मुस्कान मुस्कुरा दी। और इसके साथ ही वे तीनों नहाने चली गईं।

+ + + +

वे लोग जब नित्य-क्रिया से निवृत होकर एवं स्नानादि से निवृत कर आयीं तो उस समय आसमान की सफेदी पूरी तौर पर छा चुकी थी और पूर्व की पहाड़ियों के पीछे से ऊषा अपने गुलाबी मुख पर मुस्कुराहट बिखेर रही थी। ऊषा की यह रक्तिमा हिमाच्छादित मोतियों पर पड़कर अत्यन्त ही चित्ताकर्षक चित्र उपस्थित कर रही थी। वे लोग कुछ पलों के लिये ठगी। सी खड़ी प्रकृति के उस सुखमय दृश्य का रसपान करती रह गईं। उसी समय आशा, कुछ विचार आ जाने के कारण, चौंक उठी और उसने अन्य दोनों को भी वह बात याद दिलाई और फिर तीनों उस कमरे की ओर बढ़ी जहाँ अन्य लोग सो रहे थे। उन तीनों ने मिलकर सबको जगा दिया और वे लोग भी प्रातः क्रियाओं से निवृत्त होने चल दिये। इधर यह तीनों उन लोगों के लिये नाश्ते का प्रबन्ध करने में जुट गईं।

+ + + +

लगभग एक घण्टे बाद, हम लोग स्नान आदि से छुट्टी पाकर लौटे। उस समय सूर्य आसमान में कुछ ऊँचाई तक चढ़ आया था। इधर आशा, वीना और नीना, इन तीनों ने मिलकर नाश्ते की पूरी तैयारी कर डाली थी। नाश्ता क्या था—वह तो पूरे खाने की तैयारी थी। आते ही हम सब—मय लड़कियों के—नाश्ते में जुट गये।

थोड़ी ही देर में नाश्ता खत्म हो गया। अब हम लोगों को सामान वगैरह बांधना था, सो यह काम लड़कियों के सुपुर्द करके हम लोग

उस जगह की ओर चल दिये जहांकि हमने ट्रक को छिपाया हुआ था। लगभग दस-पन्द्रह मिनट लगे होंगे हमें वहां तक पहुँचने। ट्रक के पास पहुँचकर गुरू और जितेन्द्र तो ट्रक को इक्जामिन करने लगे और मैं, गोपाल तथा कमल; तीनों ने ट्रक से जूट को बाहर निकालना शुरू किया।

जूट को बाहर निकालने के बाद गोपाल ने कमल से कहा—"कमल, तुम जाकर गांव के मुखिया को बुला लाओ।"

"अच्छा।"

कहकर कमल चला गया। कुछेक क्षणों में जित्तू और गुरू ट्रक को देख-भालकर आ गये और एक पत्थर पर बैठकर सुस्ताने लगे। मैंने भी एक सिगरेट सुलगा ली और प्रकृति का आनन्द लेने लगा।

कुछ एक मिनटों में कमल गांव के मुखिया को साथ लेकर वहाँ आ गया। मुखिया आसामी था, लेकिन कामचलाऊ टूटी। फूटी हिन्दी जानता था। पढ़ा लिखा आठवीं तक। मोटी मिर्जई और घुटनों तक धोती, यह थी उसकी वेषभूषा और सिर पर किसी मोटे कपड़े का साफा बंधा हुआ था। गर्दन के नीचे तक सफेद दाढ़ी लटकी हुई थी लेकिन जात का हिन्दू था। खैर, हिन्दू हो या मुसलमान, सिक्ख हो या मरहटा, गुजराती हो या पंजाबी, था तो भारतवासी ही न! हाथों में अभी भी गाय का चारा चिपका हुआ था, शायद गाय-भैंसों की सानी कर रहा था। आते ही साथ वह हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, बोला—

"का हुकुम है, सरकार?"

"हम सरकार नहीं हैं, मुखिया। हम भी तुम्हारी तरह ही भारतवासी हैं और हर भारतवासी हमारा भाई है। हम उसके भाई हैं, सरकार नहीं।" गोपाल किंचित मुस्कुराया।

"फिर भी हजूर, हकुम देओ!"

"हम लोग आज जा रहे हैं ......"

"आजई हुजूर ?" मुखिया की वाणी में आश्चर्यमिश्रित अनुरोध था — "दुइ चार दिन और ठहर जाओ।"

"नहीं मुखिया, हमको चैन नहीं पड़ेगा।"

"काहे हजूर ?"

"क्योंकि हम लोग अपनी प्यारी भारत माता को इन अँगरेजों के पँजे से छुड़ाने के लिये घर से बाहर निकले हैं और जब तक छुड़ा नहीं लेंगे, चैन की साँस नहीं लेगें। यह हमारा प्रण है।" कहते हुये गोपाल की आँखों में एक अजीब सी लाली छा गई, जिसे वह बूढ़ा मुखिया तुरत पहचान गया।

"भगवान आपकी मदद करेगा हजूर।"

"इसीलिये तो तुमको बुलाया है। और कुछ तो हम दे नहीं सकते, हाँ यह जूट तुम लोग आपस में बाँट लेना।"

"बहुत अच्छा हुजूर ! भारतमाता आपकी रक्षा करेंगी।"

× × × ×

थोड़ी ही देर बाद हम लोग ट्रक से गाँव पहुँचे और सब गाँव वालों से विदा और शुभ कामनाएं लेकर आगे को बढ़ चले।

घड़ी की सुईयों के साथ ट्रक भी आगे बढ़ता जा रहा था। समय भाग रहा था और साथ-साथ सूरज भी आसमान में ऊपर चढ़ता जा रहा था। मील पर मील निकलते जा रहे थे और साथ ही कम होती जा रही थी-- हमसे मणिपुर की सीमा की दूरी !

हम लोगों को गांव छोड़े करीब तीन घंटे बीत चुके थे। घड़ी देखी तो दिन के दो बज चुके थे। यह तीन घंटे हँसी मजाक में कब कट गये पता ही न चला। लेकिन घड़ी देखते ही गोपाल ने जित्तू से कहा—

"भाई जित्तू, ट्रक रोक लो किसी झरने के पास।"

"क्यों?"

"भई अब तो भूख लग आई है।"

"अच्छा।"

कहकर जित्तू ने एक पास के पहाड़ी सोते के पास ट्रक रोक दिया और सब खाना खाने में जुट गये।

लगभग आधे घंटे बाद भोजन खतम हुआ। अचानक मुझे न जाने क्या ख्याल आया, पूँछा—

"आज तारीख क्या है?"

"२१ जून!" दिया, व्यंग्य पूर्वक मुस्कुराते हुये आशा ने उत्तर—"क्यों? किसी से वायदा था क्या?"

"भाभी जी, प्लीज बोर न कीजिये।"

"अच्छा! मैं बोर कर रही हूँ?"

"हाँ, हाँ, आप क्यों बोर करने लगीं मुझे!" मैंने भी उसी तरह से मुस्सकरा कर कहा और वह कट कर रह गईं।

"फिर भी भाई साहब आखिर बात क्या है?" यह बीना का स्वर था।

"आज टोकियो में नेता जी का भाषण है।"

"क्या?" सबका एक ही स्वर था।

"हाँ, देखो मैं कोशिश करता हूँ।" कहते हुये मैंने अपने ट्रांस-मीटर को टोकियो से कनेक्ट करना शुरू किया और थोड़ी देर बाद

उसमें से एक जानी पहचानी आवाज आनी शुरू हुई। भारत के प्रिय नेता बोल रहे थे—नेताजी सुभास चन्द्र बोस ! वह कह रहे थे—

"भाइयो और दोस्तो !

"पिछले महायुद्ध में धोखेबाज ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने हमारे नेताओं को चकमा दिया था। इसलिए, बीस बरस से ज्यादह हुए, हमने कभी उनके धोखे में न आने का वायदा किया था।

"जहाँ तक हिन्दुस्तान का सम्बन्ध है, हमारे लिए खास बात हिन्दुस्तान के पास की हालत है। हिन्दुस्तान में, अंग्रेजी राज में, किसी भी ब्रिटिश जनरल को यह कल्पना भी नहीं हुई होगी कि अंग्रेजों का कोई दुश्मन कभी भी भविष्य में पूरब की ओर से हिन्दुस्तान पर हमला कर सकता है। इससे अंग्रेज फौजों का सारा ध्यान पश्चिमोत्तर की ही सरहद पर रहा है। सिंगापुर का जहाजी बेड़ा (अड्डा) अंग्रेजों के हाथ में था और वे समझते थे कि हिन्दुस्तान के लिए कोई खतरा नहीं है लेकिन जब जनरल यामा शीता तूफान की तरह आगे बढ़ते चले गये तो दुनिया ने समझ लिया कि अंग्रेजों की फौजी नीति की कौड़ी भर भी कीमत नहीं है। तब से जनरल वेवल हिन्दुस्तान की पूर्वी सरहद पर किले बन्दी करने के सिरतोड़ कोशिश कर रहे थे। किन्तु हिन्दुस्तानी आपस में पूछा करते थे कि "अगर अंग्रेजों को सिंगापुर बनाने में बीस बरस लगा था और खोने में सिर्फ एक हफ्ता लगा है, तो ब्रिटिश कमाण्डर इन चीफ या उसके उत्तराधिकारी को अपनी इस किलेबन्दी से पीछे हटने में कितना समय लगेगा ?' ट्यूनिस, तिम्बकट, लम्पडूसा या अलास्का में जो कुछ हो रहा है उसमें हिन्दुस्तानियों की विशेष दिलचस्पी न थी, पर हिन्दुस्तान के अन्दर या उसकी सरहद के पार जो कुछ भी हो रहा था, उसमें हमारी विशेष दिलचस्पी थी। हमारे लिए बड़ी बात तो यह थी कि पहले तो बर्मा को फिर से जीतने की बड़ी शेखी बघारी गयी थी किन्तु वहाँ से भी दुम दबाकर भागना पड़ा था। सिंगापुर में सबसे बड़ी हार

थी, लेकिन उससे भी कोई बड़ी रद्दोबदल नहीं हुई। ब्रिटिश साम्राज्य की कठोर नीति वैसी ही बनी रही। हमारे शासकों की यह धारणा रही है कि भले ही कोई मरे या जिये और कितने ही साम्राज्य बनें या बिगड़ें किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य हमेशा कायम रहेगा। आप इसे राजनीतिज्ञता का खयाली पुलाव कह सकते हैं, पर इसमें भी एक राज है। ब्रिटिश साम्राज्य हिन्दुस्तान के सहारे फला फूला है। अंग्रेज लोग, चाहे वे किसी सियासी पार्टी के हों, जानते हैं कि हिन्दुस्तान से फ़ायदा उठाने की उनको जरूरत है। उनके साम्राज्य का मतलब है—हिन्दुस्तान। और वे उस साम्राज्य को बचाने के लिए जी जान से लड़ रहे थे। इसी लिए इस महायुद्ध में अंग्रेजों के भाग्य में कुछ भी क्यों न बदा हो वे आखिर तक अपने साम्राज्य को बचाने को यानी हिन्दुस्तान को अपने चंगुल में रखने की हर मुमकिन कोशिश करेंगे। इसलिए अगर मैं साफ कहूं, तो इस कठिन हालत में भी अंग्रेजों के लिए हिन्दुस्तान की आजादी को मानने से इन्कार करना पागलपन नहीं है बल्कि पागलपन तो यह उम्मीद करना है कि अंग्रेज लोग खुशी से अपना साम्राज्य छोड़ देंगे। किसी भी हिन्दुस्तानी को इस भुलावे में नहीं रहना चाहिए कि किसी दिन इंगलैंड हिन्दुस्तान की आजादी को मानने के लिए तैयार हो जायेगा। लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं है कि अंग्रेजी राजनीतिज्ञ हिन्दुस्तान से कभी समझौता नहीं करेंगे। मैं समझता हूं कि इस साल ऐसे समझौते की एक और कोशिश की जायगी। पर मैं देशभाइयों को बतला देना चाहता हूं कि समझौते से अंग्रेज लोग हिन्दुस्तान की आजादी को कभी कुबूल नहीं करेंगे बल्कि हिन्दुस्तानियों को उल्लू बनाने की ही कोशिश करेंगे। बहुत दिनों तक बात चलाने का मतलब आजादी की लड़ाई के रास्ते से लोगों को हटाकर उनकी शक्ति कमजोर कर देना है जैसा कि दिसम्बर १९४१ में हुआ था। इसलिए हमें ब्रिटिश साम्राज्य के साथ समझौते की उम्मीद हमेशा हमेशा के लिए और बिल्कुल छोड़ देनी चाहिए। हमारी आजादी में किसी भी समझौते की कोई गुंजाइस नहीं

है। आजादी तभी मिलेगी जब अंग्रेज और उनके दोस्त हिन्दुस्तान को बिल्कुल छोड़ देंगे और जो लोग दरअसल आजादी चाहते हों, उनको उसके लिये लड़ना पड़ेगा और अपने खून की शक्ल में उसकी कीमत अदा करनी होगी।

"भाइयो और दोस्तो! हम आजादी के लिये, हिन्दुस्तान के भीतर और बाहर, अपनी पूरी ताकत लगाकर लड़ाई चलायें। हम दृढ़ विश्वास के साथ लड़ाई जारी रक्खें। एक दिन ब्रिटिश साम्राज्य-वाद जरूर भस्म हो जायेगा और उसकी राख में से आजाद हिन्दुस्तान का जन्म होगा। इस लड़ाई में पीछे हटने और हिचकिचाने की कोई गुंजाइश नहीं। हम तब तक आगे ही बढ़ते जायेंगे जब तक कि विजय और आजादी न मिलेगी। मैं एक बार फिर आपसे कहता हूँ कि आप मुझे खून दें, मैं आपको आजादी दूंगा। ......जय हिन्द!"

नेता जी की स्पीच के तुरन्त बाद रेडियो टोकियो के एनाउन्सर ने साफ हिन्दी में कहा—"अभी आप हिन्दुस्तान के गर्मदल के नेता और आजाद हिन्द फौज के कमाण्डर श्री सुभाष चन्द्र बोस का प्रथम ब्राडकास्ट सुन रहे थे, जो कि उन्होंने अपने प्यारे हिन्दुस्तानवासियों के लिये दिया था।...."

एनाउन्सर के इतना कहते ही मैंने स्वीच आफ कर दिया। सभी की आकृतियों पर आजादी का जोश साफ झलक रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे नेताजी हमारे ही सामने मंच पर खड़े होकर भाषण दे रहे हों। मेरी आंखों के सामने नेताजी की आकृति क्षण भर के लिये कौंध गई—उनका वह गौरांग हृष्ट-पुष्ट स्वस्थ शरीर, जिस पर हल्के भूरे रंग का सूट; सिर पर गांधी टोपी, गोल चेहरा—जिससे रौब टपकता था, बड़ी-बड़ी आंखें जिन पर काले फ्रेम का चश्मा,....। आकृति का ध्यान आते ही मेरा सिर श्रद्धा से नत हो गया। नेताजी की स्पीच सुनते समय सभी के चेहरे लाल हो रहे थे। सभी की

मुट्ठियां कस गईं, ब्रिटिश साम्राज्यवाद का जड़ से नाश कर देने के लिये। चेहरों पर नया खून झलक उठा। आंखों में अंगारे दहकने लगे, अंगरेजों के वे कारनामे याद करके, जिनके द्वारा उन्होंने हम भारतीयों पर कहर ढाया हुआ था ! सबके मुंह जैसे जोश ने सिल दिये हों।

अचानक गोपाल उठ खड़ा हुआ और फिर सब उठकर चुपचाप ट्रक की ओर चल दिये।

और ट्रक स्टार्ट हो गया।

लेकिन सभी चुप थे, सोच रहे ते—आजाद भारत के विषय में !

ट्रक फिर चल पड़ा, लेकिन उसके स्टार्ट होते ही कमल ने छींक दिया। हम लोग दूसरे ही ध्यान में थे, इस कारण किसी ने ध्यान भी न दिया और ट्रक चलता रहा। वैसे भी हममें से कोई इस प्रकार की बातों में विश्वास नहीं करता था। सभी चुप थे। लेकिन जब आधे घण्टे तक मौन-व्रत चलता रहा तब मुझे आश्चर्य हुआ कि आशा, बीना और नीना तीनों ही चुप थीं—यानी कि स्त्रियां चुप थीं ? ऐसा न तो मैंने कभी देखा था और न ही सुना था कि किसी स्थान पर दो या दो से अधिक स्त्रियां बैठी हों और वे चुप हों, क्योंकि वे अपने स्वभाव से मजबूर होती हैं। लेकिन, यहां यह महान् आश्चर्य था। मैंने कोहनी मार कर गोपाल को इशारा किया। बात को समझ कर गोपाल हंस पड़ा, इससे वे तीनों चौंक उठीं—"क्या हुआ ?"

"यही कि आप लोग बात नहीं कर रही थीं ?" मैंने कुछ सहम कर कहा।

"कोई जरूरी है क्या ?" नीना ने पू

"नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं है, नीना जी''''फिर भी यह एक आश्चर्य है''''"

"ओह! यू आर टान्टिग ?" नीना मुसकराई।

"नहीं, नहीं; भला मैं आपके ऊपर कैसे''''"

"मैं खूब समझती हूं आपकी बात को लेखक जी! वैसे मैं जिससे बात करना चाहती हूं, जब वही लिफ्ट न दे तो फिर बात किससे करूं ?" नीना ने एक व्यंग्य के जहर से भरा कटाक्ष गोपाल को मारा और वह तिलमिला उठा—

"चाहता तो मैं भी था, लेकिन तुमने मौका ही न आने दिया। वैसे अभी भी मैं तुमसे बहुत कुछ कहना चाहता हूँ।" गोपाल मुसकराया।

"तुम और मुझसे ? जब जी चाहे।"

नीना ने अपनी ओर से ढील डाल दी और गोपाल चुप हो गया। लेकिन नीना का चेहरा कुछ और ही कह रहा था—उसकी आँखें कुछ और ही कह रही थीं। उसका चेहरा न जाने क्यूं रक्तिम हो गया था। आंखों में उस तरह का भाव था, जैसा उस बालक की आखों में होता है जिसका खिलौना छीनकर किसी दूसरे बालक को दे दिया जाये। उसकी आँखों में ईर्ष्या तैर रही थी, एक दूसरी नारी के प्रति—आशा के प्रति।

उसकी आंखों में प्रतिशोध तैर रहा था—गोपाल के प्रति।

क्यों ?

क्योंकि आशा उसकी सौत जो बन बैठी थी। उसके मन-मंदिर के देवता की पुजारिन बन बैठी थी। उसके प्रियतम को उससे जुदा कर दिया था। भला एक नारी यह कैसे बर्दाश्त कर सकती है कि उसके प्रियतम की बाहों में कोई दूसरी स्त्री हो ? उस कोमल स्त्री ने उस

समय अपने दिल पर पत्थर रख लिया था, जब उसने आशा के प्रति गोपाल की आसक्ति देख ली थी—और उसका हृदय टूक-टूक होकर बिखर गया था। लेकिन उसने उन बिखरे टुकड़ों को बटोर कर पुनः मुसकराना सीख लिया। अब उसके होंठों पर वह चंचल अदाभरी मोहक मुस्कान न थी, बल्कि उसका स्थान एक दर्द भरी मुस्कान ने ले लिया था। उसने गम का एक बहुत बड़ा तूफान जो पिया था—सच है, नारी का हृदय बड़े-बड़े तूफानों को यों पी लेता है जैसे भगवान शंकर ने विष-घट पी लिया था और विश्व कल्याण हेतु मुसकराते रहे थे। नीना को धीरे-धीरे यह विश्वास हो चला था कि पुरुष वर्ग अत्यन्त ही धोखेबाज है। इसके ऊपर विश्वास करना उस बर्फ पर विश्वास करने के बराबर है जो दो-तीन फुट ही मोटी होती है और नीचे छुपी होती है, गहन अन्धकारमय खाई; जिसमें से निकल पाना बहुत ही कठिन है। क्योंकि उसे गोपाल ने धोखा दिया था। उस गोपाल ने, जिसके लिये उसने विदेशी सभ्यता का त्याग किया, विदेशी वस्त्रों को त्याग कर खादी को अपनाया, पाश्चात्य सभ्यता से उसे प्रेम था लेकिन गोपाल के कारण उसने उसे त्याग कर भारत की स्वतन्त्रता का मार्ग अपनाया और क्रांतिकारी दल में शामिल हुई, घर-बार और माता-पिता को छोड़ कर उनसे दूर रही। आखिर किसलिये ?—क्यों ? सिर्फ इसीलिये न, कि जब देश आजाद होगा तो वह गोपाल से शादी करके सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करेगी। लेकिन आह विधाता ! उसके सारे सुख स्वप्न किस्मत के एक ही थपेड़े से डूब गये, दुःख सागर में""और वह मँझधार में ही रह गई। गोपाल ने तो उससे कितनी दृढ़तापूर्वक कहा था कि जब तक मैं भारत माता की जंजीरों को काटकर फेंक नहीं दूँगा, शादी नहीं करूँगा। लेकिन उस समय उसका प्रण कहाँ कहाँ गया था जब वह आशा के साथ विवाह के मण्डप में बैठा था ? क्या उस समय भारत माता आजाद हो गई थीं ? क्या भारत आजाद

हो गया था ? यह धोखा है, सरासर धोखा है—फरेब है। यही कारण था जो उसकी आंखों में प्रतिशोध की भावना तैर रही थी। किन्तु वह खुश थी, क्योंकि गोपाल खुश था।

+ + + +

ट्रक अपनी रफ्तार से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ा जा रहा था और आसाम के गहन किन्तु मोहक जंगल पीछे छूटते जा रहे थे। कमल, गुरू और जितेन्द्र अब अपने साधारण वेष में थे अर्थात् उनका मेकअप उतर चुका था। गुरू और कमल में मजाक चल रहा था, जिसमें कभी कभी जितेन्द्र भी हिस्सा ले लेता था। उनके ठहाकों से ट्रक का अगला हिस्सा गूँज रहा था, जिसकी जरा सी आवाज पीछे के भाग में नहीं जा सकती थी क्योंकि जितेन्द्र ने ट्रक के दोनों भागों को जोड़ने वाले झरोखे को बन्द कर दिया था। ठहाकों के मध्य गुरू की आवाज सुनाई दी—

"अबे जित्तू ! यह दोनों तो अपने-अपने ढर्रे से लग गये, लेकिन हम दोनों का क्या होगा ?"

"हम दो नहीं, बल्कि तीन हैं।" जित्तू ने कहा।

"तीन ? तीसरा कौन है ?"

"तीसरा ही तो काम का आदमी है, रवीन्द्र।"

"अरे वह ! उसका तो ध्यान ही न रहा।"

"हां—हां, क्यों नहीं ! बेचारा साहित्यकार बनने के चक्कर में जो पड़ा हुआ है। उसे तो तुम्हीं लोगों ने बरबाद कर रक्खा है।" कमल, जो इतनी देर से बोर हो रहा था, बोला।

"च्""च् ! तुमको काहे की फिकर है ? उसकी शादी चाहे हो या न हो, फिर उसने तो प्रण किया हुआ है कि मैं आजीवन शादी

करूंगा ही नहीं।" गुरु ने हाथ नचाकर किसी झगड़ालू औरत की तरह कहा।

"और नहीं तो क्या? वो चाहे मरे या जिये तुम लोगों से क्या? तुम लोगों को तो अपनी-अपनी शादी की पड़ी है।"

"ठीक फर्माया आपने।" किसी बुजुर्ग की तरह बोला गुरु।

"तो फिर मैं बताऊँ सबसे पहले तुम ही अपनी कर लो।"

"अबे किससे—बीना से?"

"नहीं नीना से!" कमल की जगह जित्तू बोला।

"अच्छा भाई, अब मजाक खत्म!"

"क्यूँ, बोर हो गये?"

"नहीं, वह सामने देखो।"

गुरु के कहने पर जित्तू ने सामने देखा। सामने ही आसाम की सीमा थी और सड़क पर एक बल्ली के सहारे रास्ता रुका हुआ था। उस बल्ली के पास ही एक व्यक्ति खड़ा रुकने का इशारा कर रहा था। जितेन्द्र तुरंत समझ गया कि वह वहाँ का चौकीदार होगा। इस विचार के आते ही उसने ट्रक की स्पीड एकदम से बढ़ा दी। ट्रक की स्पीड बढ़ते देख चौकीदार को कुछ शक हुआ। मन ही मन ट्रक का नम्बर याद किया उसने। ट्रक तेजी से बढ़ता चला आ रहा था। मौत को एकदम सामने देखकर एक पल को तो वह घबड़ा गया किन्तु दूसरे ही पल वह उछल कर एक किनारे हो गया और ट्रक उस बल्ली को तोड़ती हुई निकल गई। एक क्षण तो वह ट्रक को जाते हुये देखता रहा किन्तु दूसरे ही क्षण उसे न जाने क्या याद आया और वह तुरन्त अपनी कोठरी में भागा। उसकी कोठरी में टेलीफोन लगा था। वहाँ पहुँचते ही उसने डायल किया—

"हेलो!""यस सर, पोस्ट नम्बर फाइव इज स्पीकिंग सर।"" ""अभी-अभी यहाँ से एक ट्रक, जिसका नम्बर""है, गुजरा है। उसे

मैंने रोकने की कोशिश भी की थी, लेकिन उसकी स्पीड एकदम से तेज हो गई और अगर मैं एक दम से उछलकर अलग न हो जाता तो वह ट्रक मेरे ऊपर से ही होकर निकल जाता।""यस सर, वह ट्रक बल्ली को तोड़ता हुआ आगे निकल गया""जी हाँ, मुझे अच्छी तरह से याद है कि उस ट्रक का नम्बर इतना ही था।""थैंक्यू सर! यह तो आप लोगों की काइण्डनेस है सर!""आल राइट सर!""ओ० के० सर!"

कहकर वह मूछें ऐंठता हुआ कोठरी से बाहर निकला। उसके होठों पर कुटिलतापूर्ण एक मुस्कान तैर रही थी। बाहर निकल कर उसने एक गर्व भरी नजर उस ओर डाली जिस ओर ट्रक बल्ली को तोड़ता हुआ निकल गया था।

सामने एक आदमी (चौकीदार) को रोकने का इशारा देते हुए देखकर जितेन्द्र की आखों में बिजली सी कोंध गई जिसे देख कमल और गुरू—दोनों के अन्तर कांप गये। उसी क्षण ट्रक की स्पीड अप्रत्याशित रूप से तेज हो गई और फिर उस आदमी से ट्रक की दूरी कम होती गई और ट्रक आगे बढ़ता गया। गुरू और कमल ने एक क्षण को डर कर आंखें बन्द कर लीं। उसी समय 'धांय धड़ाम!' की आवाज के साथ बल्ली के दो टुकड़े हो गये लेकिन ट्रक की रफ्तार में कोई अन्तर नहीं आया।

पिछले हिस्से में बैठे हम लोगों का मन इस धमाके से कांप उठा कि अचानक यह क्या हुआ। सामने ही कुछ दूरी पर एक व्यक्ति वही (चौकीदार) आश्चर्य चकित दृष्टि से देख रहा था जो धीरे धीरे आंखों से ओझल होता जा रहा था। गोपाल ने उस झरोखे को खोल कर पूछा—

"क्या यह यहां का चौकीदार था ?"

"हां शायद ! क्योंकि ट्रक को रोकने का मतलब ही यही था कि वह हमें चेक करना चाहता था।" जितेन्द्र ने जवाब दिया—

"मैं तो उसे खत्म कर देना चाहता था, लेकिन उसकी किस्मत तेज थी जो बच गया।"

"उसका बच जाना ही हमारे लिए खतरनाक है। क्योंकि वह अपने सेन्टर को फोन जरूर करेगा।" गुरू ने राय दी।

"इसका मतलब यह है कि आगे मणिपुर की पुलिस हमारे स्वागत के लिए तैयार होगी ?" गोपाल ने कुछ मुस्कराते हुए कहा।

"यह तो मानी हुई बात है।" जितेन्द्र ने स्वीकार किया।

"तो फिर ?"

इस पर सभी चुप थे। इधर इसी मसले पर स्त्री-गोष्ठी भी चल रही थी। गोपाल मंडली से पहले ही गोष्ठी का निर्णय नीना ने प्रकाशित किया—

"भई हम लोगों की राय मानी जायगी ?"

"क्यों नहीं ?" गुरू ने पीछे पलट कर कहा।

"हम लोगों की राय में हमलोगों को आगे कहीं पर चल कर रुक जाना चाहिए और उनका इन्तजार करना चाहिए।"

"वेल ! फिर ?"

"आगे ...."

आगे की स्कीम नीना ने झरोखे में मुंह लगा कर गुरू के कान में उगल दी, जो धीरे धीरे सभी के कान में पहुंच गई और सभी के मुंह से प्रशंसात्मक स्वर में निकला—

"वेरी गुड स्कीम ! नीना मंडली जिन्दाबाद !! भई मान गये कि औरतों की खोपड़ी में भी भूसा नहीं गुदा भरा है, जो कभी कभी ही काम आता है।"

यह आखिरी वाक्य गुरू ने नीना के मुखड़े पर दृष्टि जमाकर और एक आँख दाब कर कहा था। प्रत्युत्तर में नीना के चेहरे पर एक मोहक मुस्कान तिर गई। गुरू ने यह बात बहुत ही धीमे स्वर में कही थी जिसे केवल वही सुन पायी थी और चूंकि उसका आकर्षण गुरू की ओर पहले से ही थोड़ा सा था इस कारण वह केवल मुस्करा कर रह गई। लेकिन इसके यह माने नहीं थे कि वह गोपाल को बिल्कुल ही भूल चुकी थी।

पोस्ट नम्बर फाइव से इस प्रकार की सूचना पाते ही इम्फ़ाल (मणिपुर का प्रमुख शहर और राजधानी) स्थित ब्रिटिश मिलेट्री हेड-क्वार्टर में सनसनी फैल गई। अपने हेड-आफ़िस से सम्पर्क स्थापित करने पर उन्हें मालूम हुआ कि "वह ट्रक ब्रिटिश गवर्नमेंट के लिये खतरे का घंटा है, क्योंकि उसमें मसवापुर के वे तमाम प्रमुख क्रांतिकारी भरे हुये हैं जिनके लिये अंग्रेजी हुकूमत बरसों से खाक छानती फिर रही है। और वे हैं कि हुकूमत को कदम-कदम पर धोखा देते फिर रहे हैं। साथ ही उस ट्रक में उन क्रांतिकारियों का सरदार गोपाल भी मौजूद है, जिसने कानपुर के रेलवे स्टेशन पर एक अंगरेज अधिकारी का खून कर दिया था और फिर जेल से अपने एक साथी रवीन्द्र नाथ के साथ निकल भागा था।"

यह सूचना पाते ही वहां के कमाण्डर ने तुरन्त एक मेजर के साथ सात अंग्रेज फौजी सिपाही जाने का आदेश जारी कर दिया। एक फौजी जीप पर बैठ कर वे आठों व्यक्ति आसाम की सीमा की ओर तेजी से बढ़ चले। वे आठों मशीनगनों से लैस थे।

× × × ×

घटना-स्थल से लगभग बीस मील दूर जाकर, बीच सड़क पर ही, ट्रक रुक गया और तुरन्त ही सभी व्यक्ति उसमें से मय सारे

सामान के उतर पड़े। हमलोगों ने मिल-बाँटकर सारा सामान उठा लिया और बगल की पहाड़ी पर चढ़ना शुरू किया। आशा, बीना और नीना के लाख कहने पर भी हम लोगों ने उन्हें जरा सा भी सामान न उठाने दिया।

वह पहाड़ी प्रकृति की सुन्दरता का अद्भुत प्रमाण थी। चारों ओर जैसे वसन्त छाया हुया था। पहाड़ी पर लगी बनस्पति जैसे जड़ से चेतन हो गई हो और हम लोगों को एक नवीन उत्साह प्रदान कर रही हो। रंग-बिरंगे पुष्प मानों हमारे स्वागत में फूले पड़ रहे हों। मेरे मन में कुछ अजीब सी हिलोर उठी और मैं कल्पना लोक में विचरने लगा—'यह पीले फूल अंगरेजों के प्रतीक हैं और इनके समीप ही लगे लाल फूल उनके होने वाले खून के प्रतीक हैं⋯और यह काँटे हम भारतवासी हैं। हवा के चलने के साथ ऐसा मालूम होता है जैसे यह अंगरेज हम लोगों से डरकर भागना चाह रहे हैं, क्योंकि फूलों की डालियाँ एक दूसरे से क्षण-प्रतिक्षण दूर होतीं और फिर एक दूसरों की ओर झुक जातीं। नारंगी और गुलाबी रंग के फूलों की झाड़ियाँ मानो हमें विजय का आशिर्वाद देने के लिए आगे झुक रही हों⋯⋯'

इसी प्रकार के अनेकानेक विचार मन में आते जा रहे थे। जब मुझसे यह विचार जब्त न हो सके तो मैंने यह विचार और लोगों को भी सुनाये। इन्हें सुनकर बाकी लोग इस खतरे के समय में भी ठहाका मार कर हंस पड़े। वास्तव में अगर पूछा जाये तो यह हम लोगों के लिए एक काँटे के सिवा और कुछ नहीं था क्योंकि इससे बड़े बड़े खतरे भी हम लोग आसानी से झेल चुके थे। यही कारण था कि हमलोगों के दिल में भय और खतरे की लेशमात्र भी आशंका—या आने वाले खतरे का भय तनिक भी—न थी। इसी से हम लोग हँसते हुए खतरे का मुकाबला करने को तैयार थे।

ऊपर पहुँच कर एक चट्टान की आड़ में हमने सारा सामान रख दिया और जितेन्द्र तथा गुरु के अलावा मैंने, गोपाल और कमल,

तीनों ने एक-एक मशीन गन उठा ली तथा ट्रक के पास पुनः लौट आये। गुरु और जितेन्द्र ने ट्रक का इंजन खोल दिया तथा हम तीनों अपनी-अपनी निश्चित दिशाओं में छिपने के लिये चल दिये, जहाँ से ट्रक पर आसानी से नजर रक्खी जा सके।

आशा, नीना और बीना अभी तक खड़ी हुई हम लोगों की कार्यवाही देख रही थीं। हम लोगों को अपने-अपने स्थान पर जाते देख उन्होंने संतोष की सांस ली और तब नीना बोली—

"अगर हम लोग भी अपने-अपने कपड़े बदल लें तो राइफल संभालने में बहुत सुविधा होगी।"

"लेकिन मैं तो अपने सलवार-कुर्त्ते में ही ठीक हूं।" बीना ने प्रतिरोध किया।

"लेकिन ऐसा विचार ही क्यूं ?" आशा ने पूछा।

"वह इसलिये कि अगर हम लोग शिकारी ड्रेस में होंगीं तो दौड़ने में भी आसानी रहेगी और अपने साथियों को भी सामान वगैरह उठाने में मदद मिलेगी। फिर खुदा-न-ख्वास्ता आगे अगर कोई और बात हो गई तो कम से कम हम लोग उनके साथ भाग तो सकतीं हैं। (लापरवाही से हाथ झटकते हुये) वैसे तो भई, यह अपनी-अपनी इच्छा पर डिपेंड करता है; जैसी मर्जी हो, करो......मैं किसी को प्रेस तो कर नहीं सकती।"

"अरे, तो नाराज क्यूं होती हो, हम लोग कपड़े बदले लेतीं हैं। ......क्यूं बीना क्या विचार हैं ?"

"भई, मैं कोई तुम लोगों से अलग तो हूँ नहीं।"

बीना के इतना कहने से पूर्व ही नीना ने कपड़े निकाल लिये थे। आशा और बीना को देते हुये बोली—

"लो बदलो !"

"यहां ?" दोनों के मुंह से निकला।

"क्यों – क्या हुआ ? अरी बावरियों मैं कोई मर्द तो हूं नहीं जो⋯ ⋯" नीना ने दोनों की ठोड़ी पर हाथ लगाते हुए किसी बूढ़ी स्त्री की भांति कहा।

"चल हट, बेशर्म कहीं की !" आशा का लाजसिक्त स्वर था।

"लो अब बेशर्म हो गई। अरी लाड़ो, वह टाइम भूल गई जबकि गोपाल की जांघ पर सिर रक्खे लेटी हुई थीं। तब तेरी शर्म कहां गई थी ? तब अपनी शर्म बीना को उधार दे दी थी ?"

"उफ़ ! तू तो मेरी जान ही ले लेगी, तभी छोड़ेगी ?" आशा लाज भरे स्वर में कृत्रिम झुंझलाहट लाते हुये बोली—"अच्छा बाबा अब तो पीछा छोड़, यहीं बदल लूंगी⋯⋯लेकिन एक शर्त्त है ?"

"क्या ?" नीना मुस्कुराई।

"तुझे भी यहीं हमारे सामने कपड़े बदलने पड़ेंगे ?"

"चल यह भी मंजूर है !"

"हद हो गई बेशर्मी की भी।"

बीना का स्वर भी कुछ हद तक झुंझलाहट से भरा हुआ था।

\+ \+ \+ \+

थोड़ी देर बाद वे तीनों कपड़े बदल कर जब तैयार हुईं तो वे तीनों पहले वाली आशा, बीना और नीना न थीं; बल्कि उनके स्थान पर अन्य तीन स्त्रियां थीं, जो अब झांसी की रानी की भांति किसी भी मुकाबले का सामना करने के लिये पूर्ण रूप से तैयार थीं।

शाम हो चली थी सूर्य अस्ताचलगामी हो रहा था। उसकी रश्मियां तीव्रता से रक्ताभ होने के लिये व्याकुल थीं और साथ ही

गगन में स्वच्छन्द विचरने वाले पक्षी भी अपने-अपने बसेरे के लिये घोंसले में लौटने के लिये व्याकुल थे। कहीं ऐसा न हो कि लक्ष्य तक पहुंचने से पूर्व ही सूर्यास्त हो जाये और उन्हें मार्ग से भटक कर इधर उधर बसेरा लेना पड़े। पर्वत मौन थे। वनस्पति मौन थी। हवा ने भी अपनी सांस रोक रक्खी थी—शायद आने वाले उत्सुकतापूर्ण क्षणों के लिये कि उन आने वाले क्षणों में क्या होने वाला है—या क्या होगा?

जीप अपनी पूरी रफ़्तार से भागती और सर्पाकार सड़कों को रौंदती हुई चली जा रही थी। आगे का रास्ता बन्द था। क्योंकि आगे बीच सड़क पर एक ट्रक खड़ा हुआ था और उसके इंजन पर दो व्यक्ति झुके हुए कुछ ठीक कर रहे थे। मेजर ने सबको तैयार रहने का आदेश देकर ठीक ट्रक के पास जीप रोक दी। जीप के रुकने की आवाज सुनते ही वे दोनों व्यक्ति एकदम पलट पड़े। उनके दोनों हाथों में पिस्तौलें थीं। लेकिन तब तक वे चारों ओर से घिर चुके थे।

"यूज़लेस माई फ्रेन्ड्स," मेज़र हँसा—"हैन्डस् अप !"

मेजर के आदेश का पालन करते हुये उन दोनों ने अपनी-अपनी पिस्तौलें जमीन पर डाल दीं और धीमे से दोनों हाथ ऊपर उठा दिये। उनके होठों पर एक शांतिपूर्ण मुस्कुराहट खेल रही थी। मेज़र हँसा और अपने साथियों से अंग्रेजी में बोला—

आप चार आदमी ट्रक की तलाशी लें।"

"आल्राइट सर!"

चार आदमियों ने मेजर को सैलयूट किया और दो-दो आदमी ट्रक के अगल-बगल से होकर आगे बढ़े। ट्रक के पीछे पहुंच कर जैसे ही वे उस पर चढ़ने को तैयार हुये, पीछे से आवाज़ आई—"ठहरो, हैन्डस् अप!" वे चारों इस अचानक धीमी आवाज से घबड़ा गये और जब पलटे तो उनको दो मशीनगनें घेरे हुई थीं।

"अपनी-अपनी राइफ़लें आप लोग नीचे डाल दीजिये।" उन दोनों में से एक का भारी स्वर था। तुरन्त आज्ञा का पालन हुआ।

"रवीन्द्र, इन चारों के हाथ-पाँव बाँध कर ट्रक में डाल दो।" दूसरा आदेश हुआ—"आप लोग अगर अपनी जान बचाना चाहते हैं तो कृपया हमारे कार्य रोड़ा न अटकायें।"

अब तक दूसरे व्यक्ति ने अपना काम शुरू कर दिया था। उन लोगों ने बहुत हल्का का विरोध किया, क्योंकि एक तो अपनी जान का सवाल था और दूसरे शायद वे भी अपने आफ़िसर से तंग आ गये थे।

चारों के हाथ-पांव और मुँह बांधने के पश्चात् उन दोनों ने मिलकर चारों सिपाहियों को ट्रक में डाल दिया और अपनी-अपनी राइफ़लें लेकर आगे की ओर बढ़े।

इधर वह मेज़र भी अपने शेष तीनों साथियों के साथ घिर चुका था और उसे घेरने वालों में तीन स्त्रियां और एक नवजवान था। बात वास्तव में यों हुई कि जैसे ही उसके साथ के चार सिपाही ट्रक के पिछले भाग की ओर गये, मेज़र ने अपने साथियों को आदेश दिया कि वे उन दोनों व्यक्तियों के, जिन्होंने आत्म- समर्पण कर दिया था, हाथ-पांव बांध दें। उसके साथ के अन्य सिपाहियों ने अपनी-अपनी राइफ़लें जीप पर रख कर उनकी ओर बढ़े। अभी वे बांधने को तैयार ही हुये थे, वैसे ही "हैन्डस् अप" का आदेश सुनकर वे चौंक उठे। मेज़र पलटा। उसके सामने एक नवजवान और तीन नवयुवतियाँ राइफ़ले ताने खड़े थे। मेज़र और उसके साथियों ने हाथ उठा दिये। तब तक उन दोनों व्यक्तियों ने भी झटपट जीप से दो मशीन गनें उठा लीं और उन पर तान दीं। मेज़र कुछ शरारत करने जा ही रहा था कि अचानक उसके सिर पर राइफल का कुन्दा 'खट्' की आवाज़ के साथ बैठ गया और वह 'आह! करके सड़क पर गिर पड़ा। तब तक अन्य तीनों भी उनके कब्जे में आ चुके थे।

"जिल्लू और कमल, तुम लोग इनकी वर्दियाँ उतार कर इन्हें ट्रक में अन्दर डाल दो ।" एक आवाज़ गूँजी और दो व्यक्ति तुरंत अपने कार्य में जुट गये ।

थोड़ी ही देर में सारा काम पूरा हो गया । मेजर की वर्दी जितेन्द्र ने तथा अन्य की हम लोगों ने पहन ली । फिर अपना सारा सामान जीप पर लादा और गुरू जीप को किसी प्रकार पीछे मोड़कर आगे की ओर मोड़ के पार ले गया । इसके पश्चात् जितेन्द्र ट्रक के पिछले हिस्से की तरफ़ गया और मुस्कुराता हुआ अंग्रेजी में बोला—"गुड बाई, मेरे दोस्तों ! अपनी सफलता के लिये हम लोग आपका तहेदिल से शुक्रिया अदा करते हैं ।"

"यू ब्लाडी इंडियन !" मेजर गुर्राया, हालांकि उसके मुँह पर कपड़े की एक पट्टी बँधी हुई थी ।

"थैंक्यू ।" कह कर जितेन्द्र आगे आया और ट्रक स्टार्ट कर पुन: नीचे उतर आया ।

"इसके क्या माने ?" मैंने पूछा ।

"देखे जाओ, वैसे इन्हें हज़रत इसराइल अर्थात् यमराज के पास पहुँचाने का इन्तजाम कर रहा हूँ ......आओ जरा ट्रक को धकेल दें ।" जितेन्द्र के होंठों पर एक भयानक मुस्कुराहट खेल रही थी, जिसके अर्थ एक साधारण से साधारण व्यक्ति भी समझ सकता था । मतलब समझकर भी किसी की हिम्मत न हुई कि कोई इस काम में दखल दे । सबने चुपचाप आगे बढ़कर धीमे से ट्रक को धकेल दिया और ट्रक अपनी मन्थर गति से खड़खड़ाता हुआ आगे को बढ़ा । लेकिन, कुछ ही गज आगे बढ़ कर उसने एकदम से एक खतरनाक मोड़ लिया और.... .. ....

"धड़ाम् !"........धांय........"

ट्रक सड़क से उतर कर नीचे हजारों फिट गहरी खांई में गिरता चला जा रहा था। लगभग डेढ़ हजार फिट नीचे तल पर जाकर वह तल से टकराया और "धाय की आवाज के साथ उसमें आग लग गई। जितेन्द्र अट्टहास कर उठा और स्त्रियों ने भय से नेत्र मूँद लिये। आकाश के सूर्य की रश्मियाँ भी आग की तरह ही लाल-पीली हो उठीं थीं, क्योंकि सूर्य डूब चुका था और.......

....उसी समय हम लोगों की जीप इम्फाल की ओर बढ़ चली।

८

सात दिन बीत गये।

आज उस घटना को हुये सात दिन व्यतीत हो चुके थे और हम लोग इम्फाल में रहने वाले एक कपड़े के व्यापारी के घर पर टिके हुये थे। उस घटना के दूसरे ही दिन पूरी रात लगातार धड़कते हृदय से चलते रहने के बाद, मुँह अँधेरे ही हम उस व्यापारी के घर जा पहुँचे। भगवान चन्द्र का नाम लेने पर उसने तुरन्त हम लोगों को घर के अन्दर छिपा लिया। शायद वह उन्हें अच्छी तरह से जानता था। व्यापारी के परिवार में केवल तीन ही व्यक्ति थे—एक वह, उसकी पत्नी और पुत्री किरन। व्यापारी यू० पी० साइड का था। इस वजह से खाने-पीने का भी आराम था।

घटना-दिवस के तीन दिन बाद तक पूरे इम्फाल में एक मौत की सी खामोशी छाई रही। यह जरूर था कि ब्रिटिश कमाण्डर ने हम लोगों के ढूँढ़ने में कोई भी कसर न उठा रक्खी थी। इम्फाल के प्रत्येक मकान व मंदिरों की तलाशी ली गई ... ...और बहुत ही रहस्यात्मक ढंग से। आदेश के मुताबिक अंग्रेजों ने कोई भी वहाँ क्रूरतापूर्ण कार्य नहीं किया। क्योंकि एक तो इम्फाल-निवासियों के उजड्डीपन से वे लोग पूरी तौर पर वाकिफ थे। दूसरे, वह सीमावर्ती क्षेत्र था जिस पर किसी भी समय रंगून (बर्मा) की तरफ से जापानी फौज आक्रमण कर

सकती थी। और तीसरा बड़ा खतरा था नेता जो सुभाष चन्द्र बोस की ओर से, जो आजकल अपनी आजाद हिन्द फौज के निर्माण में प्राण-पण से लगे हुये थे।

आजाद-हिन्द फौज !

इज नाम से ब्रिटिश गवर्नमेंट इस तरह से कांपती थी, जैसे किसी बच्चे के सामने 'हौआ' का नाम ले लिया जाये। सिंगापुर और मांडले की पराजय उनके लिये 'हौआ' से भी बढ़कर थो। यह पराजयें इसी आजाद-हिंद फौज के कारण ही हुई थीं। बर्मा को जीतने का का स्वप्न और उसे अपने साम्राज्य में शामिल करने का स्वप्न ब्रिटिश साम्राज्य के लिये अब केवल स्वप्न मात्र ही रह गया था। इस कारण से वह और भी अधिक बौराये हुये थे कि आजाद-हिन्द फौज का अगला खेमा हिन्दोस्तान के अन्दर ही होगा। यह उस भारतीय सेना का प्रण या जो आजकल सिंगापुर में पड़ी हुई थी। और अगला पड़ाव हिन्दोस्तान के अन्दर पड़ने का मतलब था—आजाद-हिन्द फौज की एक महत्वपूर्ण विजय !

आजाद-हिन्द फौज की विजय !
यानी कि हिन्दोस्तान की आजादी !!
....और ब्रिटिश साम्राज्य का पतन !!!

बस यही तीनों बातें ब्रिटिश साम्राज्य नहीं चाहता था। फिर ऐसा कौन साम्राज्य चाहेगा, जिसके पास भारत जैसी सोने की चिड़िया हो ? उनकी निगाहों में भारत एक ऐसी खान था, जिसमें सोने की कमी कभी हो ही नहीं सकती थी....जितना चाहो निकाल लो। और सत्य भी यही है कि भारत सोने की चिड़िया था। गंगा, जमुना, सिंध और सतलज की तराई का सोना वे मनमाने ढंग से इस्तेमाल करते थे। भारत के बने वस्त्रों एवं हस्त-कलाओं को मनमाने और कम मूल्य पर खरीद कर या छीन कर अपने मुल्क को भरा करते थे। ऐसे भारत को

वह कब छोड़ना चाहेगा ? पहले वह (ब्रिटिश साम्राज्य) गांधी के अहिंसात्मक आंदोलन को देखता और उपेक्षा से मुँह घुमा लेता— "उँह, बकवास है। यह हिन्दोस्तानी क्या आजादी लेंगे ? बिना अस्त्र-शस्त्र उठाये, खाली मार खाते रह कर यह आजादी लेना चाहते हैं ? .... मूर्ख हैं।"

सच भी यही है कि हम लोग मूर्ख से भी ज्यादा बदतर थे या फिर हद दर्जे के गधे। क्योंकि अगर ऐसा न होता तो आज हमारा प्यारा भारत गुलाम कैसे होता ? अंग्रेजों के पैर यहां जम कैसे पाते ? ....उस समय तो हम आपस के झगड़ों में फंसे थे। अपने पड़ोसी से जलते थे। उसको नुकसान पहुँचाने के लिये निकृष्टतम कार्य भी कर सकते थे। आपस में लड़कर बरबाद हो जाना तो साधारण बात थी। एकता के स्थान पर वैमनस्य की भावनाएं अत्यधिक प्रबल थीं। यही कारण है जो भारत गुलाम हुआ या फिर मूर्ख बना।

जबकि एक ओर भारत में गुलामी की अंधेरी रात में गांधी के आंदोलन का दीपक जल रहा था, आकाश में एकदम से चांद निकल आया, नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के नाम से। सुभाष चन्द्र बोस और साथ के अन्य बगाली सपूतों के कार्यों को सुन कर ब्रिटिश साम्राज्य की चूलें हिल गई। दांतों के नीचे, हलुआ खाते-खाते एकदम से नमक की ककड़ी आ गई। और मुँह का ज़ायका ख़राब हो गया।

यही कुछेक कारण थे, जिनसे परेशान होकर इम्फाल की तलाशी हुई। लेकिन व्यापारी का घर बच गया, क्योंकि मणिपुर में उसका काफी दबदबा था। फिर वैसे भी दो-तीन उच्च अंग्रेज अधिकारियों से उसका परिचय था। इन सब के बावजूद और इम्फाल को छान डालने के बाद उनका संदेह व्यापारी पर केन्द्रित हो गया। प्रत्यक्ष रूप से तो ब्रिटिश सरकार उसका कुछ भी नहीं कर सकती थी, क्योंकि उसके एक इशारे पर वहां गृह-युद्ध छिड़ सकता

था या ब्रिटिश छावनियां फूकी जा सकती थीं; इस कारण से भी सरकार कुछ घबड़ाती थी। अतः प्रत्यक्ष रूप में जब वह कुछ न कर सकी तो व्यापारी के मकान की निगरानी के लिये दो गुप्तचर हर समय तैनात कर दिये, जिनके द्वारा उसे क्षण प्रतिक्षण की खबरें मिल जाती थी। लेकिन वे सूचनाएँ सिर्फ व्यापारी-परिवार के विषय में ही होती थीं, क्योंकि हम लोग चौथे दिन चुपके से एक मंदिर की शरण में पहुँच गये थे, जो स्वंय व्यापारी का ही था।

मंदिर अत्यन्त आलीशान बना हुआ है। दीवारों पर भगवान् कृष्ण की समस्त बाल और रास लीलाओं को कला के द्वारा मोहक रूप देकर अत्यन्त ही कलात्मक ढंग से अंकित किया गया है। मंदिर में राधा-कृष्ण की सोने की मूर्ति प्रतिष्ठित है जो अत्यधिक विशाल है। साथ ही मूर्ति के अन्दर कलाकार ने इतनी सजीवता भर दी है कि उसे देख कर एक नास्तिक का सिर भी श्रद्धा से नत हो जाये। अपने तेज तथा वैभव के कारण यह मंदिर पूरे मणिपुर में प्रसिद्ध है तथा दो मंजिलों में पूर्ण है। ऊपर के हिस्से में दर्शनार्थियों के लिये छज्जे बने हुये हैं और नीचे पूर्व में मूर्ति-स्थान है। इसी मंदिर में व्यापारी ने हम लोगों को टिका दिया था।

वास्तव में मणिपुर प्राकृतिक सुन्दरता का एक अच्छा नमूना है। सुदूर आसमान को छूने वाली दूध के सामान स्वच्छ-सफेद बर्फानी पहाड़ियों की चोटियां, जो भारत के अतीत के गौरव की प्रतीक जान पड़ती हैं। और नग्न पहाड़ियों के वक्षस्थल पर उगी हुई बनस्पति, जिनके मध्य इम्फाल बसा हुआ है। छोटे मोटे झरने, जो अदृश्य हाथों द्वारा निर्मित हुये और उन्हीं का गुणगान करते हुये, प्रकृति का अनन्यतम सौन्दर्य बखान करते हैं।...और इन सबके मध्य बसा है—इम्फाल! कृष्ण गोपियों का इम्फाल, क्योंकि यह कृष्ण-भक्ति प्रदेश है। तात्पर्य यह है कि इम्फाल तथा पूरे मणिपुर प्रदेश में कृष्ण के अलावा

और किसी देवता की पूजा पूर्णतः नहीं के बराबर होती है। यहाँ कृष्ण-मंदिरों की बहुतायत है। वर्ष भर मंदिरों में, विशेषकर व्यापारी द्वारा निर्मित मंदिर में, भगवान् कृष्ण के जीवन के सम्पूर्ण अंश का चित्रण दिन-प्रतिदिन किया जाता था।

आज इम्फाल में हमारा अन्तिम दिन था, अतः व्यापारी के अनुरोध पर हम लोगों ने भी उसत्व में भाग लेने का निश्चय किया।

सन्ध्या समय जब हम मंदिर के प्रांगण में पहुंचे तो कार्यक्रम चल रहा था। आज मंदिर में उस दृश्य को दर्शाया गया था, जब भगवान कृष्ण गोकुल छोड़कर मथुरा को प्रस्थान करते हैं तो गोकुल की समस्त गोपियाँ उदास हो उठती हैं। वातावरण बोझिल हो उठता है। बेजान पेड़-पौधे भी व्याकुल हो उठते हैं। गायों के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है। कदम्ब के पेड़ और कुंज की झाड़ियां आज वीरान पड़ी हैं। यमुना का पानी भी आज रुक-सा गया है। क्योंकि उनका प्रियतम उन्हें छोड़कर मथुरा जा रहा है और राधा अपने प्रिय को जाने से रोक रही है। अन्य गोपियाँ भी शोक से व्याकुल हैं। अब उन्हें कृष्ण की मधुर बंशी की वह मधुर तान कभी नहीं सुनाई पड़ेगी।

यह था वह दृश्य, जिसे इम्फाल निवासियों ने अपनी भाषा में गीत गाकर दर्शाया था। दृश्य का मुख्य आकर्षण था, मणिपुरी नृत्य। यह नृत्य सम्पूर्ण भारत में अपना अलग ही महत्व रखता है। नृत्य और भाव-भंगिमा को देखकर हम लोगों में एक नवीन उत्साह और आह्लाद की अनुभूति सी भर गई और हम लोगों का निश्चय और भी पर पक्का हो गया।

लेकिन, शायद प्रारब्ध को यह स्वीकार न था कि हम सफलतापूर्वक मंजिल पर पहुँच सकें। वहीं पर एक गुप्तचर भी उपस्थित था! जिसने न जाने कैसे गोपाल को पहचान लिया और हम लोगों के बाद व्यापारी की जान जोखिम में पड़ गई। हालांकि अपने दबदबे की वजह

से वह साफ अपने को बचा ले गया। लेकिन फिर भी गोपाल को पहचान लिया जाना हमारे लिये बहुत ही खतरनाक, आगे चलकर, सिद्ध हुआ। खैर यह सब तो बेकार की चीज है। अगले ही दिन हम लोगों ने ब्रह्ममुहूर्त्त में इम्फाल छोड़ दिया।

हम लोग अपनी राह पर निर्भय और आशंकारहित हो आगे बढ़ते जा रहे थे। सभी प्रसन्न थे। ड्राईविंग सीट पर इस समय गुरू बैठा था और उसके बगल में जित्तू या जितेन्द्र तथा कमल बैठे थे। गोपाल, आशा और बीना एक सीट पर थे और दूसरी सीट पर मैं तथा नीना थे। हम दोनों में "नारियों को आजादी और समानता के अधिकार" नामक विषय पर बहस चल रही थी। नीना कह रही थी—"आज कि औरतें बहुत एडवान्स हो चुकी हैं। एक प्राचीन विचारों वाली युवती और आधुनिक युवती में जमीन आसमान का अन्तर है, रवीन्द्र जी। आज की नारी पहले से बहुत आगे आ चुकी है और अपने अधिकारों के लिये तैयार खड़ी है। उसे आज आजादी और अधिकार चाहिए।"

"मैं मानता हूँ कि आज की नारी बहुत आगे बढ़ चुकी है।" मैंने किंचित मुस्कुराकर कहा—"लेकिन नीना, साथ ही इस बात को भी नजरान्दाज नहीं किया जा सकता कि नारी-जाति की इस मांग के पूरी होने से उसके सामने एक बहत बड़ा खतरा उत्पन्न हो जायेगा।"

"खतरा!......कैसा खतरा?"

"नारी का मन चंचल होता है। वह अपनी इस प्रकृति से कभी विलग नहीं हो सकती। इसीलिये प्राचीन भारतीय विद्वानों ने भारतीय स्त्रियों के लिये कुछ सीमायें निर्धारित कर दी हैं। इन सीमाओं को

लांघने का तात्पर्य है— मर्यादा का उल्लंघन करना ! स्त्री की तनिक भी आजादी उसे उच्छृंखल कर देती है। और उच्छृंखल होकर वह सब कुछ भूल जाती है —सामाजिक मान्यताएँ, नारी-सीमा, माता-पिता ……… । तात्पर्य यह है कि स्त्रियों के लिये उनकी आजादी उतनी ही खतरनाक है, जितना भारत के लिये ब्रिटेन ! अगर ऐसा न होता तो विद्वानों ने यह कभी न कहा होता— 'नारी सदैव पुरुष के संरक्षण में ही उचित रूप से रहती है। बचपन में उसका संरक्षक पिता, यौवन-काल में पति तथा वृद्धावस्था में पुत्र उसके संरक्षक होते हैं; अन्यथा नारी उच्छृंखल हो जाती है।' इस कथन को कैसे झूठ कहा जा सकता है ?"

"यह सब औरत को गुलाम बनाने की तरकीबे हैं। मैं इसे नहीं मानती।"

"तुम मानो या न मानो मगर सत्य यही है।"

"सत्य यही कैसे है। तुम पुरुष-वर्ग के लोगों ने अपनी-अपनी अलग-अलग धारणायें बना रक्खी हैं और यही चाहते हो कि औरत हमेशा तुम लोगों की जूती बनी रहे। जो तुम कहो उसे वह अन्धी बन कर करे……… न, न; यह सब गलत है अगर ऐसा नहीं है तो तुम लोग उसे ऊंची शिक्षा क्यों नहीं लेने देते ? उसे नौकरी क्यों नहीं करने देते ? विदेशों की ओर देखो, वे कितनी प्रगति कर रहे हैं………"

"वह विदेश है नीना, और यह है भारत ! यहाँ की कल्चर यानी संस्कृति, इस बात के लिये बिल्कुल तैयार नहीं है और न कभी होगी कि वह वेस्टर्न-कल्चर (पाश्चात्य सभ्यता) को अपनाए। वहाँ नंगा नाच होता है। वहां राह चलते 'किस' लिये जाते हैं। सड़कों पर हाथों में हाथ डाल कर चला जाता है। होटलों में शराब और सिगरेट पी जाती है। इसको क्या इंडियन कल्चर कभी बरदाश्त करेगी ? कभी नहीं। भारत आर्यों का देश है। साधू-संतों का देश है। राम-

…का देश है। गौतम-महाबीर का देश है। यहां अगर पाश्चात्य-सभ्यता अपनाई गई तो हिन्दुस्तान मर जायेगा…… यहाँ कि सभ्यता मर जायेगी। वहाँ की कल्चर इसे सहन कर सकती है, लेकिन यहाँ की नहीं। और जहाँ तक ऊँची शिक्षा का सवाल है तो यह सत्य है कि भारत में गार्गी और विद्योत्तमा (महाकवि कालिदास की पत्नी) जैसी शिक्षित स्त्रियां भी हुई है। ऊँची शिक्षा के यह मायने नहीं हैं कि स्त्री जाकर पुरुषों के सम्मुख बैठे। बराबर उससे नजरें लड़ाये, सिर्फ इस वजह से कि वह भी पुरुष की तरह समान अधिकारी है, तो यह उसकी समझ से तो लाभदायक हो सकता है, लेकिन वास्तव में पुरुषों को हर बात में बराबरी करने से स्त्री का नैतिक पतन ही होता है। समाज दिन-ब-दिन गिरता जाता है। उसका चारित्रिक स्तर कम होता जाता है।"

"लेकिन……"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं नीना। नारी-जीवन का वास्तविक सुख पुरुष के पति के समक्ष आत्म-समर्पण करने में है, उसकी बराबरी करने में नहीं। ईश्वर ने नारी को, ग्रहण करने के लिये ही, बनाया है। नारी लेती है और पुरुष देता है। पुरुष के आगे सदैव ही नारी ने समर्पण किया है। बिना पुरुष के अवलम्ब के नारी का जीवन विषाक्त हो जाता है; व्यर्थ हो जाता है। इस बात को कभी मत भूलो कि एक नारी पहले पत्नी है, फिर मां, फिर बेटी और फिर बहन। इस चार रूप के अलावा और मुख्यतः तीन रूप—पत्नी, मां, बहन—के अलावा, वह कुछ भी नहीं है।"

इस बात का नीना के पास कोई उत्तर न था, अतः वह चुप लगा गई और उसके बदले बीना बोली—"भय्या, क्या आज नीना को बोर करने की ही सोच ली है।"

"मैं क्या करूँ बहन, इन्होंने बात ही ऐसी छेड़ दी थी।" मैंने अपनी विवशता प्रकट की।

"अरे जाओ ! बेवकूफ न बनाओ, पब्लिक को।" गुरू ने नकली झुँझलाहट से कहा—"कोई बेसुरो राग ही सुना दो।"

'हाँ, हाँ, यह ठीक रहेगा।" सब एक साथ बोले और तब विवश होकर मुझे 'आजाद हिन्द फौज का कौमी गीत' गाना पड़ा—

"सब सुख चैन की बरखा बरसे, भारत भाग है जागा।
पंजाब, सिन्ध, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल, बंगा ॥
चंचल सागर, विन्ध्य, हिमालय, नीला जमुना गंगा।
तेरे नित गुन गायें, तुझ से जीवन पायें, सब तन पाये आशा।
सूरज बन कर जग में चमके, भारत नाम सुभागा ॥
जय हो, जय हो, जय हो—जय-जय-जय-जय हो।
भारत नाम सुभागा।

सुबह सकारे पंख पखेरू, तेरे ही गुन गायें,
बास भरी भरपूर हवायें, जीवन में रस लायें,
सब मिलकर हिन्द पुकारें, जय आजाद हिन्द के नारे;
प्यारा देश हमारा।

सूरज बनकर जग में चमके, भारत नाम सुभागा।
जय हो, जय हो, जय हो—जय-जय-जय-जय हो ॥
भारत नाम सुभागा।

सबके दिल में प्रीत बसावे तेरी मीठी बानी।
हर सूबे के रहने वाले, हर मजहब प्राणी।
सब भेदो फर्क मिटा के, सब गोद में तेरी आ के।
गूँथे प्रेम की माला।

सूरज बन कर जग में चमके, भारत नाम सुभागा।
जय हो, जय हो, जय हो – जय-जय-जय-जय हो।
भारत नाम सुभागा।"

गीत में सभी लोगों ने साथ दिया, किन्तु गुरू चुप रहा। गीत के समाप्त होते ही गुरु ने कृत्रिम झुंझलाहट के साथ कहा —"वाह, वाह ! क्या गीत गाया है ?.........अरे इस रोमान्टिक वातावरण के ऊपर तो कम से कम तरस खाया होता ? खुदा ने इस समय बदली का मौसम इसलिये नहीं किया था कि इस समय तुम बेवक्त की शहनाई बजाओ।"

"अगर तुम्हें रोमान्स ही लड़ाना था तो यहां मोर्चे पर आने को क्यों तैयार हुए ?" नीना ने अकस्मात् ही पूछ लिया।

"सिर्फ तुम्हारे लिये !'

गुरू के इस कथन पर नीना झेंप गई और वातावरण हंसी के ठहाकों से बोझिल हो उठा। मैं कुछ कहने ही जा रहा था कि अचानक ट्रांसमीटर का संकेत पाते ही मैंने उसे मुँह से लगा लिया।

इस बीच हंसी के ठहाकों में एकदम से ब्रेक लग गया था। बातें करने व सुनने के पश्चात् मेरे मुख पर चिन्ता की हलकी रेखायें स्पष्ट हो आईं।

"क्या बात है ? किसका काल था ?"

सबकी प्रश्नात्मक दृष्टियां मेरी ही ओर लगी थीं।

"इम्फाल के व्यापारी का।"

"क्या कोई खास बात है ?"

"हां, हमारे वहां से जाने के बाद उन्हें बहुत तंग किया गया कि वे हमारा पता बतादें.......

"तो ?"

"लेकिन उन्होंने इस बात से इन्कार कर दिया कि वे हमारा पता जानते हैं। इस पर उनके पत्नी तथा बच्ची पर भांति-भांति के अमा-

नुषिक अत्याचार किये गये। यहाँ तक कि किरन को वर्बाद करने के पश्चात् उसे उबलते हुये तेल के कढ़ाव में डाल दिया गया। बच्ची किरन तड़फ-तड़फ कर मर गई, लेकिन न तो उसने और न व्यापारी ने ही हमारा पता बताया। इसी बीच पुजारी ने मुखबिरी कर दी और अब हम लोगों के पीछे एक अच्छी खासी फौज लग चुकी है, इसलिये उसकी राय है कि हम लोग अपनी तरफ से पूर्णतः सावधान हो जायें। फौजें बहुत तेज़ी से हमारी तरफ बढ़ रही हैं।"

"ओह!"

कहकर सभी ने अपने-अपने होंठ काट लिये और आंखों में अँगार दहक उठे। उनमें खून उतर आया ...

व्यापारी द्वारा दी गई सूचना के मुताबिक हम लोग बहुत सावधान हो गये थे। सभी लोग आने वाले क्षणों की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। हम लोग इस बात से भयभीत नहीं थे कि पकड़े जायेंगे। फिर भी हम यह जरूर चाहते थे कि हम लोग जितनी जल्दी हो सके, कम से कम, रंगून अवश्य पहुँच जायें क्योंकि वहाँ से तो हम ट्रेन के जरिये सिंगापुर बहुत जल्द पहुँच सकते थे। हमारे दिलों में सिर्फ एक ही कामना थी, हम लोग नेता जी के दर्शन कर लें और उनके नेतृत्व में अपनी आजादी की लड़ाई को प्राण-प्रण से जारी रख सकें। हम लोगों को भी नेता जी की ही तरह, गांधी जी के अहिंसात्मक आंदोलन पर रत्ती भर भी विश्वास न था, क्योंकि अगर ऐसा न होता तो हम लोग इस सशस्त्र क्रान्ति में कभी न शामिल होते और इसके स्थान पर गांधी जी के ही साथ रहना स्वीकार करते। हम लोगों का यह सिद्धान्त था कि अगर कोई तुम्हें एक उंगली दिखाये तो तुम उसके झापड़ मार दो, अगर कोई एक हाथ दिखाये तो उसका हाथ तोड़ दो ...। सारांश यह कि ईंट का जवाब पत्थर से दो। जब कि गांधी जी हमसे पूर्णतः विपरीत थे। उनका कहना था—'अहिंसा परमो

धर्मः।' वह सदा यही कहा करते थे कि जो काम अहिंसा और शांति से हो सकता है, वह हिंसा और शस्त्र से नहीं। अहिंसा ही हमारा मूल मंत्र है। यही हमारा अमोघ हथियार है। हम इसी से आजादी लेगें।

किन्तु इसके विपरीत, अर्थात् अहिंसात्मक क्रांति के विरुद्ध, प्रारम्भ से ही सशस्त्र क्रांति चली आ रही थी, मगर परिस्थितियों के अनुसार वह विकसित न हो सकी और अर्द्ध-सुसुप्तावस्था में चलती रही। वही क्रांति अब विकसित होकर नेता जी के शब्दों में द्वितीय स्वतंत्रता-संग्राम का रूप ले रही थी। सारे भारत में आज नेता जी का नारा गूँज रहा था—"तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।"

भारत की आजादी के इस तुमुल-घोष ने एक बारगी ही विश्व की नींव हिला दी—और खास तौर से ब्रिटेन को, जो भारत पर अपनी कुंडली जमाये नाग की तरह बैठा हुआ था।

यही नारा मेरे कानों में अब भी गूँज रहा था। मेरे मुँह से अचानक ही निकल पड़ा—'ठीक है, हम अपना खून देने को हर तरह से तैयार हैं!"

"क्या सो रहे हो?" नीना ने मुझे हिलाया।

"हाँ......नहीं तो?"

मैं वास्तव में चौंक पड़ा और सब एक बार पुनः इस नाजुक समय हँस पड़े। वास्तविकता तो यह थी कि मैं वास्तव में विचारों की नींद में सो गया था।

"अमाँ तुम भी रहे पूरे चुगद ही!" गुरू ने छेड़ा।

'क्यों?'

"इसलिये कि, मियाँ यह लखनऊ नहीं है जो जरा सी अफीम खा ली और पीनक में पड़े रहे........"

"ऐ, देखो, सब कुछ तो कह लेना, लेकिन लखनऊ को कुछ भी न कहना वर्ना ......"

"हाँ, हाँ बहुत देखे हैं। अमाँ मियां यहाँ तो जान पर आ बनी है और जनाब को हरी-हरी सूझ रही है।"

"ठीक ही तो है। सावन के गधे को हरी-हरी ही सूझती है।"

"देखो नीना, यह ठीक नहीं है।"

"अच्छा, अब नहीं बोलूँगी बस।"

"हाँ तो मिस्टर साहित्कार अब उतरिये, अपनी बरसाती पहन-कर!" कमल ने भी चलते-चलते एक फिकरा कस ही दिया।

मैंने जो निगाह घुमाई तो पानी की फुहार के साथ बरस रहा था। फिर भी पहाड़ी बरसात थी। बरसाती पहनकर सभी लोग सामान लेकर बाहर निकले तो मालूम हुआ कि हम लोग सड़क से काफी दूर एक गुफा के पास हैं। एक लालटेन जलाकर उसमें हम लोग घुसे। किस्मत अच्छी थी, जो गुफा खाली मिल गई। वहीं पर हमने अपना अड्डा जमा लिया।

इस कार्य में आधा घण्टा बीत गया। इसके बाद गोपाल, जितेन्द्र, कमल और गुरू बाहर चले गये और मैं, आशा, बीना तथा नीना वहीं रह गये। चूंकि हमारी यात्रा में यह पहली बरसात थी, इस वजह से हम कुछ अनुमान भी नहीं लगा सकते थे कि पानी कब बन्द होगा।

आशा और बीना दूर एक कोने में जाकर नाश्ते आदि के प्रबन्ध में जुट गईं और नीना मेरे पास आकर बैठ गई (वह कोना, कोना नहीं था बल्कि दूसरी लगी हुई गुफा थी)। मैंने एक चादर बिछा ली थी, जिस पर एक ईंट रख लिया था जो तकिये का काम दे रहा था। उसी पर लेट कर मैंने एक सिगरेट सुलगाई ही थी कि नीना आकर मेरे पास, सिरहाने बैठ गई और अत्यन्त प्रेमपूर्वक आत्मीयता से भर कर बोली—

"नाराज हो गये क्या ?"

"नहीं तो, क्यों ?"

"ऊँ हूँ"'यों ही लेटे रहो न ?" उसकी उँगलियाँ मेरे बालों में उलझ चुकीं थीं और मेरा मन एक अजीब-सी आनन्दानुभूति तथा सिहरन से भर गया। मेरी सोचने की शक्ति पूर्णतः नष्ट हो चुकी थी और मैं निष्क्रिय-सा लेटा रहा। वह कहती गई—

"अगर तुम नाराज न होते तो तुमने........"

"बस, इतने ही से डर गईं ?"

"कहाँ ? नहीं तो, अगर मुझे नहीं डाँटोगे तो फिर किसे डाँटोगे ?'

मैं चुप होकर सोचने लगा कि नारी के मन में क्या है, कोई नहीं जान सकता। कोई नहीं कह सकता कि वह अब क्या कर बैठेगी या क्या करना चाहती है। सत्य ही है, नारी वह अथाह समुद्र है जिसकी थाह पा लेना पूर्णतः असम्भव है। मुझे चुप देखकर वह पुनः बोली—

"ऐसे वातावरण में चुप क्यों हो गये ? कुछ बात ही करो।"

"क्या बात करूँ ?"

"अच्छा जाओ, न बात करो।" कहकर वह लेट गई और दूसरी ओर करवट बदल ली। जाने किस प्रेरणावश मैंने उसे समझा-बुझा कर मनाया और फिर....

एक सुगन्धहीन पुष्प में अचानक ही सुगन्ध का वास हो गया।

+ + +

बरसात धीरे-धीरे तेज होती जा रही थी, लेकिन इससे गोपाल के निश्चय में कोई फर्क नहीं आया। उसका सदा से ही यह सिद्धांत था कि "कदम आगे बढ़ा कर पीछे लौट जाने वाले परले सिरे के मूर्ख होते हैं। जब हम एक कार्य को करने के लिये चले हैं तो बिना

उसे पूरा किये नहीं लौटेंगे। फूलों पर सोने वाले कठोर पत्थरों पर भी सो सकते हैं, गद्दों पर चलने वाले अंगारों पर भी चल सकते हैं, एक मामूली सी डंठल तोड़ने वाले चट्टानों को भी तोड़ सकते हैं। अगर वे ऐसा नहीं कर सकते—अगर उनमें किसी कार्य को करने के लिये दृढ़ता जैसी शक्ति नहीं है—तो वे बेकार हैं। उनका मनुष्य रूप में जन्म लेना ही व्यर्थ है। वे पृथ्वी पर एक बड़े बोझ की तरह हैं···अगर हमने किसी काम में हाथ डाला है तो उसे पूरा किये बिना अपने निश्चय से नहीं डिगेंगे। फिर यह तो बरसात है, जो दो-चार दिन में या कभी न कभी तो रूकेगी ही।"

यह शब्द गोपाल ने उस समय कहे, जब कि कमल ने कहा कि "गोपाल भय्या, इस समय तो बहुत तेज बारिश हो रही है। ऐसी बारिश में हमारा कोई भी कदम खतरनाक साबित हो सकता है। इसलिए···" किन्तु तुरन्त ही गोपाल ने उत्तर दे दिया और कमल चुप होकर रह गया।

"बहुत बीच में टांग घुसेड़ने लगे हो? जरा सी कोई बात हुई नहीं कि 'टप' से बोल दिये।" जितेन्द्र ने, गोपाल के चुप होते ही फिकरा कसा—"अच्छा जाओ मियां, अपनी जगह सम्भालो।"

कमल और गुरु दोनों मुस्कराते हुये अपनी जगह की तलाश में चल दिये और गोपाल तथा जितेन्द्र एक बड़ी-सी चट्टान की आड़ में छिप गये। यह चट्टान कुछ इस प्रकार से जमी हुई थी कि इसके पीछे बैठने के लिये खासी खोहनुमा जगह थी, जहां से बैठकर नीचे की पूरी घाटी पर अच्छी तरह से नजर रक्खी जा सकती थी। दोनों वहां जाकर आराम से बैठ गये और जितेन्द्र दूरबीन से घाटी का निरीक्षण करने लगा।

गोपाल के लिये यह एक बहुत ही आश्चर्य की चीज थी कि उसे इधर दो-तीन दिन से जितेन्द्र के स्वभाव में काफी परिवर्तन नजर

आ रहा था। इतना भारी परिवर्तन अकस्मात् हो हो जाना, वास्तव में ऐसी बात थी जो कि हर व्यक्ति के लिये एक मानसिक परेशानी का कारण बन सकती है। यही दिमागी परेशानी इस समय गोपाल को भी परेशान कर रही थी अथवा इसी मानसिक उलझन के कारण – या अपने प्रिय मित्र के इस आकस्मिक स्वभाव-परिवर्तन के कारण—गोपाल जितेन्द्र के विषय में सोचने के लिये विवश-सा हो गया कि एक व्यक्ति के स्वभाव में इतनी जल्दी परिवर्तन कैसे सम्भव हो सकता है ? उसने अपने मन के द्वारा मस्तिष्क से प्रश्न किया—

"कहीं ऐसा तो नहीं है कि मैं भ्रम में पड़ गया होऊँ ?"

"नहीं, ऐसा संभव नहीं है। वास्तव में उसके स्वभाव में यह एक बहुत भारी परिवर्तन है।''' तुम इतने दिन उसके साथ रहे हो, अभी तक उसका नेचर नहीं पहचान पाये कि वह कैसे स्वभाव का व्यक्ति है, क्यों ?" मस्तिष्क ने उलाहना दिया।

"कुछ दिन पहले तक तो वह बहुत ही ज्यादा गंभीर था, लेकिन इधर कुछ दिन से...."

"यही कहना चाहते हो न, कि पहले वह बहुत गंभीर प्रकृति का था किन्तु इधर वह बहुत मजाक-पसन्द हो गया है, क्यों ?"

"हाँ !" मन ने स्वीकार किया, क्योंकि यही सत्य था।

"तो तुम इसके अर्थ और इसका विश्लेषण सुनना चाहते हो ? ....सुन सकोगे ?"

"क्यों नहीं !"

"कहीं ऐसा तो नहीं है कि ही सत्य को, सुनते तुम्हें गश (चक्कर) आ जाये और तुम बेहोश हो जाओ ?"

"नहीं ऐसा नहीं हो सकता !"

"तो सुनो, उसकी मौत उसके बहुत करीब आ गई है।"

"क्या ?" उसका मन—दिल— वास्तव में डूबने लगा, किन्तु गोपाल इतनी जल्दी परिस्थिति से हारने वाला न था। वह परिस्थितियों से साहसपूर्वक लड़ना जानता था, अतः दृढ़ रहा—पर्वत की भांति ! हालांकि हल्का-सा धक्का जरूर पहुँचा था, उसके मन पर।

"हां, यही सत्य है। अगर यकीन न हो तो मैं अब्राहम लिंकन का उदाहरण दे सकता हूँ। यह तो जानते ही हो कि अब्राहम लिंकन अपने समय का माना हुआ राजनीतिज्ञ था और बहुत ही गभीर प्रकृति का था, किन्तु मृत्यु के कुछ दिन पूर्व ही उसके स्वभाव में बहुत ही आश्चर्य-जनक परिवर्तन पाया गया। वह बात-बात में ठहाके लगाकर हंस दिया करता था और काफी मजाक-पसन्द हो गया था। दक्षिणी अमरीका के बहुत से अपराधियों को उसने केवल थोड़ा-सा ही दण्ड देकर भगा दिया था। फिर कुछ ही दिन बाद 'गुड-फ्राई-डे' को उसे कत्ल कर दिया गया था। क्या यह झूठ है ?"

"नहीं सत्य है।" मन ने पुनः स्वीकार किया।

"अगर यह सत्य है, तो यह आकस्मिक परिवर्तन भी मेरी बात का पक्का सबूत है; क्योंकि मरने से पूर्व हर व्यक्ति का स्वभाव पूर्णतः अथवा अधिकांशतः विपरीत हो जाता है। अगर व्यक्ति गंभीर है तो हास्य-प्रकृति का, अगर दयालु है तो कठोर, अगर दानी है तो कंजूस आदि तरह के परिवर्तन उस व्यक्ति में अनायास हो आ जाते हैं।"

"नहीं, यह गलत है। मैं नहीं मानता, इस थ्योरी को !"

"मूर्ख ! सत्य को साक्षी की आवश्यकता नहीं पड़ती है।"

यह कहकर मस्तिष्क ठठाकर हंस पड़ा और गोपाल का मन व्याकुल हो उठा। उसका मस्तिष्क जैसे फटा जा रहा था। फिर भी उसने यह

सोचकर, 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात,' अपने को पूर्णतः संयत कर लिया और स्वयं भी जितेन्द्र के साथ घाटी का निरीक्षण करने लगा।

लगभग एक घण्टे बाद ....

बारिश बहुत कुछ मन्द पड़ गई, किन्तु रुकी नहीं। गोपाल और जितेन्द्र अब भी घाटी की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से निहार रहे थे। गोपाल ने बलपूर्वक अपने मस्तिष्क से उस बात को बाहर निकाल दिया था, क्योंकि वे विचार केवल मस्तिष्क की उपज के अलावा अन्य कुछ नहीं थे। अचानक घाटी में कुछ व्यक्ति धीरे-धीरे ऊपर की ओर चढ़ते हुये दृष्टिगोचर होने लगे।

"मैं दूसरे स्थान पर जा रहा हूँ, यहां का आप सम्भालियेगा, गोपाल भय्या।"

"अच्छा !"

और जितेन्द्र चला गया। थोड़ी ही देर बाद एक दूसरी चट्टान की आड़ से निशाना बांधकर जितेन्द्र ने एक फायर कर दिया। 'सूँ' की आवाज के साथ आगे आने वाला व्यक्ति लड़खड़ा कर ढेर हो गया। तुरन्त ही तीन फायर और हुये तथा दो अन्य व्यक्ति भी गिर गये। अब तक वे भी इन फायरों के मतलब समझ चुके थे। उन्होंने भी रेंजर-पिस्तौल* से फायर किया। उनके फायर करते ही चार अन्य स्थानों से पुनः फायर हुये और चार व्यक्ति लुढ़क गये। अबकी बार कई रेंजरफायर एक साथ हुये किन्तु कोई फायदा न हुआ। प्रत्युत्तर में कड़ा जवाब पाकर और कुछ अन्य साथी खोकर वे पीछे हटने लगे और थोड़ी ही देर बाद वहाँ मैदान साफ था।

---

*(ऐसा पिस्तौल, जिसकी रेंज निश्चित करके तथा ऊपर का मुँह करके फायर किया जाता है। यह केवल पहाड़ों पर ही काम आता है)

उनको पीछे हटते देखकर गोपाल-मंडली के इन चारों सदस्यों ने उन्हें खदेड़ने का निश्चय किया। लेकिन उसे पूरा न कर सके, क्योंकि बरसात पुनः शुरू हो चुकी थी और......

अब तो पानी मूसलाधार बरस रहा था। आसमान जैसे फटा पड़ रहा था। यह देख हम लोग पुनः चुपचाप गुफा में 'विजयी', किसी अंश तक, होकर लौट गये और वर्षा के रुकने का इन्तजार देखने लगे। किन्तु ईश्वर को अभी कुछ और ही मंजूर था, शायद....

६

आज भगवान चन्द्र को कलकत्ते से आये एक माह बीत चुका था। इस एक माह के अंतर्गत भी वह अपने मस्तिष्क को शांति न प्रदान कर पाये थे, कारण था कि उनके दोनों प्रिय साथी—आशा, जिसे वह बहन की भाँति प्यार करते थे और दूसरी नीना, जो उनके अनन्य तथा अन्तरंग मित्र राय साहब की पुत्री थी और जिसे वह अपनी पुत्री को ही भाँति प्यार करते थे—आज उनसे बिछुड़ चुके थे। इस बीते हुये एक माह में कोई भी ऐसा दिन (रात) नहीं था जिसमें वह पूरी रात चैन के साथ सोये हों। वह जब भी सोने के लिये लेटते, उनके सामने आशा और नीना की वह भोली और मासूम आकृतियाँ नृत्य करने लगतीं जिन्हें वह जीवन में कभी भी न भुला सकते थे। उनके व्यवहार को याद करते ही उनके गालों पर दो बूँद आँसू स्वतः ही ढुलक आते और वह बुदबुदा उठते—"आह नीना, मेरी बच्ची .... मैंने तुझे आशा के साथ जाने की अनुमति देकर बहुत बड़ा पाप किया है। इसके लिये मैं अपने आप को कभी क्षमा नहीं कर सकूँगा, मेरी बच्ची !.... आशा का क्या, वह तो अपने घर चली गई। तू भी एक दिन अपने घर जाती, लेकिन आह ! तेरी अभी उम्र ही क्या थी ? तू तो अभी रिवाल्वर को भी ठीक से नहीं पहचानती... अब मैं तेरे पिता को क्या जबाब दूँगा, जो अपनी एक अमानत मेरे

संरक्षण में छोड़ गया था। आज....आज उसी अमानत को मैंने भावावेश में आकर बलिवेदी पर खड़ा कर दिया है.... ...आह नीना।"

इसी प्रकार के भांति-भांति विचारों से वह बुरी तरह से विक्षिप्त हो उठते और तब वह बिना कुछ सोचे-समझे हुये आलमारी की ओर बढ़ जाते। आलमारी खुलती। बोतल निकलती। काग खुलती और बोतल खाली होकर लुढ़क जाती....और साथ ही वह भी नशे में धुत् होकर पलंग पर लुढ़क जाते।

हालांकि भगवान चन्द्र पहले शराब बहुत कम मात्रा में, कभी-कभी किसी पार्टी इत्यादि में ही, प्रयोग करते थे, किन्तु इधर जब से वह कलकत्ता से लौटे थे, यह उनका रोज का कार्य-क्रम बन गया था। दिन भर तो वह काम में लगे रहते, किन्तु रात में घर आते ही जैसे घर उन्हें काटने दौड़ता और वह विवश हो जाते। घर के नौकर अलग परेशान थे कि अचानक यह क्या हो गया, उनके मालिक को ? जिसने भी कारण पूछने की कोशिश की वह उनके सामने जाते ही और उनकी दयनीय अवस्था देखते ही भीगी बिल्ली - सा बन जाता तथा चुपचाप बिना कुछ पूछे ही वापस लौट जाता।

एक दिन रात को जब भगवान चन्द्र शराब पीकर बड़बड़ा रहे थे तो अचानक माली ने, जो कि उनका रात का दूध लेकर उन्हें देने जा रहा था, उनका बड़बड़ना सुन लिया और चुपचाप दूध मेज पर रख कर वापस लौट गया। तुरन्त ही दोनों नौकरों को अपने मालिक के दुख का पता चल गया। और दूसरे दिन सवेरे जब भगवान चन्द्र स्नानादि से निपट कर बाहर आये तो मेज पर नाश्ता सजा हुआ था। एक बार उनके कदम ठिठक गये, पास की खाली कुर्सियों को देखकर। किन्तु उन्होंने अपने को संयत किया और चुपचाप नाश्ता करने लगे।

नाश्ता खत्म करने के पश्चात् उन्होंने जैसे ही सर ऊपर उठाया, उनके मुंह पर एक फीकी सी मुस्कुराहट दौड़ गई। उन्होंने पूछा —

"क्या बात है, काका ?"

"मालिक, आप खफा तो न''''" दोनों मुँह लटकाए खड़े हुये थे। उनमें से काका बोला।

"खफा क्यों हो जाऊँगा ? इसके पहले भी कभी तुम लोगों पर मैं खफा हुआ हूँ ?" भगवान चन्द्र वैसे ही बोले।

"नाही मालिक, मुला डरित हैं।"

"कोई बात नहीं, तुम कह जाओ।"

"मालिक, आपकेर दुख अब नाहीं देखत बनत है। आखिर बात का है ? कौनेर गम तूका खाये डालत है, हमका तो बताओ ?"

"कुछ नहीं काका, ऐसे ही जरा आजकल तबियत नही लगती।" यह कहते हुये भगवान चन्द्र के नेत्र भर आये—काका की सहानुभूति देख कर—और उन्होंने अपना चेहरा बहाने से दूसरी ओर घुमा लिया। लेकिन उनकी आवाज कुछ भरी अवश्य हो गई थी।

"नाहीं मालिक, आप कुछ दिनन के खातिर कहीं बाहर चले जाओ, तबियत हल्की हुई जइहै।"

कहते हुये वह उनके पैरों पर गिर पड़ा।

"अरे-अरे तो यह क्या ! '''उठो, उठो '''अच्छी बात है मैं इस पर सोचूंगा '''अच्छा आज ही।"

कहकर भगवानचन्द्र अपनी लाइब्रेरी में आ गये और पुस्तकों के मध्य खो गये।

× × ×

शाम के सात बजे थे और भगवान चन्द्र कपड़े पहन रहे थे। उसी समय माली ने आकर बताया कि मैजिस्ट्रेट साहब आये हैं। मैजिस्ट्रेट एक अंग्रेज था, जिसे भगवान चन्द्र अपनी आड़ के लिये दोस्त बनाये

हुये थे। उसका नाम था, सर एडवर्ड। एडवर्ड का स्वभाव भी पूर्णतः भगवानचन्द्र जैसा था। वह भारत को इंग्लैंड से ज्यादा पसन्द करता था और उसके दिल में भारतीयों के प्रति सहानुभूति भी थी। वह अंग्रेजी राज्य (जिसने भारत को दबाया हुआ था) से घृणा करता था। उसका कहना था—'अंग्रेजी सत्ता ने हिन्दुस्तान का खून चूस-चूस कर उसे निर्बल और खोखला बना दिया है। हिन्दुस्तान के लिये यह अंग्रेजी राज्य जोंक के समान है, जो एक न एक दिन अवश्य ही भारत से विलुप्त हो जायेगा।'

वतन के प्रति ऐसे ही क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित होकर भगवान चन्द्र ने उसे अपना दोस्त बनाया हुआ था। कहना न होगा कि अपने इन्हीं विचारों के कारण एडवर्ड ने गर्वनरी की सीट खो दी थी और समाज से पूर्णरूप से बहिष्कृत हो गया था। लेकिन भगवान चन्द्र से वह ऐसा प्रभावित हुआ जैसे उसे अपना सब कुछ वापस मिल गया। भगवान चन्द्र यद्यिपि उस पर पूर्ण विश्वास करते थे, फिर भी उन्होंने उसे अपना कोई राज नहीं बताया हुआ था।

आज उनका मस्तिष्क वैसे भी ठीक नहीं था, उलझनें थी। अतः एडवर्ड के आने पर वह तुरन्त बाहर आये।

"हैलो मि० एडवर्ड, गुड इवनिंग।"

"गुड इवनिंग, कहाँ की तैयारी है? ......क्लब की?"

"हां, वहीं जा रहा था। सोचा था कि शायद वहीं आपसे मुलाकात होगी।"

"क्यों नहीं? मुँह देखी चाहे जितना कह लो...... खैर, अच्छा चलो तो यहाँ से।" एडवर्ड ने मुस्कराते हुये कहा—

"चाय या काफी तो......"

"नहीं, नहीं; यहाँ कुछ नहीं।"

"अरे भई, कुछ तो पेट में डाल लेने दो।"

"उसी के लिये तो कहने और ले चलने के लिये आया हूँ। घर चलो, जेनी हमारा इन्तजार कर रही होगी।"

"घर पर। क्यों ?"

"बस, उसी की मेहरबानी समझ लो, जो आज घर पर डिनर तो कम से कम मिलेगा।"

"कोई खास बात है क्या ?"

"नहीं तो, लेकिन यह क्यों पूछा तुमने ?"

"ऐसे ही पूछ लिया। खैर चलो।"

कहकर भगवान चन्द्र ने काका को कुछ आदेश दिये और एडवर्ड की कार पर बैठकर उसके बंगले की ओर चल दिये।

सर एडवर्ड का पूरा नाम, वैसे तो, जान एडवर्ड किटो था, किन्तु अपने दोस्तों के मध्य वह केवल एडवर्ड के नाम से ही प्रख्यात था। वह नवयुवक था और उसकी उम्र करीब उन्तीस वर्ष थी। उसका पूरा परिवार लन्दन में रहता था। कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी से पढ़ाई समाप्त करके वह भारत चला आया था। भारत के लिये उसके हृदय में प्रारम्भ से ही कुछ आसक्ति थी, जो समय पाकर बलवती हो उठी। भाग्य से उसे आई० सी० एस० (इन्डियन सिविल सर्विस) में एक सुनहरा अवसर मिला और वह भारत चला आया। उस समय उसकी उम्र पचीस साल की थी। यहाँ पर भारत के प्रति उसका इतना प्रेम बढ़ा कि उसने अपनी अच्छी खासी नौकरी पर लात मारकर मैजिस्ट्रेट की पोस्ट स्वीकार कर ली। एक ही वर्ष बाद वह हाईकोर्ट का मैजिस्ट्रेट हो गया और उसने एक अंग्रेज युवती जेनी से शादी कर ली और यहीं बस गया। उसी वर्ष उसकी मित्रता भगवान चन्द्र से हुई, जिसे हुये अब दो साल से कुछ महीने ऊपर बीत चुके थे।

जेनी की आयु बीस वर्ष के आस-पास थी। वह एक पूर्ण स्त्री थी। उसके पास सौंदर्य, मोहकता, आकर्षण, नारीत्व और यौवन इत्यादि सब कुछ था। वैसे भी प्रत्येक स्त्री युवावस्था में सुन्दरी और आकर्षक लगने लगती है, किन्तु जेनी को देखकर अनायास ही श्रद्धा उत्पन्न हो जाती थी। उसके चेहरे पर छाई हुई मासूमियत को देखकर उसकी तुलना लोग माँ मरियम से करने लगते थे। उसका जन्म भारत में हो हुआ था, अतएव वह अपने को भारतीय समझती थी और अधिकतर भारतीय वेषभूषा को ही पसन्द करती थी। सफेद रंग उसे विशेष प्रिय था और जिस समय वह सफेद साड़ी पहनकर खड़ी होती, ऐसा प्रतीत होता मानो साक्षात माँ सरस्वती ने अवतार धारण किया हो। उसे सदा ही यह दुख रहता कि उसके भी अन्य भारतीय लड़कियों की भाँति लम्बी, घनी और नितम्बों को चूमने वाली वह केशराशि क्यों नहीं है? जब भी वह किसी ऐसे केशों वाली युवती को देखती तो उदास हो जाती, अन्यथा उसके होठों पर सदैव ही एक मोहक मुस्कान तिरती रहती थी। उसे अन्य अँग्रेज युवतियों की सी उच्छृंखलता बिल्कुल पसन्द नहीं थी। उसे धूम्रपान तथा शराब से सख्त नफरत थी। हाँ, यदा-कदा क्लब अवश्य चली जाती थी। लेकिन वह भी एडवर्ड के साथ या भगवानचन्द्र के साथ। भगवानचन्द्र से वह भाई के समान ही स्नेह पाती थी और सदा बड़े भाई के समान ही देखती थी। एडवर्ड भी उन्हें वैसा ही मानता था।

आज प्रातःकाल ही डिनर पर दोनों में बहस होने लगी। बहस का विषय था—कांग्रेस का जन्म व विकास! बहस शुरू हुई नहीं कि कि अटक गई। एडवर्ड का कहना था कि कांग्रेस के जन्मदाता लार्ड ह्यूम थे और जेनी का कहना था कि कांग्रेस के जन्मदाता सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी थे। अंत में निश्चय यह हुआ कि आज शाम को डिनर पर भगवानचन्द्र को बुलाया जावे और तब इस विषय पर ज्ञानार्जन

किया जावे। यही कारण था जो एडवर्ड भगवानचन्द्र को बुला कर यहाँ लाया था।

जेनी डिनर की टेबिल पर भारतीय वेश-भूषा में बैठी हुई थी। उसी समय एडवर्ड ने भगवानचन्द्र के साथ वहाँ प्रवेश किया।

"लो डार्लिंग, बहुत मुश्किल से यह आये हैं।"

प्रत्युत्तर में भगवानचन्द्र केवल मुस्कुराकर रह गये। थोड़ी देर तक तो इधर-उधर की बात चलती रही, फिर जेनी अपने मतलब की बात पर उतर आयी।

"कांग्रेस के जन्मदाता कौन थे और इसका इतिहास क्या है ?"

"क्या करोगी जान कर ?" भगवानचन्द्र मुस्कुराये।

"ऐसे ही, इच्छा है।"

"लेकिन इसका इतिहास तो बहुत लम्बा है........"

"ओह डोन्ट वरी फार इट। आप सुना ही दीजिये।"

"अच्छे फंसे।" भगवानचन्द्र ने सोचा, लेकिन पुनः मुस्कुराते हुए बोले—"अच्छी बात है। मैं सुना तो दूंगा, लेकिन संक्षेप में।"

"चलिये यह भी मंजूर है।" जेनी ने मुस्कुराते हुये कहा।

"सबसे पहले कांग्रेस की स्थापना करने का विचार एक रिटायर्ड अंग्रेज आफिसर मि० ए० ओ० ह्यूम के हृदय में उत्पन्न हुआ था। इस विचार या योजना को लार्ड डफरिन ने परिवर्धित किया। उनकी इच्छा थी कि 'यह प्रस्तावित संस्था वे कार्य करे जो इंग्लैंड में साम्राज्ञी का विरोधी दल करता है। भारतीय राजनीतिज्ञ वर्ष में एक बार, एक स्थान पर एकत्र हों तथा सरकार का ध्यान आकर्षित करें कि प्रशासन कार्यों में क्या दोष है तथा उन्हें किस प्रकार सुधारा जा जा सकता है।' मि० ह्यूम ने लार्ड डफरिन की इच्छानुसार योजना में परिवर्तन किया। कांग्रेस को लोकप्रिय असंतोष के संबंध में एक सुरक्षा-साधन के रूप में कार्य करना था। इसे भारतीय अशांति प्रकट

करने के लिए एक शांतिपूर्ण तथा वैधानिक मार्ग का कार्य करना था, जिससे कि वह अशांति सशस्त्र क्रांति की ओर न प्रवाहित हो जाए। ह्यूम का उद्देश्य शायद ब्रिटिश साम्राज्य को विशृंखल होने से बचाना था। फिर भी कांग्रेस से यह आशा नहीं की जा सकती थी कि वह भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के संरक्षक के रूप में कार्य करे। ह्यूम ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विश्वस्त अनुचर नहीं था। उसके हृदय में स्वतंत्रता की भावना थी। उसने साफ शब्दों में कांग्रेस के संबंध में कहा कि वह भारतीय लोगों की सेवा करे। इस आशय से संबंधित ह्यूम ने अपनी एक विज्ञप्ति १ मार्च १८८१ में कलकत्ता विश्वविद्यालय के स्नातकों को भेजी। इसका प्रभाव बहुत गहरा हुआ और भारत के कोने-कोने से लोग कांग्रेस की इस प्रथम बैठक में आये।

'कांग्रेस की पहली बैठक' कलकत्ता के अग्रणी बैरिस्टर डा० यू० सी० बैनर्जी के नेतृत्व में, दिसम्बर १८८५ में हुई। बम्बई की इस बैठक में देश के विभिन्न भागों से आए हुये प्रतिनिधियों ने भाग लिया। यह बैठक एक राष्ट्रीय अधिवेशन का प्राथमिक रूप था।"

"लेकिन मि० भगवान" उन प्रतिनिधियों के नाम क्या थे ?" पुष्करई ने प्रश्न किया। उस समय टेबिल पर खाना लगना शुरू हो गया था।

"बता तो रहा हूँ भाई।" भगवानचन्द्र मुस्कुराये—"उनमें मुख्य थे—फिरोजशाह मेहता, दादाभाई नौरोजी, के० टी० तेलांग आदि। इंडियन नेशनल कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन १८८६ में कलकत्ता में ही हुआ। किंतु १८८७ के मद्रास अधिवेशन के पश्चात् जनता में आक्रामक आंदोलन आरम्भ किया गया। इसका प्रमुख कारण था कि सरकार की मनोवृत्ति में इस नवजात संस्था के प्रति कुछ परिवर्तन हो गया था। अप्रैल में ह्यूम ने इलाहाबाद में एक जोशीला भाषण दिया, जिसमें उसने भारत के लोगों से इस आंदोलन में सहयोग देने

की अपील की। ह्यूम के इस कार्य को ब्रिटिश नौकरशाही ने पसंद न न किया और यह सुझाव रक्खा कि उसे देश-निकाला देकर वापस इंग्लैंड भेज दिया जाये और इंडियन नेशनल कांग्रेस को कुचल दिया जाये। इस आशय से संबंधित एक २० पृष्ठों का पत्र ह्यूम के पास सर ए० कालिवन के द्वारा अक्तूबर १८८८ में पहुँचा। इस पत्र का उत्तर ह्यूम के द्वारा ६० पृष्ठों में दिया गया, जिसका फल यह हुआ कि दिसम्बर में जो अधिवेशन इलाहाबाद में होने वाला था उसमें कठिनाई पड़ी, किंतु बाद में उसका सभापतित्व कलकत्ता के एक युरोपीय सम्पन्न व्यक्ति मि० एण्ड्यूल ने किया।"

अब तक खाना लग चुका था। अतः तीनों व्यक्तियों ने खाना शुरू कर दिया। साथ में भगवानचन्द्र अपनी बात भी कहते रहे—

"कांग्रेस का अगला अधिवेशन १८८९ में बम्बई में हुआ, जिसका सभापतित्व सर विलियम वेडरबर्न ने किया। इसमें ब्रिटिश संसद-सदस्य चार्ल्स ब्रैडल भी सम्मिलित हुए। सर वेडरबर्न ने अपने अध्यक्षीय भाषण में घोषणा की, 'मैं जनता को छोड़कर किसके लिए कार्य करूँ? जनता में उत्पन्न होकर, जनता के द्वारा विश्वास किया जाकर मैं जनता के लिए ही मरूँगा।' यह घोषणा बहुत ही स्पष्ट और उच्च ध्वनि में की गई, जिसे पंडाल के बाहर भी लोगों ने सुना। दिसम्बर १८९३ में होने वाले लाहौर-अधिवेशन के अध्यक्ष दादाभाई नौरोजी हुए, जो ब्रिटिश हाउस आफ कामन्स के सदस्य थे, वह ब्रिटिश-संसद के आयरिश सदस्यों की ओर से संदेश लाये थे, 'कांग्रेस अधिवेशन में यह कहना न भूलना कि आयरलैंड के होम रूल के संसदीय सदस्य भारतीय जनता के कार्य के लिये आपके साथ हैं।' इसके बाद अगला अधिवेशन १८९५ में मद्रास में हुआ। इसकी अध्यक्षता संसद के एक आयरिश सदस्य अल्फ्रेड वेब ने की। बनारस अधिवेशन की अध्यक्षता गोखले और पूना अधिवेशन की अध्यक्षता सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने की। कलकत्ता

अधिवेशन में, १९०६ में दादा भाई की अध्यक्षता में भारत के लिये स्व-राज्य का झण्डा फहराया गया तथा एक प्रस्ताव भी पारित हुआ। १९०७ का अधिवेशन नागपुर में होने वाला था, जो किन्हीं कारणोंवश नागपुर में न होकर सूरत में हुआ। बाल गंगाधर तिलक उस समय कांग्रेस के विरोधी थे। वह नहीं चाहते थे कि नरम दल वालों के कहने पर कांग्रेस अपने १९०६ के प्रस्ताव से मुकर जाये। इसी से संबंधित एक जोशीला भाषण भी तिलक ने सूरत में दिया और दोनों दलों में समझौता कराने का यत्न किया जो बेकार साबित हुआ। उसी समय अर्थात् कुछ समय बाद उन्हें गोखले द्वारा बनाये गये संविधान की एक कापी मिल गई जिससे पता चलता था कि कांग्रेस के उद्देश्यों में स्पष्ट रूप से परिवर्तन किया जा रहा है। इस पर तिलक चुप न रह सके, लेकिन बाद में इस बात पर सहमत हो गये कि दोनों पक्षों के दृष्टि-कोणों का प्रतिनिधित्व करने वाली एक संयुक्त समिति इस सवाल को तय कर दे। फिर भी वह नरम दलीय समझौता करने को तैयार न थे। १९०७ के अधिवेशन में इसी बात ने तूल पकड़ लिया और अधिवेशन में गरम दल वालों के कारण अशान्ति उत्पन्न कर दी फलस्वरूप अधिवेशन स्थगित कर देना पड़ा।"

"इसका परिणाम क्या हुआ?" जेवो ने पानी का गिलास मुँह से से हटाते हुए उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"सूरत की गड़बड़ी के बाद यह स्पष्ट हो गया कि नरम दल वाले गरम दल वालों के सामने झुकने को तैयार न थे। वे जानते थे। कि उग्रता का पौधा अगर जम गया तो वह स्वयं बढ़ता जायगा। वे किसी भी तरह के समझौते के लिये तैयार न थे। उन्होंने तिलक को गालियां दीं, उनका उपहास उड़ाया, उन्हें देश द्रोही कहा। किन्तु इसके बाद भी तिलक उनसे मिलकर चलने को तैयार थे। यह बात उन्होंने 'केसरी' नामक पत्र में कही थी।"

"सूरत अधिवेशन के बाद भी तिलक को चैन नहीं मिला। उन्होंने अकेले ही चारों ओर आग लगा दी और बम्बई प्रान्त देश-भक्ति की आग से दहक उठा। देश का तूफानी दौरा करते हुये तिलक ने एक सभा में कहा—"हम स्वराज्य की मांग कर रहे हैं, और इस लिये शिवा जी उत्सव मनाना हमारे लिये अधिक उपयुक्त है। अगर शिवाजी दो सौ साल पहले स्वराज्य स्थापित कर सकते थे तो हम भी किसी दिन इसे प्राप्त कर सकते हैं। स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। नरम दल वालों की तुलना शिवाजी के पिता शाह जी से की जा सकती है जो सदा अपने बेटे को दखिन को ताकतवर मुसलमान शासक के खिलाफ हथियार न उठाने की सलाह दिया करते थे। तब शिवाजी ने, जिसकी तुलना गरमदल वालों से की जा सकती है, घटनाचक्र की दिशा ही बदल दी। इसलिये हमें गरमदल वालों का भरोसा करना चाहिये। इन सभाओं में उनका नारा था—"स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। मैं इसे लेकर रहूँगा। (Swaraj is my birthright; will have it.)" इसका परिणाम यह हुआ कि भारत सरकार ने उग्र धारा के समर्थकों के दमन के लिये कोई प्रयत्न न शेष रक्खा और तिलक १९०८ से १९१४ तक मांडले में कैद रहे।

"इस छः साल की अवधि में देश की राजनीति पर सुस्ती छाई रही। नरम दल वालों को खुशी थी कि उनका दुश्मन जेल में है, पर तिलक की रिहाई के बाद हालत बदलने लगी। तिलक कोई जल्दी न करके नरम दल वालों के साथ समझौता करने को तैयार थे। गोखले ने तिलक से बात की किन्तु फ़िरोजशाह मेहता के कारण बात बीच ही में टूट गई। १९१५ के अधिवेशन के कुछ सप्ताह पूर्व मेहता की मृत्यु हो गई और उसी वर्ष गोखले भी स्वर्ग सिधार गये। इस अचानक हमले से नरम दल वालों की कमर टूट गई। ....यह अधिवेशन बम्बई में हुआ, जहाँ कांग्रेस के संविधान में कुछ परिवर्तन किये जाने के कारण गरम दल वाले भी कांग्रेस में सम्मिलित हो गये। १९१६ में

तिलक ने श्रीमती ऐनी बेसेंट के साथ होम रूल आंदोलन शुरू किया, जो १६१७ में शिखर पर पहुँचा और सरकार की ओर से कठोर कार्यवाही की जाकर श्रीमती ऐनी बेसेंट को बन्दी बना लिया गया। उनकी मुक्ति के लिये बहुत आंदोलन हुआ। .... उसी समय राज्य सचिव ने एक महत्वपूर्ण घोषणा की जिसका परिणाम यह हुआ कि आंदोलन ठप्प पड़ गया और ऐनी बेसेंट कांग्रेस प्रधान निर्वाचित हुईं।"

खाना समाप्त हो गया था और एकबार वात का क्रम बीच ही में टूट गया। एडवर्ड ने जेब से सिगरेट निकाल कर एक भगवान चन्द्र को दी और दूसरी खुद सुलगाली। जेनी ने काफी का आदेश दिया और पुन: भगवान चन्द्र का मुँह ताकने लगी। एक गहरा कश खींचकर उन्होंने पुनः कहना शुरू किया --

"१६१८ में प्रथम महायुद्ध समाप्त हुआ। इस महायुद्ध में भारतीयों ने सरकार की हर तरह से सहायता की, लेकिन इतना सब होने के बावजूद भी भारत सरकार ने, चारों ओर होने वाले विरोधों की कोई परवाह न करते हुये, कुख्यात रौलेट-ऐक्ट पास कर दिया। इस ऐक्ट के पास होते ही सारे भारत में एक रोष की लहर व्याप्त हो गई और नरम दल वाले भी अन्य भारतीयों के साथ हो गये। इस ऐक्ट के अनुसार सरकार बिना किसी वारेण्ट के संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तार करके जेल में ठूँस सकती थी।"——

"तो इसके मतलब यह हुये कि शेष नेता भी पकड़ लिये गये और कांग्रेस नेता-विहीन हो गई?" जेनी का प्रश्न था।

"नहीं! उसी समय महात्मा गांधी, जो युद्ध के समय में सरकार के साथ थे, आगे आये और लोगों को इस ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह करने के लिये उत्साहित किया। एक बार फिर सारे देश में उत्साह की लहर दौड़ गई। हड़तालें सफल हुई, किन्तु दिल्ली में कुछ झगड़े हो जाने के कारण गांधी जी ने सत्याग्रह स्थगित कर दिया। .... सन् १९२०

में कांग्रेस ने महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन करने का फैसला किया। यह सचमुच एक क्रांतिकारी कदम था। कांग्रेस से लिबरलों के अलग हो जाने के बाद उस पर पूरी तरह से उग्र विचार वालों का कब्जा हो गया और कांग्रेस के लिये क्रांतिकारी विचार करना संभव हो गया। इस आन्दोलन का व्यापक प्रभाव पड़ा। हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों ने इसे माना। स्थान-स्थान पर विदेशी वस्तुओं की होली जलाई गई। छात्रों ने स्कूल छोड़ दिये और कांग्रेस में स्वयं-सेवक के रूप में भर्ती हो गये। बीस हजार चर्खे बनवाये गये। साथ ही महात्मा गांधी ने "कैसरे-हिन्द" का खिताब छोड़ दिया। जब प्रिंस आफ वेल्स १३ नवम्बर १९२१ को बम्बई में उतरा तो उस दिन सारे शहर में हड़ताल रही। दिसम्बर में जब वह कलकत्ता गया तो वहाँ भी यही हाल रहा। सरकार ने महात्मा गांधी से समझौते की कोशिश की पर समझौता न हो सका।" भगवान चन्द्र ने काफी का प्याला होंठों से लगा लिया और पुन: बोले—

"इस कार्य में असफल होकर सरकार ने आन्दोलन को कुचल देने का निश्चय करते हुये दमन-नीति अपनाई। इस आन्दोलन के कार्यकर्त्ताओं को पकड़ कर पीटा जाता और उनकी सभाओं को ताकत के बल पर जबरदस्ती भंग कर दिया जाता। गांधी जी के अलावा लगभग सभी कांग्रेसी नेता गिरफ्तार कर लिये गये, जिनकी संख्या लगभग पचीस हजार थी।"

"गांधी जी को क्यों नहीं अरेस्ट किया (पकड़ा) गया ?"

"क्योंकि सरकार को डर था कि इनके गिरफ्तार होते ही न मालूम क्या हो जायेगा। सरकार की इस नीति की प्रतिक्रिया यह हुई कि गांधीजी ने एक व्यक्तिगत और सामूहिक सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने का निश्चय किया। इस निश्चय से संबंधित एक पत्र १९१२ के फरवरी माह की पहली तारीख को गांधीजी ने भारत के गवंनर जनरल को

भेजा और सात दिन तक उत्तर का इन्तजार किया। इसी बीच चौरी-चौरा की घटना हो गई और भारतीय इतिहास की दिशा ही दूसरी तरफ मुड़ गई। गांधीजी पूर्णत: अहिंसा के पक्षपाती थे अत: उनसे यह सहन न हुआ और उन्होंने आंदोलन स्थगित कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि मौका पाकर गांधी जी पकड़ लिये गये और उन्हे ६ साल की कैद की सजा दे दी गई पर १६२८ में वह स्वास्थ्य के आधार पर रिहा कर दिये गये। १६२२ में आन्दोलन के यकायक रोक देने से हिन्दू-मुस्लिम तनाव बढ़ गया और साम्प्रदायिक दंगों का सिलसिला शुरू हो गया।

"१९२८ के फरवरी तथा मार्च में एक सर्वदलीय सम्मेलन हुआ जिसके द्वारा एक समिति मोतीलाल नेहरू के सभापतित्व में नियुक्त की गई। इसका कार्य भारत का संविधान बनाना था। दिसम्बर १९१८ में मसविदा तैयार करके सर्वदलीय राष्ट्रीय प्रतिनिधि सम्मेलन में प्रस्तुत कर दिया गया। इसके अनुसार भारत धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया जाना था।........यह रिपोर्ट 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से प्रसिद्ध हुई किन्तु मुसलमानों ने इस रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया तथा मि० जिन्ना ने मुसलमानों की कम से कम मांगों के रूप में अपनी १४ मांगें प्रस्तुत की। कलकत्ता अधिवेशन में स्वतंत्रता प्राप्ति की घोषणा के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव स्वीकार किया जाने वाला था किन्तु महात्मा गांधी ने बीच में पड़कर औपनिवेशिक स्वराज्य को भारत के रूप में घोषित किया। उन्होंने यह आश्वासन दिया कि यदि १९२९ के अन्त तक सरकार ने औपनिवेशिक स्वराज्य न दिया तो वह स्वयं इस आन्दोलन का नेतृत्व करेंगे। अक्तूबर १९२६ में गर्वनर-जनरल लार्ड इर्विन ने जो घोषणा की उससे कांग्रेसी सन्तुष्ट न हुये, फलस्वरूप २६ जनवरी १६३० का दिन स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाया गया और भारतीयों ने प्रतिज्ञा की।"

"वे प्रतिज्ञायें कौन-कौन सी थीं?" जेनी ने पूछा।

"यह तो नहीं याद, लेकिन १२ मार्च १९३० को--" भगवान चन्द्र ने पुन: सिगरेट सुलगायी—"महात्मा गांधी ने अपनी प्रसिद्ध डाण्डी यात्रा साबरमती के आश्रम से आरम्भ की। सरकार ने आन्दोलन को कुचलने के लिये प्रत्येक प्रकार के दमन का प्रयोग किया। सहस्त्रों कांग्रेसी जेल भेज दिये गये। १९३० में होने वाले लन्दन के प्रथम गोलमेज सम्मेलन का बहिष्कार कांग्रेस ने किया। मार्च १९३१ में गांधी-इर्विन समझौते पर हस्ताक्षर हुये। महात्मा गांधी द्वितीय गोलमेज-सम्मेलन में कांग्रेस के सर्वाधिकारी प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुये। किन्तु मि० जिन्ना की मनोवृत्ति के कारण कुछ न हो सका। महात्मा गांधी निराश होकर वापिस लौट आए। लेकिन जैसे ही वह भारत पहुंचे, लार्ड वेलिंगटन की आज्ञा से बन्दी बना लिये गये। अगस्त, १९३२ में इंग्लैंड के प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडानल्ड ने अपने प्रसिद्ध साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में निर्णय की घोषणा की। मार्च, १९३३ में श्वेत-पत्र के प्रस्ताव प्रकाशित किये गये। १९३४ में केन्द्रीय विधान-सभा के चुनाव में कांग्रेस को अच्छी सफलता प्राप्त हुई। १९३५ के अधिनियम के आधीन चुनाव की आज्ञा पाकर कांग्रेस चुनाव लड़ी और जीती भी। १९३७ मे कांग्रेस ने मन्त्रिमण्डल बनाये जो १९३९ तक कार्य करते रहे।······ द्वितीय विश्वमहायुद्ध की घोषणा के पश्चात् कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने त्याग पत्र दे दिये।"

"फिर, १९४० मे लार्ड लिनलिथगो ने, अगस्त में, वायसराय की कार्यकारिणी का विस्तार करने के लिये कांग्रेस से सहयोग का आह्वान किया, किन्तु कांग्रेस ने इसे अस्वीकार कर दिया। इसके बाद १९४१ में सर स्टेफर्ड क्रिप्स कुछ प्रस्तावों के साथ भारत आए। कांग्रेस इस दीर्घकालीन योजना को पसन्द नही करती थी, अतएव उसने ८ अगस्त को "भारत-छोड़ो" वाला प्रस्ताव पारित कर दिया। इसके बाद क्या हुआ या हो रहा है, उसे लोग देख ही रहे हैं।"

"ओह थैंक्यू सर !" जेनी ने कहा ।

"केवल थैंक्यू ?……यह ठीक नहीं है मिसेज एडवर्ड ! आपको एक प्याला काफी अपने हाथ से बना कर पिलाना होगा ।"

"इसमें क्या है, अभी लीजिये ।"

कहकर वह वहाँ से उठ गई और भगवान चन्द्र एडवर्ड से बोले—

"मि० एडवर्ड ! यहाँ कानपुर में तो जैसे तबियत ही ऊब गई है ।"

"तो कहीं घूम आइये ।"

"यही तो मैं भी सोच रहा हूं, लेकिन साथ में कोई ……"

"ओह, तो कम्पनी का सवाल है ?" एडवर्ड हँस पड़ा, जिसे सुन कर जेनी भी आ गई ।

"क्या बात है ?"

"मि० भगवान कम्पनी चाहते हैं ।"

"क्यों ?"

"इनकी तबियत यहाँ से ऊब गई है ।"

"यस जेनी, तुम लोग भी चलो । कम्पनी अच्छी रहेगी ।"

"ओह, फाइन ! बट व्हेयर ?"

"देहली ।"

"ठीक है, हम लोग डिस्कस करके कल मार्निंग में फोन कर देंगे । क्यों जॉन ?"

"हाँ, यह ठीक रहेगा ।"

भगवान चन्द्र कॉफी पीकर अपने घर लौट गये और एडवर्ड तथा जेनी स्लीपिंग- रूम की ओर चल दिये ।

"डार्लिंग, तुम्हारा क्या ख्याल है ?"

"किस विषय में ?" एडवर्ड ने टाई की गाँठ खोलते हुये जेनी से पूछा ।

"देहली के विषय में !"

"मैं तो न जा सकूँगा, क्योंकि ...."

"ओह नो डियर ! मैंने भी इधर चार-पाँच साल से देहली नहीं देखी है.... प्लीज !" जेनी की बाहें एडवर्ड के इर्द-गिर्द लिपट गईं और एडवर्ड सोचने लगा कि औरत भी क्या चीज है जो हर बात को पुरुष के द्वारा स्वीकार करा के ही मानती है।

अंत में एडवर्ड को मानना ही पड़ा और रात के अंधेरे में वह हसीन बंगला भी डूब गया।

१०

पानी को बरसते हुये आज चौथा दिन था। ४ जुलाई, आज की तारीख थी। प्रातः के दस बजते-बजते पानी पूर्णतः रुक गया और आसमा में सूर्य अपनी मासूमियत भरी तेजी के साथ चमकने लगा।

एकबार फिर जाप मंजिल की ओर रवाना हुई। बरसाती नाले अपने यौवन को पाकर फूले नहीं समा रहे थे। वे इठलाते हुये मदभरी चाल से आगे बढ़ते चले जा रहे थे। उनका जल स्वच्छ और गंगा की तरह पवित्र था, आम नालों की तरह गन्दा नहीं। उसके रास्ते में आये हुये पत्थर रास्ते से इस प्रकार बह कर हट जाते थे जिस प्रकार पानी के तेज बहाव में पड़ी हुई कागज की नाव। पर्वतीय वनस्पति मुस्कुरा-मुस्कुराकर विजय-गान गा रही थी। दो डालियों के फूल मन्द हवाओं के झोंके से कम्पित होकर परस्पर मिल जाने को और एक हो जाने को व्याकुल हो रहे थे। वे झुकते और झुकते; लेकिन आह! फिर पीछे हट जाते, न जाने किस ज्ञात प्रेरणा के वशीभूत होकर! इस मधुर मिलन को देखकर पत्ते भी लाज से झुक गये, किन्तु अचानक मिलन का खंडन होते देख उनके नेत्रों से अश्रु की बूंदें, पानी की बूंदों के रूप में, धरती पर गिर गईं....

मैं प्रकृति का रसपान कर रहा था कि अचानक मेरी दृष्टि नीना की दृष्टि से मिली और नीना की पलकें ठीक उसी तरह से मौन हो झुक गईं जिस प्रकार से वे पत्ते एक बार झुक गये थे। और मैं विवश हो गया नारी की प्रकृति के विषय में सोचने के लिये।

न जाने क्या और किस तरह के विचार मस्तिष्क में आते जा रहे थे। सोचते-सोचते में विक्षिप्ता-सा हो उठा और पुनः प्रकृति की ओर आकृष्ट हो गया। कुछ ही पलों के पश्चात मेरे कानों में बीना की आवाज पड़ी, जो गोपाल से कह रही थी —

"गोपाल भय्या, वह देखो !"

"क्या ?" गोपाल के साथ-साथ अन्य भी उसके द्वारा सांकेतिक स्थान की ओर देखने लगे।

"ओह माई गाड, बुरे फँसे ! इसके विषय में तो कुछ सोचा भी नहीं था... गुरु, तुम और जितू, जीप को संभालो नहीं तो..." गोपाल वास्तव में कुछ चकरा सा गया।

"क्यों, क्या हुआ ?" गुरु जो इस समय स्टेयरिंग पर था।

"हमारा पीछा बड़ी तेजी के साथ...."

"ठीक है।"

कहकर बुदबुदाता हुआ जितू ड्राइविंग-सीठ पर बैठ गया और एक बार फिर जिन्दगी-मौत का फासला बढ़ता प्रतीत हुआ।

कुछ दूर चलने के बाद, आगे एक पहाड़ी नाला पड़ता था, जिसके ऊपर एक अस्थाई पुल बना दिया गया था और दोनों किनारों पर लकड़ी की रेलिंग लगा दी गई थी। इस नाले से कुछ ही दूर पहले जितू ने जीप रोक दी।

"क्या हुआ ?" गोपाल ने संयत वाणी में प्रश्न किया।

"कुछ नहीं, आप लोग जीप से उतर जाइये और इन जंगलों के बीच से होते हुये पूरब की तरफ बढ़िये। मैं अभी आप से आगे मिलूँगा आप लोग उतर कर आगे बढ़िये।"

"लेकिन ......" बीना ने कुछ पूछना चाहा।

"बीना, यह समय सवालों का नहीं है जैसा मैं कह रहा हूँ वैसा ही आप लोग कीजिये। ''उफ बीना ! तुम समझती क्यों नहीं ? ''' देखो हम लोग देश की खातिर अपना वतन छोड़ रहे हैं और अगर यहाँ पर ऐसा न किया गया तो सबके सब पकड़े जायेंगे और हमारा स्वप्न अधूरा रह जायेगा। ''मेरी फिकर मत करो गोपाल, मैं अभी इतना वेशर्म नहीं हूँ कि इतनी जल्दी मर जाऊँगा और फिर अगर मर भी गया तो 'शहीद' हो जाऊँगा। इन्हीं पहाड़ियों में मुझे कहीं दफना देना।" जितेन्द्र हँस पड़ा लेकिन रुका नहीं, वह बोलता ही जा रहा था "अच्छा अब बहुत हो गया, जल्दी करो समय किसी का इन्तजार नहीं देखता। '''तुम लोगों को हिन्दुस्तान की आजादी की कसम ''!"

"जित्तू !"

"हाँ गोपाल, मैं मजबूर हूँ, मेरे दोस्त !"

"अच्छा मेरे भाई, विदा।"

कहकर गोपाल के साथ हम लोग एक-एक करके समीप के घने जंगल में घुसकर अदृश्य हो गये और जीप पर केवल जित्तू रह गया। दो-एक क्षणों तक तो वह उस तरफ निहारता रहा और फिर उसने सड़क पर अपना एक कान लगाकर कुछ सुनने की चेष्टा की, तुरन्त वह उछला और जीप एक बार फिर स्टार्ट हो गई और अपनी पूरी तेजी के साथ दौड़ती हुई तथा पुल के बायीं रेलिंग को तोड़ती हुई नाले में धँस गई।

"धड़ाम् ! धड़ाम् !!" की आवाजों से संपूर्ण पर्वतीय प्रदेश कम्पित हो उठा। उसी समय पुल पर एक जीप आकर रुकी जिसमें से चार फौजी अफसर उतरे। उनमें से दो के हाथों में रेंजरगन तथा दो के हाथों में स्टेनगन थी। वे चारों पुल के बायें हिस्से से झुककर

दहकती हुई जीप को देखने लगे। एक, जो कदाचित् सेकण्ड लेफ्टीनेंट था, अपने साथी से अंग्रेजी में बोला—

"मेजर, वह लोग फिर बच गये।"

"कैसे ?"

"देखते नहीं नाले में केवल जीप के ही अंगारे हैं...."

अभी वे बात ही कर रहे थे कि अचानक उनका एक साथी, जो स्टेनगन लिये था, बोला—

"एक्सक्यूज मी सर, वह रहा !"

"कहाँ ?"

"वह देखिये !"

अन्य तीनों की भी निगाहें उस ओर घूम गईं, जहाँ एक बड़ी चट्टान रखी थी तथा एक व्यक्ति उसी की ओर रेंगता हुआ बढ़ रहा था। मेजर चिल्लाया—

"फायर !"

"धाँय ! धाँय !! धाँय !!! धाँय।"

मेजर के चिल्लाते ही पाँच-छः फायर पीछे से हुये और वे चारों दर्द भरी चीखों के साथ दहकती हुई जीप में गिरे और ....

जीप के नाले में गिरने के साथ ही जितेन्द्र ने छलांग लगा दी, फलस्वरूप वह जीप से दो गज आगे गिरा। लेकिन शायद उसकी किस्मत अच्छी नहीं थी, क्योंकि जिस स्थान पर वह गिरा था, वहाँ पानी बहुत अधिक उथला था और जगह-जगह नुकीले पत्थर भी पड़े थे जो उसके सिर तथा बदन के अन्य हिस्सों में बुरी तरह से घुस गये और वह यकायक अचेत हो गया। बहुत देर के लिये नहीं, क्योंकि ठंडे

पानी का स्पर्श उसे बराबर मिल रहा था, अतः वह शीघ्र ही चैतन्य भी हो उठा।

चेतना के वापस लौटते ही उसने अपने बचाव की सोची और पानी से निकलकर छिपने के लिये बढ़ना चाहा, लेकिन उसके पैरों ने जवाब दे दिया और वह पुनः गिर पड़ा। लेकिन गिरने के साथ ही उसके कानों में बातों की आवाज पड़ी और सरकते हुए उसने आगे बढ़ने का निश्चय किया। समीप ही एक बड़ी चट्टान थी जिसके पीछे वह छिपना चाहता था। इसी प्रयास में उसे कब बेहोशी आ गई और कैसे वह उस चट्टान के पीछे पहुंचा, इसका उसे बिल्कुल ही ज्ञान न था—वह बेहोश हो चुका था। उसे होश तो तब आया जब किसी ने उसके मुंह पर पानी के छींटे मारे।

"आह ! मैं .... मैं .... कहां हूं ?" जितेन्द्र के मुंह से कराह निकली।

"घबड़ाओ नहीं, तुम ठीक हो।

"कौन गोपाल ?" वह चौंका।

"हां जितेन्द्र, तुम्हें यह चोटें कैसे आईं ?"

"यह चोटें हैं...?" वह फीकी हंसी हंसा—"गोपाल, यह चोटें नहीं आजादी के लिए पहला कदम है। आजादी मुफ्त में ही नहीं हासिल होती... इसके लिए मेरी जैसी हजारों जानें भी कम हैं, मेरे दोस्त !"

"अच्छा जित्तू, आओ उठो।"

कहकर गोपाल ने जितेन्द्र को बाहों का सहारा देकर उठा लिया और जीप की ओर सावधानी से बढ़ा।

जितेन्द्र के चोटें काफी आई थीं। पत्थरों की नोकों के चुभने के कारण उसके सर, पेट और छाती से भयानक रक्त-स्राव हो रहा

था। इस कारण वह जीप तक पहुंचते-पहुंचते बुरी तरह से हांफने तथा पुनः बेहोश होने लगा। गोपाल ने सहारा देकर उसे जीप पर लिटा दिया और जीप की तलाशी लेने पर उसे जीप में एक 'फर्स्ट-एड-बाक्स' मिल गया, जिसकी सहायता से उसने जितेन्द्र के घावों की ड्रेसिंग की और फिर जी लेकर आगे बढ़ा।

लगभग एक फर्लांग आगे जाकर गोपाल ने जीप रोकी, जहां अन्य साथी उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

"आओ जल्दी बैठो, हमें जितनी जल्दी हो सके इम्फाल की सीमा को पार कर लेना है। और हां, गुरु, तुम जीप सम्हालो।"

गुरु ने जीप को सम्हाल लिया और गोपाल हम लोगों के साथ पीछे आ गया। जितेन्द्र के घावों से रक्त का स्राव अब भी निरन्तर हो रहा था। वह बेहोश था। उसका सारा शरीर पीला पड़ गया था, जिसका कारण था—खून की कमी! परन्तु फिर भी उसके चेहरे पर तेज था।

"जित्तू को क्या हुआ?" सबने एक साथ प्रश्न किया।

"नाले में कूदनेसे पत्थर घुस गए हैं।" गोपाल की आवाज रुंधी हुई थी। वह अब भी जितेन्द्र के पास घुटनों के बल बैठा हुआ था। उसके हाथ में जित्तू की नाड़ी थी, जो बराबर कमजोर होती जा रही थी।

"खून तो अब भी जारी है?" सभी जित्तू के आस-पास बैठ गये।

"हां, बहुत गहरी चोटें आई हैं।"

गोपाल अभी कह ही रहा था कि जित्तू ने आंखें खोलीं—"अह! पानी..." गोपाल को तुरन्त बीना ने पानी की बोतल पकड़ा दी।

सभी की आंखों में आंसू तिर रहे थे, किन्तु सभी मौन थे—सिवाय जीप के। वह अपनी पूरी रफ्तार के साथ भागी जा रही थी। जित्तू को आशा ने सहारा दिया और पानी पिलाया।

"गोपाल, मे .... मेरे .... क .... करी....करीब आओ।....मैं.... मैं...."

"कैसी बात करते हो जितेन्द्र ? तुम ठीक हो जाओगे।"

"नहीं गोपाल।" उसकी टूटती आवाज अब अच्छी तरह से संभल गई थी अतः वह एक अद्भुत हंसी हंस कर बोला-- 'अब दिलाशा देने की कोई जरूरत नहीं है, मेरे भाई ! मैं....मुझे सब मालुम है। मेरा दीपक अब बुझने ही वाला है ।.... छिः ! तुम लोग तो पागल हो। रोते क्यों हो, खुशी मनाओ कि तुम्हारा एक साथी शहीद हो रहा है।'

"जितेन्द्र ...."

"हां गोपाल, मुझे अफसोस है कि तुम्हारा साथ नहीं दे पा रहा हूं, लेकिन इसके साथ खुशी भी है कि मैं अपना जीवन देश के लिए अर्पण कर रहा हूं। गोपाल....कमल....गुरू..रवीन्द्र और....और आशा, नीना बीना बहन..मु...मुझे माफ करना। मैं मैं... मैं ..वन्दे..मा...त...र..म्...."

उसका सिर आशा की गोद में ही ढुलक गया।

वह शहीद हो गया।

सब के नेत्रों से आंसू ढुलक पड़े। जीप रोक दी गई और गोपाल ने उसका मुंह अपने रूमाल से ढांप दिया।

सबके मुंह से केवल एक 'आह' ही निकल सकी।

लगभग एक घण्टे बाद वहीं पास ही में एक बड़े से पेड़ के नीचे एक कब्र खोदी गई और उसमें जितेन्द्र को लिटा दिया गया।

"माफ करना मेरे दोस्त, मैं तेरे लिये कफन तक का इन्तजाम न कर सका !"

इतना कहते-कहते गोपाल बुरी तरह से सिसक पड़ा। किन्तु दूसरे ही क्षण उसने अपने आपको संभाल लिया और अपने हाथों से कब्र में मिट्टी डालने लगा।

पन्द्रह मिनट पश्चात् हम लोगों ने अपने दोस्त के शरीर को इम्फाल की पवित्र मिट्टी में दबा दिया। हम लोगों ने उस मिट्टी को माथे से लगाया तथा आशा-बीना और नीना ने उसी मिट्टी से अपनी-अपनी मांग भरी और फिर.....अश्रु-पूर्ण नेत्रों से उसे निहारते हुये हम लोग वापस जीप पर आ गये।

लेकिन कुछ खोकर और कुछ पाकर !

कानों में अब भी गूंज रहा था—

"वन्देमातरम् !!!"

जितेन्द्र की मौत से हम लोगों का साहस, यकायक, विच्छिन्न-सा हो गया था, लेकिन उस समय बीना तथा अन्य लड़कियों ने हम लोगों को ढाढ़स बँधाया।

जीप फर्राटे भरती हुई चली जा रही थी। सामने, हमारे, एक विस्तृत पहाड़ी घाटी थी, जिसके ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर हमारी जीप भागी जा रही थी। सबसे ज्यादा अगर कोई आश्चर्य की बात थी तो वह यह कि उस घाटी में वनस्पति का पूर्णत: अभाव था। चट्टान ही चट्टान थीं। जितनी दूर तक नजर जाती थी, सिवाय चारों ओर चट्टानों के और कुछ भी नजर न आता था। लेकिन इन सब बातों का हमारे ऊपर कैसा भी प्रभाव नहीं पड़ रहा था। सब की आंखों में आंसू थे और सभी मौन थे। बीच-बीच में गोपाल की सिसकियां उस मौनता को भंग कर देती थीं। यह चीज - गोपाल

का यह कार्य-कलाप—जब असह्य हो गयी तो कमल ने मेरे कान में कहा— "रवीन्द्र, गोपाल को रोको।"

'कैसे रोकूँ, कमल ?'

'जैसे भी हो, क्योंकि यह चीज खतरनाक साबित हो सकती है।'

'वह कैसे ?'

'गोपाल का हृदय इस चोट को सहन नहीं कर सका है। जित्तू से गोपाल को इतना प्रेम था, जितना शायद दो सगे भाइयों में भी नहीं होता है। यद्यपि गोपाल ने बड़े-बड़े आघातों को सहन किया है, लेकिन··· लेकिन इस समय अगर इसे न संभाला गया तो हमारे सामने एक बहुत बड़ी दिक्कत पैदा हो जायेगी और कोई आश्चर्य नहीं कि गोपाल का इरादा ही·······'

'यह नहीं हो सकता !'

'यह हो सकता है।'

'उफ, कमल ! मैं क्या करूँ ? मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है।' कहते हुये मैंने अपना सिर दोनों हथेलियों के बीच में टिका दिया। थोड़ी देर बाद मैंने जब अपना सिर उठाया तो मेरी आँखों में दृढ़ता की चमक थी। मैंने गोपाल के पास बैठी हुई बीना को आँख के इशारे से अपना मन्तव्य समझा दिया। जब उसने मेरी बात समझ ली तब मैंने चैन की साँस ली।

'भाई साहब, अपने को सँभालिये।' बीना ने अपना हाथ गोपाल के कन्धे पर रखते हुये कहा।

'·······' पर गोपाल की सिसकियाँ कम न हुईं।

'भय्या, तुम्हारी बहन तुमसे भीख माँग रही है कि अपने आपको संभाल लो।'

'मैं कैसे संभालूं बहन ? तुमतो जानती हो कि जितेन्द्र मेरा कितना प्रिय मित्र था।'

'वह तो ठीक है भय्या, लेकिन इससे तो हम लोगों का साहस ही टूटता है। कम से कम हम लोगों के लिये ही अपने को संभाल लो।'

'मैं क्या करूं, मेरी बहन ?'

'भय्या, मैं तुमसे भीख मांगती हूं। तुमने मुझसे एक बार कुछ मांगने को कहा था, न ? आज ·· आज तुमसे तुम्हारी बहन यही भीख मांगती है।" बीना ने घुटनों के बल जीप के फर्श पर, बैठ कर अपने दुपट्टे का आंचल फैला दिया।

'बीना।'

'भय्या, मैं ··' उसकी आंखों में आंसू थे।

'नहीं बीना, मुझे विवश मत करो।'

'तो भय्या, क्या मैं निराश हो जाऊँ ? एक बहन क्या अपने भाई के पास से बिना कुछ पाये खाली हाथ ही जायेगी।····ठीक ही तो है भय्या, मैं कौन तुम्हारी सगी ··'

बीना ·· मेरी बहन !' गोपाल ने उसे अपने सीने से लगा लिया और उसका माथा चूमते हुये बोला 'पगली, भाई के पास से कभी कोई बहन खाली हाथ गई भी है, जो तू ही जायगी ? तू ही तो इस अभागे भाई की एक बहन है फिर तूने अपने को अलग कैसे महसूस किया। तू तो मेरे लिये मेरे मां-बाप से भी बढ़कर है मैंने जब देश के लिये सबको छोड़ दिया था, तब तूने ही तो सहारा दिया था।··· रो मत, मेरी बहन मैं मैं पागल हो जाऊँगा।'

'भय्या !' बीना ने सिसकियों के मध्य कहा।

'हाँ, मेरी बहन, मैं तेरे आंसू नहीं देख सकता। तेरा एक-एक

आँसू मेरे कलेजे में बर्छी की तरह पे लगता है, बहन। तेरे लिये मैं अपनी जिन्दगी तक ’

‘भय्या !’ वह पुनः गोपाल के वक्ष से लग गई।

‘हाँ, मेरी बहन !’ गोपाल ने उसके सर पर हाथ फेरते हुये कहा—

‘‘अच्छा, अब मुसकुरा दे।’

‘भय्या !’

‘मुस्कुराती है या मनाऊँ गुदगुदी ?’

‘भय्या !’’

वह मुस्कुरा दी और गोपाल ने उसके मस्तक पर अपने स्नेह का स्नेह-चिन्ह अंकित कर दिया। बोझिल वातावरण हास्य में बदल गया।

थोड़ी देर बाद अचानक गुरू ने पुकारते हुये कहा—

‘गोपाल भय्या, पेट्रोल खत्म हो रहा है।’’

‘क्यों, कितना बचा होगा ?’

‘मुश्किल से दो गैलन।’

‘दो गैलन ? इतने में क्या होगा—जीप रोको।’

जीप के रुकते ही गोपाल नीचे उतरा और साथ ही हम लोग भी उतर आये। गोपाल ने नीचे उतर कर उन पीपों की ओर निहारा जो कि जीप के नीचे स्टैंड में रक्खे हुये थे। लेकिन उन दोनों पीपों में एक-एक छेद था जो गोपाल की गोली से अचानक हो गया था और उन छेदों के जरिये पीपों का सारा पेट्रोल बह गया था।

‘अब क्या होगा ?’ कमल ने निराश वाणी में पूछा।

‘होगा क्या ? वही होगा जो मंजूरे खुदा होगा !’ बीना चहकी।

‘यह मजाक का वक्त नहीं है, बीना।’ आशा ने समझाया।

‘फिर काहे का वक्त है ?’

'मैं बताऊँ।' नीना ने आँखें तरेरते हुये बीना के कान में कहा – 'यह वक्त है कमल के साथ...'

'धत् !' बीना शरमा गई।

'देखिये !' गुरू ने सिगरेट सुलगाते हुये कहा—'रात का साया बढ़ता आ रहा है और जगह बिल्कुल अनजान है। इसलिये सबसे पहले हम लोगों को रात बिताने के लिये स्थान खोजना है। आगे क्या करना होगा, इसके विषय में बाद में सोचेंगे।'

'हां, यही ठीक है।'

सबने एक स्वर में कहा और फिर एक छोटी सी गुफा तलाश की गई और उसमे डेरा डाल दिया गया – रात बिताने के लिये।

प्रात:काल की मन्द सुगन्धि पर्वतराज हिमालय की उच्च शृंखलाओं से छूता हुआ समीर बहने लगा था तथा पूर्वाकाश में सिन्दूरी रंग प्रकृति ने बिखेर दिया था। प्रकृति के उस सुन्दर आकर्षक रंग के आगे काले रंग की पहाड़ियां इस प्रकार खड़ी थीं मानों किसी चित्रकार ने प्रात:काल का एक सजीव चित्र पर्दे पर उतार दिया हो। सभी एक से एक मनोरम दृश्य हम देख रहे थे, जो हमारी आशाओं के प्रतीक थे। तभी सूर्य ने ऊषा के साथ आंख-मिचौली खेलते हुये पहाड़ी के पीछे से मुँह निकाला और ऊषा हँसती खिलखिलाती हुई भाग निकली तथा सूर्य का मुख क्रोध व झेंप से पीतवर्णीय हो गया।

हम लोग मुँह-हाथ धोकर गुफा से बाहर आये। बीना वगैरह नाश्ते आदि का प्रबन्ध कर रही थीं।

'क्यों, गुरू कुछ सोचा ?' गोपाल ने पूछा।

'हां।'

'क्या, जल्दी बताओ।' हम लोगों की उत्सुकता आवश्यकता से अधिक बढ़ गई थी। गुरु ने हम लोगों को सिगरेट देकर स्वयं सुलगाते हुये कहना शुरू किया—

'देखो भई, मेरी समझ में तो दो रास्ते आते हैं। जहां तक नक्शे को देखकर मेरे सोचने का सवाल है, तो मुझे एक ही रास्ता नजर आता है।'

'वह क्या ?'

'कौन सा ?' कमल भी बोल पड़ा।

'कि यहां आस-पास कोई न कोई पेट्रोल पम्प अवश्य होना चाहिये— जैसा कि नक्शे में दिखाया गया है।'

'ठीक है।' मैंने स्वीकार किया।

'अगर यहां कोई पम्प है तो उसके लिये यहां पाइप भी पड़े होने चाहिये। बस, अब अगर हमें उनमें से किसी एक पाइप का भी निशान मिल जाये तो हमारा काम पूरा हो जायेगा और तब हम लोग आसानी से अपने लक्ष्य को पा सकते हैं। इसके अलावा दूसरा रास्ता यह है कि रवीन्द्र आजाद-हिन्द फौज में रह चुका है, अतः वहां के कोड-वाड्‌स के द्वारा, ट्रांसमीटर से, वह बात करके सहायता मांग ले।'

'नहीं, पहला ही ठीक रहेगा।'

गोपाल की इस बात का सभी ने समर्थन किया और हम लोग नाश्ते के लिये पुनः अन्दर चले गये।

× × ×

थोड़ी देर बाद जब हम लोग बाहर आये तो उस समय सूर्य अंत-

रिक्ष से बहुत ऊपर उठ चुका था। मौसम अत्यन्त ही सुखद था। इसका प्रमुख कारण यह था कि पिछले चार-पाँच दिनों से सूर्य की धूप अच्छी तरह से निखर नहीं पाई थी। फिर, आज आसमान में बादल का एक भी टुकड़ा मौजूद नहीं था। पहाड़ी धूप का एक अद्‌भुत आनन्द होता है, यह मैंने उसी दिन अनुभव किया। बाहर आते समय भी हम लोगों में विवाद चल रहा था। गोपाल कह रहा था—"वह सब तो ठीक है, गुरू। लेकिन एक बात है।'

'क्या ?' गुरू ने सामान को जीप पर लादते हुये पूछा।

'इस जीप का क्या होगा ?'

'होगा क्या। यह तो हमारे साथ ही रहेगी।'

'वह कैसे ? सामने हमारे बिल्कुल खड़ी हुई एक पहाड़ी है और इसे पार करना, कम से कम, हम लोगों के लिये एक तरह से जरूरी ही है। क्यों, ठीक ही कह रहा हूँ न ?'

'हूँ।' गुरू ने सिगरेट सुलगा कर एक गहरा कश खींचा।

'तो अब समस्या यह है कि जीप इस पर कैसे चढ़ सकेगी ? यह तो पूर्णतः असम्भव है।'

'असम्भव ?' गुरू हँसा और आशा से बोला—'भाभीजी, इधर सुनिये। आप ही अब गोपाल को समझाइये।'

'क्या ?'

'यही कि हम अकेले नहीं बल्कि सात हैं और एक और एक मिल कर ग्यारह होते हैं।'

'गुरू, यह मजाक का समय नहीं है।'

'मैं मजाक कभी नहीं करता, गोपाल; यह तो तुम बहुत अच्छी तरह से जानते हो।'

'फिर मैं तुम्हारी बात का मतलब नहीं समझा।'

'यह बताओ कि जिस काम को करने के लिये हम लोगों ने बीड़ा उठाया है, अर्थात् भारत की स्वतंत्रता का, तो क्या यह एक असंभव कार्य नहीं था ? जिसके लिये महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी और महारानी लक्ष्मीबाई ऐसे व्यक्तियों ने इसे स्वतंत्र कराने का बीड़ा उठाया था, लेकिन वे सब असफल रहे। मगर अब यह स्वतंत्र होकर ही रहेगा, क्योंकि अब सारे देश के समस्त निवासी एक होकर इस स्वतन्त्रता-संग्राम के रथ को खींच रहे हैं।''''नहीं समझे ! धत्त तेरे की, अरे तुमने तो लीडर-शिप को नाक ही कटवा दी। अरे भाई''''

'तुम्हारी बातों को तो केवल रवीन्द्र या कोई राजनीतिज्ञ ही समझ सकता है।'

'क्यों ? इससे साफ शब्दों में मैं केवल इतना ही तुमसे पूछना चाहता हूँ कि क्या तुमने नेपोलियन का नाम नहीं सुना ?'

'सुना है।'

'तो शायद यह भी सुना होगा कि उसने कहा था, असम्भव नाम का इस दुनिया में कोई कार्य नहीं है और यह शब्द मूर्खों के शब्द-कोष में ही पाया जाता है।'

'तो इसका मेरी बात से क्या सम्बन्ध ?'

'सम्बन्ध यह है कि हम लोग अपनी-अपनी कमर से रस्सी बाँधकर आगे से जीप को खीचेंगे और पीछे से यह लड़कियाँ जीप को आगे धकेलेंगी।'

'यह लोग ?'

'देखो गोपाल, मैं एक बात बिलकुल साफ कह दूँ और वह यह कि इस स्थान पर अगर हम लोगों ने औरत-मर्द का भेद रक्खा तो हम लोग कभी भी अपने कार्य में सफल नहीं हो सकते।'

'लेकिन''''

'तुम यही कहना चाहते हो न कि स्त्रियां नाजुक होती हैं और वे मेहनत नहीं कर सकती हैं, तो मेरे दोस्त तुम धोखे में हो। स्त्रियों को इतना कमजोर न समझो। वे उस काम को कर सकती हैं जिसे हमारे ऐसे सैकड़ों मनुष्य भी नहीं कर सकते। इस बात में कोई कान्ट्रोवर्सी नहीं हैं! इसके सैकड़ों उदाहरण दुनिया के इतिहास में भरे पड़े हैं। इसलिए इनको अपने से किसी भी हालत में कम न समझो।

'खैर, भाई, जैसा ठीक समझो वैसा करो।'

'अब आये रास्ते पर।'

गुरु ने मुस्कुरा कर कहा और हम लोगों को वह योजना समझाई, जिसके मुताबिक हमें अपना काम शुरू करना था।

\+ \+ \+

हम लोग पुनः जीप पर बैठ गये और पहाड़ी के तल पर जीप दौड़ने लगी। इसका प्रमुख कारण यह था कि गुरु एक ऐसा स्थान तलाश करना चाहता था जहाँ से इस पहाड़ी की चढ़ाई कुछ कम हो जाये और हम लोगों का कार्य कुछ आसान हो जाये।

लगभग एक घंटे तक दौड़-धूप करने के बाद हम लोगों ने एक ऐसा रास्ता खोज लिया, जिससे हम लोग अगर ज्यादा नहीं तो कुछ तो आसानी से जा ही सकते थे। इस स्थान पर हम लोग जीप से उतर कर अपने-अपने कार्यों में जुट गये।

गुरू ने एक झोले से चार मजबूत रस्सियां निकालीं और चारों के एक-एक सिरे जीप के अगले मेडगार्ड से बांध दिये। इसके बाद हम लोगों ने दूसरे सिरों को अपनी-अपनी कमर से बांध लिया और जीप को खींचना शुरू किया।

आगे से हम लोग खींच रहे थे और पीछे से आशा, नीना और बीना जीप को ढकेल रही थी। उन्होंने शिकारियों के से चुस्त वस्त्र

पहन रक्खे थे, जो उन्हें इस कार्य में बहुत ही ज्यादा सहायता प्रदान कर रहे थे और यही कारण था कि वे लोग भी बिना किसी प्रकार की अड़चन अनुभव किये बगैर अपने इस कार्य को सरलतापूर्वक निभाये जा रही थीं।

यद्यपि, यों तो एक सीधी पहाड़ी पर अकेले चढ़ना ही एक कठिन कार्य है और फिर अगर साथ में मिलेट्री जीप हो तो उसे ढकेलते हुये उस पर चढ़ना उतना ही कठिन होता है। जितना लोहे के चनों को दाँतों से चबाना। फिर भी मैं इस बात का गर्व करता हूँ कि हम लोगों में अदम्य साहस और उत्साह की लहर हिलोरें मार रही थी और यह उसी का परिणाम था कि हम लोग आसानी से आगे बढ़ते जा रहे थे।

पहाड़ी के ऊपरी सिरे तक हम लोगों को पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई और फिर हम लोगों ने एक समतल स्थान देख कर वहीं पर अपना डेरा जमा लिया।

पत्थर का बिछौना था और पत्थर का तकिया। और कोई समय होता तो जमीन पर सोना जरूर अखरता, किन्तु दिन भर की मेहनत के बाद यही पत्थर हम लोगों के लिए फूलों की सेज बन गये थे।

ऊपर आकाश में चांद और तारे चमक रहे थे और नीचे जमीन पर उन्हीं की छांव में हम लोग विश्राम कर रहे थे। अगले दिन की एक नवीन आशा हमारे दिलों में नये प्राण फूंक रही थी....

११

रात्रि का काला आंचल सम्पूर्ण विश्व पर छा चुका था। और उसकी चुनरी में जड़े हुये सितारे इस प्रकार चमक रहे थे जैसे हरी घास के मैदान पर पड़ी हुई ओस की बूंदें प्रातःकालीन सूर्य की स्वर्णिम किरणों का स्पर्श पाकर चमक उठती हैं। उस काले आंचल के मध्य रजनीश का गोरा मुखड़ा विश्व पर अपनी एक निराली ही छटा प्रदर्शित कर रहा था।

सम्पूर्ण विश्व निद्रामग्न था। लेकिन मानव-मस्तिष्क कभी भी निद्रित नहीं होता। इसका ज्वलन्त उदाहरण है—रेलगाड़ी—मानव-मस्तिष्क की एक अनोखी उपज! जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की भरसक कोशिश करता है, उसी प्रकार उस रात के मोहक अन्धकार में, ट्रेन भी धड़धड़ाती हुई अपने लक्ष्य की ओर तीव्र गति से भागी चली जा रही थी।

इसी ट्रेन के एक फर्स्ट-क्लास-कम्पार्टमेंट में भगवानचन्द्र अपने प्रिय मित्र एडवर्ड और जेनी के साथ सफर कर रहे थे। वह डिब्बा, चूंकि रिजर्व था, इसलिये उसमें सिवाय इन तीनों के अन्य कोई न था। तीनों ही अपनी-अपनी बर्थ पर लेटे सोने की चेष्टा कर रहे थे, किन्तु सो नहीं पा रहे थे। भगवानचन्द्र से जब अधिक देर तक उस स्थिति में लेटा न गया तो वह उठ कर बैठ गये और एक सिगरेट निकाल कर सुलगा ली तथा खिड़की के बाहर निरर्थक रूप से देखने

लगे। कुछ ही क्षणों के बाद उनके कानों में एडवर्ड के शब्द—अँग्रेजी भाषा में कहे गये—पड़े। वह मजाक करते हुए बोला—

"क्यों मि० भगवान, नींद नहीं आई..."

"किसी की याद तो नहीं सता रही है, ब्रदर?" जेनी का मुक्त हास्य गूँज उठा।

"चलो, अगर आप ही लोगों की बात सही हो कि मैं किसी की याद में या किसी गम में नहीं सो पाया तो आप लोगों को ऐसा कौन सा गम है जो आप लोगों को भी नींद नहीं आई?" भगवानचन्द्र की इस बात पर सब ठठाकर हंस पड़े।

"वही जो आपको है।"

"याने कि चोर-चोर मौसेरे भाई। क्यों, है न?"

"यस-यस! मान गये कि आपकी जोड़ का कोई जवाब देने वाला हाजिर-जवाब आदमी कम से कम इस जमाने में तो है नहीं।" एडवर्ड और जेनी भगवानचन्द्र के कहने के अन्दाज को देख कर खिलखिला पड़े। भगवानचन्द्र उस मुक्त हास्य को देख कर मुस्कुरा उठे और सोचने लगे—"हे ईश्वर! मेरी बहन को भी इन्हीं की भाँति सुखी और खुशहाल रखना। कितने खुश हैं यह! कितने सुखी हैं यह! ईश्वर दोनों को सदा ऐसा ही बनाये रक्खे।"

'ब्रदर एक बात पूछूँ?" जेनी ने मुस्कुराते हुए कहा।

"क्यों नहीं?"

"तो आप शादी क्यों नहीं कर लेते?"

"शादी?...और मैं? अरे ना बाबा!"—भगवानचन्द्र हँस पड़े।

'क्यों, क्या कोई गलत काम है?'

'गलत तो नहीं। लेकिन मेरी राय इस झमेले से दूर ही रहने की है।'

'क्यों ? यह तो एक पवित्र अनुष्ठान है, जिसके पूर्ण होने पर ही समाज स्त्री-पुरुष के मध्य सम्बंध स्थापित करने की आज्ञा प्रदान करता है और इसी सम्बन्ध के पूर्ण होने पर सृष्टि का कार्य चलता है।'

'मैं नारी को केवल वासना की दृष्टि से नहीं देखता। मेरी नजर में एक स्त्री केवल मां है और या बहन—इन दो रूपों के अलावा उसका और कोई रूप नहीं है और अगर कोई है भी तो वह रूप केवल 'वासना' है, जिसे मैं देखना क्या सुनना भी पसंद नहीं करता हूँ।'

'यही एक बड़ी भारी गलती है ब्रदर ! औरत केवल मां और बहन ही नहीं है, बल्कि इससे परे भी उसका एक रूप होता है। वह रूप औरत का पहला रूप है—पत्नी ! इसके पश्चात ही वह मां है और तब बहन !'

''........।''

भगवानचन्द्र चुपचाप सिगरेट का गहरा धुआं डिब्बे की छत की ओर फेंकते रहे। जेनी ने करवट लेकर अपना तकिया सीने के नीचे दबा लिया और बोली—

'ब्रदर, मैं आपको प्रेम नहीं करती, लेकिन फिर भी ऐज ए सिस्टर (एक बहन होने के नाते) इतना जरूर कह सकती हूँ कि आपने एक ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण नारी जाति के लिए बहुत ही गलत टाइप की धारणा बनाई हुई है। कोई भी नारी जब तक पत्नी नहीं बन सकती तब तक न तो वह मां ही बन सकती है और न बहन ही। नारी देती है, लेती नहीं। उसमें ग्रहण करने की क्षमता होती है, दान देने की नहीं। जो नारी प्रेम-दान दे नहीं सकती अर्थात् ग्रहण करने की क्षमता नहीं रखती, वह नारी कहलाने योग्य ही नहीं है। इंग्लैंड में जो शिक्षा-पद्धति अपनाई गई है, वह यहां के लिए कभी उपयोगी नहीं सिद्ध हो सकती। यह मैंने इस वजह से कहा कि भारत में जो शिक्षा-पद्धति स्त्रियों के लिये अपनाई जा रही है, वह वहां की बिल्कुल ट्रयु-कापी है।

भारतीय स्त्रियां अगर चाहें कि वे पुरुषों के साथ 'उस तरह' का हँसी-मजाक करें तो वे उन्नति की ओर अग्रसर न होकर पतन की ओर ही अग्रसर होंगी। वहां की स्त्रियां एक सच्ची पत्नी कभी नहीं बन सकतीं और यही कारण है कि वे एक सफल और सच्ची माँ तथा बहन भी नहीं बन सकतीं। एक सच्ची मां और बहन के लिये यह बहुत जरूरी है कि वह अपने नारीत्व और अपने पत्नीत्व को पहचाने।'

" ... "

'आप नारी के इस रूप को केवल वासना का ही रूप मानते हैं, तभी तो आपकी निगाहों में उसका यह रूप इतना निम्न स्थान रखता है। लेकिन सच मानिये कि आप किसी दिन इन्हीं विचारों पर पछतायेंगे क्या आपको जन्म देने वाली स्त्री किसी की पत्नी न थी? और अगर वे भी 'पत्नी' थीं तो आपको इस प्रकार के विचार बनाने का कोई हक नहीं है।........आप आखिर ऐसा सोचते ही क्यों हैं?"

"सिर्फ इसलिये कि पत्नी के चक्कर में पड़कर एक इन्सान वासना में डूब जाता है और अपने कर्तव्य-पथ से च्युत हो जाता है जेनी।" एडवर्ड ने अपनी सिगरेट सुलगाते हुये कहा। उसके इस अचानक प्रवेश से भगवान चन्द्र कुछ मुस्करा जरूर दिये, किन्तु अचानक ही एक साथी पाकर, उसका बल पाकर, भी वह चुप रहे।

"आप लोग पत्नी का अर्थ केवल वासना या सेक्स से ही क्यों लगाते हैं? सेक्स को संकीर्णता में नहीं वरन् व्यापक अर्थों में देखिये क्या भाई-बहन के मध्य वासना नहीं रहती? पिता-पुत्र या पुत्री........ मां-बेटा या बेटी में वासना का पुट नहीं रहता? मैं पूछती हूँ कि कौन सा ऐसा स्नेह या प्रेम है जो वासना के बिना जीवित रह सकता है?—माफ कीजियेगा, वासना ही प्रेम की आधारशिला है। जहां वासना नहीं है, वहां प्रेम भी नहीं है। आप किसी भी सुन्दर सुडोल बच्चे को गोद में लेकर उसे पुचकारने की कामना क्यों करते हैं?

........अपनी माँ की गोद में एक बालक क्यों बैठा रहना चाहता है ? या एक माँ अपने बच्चे के सम्पूर्ण शरीर को बार-बार क्यों चूमती है ?........किसी खूबसूरत वस्तु को देखकर आप उसे प्राप्त करना क्यों चाहते हैं ? क्योंकि यहाँ पर प्रत्येक चीज में आपको इच्छा निहित है, जिसे दूसरे शब्दों में आप 'कामना' कहते हैं। 'कामना' ही एक ऐसा शब्द है, जिससे 'काम' अर्थात 'सेक्स' का जन्म हुआ है। इसी को हम आप वासना कहते हैं।..........वासना का तात्पर्य केवल शारीरिक-सम्बन्ध से ही नहीं होता है ब्रदर, बल्कि मानव की हर उन इच्छाओं के साथ होता है, जो मानव-मन में प्रतिक्षण उठा करती हैं।' जेनी का चेहरा आवेश से लाल हो गया। क्योंकि यह उसके— भारतीय नारी के—नारीत्व पर एक ऐसी चोट थी जो किसी भी नारी के लिये असह्य हो सकती है। फिर वह स्वंय एक ऐसी नारी थी जिसका लालन-पोषण भारत की ही पुण्य-भूमि पर हुआ था। यह दूसरी बात है कि उसमें अंग्रेज जाति का रक्त था लेकिन विचार तो भारतीय नारी और भारतीय वातावरण के थे। वह कैसे इस बात को भूल जाती ?

"अरे तुम तो नाराज हो गईं। हम लोगों का यह इरादा थोड़े ही था।" भगवान चन्द्र ने उसके सुनहरे केशों पर स्नेह से हाथ फेरते हुये कहा, किन्तु जेनी ने अपना मुख दूसरी ओर घुमा लिया— "मेरी अच्छी बहन, नाराज हो गई न ?"

"नहीं ब्रदर; अगर आपलोगों का यह इरादा नहीं था तो फिर...."

"अरे पगली, मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता था कि जब तक मेरा देश आजाद नहीं हो जाता तब तक मै शादी कैसे कर सकता हूँ—तू ही बता ?"

"सच ब्रदर !"

"बिल्कुल सच बहन !" भगवान चान्द्र के चेहरे पर एक अजीब सी दृढ़ता छा गई ।

'इसके मतलब, आप अंग्रेजों से घृणा करते हैं; क्यों ?' एडवर्ड वातावरण को बदलने की कोशिश मजाक से शुरू की ।

"गलत ! बिल्कुल गलत !मैंने यह कभी नहीं कहा । मैं अंग्रेजों से नहीं बल्कि उनकी पालिसीज से घृणा करता हूँ, जिनकी वजह से आज हम पर बड़े से बड़े अत्याचार किये जा रहे हैं । वह रंग भेद के कारण यह भूल गये हैं कि हम भी इन्सान हैं । यह सबसे बड़ी भूल है । किसी भी व्यक्ति को उतना ही दबाया जा सकता है जिसकी कि कोई सीमा हो । लेकिन सीमा के अतिक्रमण होने पर सोया हुआ ज्वालामुखी भी फूट पड़ता है । मि० एडवर्ड ।" भगवान चन्द्र की सौम्य आकृति पूर्णत: शान्त थी और धुएँ के गुब्बार के साथ उनके नपे -तुले शब्द भी डिब्बे में चक्कर काट रहे थे— "फिर हम भारतवासी तो उस सोये हुये अजगर के समान थे जो साल में केवल एक ही बार सांस लेता है और उसकी वजह से बड़े-छोटे पेड़-पौधे उसके उदर में समा जाते हैं । हम लोग तो सदा से आध्यात्मवाद और ईश्वर-दर्शन के विषयों में उलझे रहे । हमने कभी भी दूसरों के ऊपर तो क्या अपने ऊपर भी शासन करने की इच्छा नहीं व्यक्त की । हम लोगों का तो सदा से ही यही सिद्धांत रहा है—'कोउ नृप होय हमैं का हानी ।' अगर ऐसा न होता तो इतने विदेशी शासक हमारे ऊपर कभी शासन करने कि हिम्मत नहीं कर सकते थे ।''''नहीं, यह बात बिल्कुल गलत है कि हममें वीरता की कमी है । आप यह क्यों भूल जाते है कि हर बादशाह के शासन-काल में एक न एक विद्रोह होता ही रहा है । उस समय इस प्रकार के विद्राह कम थे या उनका साथ देश की जनता ने नहीं दिया, किन्तु आज''''आज का विद्रोह इस बात की खुली चुनौती है कि—'Freedom is our birth right and we

will have it.' [स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम इसे लेकर रहेंगे ।]'

"मैं खुद इस बात का फेवर (समर्थन) करता हूँ कि हिन्दुस्तान को आजादी मिलनी ही चाहिये…"

"तुम जरूर ही पिछले जन्म में शिवाजी या महाराणा प्रताप रहे होगे ।" भगवान चन्द्र हँसे ।

"क्यों नहीं ! एक बार बम्बई सिविल सर्विस के एक सदस्य ने भविष्यवाणी की थी कि सन् १९८३ तक अंग्रेज इण्डिया को छोड़ देंगे, लेकिन अब मैं यह दावे के साथ कहता हूं कि अब अंग्रेज हिन्दोस्तान में केवल दो-ही चार साल के और मेहमान हैं और दो-चार वर्ष बाद वे लोग यहाँ से धक्के मार मार कर बाहर निकाले जायेंगे ।"

"तुम भी एक अंग्रेज ही हो, एडवर्ड !" भगवान चन्द्र ने परिहास करते हुये कहा ।

"नो मि० भगवान, केवल उस समय तक था, जब तक कि मैंने हिन्दुस्तान में कदम नहीं रक्खा था ।"

'रियली ?' भगवान चन्द्र उसके शब्दों में अत्यधिक दृढ़ता पा कर अवाक से रह गये ।

'आफकोर्स, आई एम नाट ए इंग्लिस, बट नाऊ आई एम ओनली एन इन्डियन एज यू आर ! [अब मैं केवल भारतीय हूँ, अंग्रेज नहीं जैसे कि आप हैं ।]'

"लेकिन ब्रदर, एक बात मेरी राय में भी तय है कि आजादी के साथ एक भयंकर खून-खराबा भी देश में होगा —जिसे आप कत्ले आम के नाम से पुकार सकते हैं ।"

'क्यों ?'

'डिवीजन आव कन्ट्री यानी देश का विभाजन !' एडवर्ड ने अपने शब्दों पर जोर देते हुये कहा ।

'हाँ, यह तो होगा ही।' भगवान चन्द्र बुरी तरह से नर्वस हो गये।

'यह रुक नहीं सकता क्या ?'

'कैसे रुकेगा, एडवर्ड ? गांधी, नेहरू, पटेल आदि भी इसका प्रयत्न करते-करते हार गये और कोई फल न त' हुआ, और न होता दिखाई दे रहा है। मुस्लिम लोग और मि० जिन्ना इस बात के लिये तैयार ही नहीं होते दिखाई दे रहे हैं। उनकी तो एक ही रट है—'पाकिस्तान बन के रहेगा'...और देख लेना यही होगा।'

'लेकिन मुस्लिम लीग को तोड़ क्यों नहीं दिया जाता ?'

'बच्चों का घरौंदा नहीं है, जेनो बहन !'

'अच्छा यह बनी कैसे ?'

तो अब समझा कि तुम्हारा मतलब क्या था ? अरे सीधे से ही पूछ लेतीं, इतनी भूमिका बाँधने की क्या जरूरत थी ?'

'वैसे आप बताते नहीं।'

'हूं, शरीर कहीं की।'

प्रत्युत्तर में वह केवल मुस्कुरा भर दी और फिर आश्चर्य से बोली—'अरे ! बातों-बातों में रात बीत गई।'

'अच्छा, पहले एक एक कप काफी पी जाये तब बात होगी।'

'मैं कहे आता हूँ।'

कहकर एडवर्ड उठ गया और भगवान चन्द्र नित्य-क्रिया से निवृत्त होने चल दिये।

भगवान चन्द्र के चले जाने पर जेनी उस कम्पार्टमेण्ट में अकेली रह गई। कुछ क्षण तो वह एडवर्ड की प्रतीक्षा करती रही। वह

आया भी, किन्तु पुनः वह भी नित्यक्रिया से निवृत्त होने चला गया। अब वह पूर्णतः अकेली थी, अतः वह खिड़की से बाहर देखने लगी।

पूर्वाकाश में सफेदी का स्थान प्रातःकालीन ऊषा की रक्तवर्णीय लालिमा ने ले लिया था। उसकी अरुणिमा देखकर कभी तो जेनी का मन प्रफुल्लित हो उठता और कभी उदास—न जाने क्यों? ऐसा क्यों हो रहा था, इसका कारण वह स्वयं भी नहीं जानती थी। उसी समय भगवान चन्द्र वहाँ आ गये—'क्या सोच रही हो, बहन?'

'प्रभात के विषय में, भाई साहब, कि कब वह प्रभात आयेगा जब ऊषा की अरुणिमा स्वतंत्र-भारत की पावन धरती को चूमेगी?'

'बहुत जल्द, बहन,' भगवान चन्द्र का मस्तक उस अंग्रेज स्त्री के समक्ष नत हो गया। सत्य भी है कि यदि किसी प्रेमी के सामने उसकी प्रेमिका की प्रशंसा कर दी जाये अथवा उसके सम्बन्ध में थोड़ी सी भी सहानुभूति प्रकट कर दी जाये तो वह प्रेमी गद्‌गद् हो उठता है। वही हाल भगवान चन्द्र का भी हुआ। वे बोले—'घबड़ाओ मत बहन, बहुत जल्द सुप्रभात आयेगा, जिसकी ऊषा पराधीनता भारत के सपूतों के खून से रंगी हुई पराधीनता की रात्रि के अवसान की प्रतीक्षा कर रही है—पराधीनता की रात्रि का अवसान अब अत्यन्त ही निकट है। गाँधी और सुभाष के प्रयत्न बेकार नहीं जायेंगे। अंग्रेजों को भारत छोड़ना ही पड़ेगा।'

'अरे, वह तो ठीक है, लेकिन इतना नाराज क्यों हो रहे हो?.... शायद कोई स्टेशन आ रहा है?' डब्वर्ड ने आते ही कहा और खिड़की से बाहर देखने लगा—'अलीगढ़।'

'गाड़ी कुछ लेट है, क्योंकि इसका यह टाइम गाजियाबाद पहुँचने का है?'

'यस जेनी!'

'लो, कॉफी भी आ गई।'

बैरे ने लाकर कॉफी की ट्रे जेनी की सीट पर रख दी। जेनी ने कॉफी तैयार करके दोनों को दी और स्वत: टोस्ट के साथ खाने लगी। नाश्ते के बीच कोई बात न हुई और नाश्ते के समाप्त होते ही गाड़ी भी आकर अलीगढ़ के प्लेटफार्म पर रुक गई।

गाड़ी के रुकते ही भगवान चन्द्र और एडवर्ड दोनों प्लेटफार्म पर उतर आये, क्योंकि गाड़ी को पन्द्रह मिनट वहाँ पर रुकना था। उनके जाते ही जेनी पुनः खिड़की के बाहर झांकने लगी। वह एक अच्छे मस्तिष्क की युवती होने के नाते भीड़ की मनो-वृत्तियों का अध्ययन करना चाहती थी। कुछ व्यक्तियों की दृष्टि में उसे अपने प्रति घृणा के भाव लक्षित हुये वह इसका अर्थ भली-भांति समझती थी, क्योंकि वह एक अंग्रेज युवती थी और एक अंग्रेज के प्रति भारतीयों का यह घृणाभाव स्वाभाविक ही था। दूसरी ओर कुछेक की दृष्टि में एक अजब-सा भाव था, जिसे हर एक युवती भली प्रकार से समझती है। कुछेक में भय था, क्योंकि वह अंग्रेज थी और राज्य भी उन्हीं का है (था)। कुछेक में हिंसा थी। इसी प्रकार से उसने अन्य बहुत से व्यक्तियों का अध्ययन किया। जिसके निष्कर्ष पर कभी वह उदास हो जाती और कभी मुस्करा पड़ती; कभी उसका हृदय सहानुभूति से भर उठता और कभी भय के कारण मुरझा जाता।

उसी समय उसकी दृष्टि एक ठेलेवाले पर पड़ी, जिसके ठेले पर अखबार, पत्रिकाएँ तथा अन्य पुस्तकें बाकायदे सजी हुई थीं। उसने इशारे से उसे बुलाया और एक अखबार खरीद कर पढ़ने लगी। तभी ट्रेन ने सीटी दी और एडवर्ड तथा भगवान चन्द्र ने सिगरेट पीते हुये डिब्बे में प्रवेश किया वे बातें कर रहे थे, तथा उनकी बातों का विषय वही 'मुस्लिम-लीग' थी। भगवान चन्द्र कह रहे थे

'दरअसल मुस्लिम लीग का जन्म तो १९११ में हुआ था, लेकिन उसके बाद कई वर्षों तक यह कांग्रेस के साथ रही। मेरी समझ

से जब गांधी ने अपना असहयोग आंदोलन वापस लिया तभी से मुस्लिम लीग, कांग्रेस से अलग हो गई और उसके दो दल हो गये। एक का नेतृत्व मौलाना आजाद, डॉ० अंसारी तथा डॉ० किचलू कर रहे थे और दूसरी ओर मि० जिन्ना !'

'तो क्या मि० जिन्ना अकेले थे?' जेनी ने अखबार एक ओर रखकर चेहरे पर आयी हुयी सुनहरी लटों को एक ओर करते हुये पूछा।

'हाँ! वह गरम दल में विश्वास करता था, जबकि आजाद वगैरह गांधी का समर्थन करते थे। जिन्ना का प्रभाव जितनी जल्दी लोगों पर हुआ उतनी ही जल्दी वह खत्म भी हो गया। इसका फल यह हुआ कि वह लन्दन भागा वकालत करने के लिये। उसके बाद अन्सारी और किचलू की मौत की खबर पाते ही वह फिर वहाँ से वापस लौटा और यहां आकर उसने फिर से मुस्लिम लीग का नेतृत्व शुरू कर दिया।'

'यानी कि...फिर पाकिस्तान की मांग पर इतना जोर क्यों दिया जा रहा है?' जेनी ने फिर प्रश्न पूछा।

'रांग कुएश्चन!' एडवर्ड ने बीच ही में टोका—'यह बेवक्त की शहनाई कहाँ बज रही है?''

एडवर्ड के इस मजाक पर भगवान चन्द्र अट्टहास कर उठे और जेनी शरमा गई।

'अरे भई,' भगवान चन्द्र हँसने के पश्चात् बोले—'यह पाकिस्तान की मांग बहुत पहले से, करीब सन् ११ से चल रही थी—किन्तु दबी हुई पर अब जिन्ना के नेतृत्व में यह बहुत तेजी से सामने आई है।''

'तो क्या गांधी और जवाहर इसे दबा नहीं सकते?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'क्योंकि जिन्ना जानता है कि अगर उसने गांधी का सामना किया तो गांधी और जवाहर जैसे महान् व्यक्तित्वों के प्रभाव से वह बुरी तरह बौखला जायेगा और हथियार डाल देगा।'

क्या मतलब ?'

'मतलब यह कि वह पाकिस्तान को भूल जायेगा। गांधी का विरोध खासतौर से उसके सामने कोई कर नहीं सकता, क्योंकि उस दुबले-पतले और एक लँगोटी वाले व्यक्ति के अन्दर एक असाधारण व्यक्तित्व छिपा हुआ है – वही व्यक्तित्व जो राम, कृष्ण, गौतम और ईसा में छिपा हुआ था। वह महान् है, उसका व्यक्तित्व महान् है।'

'फिर गांधी स्वतः क्यों नहीं उससे मिलकर इस मसले को हल कर लेते ?'

'जेनी बहन, कौन बेटा यह चाहेगा कि उसकी माँ के शरीर का बँटवारा हो ?

'तो इसके यह मायने हुए कि मुसलमान भारत के बेटे नहीं हैं. क्यों ?' एडवर्ड ने तर्क किया।

'कौन कहता है ? जिन्ना इस समय मजहब परस्ती में अन्धा हो रहा है। वह यह भूल गया है कि पाकिस्तान हिन्दू और मुसलमानों की लाशों पर ही बन सकता है। देश का बँटवारा इतना आसान नहीं है, मि० एडवर्ड ?'

'यानी कि फिर सारे मुसलमान भी उसके साथ अन्धे हैं ?'

'पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होतीं ....!'

'लेकिन साथ ही आपको यह भी नहीं भूलना चाहिये मि० भगवान कि एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है....'

'फिर भी उसमें कुछ ऐसी मछलियाँ होती हैं, जो उस गन्दगी से बहुत ज्यादा नफरत करती हैं ?'

'यह दूसरी बात है।'

'दूसरी नहीं वही बात है। जिन्ना के कट्टर विरोधी भी हिन्दुस्तान में भरे पड़े हैं, लेकिन वह ऊँची आवाज इसलिये नहीं उठा सकते कि बहुमत के द्वारा वे काफिर क़रार दे दिये जायेंगे। उनका नेता मौलाना आजाद है।'

'प्रमाण ?'

'पीसू के ऊपर भी लोगों ने उनके जीवन काल में विश्वास नहीं किया था, वे उन्हें पागल समझते थे, विद्रोही समझते थे, लेकिन उनके मरने के बाद, जब वह चालीस दिन बाद फिर से जी उठे तब लोगों को उन पर विश्वास हुआ। मैं ऐसे बहुत से उदाहरण दे सकता हूँ, जिन्होंने मजहबी एखलाक के जज्बे को ठोकर मार दिया और पाकिस्तान से ज्यादा हिन्द को महत्व दिया है। मुझे दो-चार शायरों की गजलों के कुछ थोड़े बहुत अंश याद हैं..... जोश मलिहाबादी का कहना है—

''तेरी बातों से पड़ी जाती है कानों में खराश,
'कुफ्रो-ईमां, कुफ्रो-ईमां', ताकुजा खामोशबाश।
हुब्बे ईमां जौफ़े-हक, खौफे खुदा कुछभी नहीं,
तेरा ईमां चन्द लहमों के सिवा कुछ भी नहीं।
तेरे झूठे ईमां को मिटा डालूँगा मैं,
हड्डियां इस कुफ्रो-ईमां की चबा डालूँगा मैं।
डाल दूँगा तर्जे-नौ, अजमेर और प्रयाग में,
झोंक दूँगा कुफ्रो-ईमां को दहकती आग में।'

'वेल-वेल, वैरी गुड, और कोई सुनाइये।' जेनी और एडवर्ड इस जोशीले पद को सुनकर आनन्दातिरेक से झूम उठे। जेनी चूंकि यहीं पाली-पोसी गई थी, इसलिये वह तो इसका अर्थ कुछ सीमा तक समझ गई थी, किन्तु एडवर्ड इतनी कठिन उर्दू भाषा को समझने के

लिये पूर्णतया असमर्थ था, फिर भी उसने अपने साधारण-ज्ञान की सहायता ली थी। उन दोनों के आग्रह पर भगवान चन्द्रने पुनः कहना शुरू किया—

"कब्र में रुहे-पिदर को शाद करने के लिए
सर कटाना हिन्द को आबाद करने के लिए।
मजहबी इखलाक के जज्बे को ठुकराता है जो,
आदमी को आदमी का गोश्त खिलवाता है जो।
फर्ज भी कर लूँ कि हिंदू हिन्द की रुसवाई है,
लेकिन, इसको क्या करूँ, फिर भी वह मेरा भाई है।
बाज आया मैं तो ऐसे मजहबी ताऊन से,
भाइयों का हाथ तर हो भाइयों के खून से।
तेरे लब पर है इराको-शामो-मिश्रो-रूमो-चीन,
लेकिन अपने ही वतन के नाम से वाकिफ नहीं!
सबसे पहले मर्द बन हिन्दोस्तां के वास्ते,
हिन्द जाग उट्ठे तो फिर सारे जहां के वास्ते।

'भई, आपकी पोयेट्री (कविता) हैं तो जोशीली, लेकिन अपने पल्ले बिल्कुल नहीं पड़ी। अगर आपको एतराज न हो तो इनका मतलब भी समझा दीजिए।' एडवर्ड ने सिगरेट भगवान चन्द्र को पेश कर सुलगाते हुए कहा।

'यह दोनों 'जोश' की ही लिखी हुयी गजलें हैं। पहले में उसने अपने धर्म के अन्धविश्वासों के प्रति क्षोभ प्रकट किया है। अर्थात आज कल जो मुसलमान अपने धर्म को सही समझ कर इन्सानियत को भूल गये हैं, उन मुसलमानों को उसने बुरी तरह से फटकारा है। यह एक जगत प्रसिद्ध सत्य है कि मुसलमान अपना ईमान कभी नहीं छोड़ेगा वह अपने इस ईमान की खातिर मर जाना अधिक पसन्द करेगा; गलत समझे हुये ईमान को झूठा बताते हुये जोश ने कहा है कि मैं इस झूठे

-ईमान को दहकती आग में डाल दूँगा और उसकी राख को अजमेर (मुसलमानों का पवित्र स्थान) तथा प्रयाग (हिन्दूओं का पवित्र स्थान) में डाल दूँगा। वह इस झूठे ईमान के पीछे भागने से अच्छा 'एक' होना ज्यादा अच्छा समझता है, इसीलिये उसने दूसरी गजल में अपने बेटे को खत लिखते हुये कहा है कि यदि तुम अपने मरे हुए पुरखों की मुक्ति चाहते हो तो हिन्द (भारत) को स्वतंत्र कराने के लिये अवसर आने पर खुशी से अपना सिर भी कटा देना। जैसा कि एक बार तुमने बताया था कि हिन्दू ही केवल हिन्द का रहने वाला है और हम लोगों का वतन दूसरा (पाकिस्तान) है लेकिन इसके साथ तुम यह क्यों भूल गये कि वह तुम्हारा भाई भी है। तुम दोनों (हिन्दू व मुसलमान) इसी पवित्र भूमि की मिट्टी में सदियों से खेलते आ रहे हो। मैं तो ऐसे धर्म को हाथ जोड़ता हूँ जिसमें भाई-भाई के खून करने की शिक्षा दी जाये। तुम लोग इतने मूर्ख हो कि अपने वतन, उस मां, उस मातृ-भूमि को ही भूल गये हो जिसने तुमको जन्म दिया। अगर तुम सारी दुनिया के मुसलमानों को जागृत करना चाहते हो तो सबसे पहले स्वयं जागो, हिन्द को जगाओ। यहाँ पर जोश ने दोनों को एक करने का प्रयत्न किया है, लेकिन वाह रे हिन्दू और मुस्लमान! दोनों ही आज भिड़ जाने को तैयार हैं।'

'विचार बड़े ऊँचे हैं!' एडवर्ड से न रहा गया। उसी समय भगवान चन्द्र की निगाह अखबार पर पड़ी, जिस पर मोटे-मोटे अक्षरों में छपा था—

'क्रांतिकारियों का दल इम्फाल से भाग निकला। पीछा करने वाले चार सैनिक अफसरों को मार कर क्रांतिकारी फरार।'

भगवान चन्द्र की आँखों में एक अदभुत चमक आकर विलीन हो गई, जिसे केवल एडवर्ड ही अत्यन्त सूक्ष्मता से लक्ष्य कर पाया।

किन्तु ऐसी चमक को स्वाभाविक जान कर वह मौन रहा। उसी समय जेनी के शब्दों के कारण भगवान चन्द्र का ध्यान भंग हो गया। उन्होंने पूछा—"क्या हुआ ?'

'शाहदरा!'

'ओह !'

दिल्ली।

भारत की राजधानी, दिल्ली।

दिल्ली के स्टेशन पर उतर कर सबसे पहले एडवर्ड और भगवान चन्द्र ने एक-एक सिगरेट सुलगाई और फिर कुली के साथ तीनों स्टेशन के बाहर आये।

यह स्टेशन चांदनी चौक के करीब ही स्थित है तथा इसके ठीक सामने एक बड़ा सा पार्क है। यहां उतर कर तीनों ने महसूस किया कि दिल्ली के वतावरण में कितना जोश और खिंचाव भरा हुआ है। पारस्परिक भेदभाव, पाकिस्तान की मांग के कारण, कितना बढ़ा हुआ है लेकिन फिर भी उनमें एकता की भावना लक्षित हो रही थी। तीनों सब कुछ समझते हुये भी महान् आश्चर्य में डूबे हुये थे। यदा-कदा लाल पगड़ी वाले घुड़सवार नजर आ जाते थे, जिससे उन्होंने यह अनुमान लगाया कि अवश्य ही यहां कोई, दो चार रोज के अन्दर, अप्रिय घटना घटित हुई है, तभी यहां इतना आतंक छाया हुआ है। अभी यह लोग अपने अनुमान की पुष्टि करना ही चाहते थे कि उनके पास एक टैक्सी आकर रुकी—'टैक्सी, सर ?'

'ओह यस !'

कहकर वे तीनों टैक्सी के अन्दर बैठ गये और टैक्सी ड्राइवर बाहर निकल कर उनका सामान रखवाने लगा। कुली का बिल चुकता करने के बाद भगवान चन्द्र ने ड्राइवर को पता बताया और टैक्सी लाल-किला की ओर चल दी।

'हम लोग चल कहां रहे हैं —होटल ?' एडवर्ड ने प्रश्न किया।

'नहीं, होटल में हमको उचित व्यवस्था नहीं मिल सकेगी जितनी कि अपने घर में।'

'अपना घर ?' जेनी चौंकी।

'हाँ बहन ! यहाँ हमारे एक मित्र महोदय रहते हैं जो राय साहब के नाम से विख्यात हैं, उनका असली नाम तो शायद ही कोई जानता हो।'

इसके बाद कोई खास बात नहीं हुई तथा एडवर्ड और जेनी दोनों रास्ते का अवलोकन करने लगे।

थोड़ी देर बाद टैक्सी एक आलीशान बंगले के सामने रुकी। एडवर्ड और जेनी को टैक्सी में ही छोड़कर भगवानचन्द्र बाहर आए और दरवाजा खोलकर जैसे ही कम्पाऊन्ड में प्रवेश किया, उन्हें सामने कुर्सी पर राय साहब बैठे नजर आए—

'हलो, राय बहादुर ?'

'कौन ? अरे तुम—भगवान चन्द्र ! तुम यहाँ कैसे.... ?'

क्यों, क्या मैं देहली नहीं आ सकता ?'

'क्यों नहीं, मेरे पूछने का तात्पर्य यह है कि कब आए ?' राय साहब के स्वर में उत्सुकता लक्षित हो रही थी।

'पहले नौकर से सामान उतरवाओ, फिर बात करेंगे। साथ में मेरे एक मित्र तथा उनकी पत्नी भी हैं।'

'कोई बात नहीं। अरे रामू—ओ रामू।'

'जी, आया !' इस आवाज के साथ ही राम् वहाँ आ गया। तब तक दोनों कम्पाउन्ड के बाहर निकल चुके थे।

'यह सामान ऊपर वले कमरों में पहुंचा दो।'

'जी, बहुत अच्छा !'

कहकर रामू सामान उठाने लगा। उसी समय टैक्सी से वीनो और एडवर्ड बाहर निकले। भगवान चन्द्र ने परिचय कराया। और दोनों को जबरदस्ती अन्दर भेज कर टैक्सी के पास आए।

'बिल ?'

'पांच रुपये सर !'

भगवान चन्द्र ने एक दस का नोट उसे दिया।

'चेन्ज सर'

'तुम्हारा ¡'

'आल राइट सर !'

टैक्सी ड्राइवर ने सैल्यूट किया और भगवान चन्द्र मुड़कर बंगले में प्रविष्ट हो गये।

''नहीं, दरअसल बात यह है कि कांग्रेस के अगस्त-आंदोलन का जन्मदाता, अगर गहन दृष्टिकोण से देखा जाये तो, 'क्रिप्स मिशन' है। क्योंकि उसके ही प्रस्तावों से कांग्रेस ने क्रुद्ध होकर यह कदम बढ़ाना 'मंजूर किया था।' राय साहब ने भोजन शुरू करते हुये कहा।

'वह कैसे ?' एडवर्ड ने तुरंत प्रश्न किया।

'क्योंकि उसके अन्तर्गत अल्पकालीन व्यवस्थाओं की योजना

को कांग्रेस ने अस्वीकार कर दिया था।'

'लेकिन राय साहब स्टैफर्ड क्रिप्स तो मार्च' ४२ में आया था। उसका इस आंदोलन से क्या सम्बन्ध ?' जेनी से अंततः चुप न रहा गया।

'जब क्रिप्स के प्रस्ताव उसके द्वारा गांधी जी के सम्मुख रखे गये तो गांधी जी ने उससे पूछा—आप क्यों आए हैं ? यदि आप भारत के भविष्य के लिए यही प्रस्ताव लाए हैं तो मैं आपको यही परामर्श दूंगा कि आप सब से पहले हवाई जहाज से अपने घर चले जायें।

'फाईन !' एडवर्ड और जेनी उछल पड़े—'इस पर उसने क्या उत्तर दिया ?

'यही कि मैं आपकी इस राय पर विचार करूँगा।'

नॉन सेन्स, ईडियट; लेकिन राय साहब उसके प्रस्ताव अभी प्रकाशित तो हुये नहीं हैं ?''

'उसका अवसर ही कांग्रेस ने नहीं दिया। इससे पहले कि वे प्रस्ताव प्रकाशित हो सकें, सरकार का ध्यान अगस्त—आंदोलन में बंट गया। और यही कांग्रेस चाहती थी।'

'तो उसके प्रस्ताव तो शायद मिल भी न सकें ?' जेनी ने पूछा।

'हां शायद।' राय साहब ने हाथ पोंछते हुए कहा—'लेकिन ठहरिये—शायद मेरी डायरी में लिखा हो तो मैं आपको बता दूंगा।'

इतना कहकर राय साहब अपनी डायरी के पृष्ठ उलटने लगे। थोड़ी ही देर में एक पृष्ठ खोल कर बोले—

'यू आर लकी मिसेज एडवर्ड, आई हैव! उसके प्रस्ताव यह हैं, जो ब्रिटिश सरकार की ओर से घोषित किये गये थे :—

(१) द्वितीय विश्व महायुद्ध के पश्चात् शीघ्र ही भारत में देश के नये संविधान के लिये एक निर्वाचन समिति का संगठन किया जायेगा।

(२) इस बात की व्यवस्था की जायेगी कि विधान-निर्मात्री सभा में भारत की रियासतें भी सम्मिलित हो सकें।

(३) ब्रिटिश—सम्राट की—सरकार इस प्रकार निर्मित संविधान को शीघ्र ही स्वीकार करने तथा लागू करने तथा लागू करने का दायित्व लेती है। लेकिन इसकी शर्तें निम्न होंगी:—

(i) ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रान्त को यह अधिकार होगा कि, वह अपनी वर्तमान संवैधानिक स्थिति को स्थिर रख सके, जो नये संविधान को मानने के लिये तैयार न हों। इसके अलावा भी यदि वे चाहें तो सरकार की सहायता से वे एक नये संविधान का निर्माण कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें भी भारतीय संघ के समान उस प्रकार का पूर्ण दर्जा प्राप्त होगा तथा उसका निर्माण भी उसी कार्य-पद्धति तथा उसके विस्तार के अनुसार होगा।

(ii) एक ऐसे सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर होंगे, जिसमें उन सभी आवश्यक विषयों की चर्चा होगी, जो अंग्रेजों के हाथों से भारतीय हाथों से भारतीय हाथों में उत्तरदायित्व के पूर्ण रूप से हस्तान्तरित करने के सम्बन्ध में आवश्यक होंगे। इसके अन्दर जातिगत तथा धर्मगत अल्प-मतों की रक्षा के लिये व्यवस्था की जायगी। किन्तु इसके परिणाम-स्वरूप भारतीय संघ की प्रभुसत्ता पर किसी भी प्रकार का बन्धन नहीं लगाया जायगा कि वह ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के सदस्य राज्यों के साथ अपने सम्बन्ध के विषय में क्या निर्णय करती है।

(iii) चाहे कोई भारतीय रियासत संविधान के पालन किये जाने के सम्बन्ध में अथवा उसमें सम्मिलित होने के लिये प्रस्तुत है या नहीं, तो भी यह आवश्यक होगा कि उसकी सन्धि व्यवस्था के सम्बन्ध में समुचित परिवर्तन के लिये यथेष्ठ बात-चीत की जा सके।

(iv) प्रत्येक भारतीय रियासत में युद्ध की समाप्ति पर मतदान होगा और इस प्रकार उन्हें आंशिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जायेगा।

(v) इस संकटकाल में जिससे होकर भारत गुजर रहा है तथा जब तक कि नये संविधान का निर्माण नहीं हो जाता, तब तक सम्राट् की सरकार को अवश्य ही भारत की सुरक्षा का उत्तरदायित्व, जो उनके विश्व-युद्ध प्रयत्नों का एक भाग है, उसका नियन्त्रण तथा सचालन अपने हाथ में रखना होगा, किन्तु भारतीय सैनिकों का, नैतिक तथा भौतिक साधन सामग्री का उत्तरदायित्व भारत सरकार का ही होगा तथा इस कार्य में भारत के लोग उसके सहयोगी होंगे।'

'उफ़ इतनी नं चता ! हद हो गई।' एडवर्ड के मुंह से निकला।

'मि० एडवर्ड, एक अंग्रेज के मुँह से यह शोभा नहीं देता।" राय साहब मुस्कुराये।

'मैं अंग्रेज नहीं, भारतीय हूँ; क्योंकि भारत का नमक खा रहा हू फिर मेरी बीबी तो शुरु से ही इंडियन है। कुछ तो असर होना ही चाहिये ?'

'क्यों नहीं, क्यों नहीं।' राय साहब हँस पड़े।

'आप लोगों की बातें खतम हुईं ?' भगवान चन्द्र ने टोका।

'हां, क्यों ?' जेनी ने पूछा।

'अभी तक तो आप गुलाम भारत की खबरें सुन रहे थे अब आइये आपको 'आजाद-हिन्द' की खबरें सुनवाऊँ।"

'कहां ?'

'अन्दर के कमरे में !'

फिर किसी ने कुछ नहीं पूछा और सब आश्चर्य में डूबे हुये भगवान चन्द्र के साथ चल दिये। कमरे में पहुँचकर भगवान चन्द्र ने रेडियो का सुईच आँन कर दिया और एक मद्धिम किन्तु स्पष्ट स्वर वातावरण में गूँज उठी—

'जय हिन्द ! हम 'आजाद-हिन्द' से बोल रहे हैं। रात्रि के ग्यारह बजे हैं। अब हम आपको नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के उस भाषण का पूरा रेकार्ड सुनवाते हैं जो कि उन्होंने सिंगापुर को कैथे नामक इमारत में उस समय दिया था, जब कि श्री रास बिहारी बोस ने स्वतंत्रता आंदोलन की बागडोर उनके हाथ में सौंपी थी—

'मित्रो! अब वह समय आ गया है जब हिन्दोस्तान की स्वतंत्रता के उपासकों को मैदान में उतरना चाहिए। युद्ध के संकटकाल में कार्य करने के लिये अनुशासन और उद्देश्य के प्रति सुदृढ़ वफादारी की जरूरत है। इसलिये मैं पूर्वी एशिया के अपने सब देशभाइयों से अपील करता हूँ कि वे एक ठोस सैनिक व्यूह बना लें और हमारे सामने जो लड़ाई आ रही है उसके लिये तैयार हो जायें। मुझे विश्वास है कि वे इसके लिये तैयार हो जायेंगे।

'मैंने कई बार सार्वजनिक तरीकों से घोषित किया है कि मैं जब सन् ४२ में एक खास उद्देश्य को लेकर अपने घर से रवाना हुआ था तो उस समय मेरे साथ के बहुत से लोग मुझ से सहमत थे। उसके बाद भी खुफिया पुलिस की तमाम रुकावटों के बावजूद भी अपने देश के लोगों से मेरा लगातार सम्पर्क कायम है।

'विदेशों में रहने वाले देशभक्त हिन्दुस्तानी देश के भीतर स्वतंत्रता की लड़ाई के लिये लड़ने वालों के सच्चे संरक्षक हैं। मैं प्रत्येक व्यक्ति को विश्वास दिला सकता हूँ कि हमने अब तक जो कुछ भी किया है, वह हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता के लिये ही किया है और आगे भी हम जो कुछ करेंगे वह भी देश की स्वतंत्रता के लिये ही होगा (हर्ष-ध्वनि)। हम ऐसा कोई भी काम नहीं करेंगे जो हिन्दुस्तान के हितों के विरुद्ध हो या हमारे लोगों के विरुद्ध हो।....

'अपनी सब शक्तियों को भली भांति और पूरी तरह संगठित करने के लिये मैं स्वतंत्र भारत की एक स्थायी सरकार बनाना चाहता

हूँ। हम अपने त्याग और बलिदान के द्वारा स्वतंत्र होकर ऐसी शक्ति उपार्जित करेंगे जिससे हम अपनी स्वतंत्रता को सदा कायम रख सकेंगे। ...मैं आपको फिर से सावधान करता हूं कि यद्यपि हमें अपनी अन्तिम विजय में पूर्ण विश्वास है, लेकिन फिर भी हमें शत्रु की शक्ति का अनुमान कम नहीं लगाना चाहिए। हमें स्थाई रूप से कहीं-कहीं हटना भी पड़ सकता है। इसके लिये हमें तय्यार रहना चाहिए। हमारे सामने एक लड़ाई आ रही है, क्योंकि हमारा शत्रु बहुत ताकत-वर, बेधड़क और निर्भीक है। स्वतंत्रता के इस अन्तिम अभियान में हमें भूख, प्यास, कष्ट की स्थितियों के दबाव से की गई भागदौड़ और मृत्यु का सामना करना है। जब हम अपनी इस कसौटी पर खरे उतरेंगे तभी स्वतंत्रता ले सकेंगे। मुझे विश्वास है कि हम अवश्य ऐसा करेंगे और उसके द्वारा अपने गुलाम और गरीब देश को स्वतंत्र करायेंगे तथा समृद्ध बनायेंगे। जय हिंद !'

'जय हिन्द !' भीड़ के नारे के साथ-साथ उन चारों के मुँह से भी निकला। लेकिन उनके आंख और कान रेडियो से न हट सके। एनाउंसर कह रहा था—

'आज ५ जुलाई है, नेता जी ने सिंगापुर म्यूनिसिपल भवन के सामने आजाद हिन्द फौज की सब पल्टनों की परेड देखी और समस्त सिपाहियों को सम्बोधित करते हुये कहा—

'हिन्दुस्तान की आजादी की फौज के सिपाहियो,'

'आज मेरी जिन्दगी में सबसे अधिक अभिमान करने का दिन है। आज ईश्वर की कृपा से मुझे संसार के सामने यह घोषणा करने का अवसर मिला है कि हिन्दुस्तान को आजाद करने वाली सेना बन चुकी है। यह सेना इस वक्त सिंगापुर में लड़ाई के मैदान में खड़ी है। यह वही सिंगापुर है, जो कभी ब्रिटिश साम्राज्य का दुर्ग था। आजाद हिन्द फ़ौज वह सेना है जो हिन्दुस्तान को अंग्रेजों के जुये से

मुक्त करेगी''''''हर हिन्दुस्तानी को अभिमान होना चाहिये कि इस हिन्दुस्तानी फौज का संगठन बिल्कुल हिन्दुस्तानी नेताओं के नेतृत्व में किया गया है और जब वह इतिहास में अमर रहने वाला समय आयेगा तब हिन्दुस्तानी नेताओं के नेतृत्व में ही यह सेना लड़ाई के मैदान में उतरेगी। आज हम ब्रिटिश साम्राज्य के इस कब्रिस्तान पर खड़े हैं। इस समय एक बालक तक को यह सतोष है कि जो ब्रिटिश साम्राज्य कभी सर्वशक्तिमान् था, वह अब केवल एक कल्पना मात्र ही बनकर रह गया है।

'साथियो! मेरे सैनिको! आपकी लड़ाई का नारा होगा—'दिल्ली चलो।" तुममें से कितने स्वतंत्रता की इस लड़ाई में जीवित बचेंगे, यह मैं नहीं जानता। लेकिन मैं यह जानता हूं कि आखिर में जीत हमारी होगी और हमारा काम तब तक खत्म न होगा जब तक कि हम दिल्ली में ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे कब्रिस्तान लाल-किले के सामने विजयी सेना के रूप में परेड न कर लेंगे।........

'अपने अब तक के जीवन में मैंने सदा ही यह अनुभव किया है कि यद्यपि हिन्दुस्तान अन्य सब प्रकार से स्वतंत्रता के लिये तैयार है, लेकिन एक चीज उसके पास नहीं है और वह है आजादी की फौज। अमेरिका के जार्ज वाशिंगटन इसलिये लड़कर स्वतंत्रता ले सके, क्योंकि उनकी अपनी फौज थी। गैरीबाल्डी इटली को इसलिए स्वतन्त्र करा सके कि उनके साथ उनके सशस्त्र स्वयं सेवक थे। यह आपके लिये गौरव की बात है कि हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय सेना के निर्माण के लिये आप पहले आगे आये हैं और आपने ही उसका संगठन किया है। जो सैनिक अपने देश के प्रति सदा वफादार रहते हैं, जो सब हालतों में अपने कर्तव्य को पूरा करते हैं और जो अपनी जानें देने के लिये सदा तैयार रहते हैं, वे अजेय होते हैं। आप इन तीनों आदर्शों को अपने हृदय में अच्छी तरह से बिठा लें।

'साथियो आज हिन्दुस्तान की सारी आशायें और महात्वाकांक्षायें आप में निहित हैं। इसलिये आप अपना आचरण ऐसा बनाइये कि देशवासी आपको धन्यवाद दें और अगली पीढ़ी आप पर अभिमान कर सके। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अन्धकार में और प्रकाश में, दुःख में और सुख में, कष्टों में और विजय में सदा आपके साथ रहूँगा। इस समय मैं आपके सामने भूख, प्यास, कष्ट-सहन, बलात्-प्रयाण और मृत्यु के सिवा कोई दूसरी और चीज प्रस्तुत नहीं कर सकता। हममें से कौन-कौन हिन्दुस्तान को स्वतंत्र देखने के लिये जीवित बचते हैं, यह एक छोटी सी बात है। हमारे लिये तो यही काफी है कि हिन्दुस्तान स्वतंत्र हो जायेगा और हम उसे स्वतंत्र करने के लिये अपना सर्वस्व दे देंगे।—जय हिन्द!'

'अभी आपने आजाद-हिन्द' से आजाद हिन्द फौज के कमाण्डर जनरल नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस द्वारा दिये गये दो भाषणों को सुना। हमें पूरा विश्वास है कि देशवासी इनको हृदय से ग्रहण करेंगे। अभी-अभी हमें हेड-क्वार्टर से समाचार मिला है कि लगभग सात भारतीय, जिनमें तीन स्त्रियाँ तथा चार पुरुष हैं, सेना के एक एजेन्ट श्री रवीन्द्रनाथ के नेतृत्व में इम्फाल की पहाड़ियों पर पड़े हैं। कल सबेरे उन्हें सिंगापुर लाने के लिये एक जापानी विमान, मेजर जनरल शाह नवाज खाँ के नेतृत्व में भेज दिया जायेगा। 'आजाद हिन्द' से खबरें खत्म हुईं। जय हिन्द, वन्देमातरम्!"

'फाइन!' कहते हुये भगवान चन्द्र ने रेडियो बन्द कर दिया।

'क्या हुआ?' सब जैसे सोते से जागे।

'अरे खुशी मनाओ राय साहब!'

'क्यों?'

'तुम्हारी बेटी कल सबेरे सिंगापुर में होगी।"

'वह कैसे?'

'वह भी तो रवीन्द्र के साथ है। फिर वे लोग आजाद हिन्द फौज में भर्ती हो जायेंगे।'

'क्या, सच ?"

'हाँ, राय साहब।'

'अओ एडवर्ड अब सोने चलें यह किस्सा मैं तुम्हें वहीं बताऊँगा। अच्छा राय साहब, गुड नाइट !'

और तीनों विदा लेकर अपने कमरे की ओर चल दिये। एडवर्ड और जेनी आश्चर्य के सागर में गोते लगा रहे थे।

१२

आकाश में तारे निकले हुये थे और चारों ओर एक भयानक नीरवता व्याप्त थी। सम्पूर्ण वातावरण में निस्तब्धता छाई हुई थी। गोपाल और गुरु की सहायता से हम लोगों ने एक कैम्प (खेमा) नुमा कमरा सा बना लिया था। इसकी व्यवस्था कलकत्ते से चलते समय भगवानचन्द्र ने चुपचुपाते कर दी थी। इस छोटे-से खेमे के बाहर कपड़े का रंग, पूर्णत: गहरा काला था, जिससे किसी को किसी भी प्रकार के शक करने की गुंजाइश न रह जाये। उसमें कोई स्थायी दीवार स्त्री और पुरुषों के बीच बनाई नहीं जा सकती थी, अत: हम लोगों ने कपड़े इत्यादि रखकर एक मामूली-सी जगह बना ली थी। इतनी व्यवस्था करने के बाद खेमे के अन्दर अन्धकार में ही एक मीटिंग हुई जिसमें, मुख्यत: केवल चार ही व्यक्ति थे-- गोपाल, कमल, गुरु और मैं! आशा, बीना तथा नीना; यह तीनों न जाने क्यों वहाँ सम्मिलित नहीं हुई और बाहर चली गईं।

'यद्यपि खेमे के कपड़े का रंग काला है, फिर भी संभव है कि हमारा खेमा देख लिया जावे।" गोपाल ने अपनी शंका प्रकट की।

'क्यों ?' कमल ने प्रश्न किया।

'कारण स्पष्ट है, बाहर चांद जो निकला हुआ है।" गुरु ने समझाया।

'तो इससे क्या फरक पड़ता है ?'

'बहुत बड़ा फरक पड़ता है कमल ! हमको यह नहीं भूलना चाहिए कि हम ब्रिटिश-भारत की सीमा से कुल दस-पन्द्रह मील दूर हैं और पहाड़ी के सबसे ऊँचे स्थान पर हैं। इस वजह से हमारा खेमा दूरबीन की सहायता से एक धब्बे के रूप में स्पष्ट देखा जा सकता है। फिर आजकल अंग्रेज हमारे कारनामों से बुरी तरह बौखलाए हुये हमीं को खोज रहे हैं। उनके हाथ से सिंगापुर के निकल जाने से सीमा पर उनकी फौज और अधिक मुस्तैदी से लगी हुई है।"

'लेकिन हमारा खेमा तो पेड़ों की आड़ में है, इसलिये यह बिल्कुल असम्भव है कि....'

'तुम्हारा कहना ठीक है, फिर भी हम लोगों को अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़नी चाहिए। क्यो कि सारी परिस्थितियों को जानते बूझते हुये भी हम लोगों ने सिंगापुर जाने का एक ऐसा कदम उठा लिया है जो उतना ही कठिन है, जितना हिमालय को पार करना। लेकिन इसके बावजूद भी अब हम अपना कदम वापिस नहीं लौटा सकते।'

'गोपाल भय्या, जब सीमा पर इतनी फौज लगी हुई है, तब आप यह कैसे विश्वास करते हैं कि हम लोग आसानी से सीमा के पार निकल जायेंगे; जब कि यह भी सत्य है, हमारे यहां तक आने की खबर सीमा पर तुरन्त पहुँच गई होगी और अब तो वहां कोई परिन्दा भी पर नहीं मार सकता। फिर हमारे साथ औरतें भी तो हैं ?'

'हां, यह तो है।' कमल के इस प्रश्न पर सभी चुप हो गये।

'इसका हल तो मैं निकाल लूंगा। इसे आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये।' अंत में कुछ देर सोचने के पश्चात् मैंने कहा।

'वह कैसे ?' कमल ने फिर प्रश्न किया।

'इससे आपको कोई मतलब नहीं होना चाहिए। मैंने यह जिम्मा अपने सर पर लिया था सो मैं आपको आज़ाद-हिन्द फौज के हेडक्वार्टर तक पहुँचा दूंगा, बस।'

'अरे तो इसमें नाराज होने की क्या बात है, जो तुम बिला-वजह खफा हो गये ?... नहीं, नहीं मैं यह सब कुछ नहीं सुनना चाहता ... अब तो मान जाओ।'

'नहीं, भाई इसमें नाराजी की क्या बात ?' गोपाल के कहने पर मुझे अंततः कहना ही पड़ा—'दर असल मैं स्वयं यही सोच रहा था। इसी वजह से मेरी वाणी कुछ... खैर भाई क्षमा करना...।'

'इसमें क्षमा की क्या बात है ? यह तो होता ही रहता है।' कमल के होंठों पर उसकी स्वाभाविक मुस्कुराहट तैर रही थी।

'हाँ तो, मेरी स्कीम यह है कि मैं ट्रांसमीटर के द्वारा हेड-क्वार्टर से बात करके उससे मदद के लिये कहूँ।'

'लेकिन वहाँ तो कोर्ड-वर्ड चलते होंगे।'

'हाँ, वह तो जाहिर है।'

'फिर कोड-वर्ड की कठिनाई...' गोपाल ने अपना सन्देह प्रकट किया।

'अरे, वह सब मैं जानता हूँ। यह क्यों भूलते हो कि मैं उनका एजेन्ट हूँ। इस नाते कम-से-कम इतनी जानकारी तो होना जरूरी ही है।'

'लेकिन तुम्हारे साथ छः आदमी और जो हैं ... ?'

'उसके लिये मैं मेजर जनरल शाह नवाज खाँ से बात करूँगा।'

'लेकिन वह तुमको जानते ... ...'

'जानते क्यों नहीं हैं ? उन्हीं के द्वारा तो मेरी यहाँ नियुक्ति हुई थी। उस समय इस फौज के कमाण्डर श्री रास बिहारी बोस थे।'

'और अब ?'

'अब कल से शायद नेता जी हुये होंगे।'

'सुभाष चन्द्र बोस ?'

'हाँ ! तो उनसे मैं रात को ठीक दस बजे ट्रांसमीटर कनेक्ट करूँगा।'

'अभी क्यों नहीं ?'

'अभी खतरा है।'

'तो इसकी जिम्मेदारी तुम्हारी रही ?'

'बिल्कुल वह तो पहले ही से है।'

'अब सवाल है रात की सुरक्षा का, तो उसके लिये मैंने यह सोचा है कि चारों आदमीयों की बारी-बारी से ड्यूटी लगा दी जाये, क्यों ?'

'हाँ, यही ठीक रहेगा।' हम तीनों ने एक स्वर में कहा।

'यह ड्यूटी हर आदमी के लिये दो-दो घन्टे की रहेगी। नौ से ग्यारह तक रवींद्र की, ग्यारह से एक तक कमल की एक से तीन तक मेरी और तीन से पाँच तक गुरू की। अगर किसी को इसमें कोई अड़चन हो तो बता दो ?'

'कोई अड़चन नहीं, यही ठीक है।' सबने अपनी सहमति दे दी।

आशा, वीना और नीना ने भोजनोपरान्त जब यह देखा कि गोपाल-मंडली अब किसी बात पर बहस करने जा रही है तो यह लोग

वहां से उठकर चुपचाप बाहर आ गई। और बाहर आकर, कुछ दूरी पर, एक चट्टान पर बैठ गई।

बाहर आते समय गोपाल ने टोका न हो, ऐसी बात नहीं थी, क्योंकि घटनाक्रम ही कुछ इस प्रकार चल रहा कि कोई भी शंका मन में, उस समय, उत्पन्न हो सकती थी अतएव उसने पूछा —

'बीना, कहाँ जा रही हो ?'

'बाहर !' बीना ने उसके वाक्यों को न समझने की कोशिश करते हुए कहा।

'क्यों ?'

''ऐसे ही घूमने। इतनी सुहानी रात है कि यहाँ बन्द जगह में बैठने का दिल नहीं कहता।'

'हां और क्या। तुम लोगों को सिवाय मौज मारने के और आता ही क्या है ?' कमल ने व्यंग्य किया।

'तुम लोगों से तो हम अच्छी ही हैं। जब देखो तब पालिटिक्स के अन्दर घुसे हुए हैं। पॉलिटिक्स मूर्खों का अखाड़ा होता है, इसे मत भूलो। हम, तुम लोगों की तरह मूर्ख नहीं हैं, हाँ ?'

'तो क्या हम लोग मूर्ख हैं ?'

'यह तुम जानो। चोर की दाढ़ी में ही तिनका होता है।'

'फिर तुम हमारे साथ आईं क्यों, जब पॉलिटिक्स में नहीं आना था ?' कमल ने फिर एक तीर छोड़ा।

'मैं तुम्हारे साथ कब आई, मैं भैया के साथ आई थी। अगर हम लोग साथ में न होती तो शायद लाला जी अभी मक्खियाँ ही मार रहे होते।'

'ऐसी कौन सी काबिलियत है, तुम लोगों में।'

'जो तुममें नहीं है।'

'क्यों नहीं। अरे मैडम, खुदा-न-ख्वास्ता अगर कहीं भागने की नौबत आ जाये तो सारी शेखी भूल जाओगी।'

'उस समय के लिये तुम लोग जो साथ में हो.... ...'

'अच्छा, भाग जा ; तू तो मेरा दिमाग चाट जायेगी।' अन्त में गोपाल को बोलना ही पड़ा।

'अच्छा, भय्या तुम कहते हो तो चली जाती हूँ वरना....'

वरना क्या ?' कमल ने जरा रोबदार शब्दों में पूछा।

'वरना....ऐ ऽ ऽ ऽ ...'

बीना ने जबान निकाल कर उसे चिढ़ाया और आशा तथा नीना के साथ खिलखिलाती हुई बाहर आकर इस चट्टान पर बैठ गई।

'क्यों रानी जी, आज तो बड़े मौज में हो ?' नीना ने उसकी रान पर चुटकी ली।

'क्यों ?' बीना ने साधारण भाव से पूछा।

'बेचारे कमल को बहुत मूर्ख बनाया है, तुमने आज ?....' आशा ने रहस्यमय शब्दों में कहा।

'आज दरअसल मूड था, झड़प करने का; सो अच्छी तरह से हो गई।' बीना ने उसका मन्तव्य न समझते हुए कहा।

'और अगर कहीं उसका मूड बिगड़ गया तो ?' नीना ने पुनः चुटकी भरी।

'तो क्या होगा ?'

'पीस कर रख देगा; और क्या !'

'हूँ। तो तुम लोगों का यह मतलब है, क्यों।'

'उई माँ।' दोनों के मुँह से एक साथ सिसकारी निकली—'भई, यह चुटकी व्यापार बन्द।'

लेकिन तुमने ऐसी बात क्यों कही ?

'कोई गलत थोड़े ही कहा। वही बात कही जो आमतौर पर मर्द लोग मूड बिगड़ने पर किया करते हैं।' दोनों के होंठों पर मुस्कुराहट खेल गई, जिसे बीना देखने में पूर्णतः असमर्थ थी क्योंकि वह सुदूर क्षितिज में कुछ खोज रही थी—'ऐसे मौके पर क्या करोगी ?'

'जो भारतीय स्त्रियाँ करती हैं। जब हृदय से मैंने अपना सर्वस्व उनके चरणों पर अर्पण कर दिया है तो यह तो शरीर है, जो एक दिन अवश्य ही उनके चरणों में अर्पण होगा।'

'तो क्या अब तक....'

'हाँ, दादी ? मेरा उनका व्यवहार अभी तक एक सगे भाई-बहन जैसा है। जिस तरह से एक भाई-बहन के बीच सम्बन्ध रहता है।'

'लेकिन भावनाएँ........ ?'

'भावनाओं के ऊपर किसका वश है, दीदी ? 'बीना' ने निःश्वास खींचते हुए कहा 'मैं भी तुम्हारी ही तरह एक औरत हूँ। मेरे भी हृदय में स्त्रियोचित भावनाओं का समुद्र है। उसमें ज्वार-भाटा भी आता है। किन्तु मैं उस पर नियंत्रण करती हूँ। एक भारतीय नारी मर जायेगी किन्तु पुरुष के सम्मुख अपनी लज्जा का त्याग नहीं करेगी। भारतीय नारी के लिये उसकी लज्जा ही सब कुछ होती है।'

'यह भी हो सकता है कि वह तुम्हारे विचारों से, तुम्हारी भावनाओं से अवगत न हो।''

'नहीं नीना, ऐसा नहीं है। क्यों कि एक बार ऐसा अवसर आ चुका है जब कि वह भावनाओं में बहुत अधिक बह गया था और कदाचित् मैं भी बह जाती, किन्तु उसी समय किसी खटके के द्वारा हम लोगों के विचार भंग हो गये और वहीं पर हम लोगों ने यह प्रण किया कि जब तक हमें आजादी नहीं मिल जाती, तब तक हम लोगों का शारीरिक व्यवहार पूर्णतः उसी प्रकार रहेगा जिस प्रकार कि एक भाई-बहन के बीच होता है।'

'और अगर यह आजादी न मिली तो ?

'तो हम लोगों का ब्रह्मचर्य आजीवन स्थिर रहेगा। यह हम दोनों का दृढ़ निश्चय है।' वीना के स्वर में एक निश्चय बोल रहा था, जिसके आगे दोनों नत हो गईं। उसी समय मैं वहाँ पहुँच गया। क्योंकि मुझे आर्डर मिला था कि मैं उन्हें वहाँ से कैम्प में भेज दूँ। ऐसा ही हुआ और इसके पश्चात् मैं अपनी ड्युटी पर आ गया।

उन तीनों के कैम्प में जाने के पश्चात लगभग साढ़े नौ बजे कैम्प में, जो मोमबत्ती जल रही थी, वह बुझा दी गई और लगभग दस मिनट के अन्दर वे लोग सो गये।

जब मैंने पूर्णरूप से यह विश्वास कर लिया कि अब कोई जाग नहीं रहा है तो मैंने सावधानी से कैम्प का एक चक्कर लगाया और संतुष्ट होकर पुनः अपने स्थान पर आकर बैठ गया। हाथ की मशीनगन को पास में रख कर मैंने अपना पाकेट ट्रांसमीटर निकाला और उसे हेडक्वार्टर से सम्बन्धित करने की कोशिश करने लगा। लगभग पन्द्रह मिनट लगातार कोशिश करने पर मुझे अपने इस कार्य में सफलता प्राप्त हुई—

'हलो, हलो''''यस, मैं रवीन्द्र बोल रहा हूँ।''''आजाद हिन्द फौज का एक एजेन्ट!''''क्या?'''जी हाँ, भारत की सीमा के पास की पहाड़ी पर''''नहीं, नहीं; आप इसे मेजर जनरल शाहनवाज खाँ साहब से कनेक्ट कर दीजिए, मैं उन्हीं से बात करना चाहता हूँ।'''' जी नहीं, मैं आपको नहीं बता सकता।''''बिकाज इट इज ए प्राइवेट मैटर।''' आप कोई भी हों, मैं केवल उनको या नेताजी को बतलाने का ही अधिकारी हूँ – आपको नहीं!''''आइ राइट, मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जय-हिन्द!'

'बड़े गुस्से में हो, शायद ?'

पीछे से आवाज सुनकर मेरा हाथ तुरत मशीनगन पर पड़ा।

'तुम नीना, सोई नहीं ?' नीना को सामने पाकर मेरी जान में जान आई और पुनः अपने स्थान पर बैठ गया। एक ठंडी सांस खींचकर वह भी मेरे ही पास, बिल्कुल सटकर बैठ गई।

'नहीं, नींद ही नहीं आई।'

'क्यों ? और सब तो''' रुको एक मिनट !' उसी समय ट्रांसमीटर में कुछ हरकत हुई और मैं उस ओर मुखातिब हो गया—

'हलो, आप कौन साहब बोल रहे हैं ?'

'मैं शाहनवाज बोल रहा हूँ''''' दूसरी ओर से आवाज आई।

'आदाब-अर्ज, खाँ साहब; मैं रवीन्द्र बोल रहा हूँ।'

'आज बहुत दिन बाद याद आई ?'

'अरे नहीं खाँ साहब, आपको मालूम नहीं कि मैं गुप्तचर विभाग द्वारा पकड़ लिया गया था ?'

'अच्छा ! फिर क्या हुआ ?'

'गनीमत यही हुई कि वह जल्दी-जल्दी में तलाशी लेना भूल गये और केवल सन्देह में बन्द कर दिया। कुछ ही दिन बाद मेरा एक दोस्त गोपाल भी मेरा हमराही बना। उसने किसी अंग्रेज का मर्डर कर दिया था कानपुर रेलवे स्टेशन पर।'

'कौन वही तो नहीं, जिसका जिक्र तुम अक्सर किया करते थे।'

'हाँ, हाँ, वही। फिर वहाँ से हम दोनों भागकर कलकत्ता में छिपे और अब पूरी मंडली समेत आपकी मदद की आशा कर रहे हैं।'

'मदद तो मिलेगी ही। लेकिन तुम भागे कैसे ?'

'वह सब तो वहीं पर बता दूंगा। क्योंकि''''"

'ठीक है, मैं समझ गया। लेकिन तुम लोग रुके कहाँ हो, और साथ में कितने सदस्य हैं ?'

'सीमा के उत्तर में ठीक पन्द्रह मील दूर की पहाड़ी पर। मैं आपको सिगनल दूंगा''''और हां, हम लोगों की संख्या कुल सात है।'

'कोई स्त्री भी है ?'

'जी हाँ, दुर्भाग्य से तीन।'

'कोई बात नहीं, मैं प्रातः छः बजे ठीक वहां प्लेन से पहुंच जाऊँगा तुम लोग बिल्कुल तैयार रहना और सामान में सिर्फ हथियार और कुछ नहीं'''समझ गये न ?'

'जी हां, थैंक्यू सर—जय-हिन्द !'

ट्रांसमीटर आफ करके हम दोनों पुनः बातें करने लगे। ठीक ग्यारह बजे मैंने नीना से कहा—

'चलो नीना, अपनी ड्युटी तो खत्म हो गई। अब चल कर सोयेंगे।

'भई, मेरी इच्छा तो यहीं सोने की है।'

कहकर वह मेरी जांघ पर सिर रख कर लेट गई।

'ज़िद न करो। क्योंकि कल बहुत से काम करने हैं।'

'अच्छा चलो।'

वहां से उठकर नीना कैम्प में आकर अपने स्थान पर लेट गई। कमल उसके बगल में ही लेटा था। अतः मैंने उसे जगाया और कुछ आवश्यक आदेश देकर उसे विदा किया तथा स्वतः उसके स्थान पर लेट कर धीरे-धीरे बातें करते हुये हम दोनों सो गये।

क्योंकि, बाहर कमल अपनी ड्युटी पर सचेत था !

ठीक बजे प्रातः गुरु ने अपनी ड्युटी समाप्त की और हमलोगों को जगाया। बेला रात्रि के प्रस्थान की थी। पूर्वांकाशमें

प्रातःकाल के प्रारम्भ के चिन्ह स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगे थे। अतएव सर्वप्रथम तो हमने कैम्प को अपने स्थान से लुप्त किया एवं सामान सहित उन पेड़ों की आड़ में छिपाई हुई जीप पर आ विराजे। फौरन ही हम लोग एक-एक करके नित्य-क्रिया से निवृत्त हुए और लगभग दस मिनट के बाद चाय-पानी से भी। इन कार्यों में हमारा लगभग पौन घण्टा निकल गया।

इस समय तक सूर्य भी अपने बाल-रूप में उदित हो चुका था और पर्वत-श्रेणी तथा आस-पास की घाटियाँ पूर्णरूप से सूर्य की स्वर्णिम रश्मियों से आच्छादित होकर स्नान कर रहीं थीं तथा हम लोग अपने भावी कार्य-क्रम में व्यस्त थे। उस समय वहां पर केवल गोपाल ही अनुपस्थित था, जो कदाचित् परिस्थितियों का निरीक्षण करने गया हुआ था। दूसरी ओर आशा, बीना तथा नीना अपने-अपने जीवन की उन घटनाओं को आनन्द ले-लेकर बयान कर रही थी जो कि उनके भूतकाल के जीवन में घटित हो चुकी थीं।

उसी समय वहाँ गोपाल कुछ तीव्र गति से चलता हुआ आया और हम लोगों की प्रश्न-सूचक दृष्टि उसकी ओर उठ गई। मानो वे जानना चाहती हो कि ऐसी कौन सी असाधारण बात हो गई है, जिसके कारण गोपाल इतनी तेजी से चल कर आया है? उसके आते ही वाणी द्वारा विस्फोट हुआ—

'बहुत बुरा हुआ रवीन्द्र ?'

'क्या हुआ ?' सभी आश्चर्य के सागर में गोते लगा रहे थे।

'बहुत बुरा, हम लोग चारों ओर से घेर लिये गये हैं।'

'तो इसमें घबराने की क्या बात है, गोपाल भय्या ?' गुरु ने उसके विश्रृङ्खलित होते हुये धैर्य को रोका—'धैर्य खोने से क्या लाभ ? इस तरह से तो......लो आवाज सुनो !'

उसी समय हमारे ऊपर वायुयान की गड़गड़ाहट गूंजी और एक बारगी ही हम आनन्दोल्लास से झूम उठे।

'गोपाल भय्या, तुम मेरे साथ आओ और बाकी लोग संकेत की प्रतीक्षा करें।'

कहकर मैं और गोपाल उस सघन कुंज के बाहर आकर एक बड़ी चट्टान की आड़ में हो गये।

'देखो मैं बात करता हूं। और तुम........'

'कहीं यह ब्रिटिश यान न हो ?'

'नहीं; यह जापानी है....'

अभी वह कुछ कहने ही जा रहा था कि एक बार वह यान (हेलीकोप्टर) पुनः सर के ऊपर से गुजरा। संकेत पाते ही गोपाल ने लाल रूमाल निकाल कर हवा में तीन बार लहराया और पुनः अपने स्थान पर आ गया। उस समय मेरे हाथ मे ट्रांसमीटर था। कुछ ही क्षणों के पश्चात् उसका बल्ब स्पार्क करने लगा। मैंने सुना—

'हलो, हलो रवीन्द्र ....क्या यह रूमाल तुम्हारा है ?....क्या यह रूमाल........'

'यस सर! ....यस सर !' मैंने उत्तर में कहा।

'तुम लोग तो चारों ओर से घिरे हुए हो ?'

'यस सर; वे लोग मुश्किल से चार या पांच मील की दूरी पर हैं.... ....'

'कोई बात नहीं....हम लैण्ड कर रहे हैं (अर्थात् हेलीकोप्टर को पृथ्वी पर उतार रहे हैं।।'

'थैंक्यू सर।'

इसके बाद वह पुनः एक बार दूर निकल गया। गोपाल ने पूछा -'क्या हुआ ?'

'वही, जो होना चाहिये था।' होठों पर सफलता तैर रही थी।

'यह चला क्यों गया ?'

'अभी आ रहा है। जब तक मैं यहां पहाड़ी की निगरानी करता हूं तब तक आप और लोगों को बुला लीजिये"'और हां साथ में केवल हथियार, दूरबीन तथा कारतूसों के अलावा और कुछ नहीं होना चाहिये।'

'और सामान ?'

'हमें केवल अपनी चिन्ता करनी है, सामान की नहीं।'

गोपाल ने मेरा वाक्य कदाचित् सुना ही नहीं क्योंकि इससे पहले ही वह जा चुका था तथा मैं ब्रिटिश फौजों की गतिविधियों का अध्ययन करने लगा, जो कि पहाड़ी से कुल दो मील की दूरी पर ही थी। अचानक वे लोग रुक गये, क्योंकि हेलीकोप्टर उतर रहा था। हवाई तोपों के मुंह नीचे कर दिये गये।

कुछ ही सेकण्ड में हेलीकोप्टर जमीन पर था। तब तक गोपाल के साथ अन्य लोग भी वहां आ गए। हेलीकोप्टर का दरवाजा खुला और कर्नल शाह नवाज़ खां का गेहुंआ, रोबदार चेहरा झांक उठा। मैंने उन्हें फौजी ढंग से सलाम किया। प्रत्युत्तर में वे बोले—

'आओ भई, यह जगह कुछ खतरनाक सी है।'

'यह तो है ही, सर।'

'यही तुम्हारे साथी हैं ?'

'जी हां!'

'आइये, आइये। जरा जल्दी, क्योंकि नीचे तोपें तैयार हैं और टैंक तो यहाँ आ ही रहे होंगे....आओ रवीन्द्र अब की तुम्हारी बारी है।'

मेरे अन्दर आते ही हेलीकोप्टर ऊपर उठने लगा। लगभग तीस-पैंतीस फीट ही ऊपर उठा था कि 'धांय-धांय' की आवाजें शुरू हो गईं। उत्सुकतावश सभी नीचे झांकने लगे। नीचे जिस जगह पर हम लोग मुश्किल से पांच मिनट पहले खड़े थे, उस स्थान से तथा पहाड़ी के नीचे से ब्रिटिश टैंक और तोपें धड़ाधड़ गोले बरसा रहीं थीं। और, हेलीकोप्टर ऊपर उठता जा रहा था।

चूँकि युद्ध चल रहा था, इस कारण हेलीकाप्टर की अन्दरूनी हालत बहुत ही साधारण थी। आधुनिक साज-सज्जा के स्थान पर केवल लकड़ी की दो बेन्चें ही आमने-सामने लगी हुईं थीं, जिन पर हम लोग बैठे थे। हृदय में एक अद्भुत-सी आनन्दानुभूति का सागर हिलोरें मार रहा था कि हम लोग अब पराधीन भारत को शैतानों से छुटकारा दिलाने में अवश्य ही सफल हो जायेंगे। लेकिन शायद किस्मत को कुछ और ही मंजूर था। भाग्य में कुछ और ही यातनाएँ भुगतना लिखी थीं, जो भविष्य में—निकट भविष्य में ही—सत्य सिद्ध हुईं।

खैर, हेलीकोप्टर अपनी तीव्र गति से आगे बढ़ता रहा और कुछ क्षणोंपरांत उसने सीमा को पार करके सिंगापुर की ओर अपना लक्ष्य निश्चित किया।

'हां तो खां साहब, यह हैं हमारे प्रधान, गोपाल भय्या;.... और यह हैं इनके परम सहायक तथा मित्र, कमल और गुरु नरायन तथा....यह हैं मिसेज आशा, मि० गोपाल की धर्मपत्नी। और, यह है मेरी धर्म-बहन बीना, मि० कमल की होने वाली धर्मपत्नी तथा यह हैं मिस नीना।'

शाहनवाज साहब ने सबसे हाथ मिलाया और स्त्रियों से हाथ जोड़कर अत्यन्त नम्रतापूर्वक नमस्कार किया; फिर वे गोपाल,

गुरू और कमल से उनके विगत जीवन के विषय में जानने में व्यस्त हो गये। स्त्री-मंडली फुसफुसाते हुये कुछ बात या विचार-विमर्श कर रही थी, साथ ही नीचे के प्राकृतिक, अद्‌भुत दृश्यों का अवलोकन भी करती जा रही थी।

लगभग दो घंटे के पश्चात् चालक ने अपने केबिन से ही खाँ साहब को संकेत से बुलाया और कान में कुछ कहा। उसकी बात सुनते ही उनकी हँसमुख आकृति गंभीर हो गई और साथ ही हम लोगों के हृदय में भी एक प्रश्न चक्कर काटने लगा—उस समस्या के विषय में, जिसने एकाएक ही उस हँसमुख व्यक्ति को गम्भीर बना दिया था। वह पास आकर अत्यन्त गम्भीर शब्दों में बोले—

'बेंचों के नीचे पैराशूट रक्खे हैं आप लोग पहनकर तुरन्त प्लेन से कूद जायें, क्योंकि प्लेन पूरी तरह बेकाबू हो चुका है।'

उनके कहने के साथ ही आनन-फानन में पैराशूट सबने अपने अपने शरीर से बांध लिये। मैंने, गोपाल तथा खाँ साहब ने मिलकर सबको छतरी खोलने की टेक्नीक बता दी और मैंने आगे बढ़कर प्लेन का दरवाजा खोल दिया।

हमारे लिये यह एक अग्नि-परीक्षा का समय था और सबसे पहले स्त्रियों को उतारना था। उस समय हम पृथ्वी से लगभग ढाई सौ फुट ऊपर उड़ रहे थे। नीचे एक नदी थी, जो ऊपर से एक नाली के समान प्रतीत हो रही थी तथा उसके दोनों ओर लहलहाते खेत हरी भूमि से प्रतीत हो रहे थे।

सबसे पहले आशा ने छलांग लगाई, फिर नीना ने और बीना ने। सौभाग्यवश उन तीनों को छतरियां खुल गईं। प्लेन इस समय अत्यन्त तीव्र गति से सीधा नीचे की ओर जा रहा था। तुरन्त ही मैंने, कमल तथा गुरू ने छलांग लगा दी और फिर गोपाल तथा खां साहब ने भी।

सभी की छतरियाँ धीरे-धीरे मन्द गति से नीचे उतर रही थीं।

प्लेन ने अब जरूरत से ज्यादा तेजी पकड़ ली थी और उसकी ऊँचाई पृथ्वी से मुश्किल से चालीस फिट रह गई थी।

एक क्षण, दो क्षण, तीन क्षण और फिर कुछ ही क्षणों में उसके विशालकाय पंख पेड़ की शाखाओं से टकराये और वह एक भयंकर आवाज के साथ पृथ्वी पर ढेर हो गया। उस प्लेन के टकराने का दृश्य इतना भयंकर था कि हम लोगों ने अपनी आँखें बन्द कर लीं और जब आँखें खोली तो उस समय तक प्लेन आग की लपटों में छुप चुका था।

लगभग पन्द्रह मिनट पश्चात् हम लोग पृथ्वी से टकराये जो वास्तव में (धान के) खेत थे। आशा, बीना तथा नीना नदी के बालू तट पर, हमसे करीब तीन फर्लांग की दूरी पर गिरीं।

कमल और गुरू को उस ओर दौड़ा कर हम लोग उस स्थान की ओर भागे जहाँ अब यान के अवशेषों से अग्नि की प्रचण्ड ज्वालायें निकल रही थीं। वह स्थान अधिक दूर न था।

वहाँ पहुँचकर सर्वप्रथम हमने चालक को खोजा, जो यान से लगभग बीस गज दूर पड़ा था। वह बेहोश था, यद्यपि चोटें कोई विशेष नहीं थीं, फिर भी प्राथमिक उपचार कर उसे हम लोग सड़क पर ले आये और फिर अन्य व्यक्तियों के साथ, एक ट्रक वाले की कृपा से हम लोग लगभग चार बजे शाम को सिंगापुर स्थित 'आजाद-हिन्द फौज' के हेडक्वार्टर में पहुँच गये —जो हमारा आज से स्थाई निवास स्थान तथा शिक्षा-केन्द्र था।

१३

आज सिंगापुर पहुंचे हम लोगों को तीन माह व्यतीत हो चुके थे और इन तीन महीनों में हम लोगों ने अपनी-अपनी सैनिक शिक्षा पूर्ण कर ली थी। हम चारों यद्यपि थे तो सैनिक, किन्तु अनुभव ऐसा करते थे मानो हम ही सब कुछ हों। और वास्तविकता भी यही थी, क्योंकि हम अपनी ही सेना के सैनिक थे; अपनी उस सेना के—जो हमारे प्यारे भारत को स्वतंत्र कराने का प्राण-पण से बीड़ा उठाये हुये थी !

आशा, बीना तथा नीना यहां पहुंचते ही 'महिला-संगठन' में भेज दी गई थीं, जहां वे अपनी शिक्षा ग्रहण कर रहीं थी। इसलिए हम लोगों की उनसे मुलाकात सिर्फ इतवार को ही हो पाती थी, वह भी कुछ ही देर के लिये। फिर भी हम खुश थे, दिल में उमंग भरी बेचैनी थी कि कब वह दिन आये और हम लोग अपनी 'मां' को आजाद देख सकें। भारत आजाद हो। भारतवासी आजाद हों।

आज भी हम लोग बैठे हुए, अपने कैम्प में बातें कर रहे थे। कुछ देर बाद मैं उठकर सोने चला गया, लेकिन वे लोग वहीं बैठे रहे और बातें करते रहे। गोपाल-मंडली आजाद हिन्द फौज के भावी कार्य-क्रमों पर अपने-अपने विचार अन्धा-धुन्ध व्यक्त करती जा रही थी। अनजाने में ही न जाने कैसे बातों का क्रम मुड़ कर नेता जी पर आ गया।

गुरू कुछ कहने ही जा रहा था कि उसी समय किसी ने दर-वाजा खटखटाया।

'कौन ?' कहते हुए अलसाया हुए कमल उठा और उसने दरवाजा खोला। लेकिन दरवाजा खोलते ही वह अटेन्शन हो गया—'आप ?'

'सो गये क्या ?' बाहर शाहनवाज अपने एक सहयोगी के साथ खड़े थे।

'जी नहीं, आइये।'

'आओ भई सहगल, थोड़ी देर बातें ही कर ली जायें।'

कहते हुए वे दोनों अन्दर आ गये। उन्हें देखते ही गोपाल और गुरु तुरंत अटेन्शन की पोजीशन में खड़े हो गये।

'इनसे मिलो गोपाल, यह हैं मेरे दोस्त कैप्टेन प्रेम कुमार सहगल और यह है, गोपाल-मंडली के हेड' दोनों ने बड़े प्रम से परस्पर प्रचलित अभिवादन किया। इसके बाद शाहनवाज ने अन्य साथियों का भी परिचय कराया।

'वह साहित्य कार महोदय कहाँ गये ?'

'कल्पना लोक में विचरते-विचरते बेचारे स्वप्न लोक में विचारण कर रहे है। 'गुरू ने मुस्कुराते हये स्पष्ट किया।

'असर तुम्हारे ऊपर भी आ ही गया, क्यों ? वास्तव में वह भी एक अजीब आदमी है, सहगल। अगर तुम उससे मिलो तो तबियत खुश हो जाये।'

'नहीं सर, भेजा साफ हो जाये। उसके ऐसा चाटू आदमी तो शायद चिराग लेकर ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा। उसके साथ अगर आप सुबह से शाम तक रहें तो शायद दूसने दिन काम से छुट्टी……'

'लेकिन फिर आप लोग कैसे रहते हैं ?' शाहनवाज और सहगल ठठाकर हंस पड़े।

'अजी साहब, क्या बताऊँ अब तो आदत ऐसा पड़ गई है कि उसके बिना चैन ही नहीं पड़ता।' गुरु ने इस ढंग से कहा कि वातावरण एक बार फिर हास्य-पूरित हो उठा।

'घबराइये नहीं, उसका भी इन्तजाम हो गया है।'

'क्या?' सब यकायक चौंके।

'उसे फिर से हिन्दुस्तान भेजा जा रहा है और साथ में बीना तथा नीना को भी।' शाहनवाज ने बात स्पष्ट की।

'क्यों?' कमल का चेहरा कुछ लटक सा गया और वह केवल एक ठंडी आह भर कर ही रह गया।

'क्योंकि वहाँ का एक एजेन्ट, जिसकी ड्युटी कलकत्ते में थी, एक हफ्ते पहले मर गया। अब उसकी जगह पर इन तीनों को भेजा जा रहा है।

'लेकिन स्त्रियों को वहाँ भेजने से.... ..' गोपाल ने पूछा।

'तुम भी यार, रहे वहीं के वहीं। अरे जो काम मर्द नहीं कर सकते उसे औरतें चुटकियों में कर लेती हैं, समझे!

'लेकिन उनकी बड़ी इच्छा थी कि वे इस स्वतंत्रता-संग्राम में अपना पूरा योग देकर अपने को उत्सर्ग कर दें।'

'गोपाल, जहां तक इच्छा का सवाल है तो इसकी पूर्ति इस तरह से भी हो सकती है। यह भी तो देश का ही काम है। जब तक हमें ठीक-ठीक सूचनाएँ नहीं प्राप्त होंगी तब तक हम आगे कैसे बढ़ेंगे? हमारा ध्येय कैसे पूरा होगा? हम लक्ष्य तक कैसे पहुँचेंगे? भारत कैसे आजाद होगा? इसके लिये जरूरी है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी जिम्मेदारियों को खूब अच्छी तरह से समझे और उनको अपनी जिन्दगी के आखिरी लमहे तक निबाहे। बिना इसके न तो हम आगे बढ़ सकेंगे और न ही भारत आजाद हो सकेगा। फिर नेता जी का आर्डर कभी बदल नहीं सकता क्योंकि उन्हें यकीन है कि हर व्यक्ति

आजादी के नाम पर उनके लिये हर दम अपनी जान कुर्बान कर देने को तैयार है।'

'लेकिन भारत में ऐसा नहीं है, सर। वहाँ नेता जी तो दूर रहे कोई शख्स आजाद हिन्द फौज का नाम तक नहीं जानता।' गुरु कहा।

'यही तो खास कारण है जिसने नेता जी को गम्भीर रूप से इस ओर आकृष्ट किया है। वह चाहते हैं कि हर आदमी, जो भारत का रहने वाला है, अपने पर, उन पर और आजाद-हिन्द-फौज पर यकीन करे... अच्छा गोपाल अब इजाजत दो। कल सवेरे जरा रवीन्द्र को मेरे पास भेज देना।'

'अच्छी बात सर, जय हिन्द!'

'जय हिन्द!'

उनके जाने के बाद तीनों व्यक्ति बत्ती बुझा कर लेट गये और सोने का उपक्रम करने लगे। लेकिन नींद किसी की भी आंखों में न थी, सभी अपने हृदय में अलग-अलग विचार कर रहे थे।

दूसरे दिन सवेरे जब मैं सोकर उठा तो वहाँ की रंगत ही बदली हुई थी। उसी समय गोपाल ने बताया कि मुझे शाहनवाज ने बुलाया है और मै तुरन्त ही तैयार होकर कर्नल शाहनवाज के कैम्प की ओर चल दिया।

जब मैं उनके कैम्प पर पहुँचा, उस समय वह सहगल के साथ नाश्ता करने जा रहे थे। मुझे देखते ही वह बड़े प्रेम से बोले—

'आओ भई रवीन्द्र, तुम्हारा ही इन्तजार हो रहा था—आओ चाय पियो।'

'जी चाय तो मैं…'

'देखो भाई, तकल्लुफ से काम नहीं चलने का।' सहगल ने तौलिये से हाथ पोंछ कर प्यालों में चाय बनाते हुये कहा। मजबूरी, मुझे भी बैठना पड़ा।

'हुक्म दीजिये!' मैंने चाय पीते हुये पूछा।

'कल हम लोग रात में तुम्हारे कैम्प की तरफ गये थे। लेकिन तुम शायद ख्वाबों की दुनिया में सैर कर रहे थे?'

'जी कल मैं जरा जल्दी सो गया था।'

'तुम्हारे लिये नेता जी का एक खास हुक्म है।'

'मेरे लिये?….क्या करना होगा?'

'ज्यादा बेसब्री ठीक नहीं, रवीन्द्र!' सहगल ने व्यंग्य किया।

माफ कीजियेगा कैप्टन साहब, यह मेरी बेसब्री स्वभाविक ही है। अगर नेता जी आज्ञा दें तो मैं बगैर कुछ सोचे-समझे अपना सिर उतार कर उन्हें अर्पित कर सकता हूँ।'

'लेकिन वह ऐसी आज्ञा ही क्यों देंगे?'

'यह बात दूसरी है। हाँ तो खाँ साहब….'

'उनका हुक्म है कि तुम परसों दो स्त्रियों नीना तथा नीना के साथ हिन्दुस्तान चले जाओ।'

ठीक है चला जाऊंगा।'

'ऐं! चले जाओगे?' सहगल और शाहनवाज दोनों एक दूसरे का मुँह देखने लगे।

'हाँ, इसमें आश्चर्य की क्या बात है?'

'मैं तो सोच रहा था कि तुम….'

'कि मैं आना-कानी करूंगा?….आप समझ नहीं सके खाँ साहब! देश के लिये आप जहन्नुम को भी कहें तो बन्दा तैयार मिलेगा। लेकिन वहां मुझे करना क्या होगा?'

'सिर्फ दो काम ।'

'वो क्या ?'

'पहला तो यह कि समय-समय पर अंग्रेजों की गति-विधियों की खबर यहाँ हेड-क्वार्टर को देनी होगी और दूसरा यह कि लोगों में इस फौज के प्रति विश्वास पैदा करना होगा ।'

'यह तो बहुत ही आसान काम है । ""लेकिन हम लोग जायेंगे कैसे ?'

'इसका जिम्मा हमारे ऊपर है ।'

'आप लोग अंग्रेजी तो कायदे से बोल ही लेते होंगे, क्यों ?'

'जी हाँ, हम तीनों ही इस मामले में पक्के हैं ।'

'बस, आप लोगों का वीसा (पासपोर्ट) आ ही गया है । उस दिन प्लास्टिक सर्जरी से आप लोगों का चेहरे बदल दिये जायेंगे और जो प्लेन यहाँ के बाकी अंग्रेजों को लेकर भारत जा रहा है, उसी से आप लोग भी....'

'ठीक है, समझ गया । मैं तैयार हूं, लेकिन...'

'लेकिन क्या ?'

'आप लोगों ने नीना और बीना से बात कर ली है ?'

'उनसे तो नेता जी खुद मिल चुके है, तभी तो यह फैसला हुआ है ।'

'तब ठीक है । अच्छा, अब आज्ञा दीजिये—परसों मुलाकात होगी ।' कहकर मैं अपने हेड-क्वार्टर स्थित कैम्प की ओर लौट आया तथा सारी योजना उन लोगों को ब्योरेवार समझाई । जब तीनों की समझ में बात आ गई तब मैंने चैन की साँस ली ।

\+ \+ \+

थे और स्त्रियों के पतिव्रत धर्म की महिमा के विषय में ज्ञान अर्जित किया था। आज तक कमल उन्हें केवल भ्रामक जनश्रुतियाँ एवं प्रचलित दन्तकथाएँ ही समझता था, किन्तु आज बीना के मुख से निकले शब्दों में हिमाचल सदृश दृढ़ता पाकर उसे उन पर विश्वास करना ही पड़ा। फिर भी, वह अपने अन्तर में उठने वाले विचारों की उथल-पुथल को न रोक सका और उपर्युक्त वाक्य कहते-कहतेवह बरबस उसके ऊपर झुक गया और उसके हाथ बीना के गालों पर आ गये। यद्यपि वहाँ पूर्णतया अंधकार था—अतिरिक्त चन्द्र-ज्योत्सना के—फिर भी बीना आँखों को उसकी आँखों के भाव और उसके वाक्य का अर्थ समझने में तनिक भी देर न लगी। वह कमल के हाथों को अपनी कनपटी के पास से हटाना चाहती थी, किन्तु न जाने क्या सोचकर उसने ऐसा नहीं किया और मौन साध लेना ही उचित समझा। लेकिन कमल के प्रश्न का जवाब तो देना ही था। यद्यपि वह अपना लहजा विनम्र करना चाहती थी, लेकिन आन्तरिक दृढ़ता और जोश के कारण वह अपने इस कार्य में सफल न हो सकी और वह पूर्ववत् दृढ़तापूर्वक बोली—

'पहली बात तो मैं इसे मानने को तैयार नहीं कि मेरी आत्मा झूठ बोल रही है—क्योंकि ऐसा न होने का केवल यही अर्थ हो सकता है। फिर आज तक मेरी आत्मा की बात कभी झूठ नहीं हुई है और मैंने सदैव वही कार्य किये हैं जिसे करने के लिये मुझे अपनी आत्मा से निर्देश मिला है, यही कारण है कि मैं आत्मा की आवाज को सच मानती हूँ। ......खैर, अब अगर मैं तुम्हारी शंका सच भी मान लूँ तो मुझे गर्व और खुशी होगी कि मेरा प्राणेश्वर, जिसके साथ रहते हुये, विवाहित होकर भी मैंने अपनेकौमार्य-धर्म का पालन किया! आज हमारे मेरे—देश को आजाद कराने के लिये, अपनी माँ की बेड़ियाँ काटने के लिए मेरा प्राण बलिदान हो गया।'

'बीना.........।'

'हां कमल।' बीना ने एक निःश्वास खीचा—'हमारे सामने आज यह महती प्रश्न है, अपने देश की आजादी जिसके सामने मुझे हर कार्य आज तुच्छ प्रतीत होता है।'

'बीना, क्या नारियां इतनी निर्मम हो सकती हैं, जितनी कि तुम हो ?' कमल ने पुनः उसकी थाह लेने की कोशिश की, लेकिन 'नारी क्या है, इस विषय में कोई आज तक जान भी पाया है, जो वही अकेल जान पाता ? कमल के इस प्रश्न पर बीना के हाथ अपनी कमपटिय पर रखी कमल की हथेलियों पर कस गये तथा आंखों से दो बूंद आंसू उसके गालों पर ढुलक आए, जिन्हें कमल ने स्पष्ट देखा और अपने हाथों से उन्हें पोंछ दिया।

'छिः, रो रही हो ? पगली कहीं की।'

'क्या करूं; निर्मम जो ठहरी।' कहते हुए उसने अपना। उसके चौड़े वक्षस्थल में छिपा लिया। उसकी मन्द सिसकियां वातावरण में गूंज रही थी।

'नहीं बीना, तुम जानती हो कि मैं रोने-धोने से बहुत घबराता हूं, फिर यह घर नहीं पार्क है।'

'तुमने मुझे निर्मम क्यों कहा ?'

'अच्छा बाबा, माफी मांगता हूं। अब कभी नहीं कहूंगा।' कहते हुये कमल ने अपने कान पकड़ लिये, लेकिन वह अपने सामान्य नारी स्वभाव के कारण उसकी ओर पीठ करके बैठ गई और सिसकियों में डूब गई।

'बीना, तुम्हें मेरी कसम। बोलो माफ किया ?'

'हूं।' बीना का क्रोध मन्द मुस्कुराहट में परिवर्तित हो गया

और वह भावावेश में उसके वक्ष पर पुन: टिक गई। कमल ने उसके कान में अत्यन्त चुपके से कहा—

'वीना, मे आई टेक ए किस ?'

'तुम समझते क्यों नहीं कमल ? क्या मैं इन्सान नहीं हूँ ? क्या मेरे हृदय नहीं है ? क्या मेरी भावनाएँ नहीं उफनतीं ? मेरे शरीर में भी मांस है, खून दौड़ता है, दिल है, विचार उठते हैं, भावनाएँ जन्म लेती हैं—ये सब कुछ अगर मेरे साथ होता हैं तो क्या मेरे अन्दर भी प्यार नहीं जागृत होता होगा? ''''नहीं कमल नहीं, आजादी त्याग चाहती है, बलिदान माँगती है। चिर-सुख की प्राप्ति के लिये समाज का कोई भी बंधन, क्या हमें रोक सकता है ? कभी नहीं ! हम विवाहित हैं कमल, समाजिक बधन से मुक्त दो हंसों के स्वच्छंद जोड़े के समान हम भी खुले आकाश में किलोल कर सकते है, लेकिन ''''''''

'अच्छा, आओ चलें; देर हो रही है।' कहते हुये कमल उठा खड़ा हुआ, बरबस वीना को भी उठना पड़ा।

'नाराज हो गये ? अगर ऐसा ही है तो तुम मेरे शरीर का इसी समय से जब तक और जिस तरह से चाहो उपयोग कर सकते हो, मैं 'उफ' तक न करूँगी।''' कमल, तुम मेरे पति हो। तुम मेरा उपयोग हर क्षण कर सकते हो। अगर तुम्हारी यही इच्छा है मैं तुम्हारी इच्छा का निरादर नहीं करूँगी। एक भारतीय नारी के लिये उसके पति का आदेश ईश्वर से भी बढ़कर होता है।'

'सच !' कमल ने दोनों हथों से उसके चेहरे को पकड़ कर अपने चेहरे के पास लाने का उपक्रम किया। वीना का चेहरा पूर्णत: उदासीन था और निरन्तर कमल के उत्तेजित चेहरे के पास आता जा रहा था। वह उस समय कमल की आकृति नहीं देखना चाहती थी,

अत: उसने अपनी आंखे बन्द रखीं। कुछ ही क्षणों में कमल की गर्म सांसें अपने चेहरे पर फिसलती उसे मालूम हुईं और उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो उसके कानों में कोई पिघला हुआ शीशा भर रहा हो।

अचानक न जाने क्या हुआ कि कमल एक क्षण तो वीना के सांवले, मोहक चेहरे को एकटक घूरता रहा और दूसरे ही क्षण उसके जलते हुए अतृप्त होंठ वीना के मस्तक पर जा पड़े।

'वीना, हम अपने प्रण का आखिरी दम तक पालन करेंगे!'

'सच!'

'हां वीना, मुझे मां की जकड़ी हुई आकृति ने पतन के गर्त में गिरने से बचाया है, नहीं तो आज कमल मर चुका होता। ""आओ वीना, अब चला जाये, आठ बज रहा है, नहीं तो देर हो जायेगी।'

'अच्छा चलो।'

देश-प्रेम से पुलकित हो वीना कमल के साथ आश्चर्यचकित हो चल दी।

प्रात:काल की बेला नवजीवन के संदेश को लेकर मानव के समक्ष आई—किन्तु उपहार के बिना नहीं। उसके साथ लाल रक्ताभ टेसू की चमकती साड़ी में लिपटी हुई, नई नवेली की भांति आभूषणों से लदी हुई ऊषा भी थी, जिसे देखकर मानव क्या जड़ भी मुग्ध हो जाता है। कुछ ही देर में उसके बाल-सखा ने, उसके प्रीतम ने, पूर्वाकाश से झांक कर उसे पकड़ने की भरसक कोशिश की, किन्तु वह इठलाती बलखाती हुई उसकी पकड़ से छूट कर भाग खड़ी हुई और उसके प्रीतम का मुँह उदास हो उठा। फिर भी वह कर्त्तव्यच्युत नहीं हुआ

कर्त्तव्य के समक्ष प्रेम का मूल्य भी क्या होता है ? यही सोचकर वह अपने कर्त्तव्य-पालन में प्राण-पण से जुट गया ताकि उसकी यह उदासी धरती के मानवों पर भार-स्वरूप न हो जाये और उसने अपनी जीवन-दायित्री किरणों का भण्डार खोल दिया । पृथ्वी उसके प्रकाश से आलोकित हो उठी । प्राणि-मात्र उसकी इस दयालुता पर जी खोल कर धन्यवाद दे रहा था, जिसने उसे गत अन्धकार की गुलामी से छुटकारा दिलाया था ।

कमल रात भर सो नहीं सका था, अतः वह इस समय अपने क्वार्टर की खिड़की पर खड़ा हुआ प्रकृति की इस लीला को एकटक देख रहा था । वह उदास था, उसकी आँखें रात भर जागने के कारण भारी हो रहीं थी । आँखों में रक्ताभ सूत्र फैले हुए थे । प्रकृति की इस मूक लीला के द्वारा उसे एक नवीन संदेश की प्राप्ति हुई । सूर्य के इस बलिदान को देखकर उसके मन में दृढ़ता का संचार हुआ और उसने मन ही मन अपने कर्त्तव्य को पूर्ण करने का प्रण किया । उसकी आकृति पर पूर्ववत् सरलता पुनः आलोकित हो उठी । कर्त्तव्य-पालन की दीप्ति से उसकी आकृति एकदम शान्त हो गई । सत्य भी है, जब तक मनुष्य किसी काम को करने के लिए अपने अन्तर के संघर्षों में जूझता रहता है से और तर्क-वितर्कों में उलझा रहता है तब तक वह चिन्ता के एक ऐसे भयंकर रोग से ग्रसित रहता है जो उसे तिल-तिलकर जलाती रहती है, लेकिन जब वह उस कार्य को करने के लिये या न करने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ हो जाता है तो उसके आन्तरिक संघर्ष और तर्क-वितर्कों का आन्दोलन स्वतः ही समाप्त हो जाता है और वह शान्त-चित्त होकर अपने कर्त्तव्य पथ पर जुट जाता है, क्योंकि उसे अपनी उलझनों चिन्ताओं, का उचित समाधान मिल जाता है । बिल्कुल यही स्थिति कमल की भी हुई । गत रात्रि जब वह बीना को उसके कैम्प (क्वार्टर) में छोड़ कर आया उस समय उसकी मनःस्थिति बहुत अधिक डावा-डोल हो रही थी । उस समय बीना की उपस्थित में तो उसके शब्दों की

दृढ़ता का आभास पाकर उसके हृदय में साहस का संचार हुआ था। पर जैसे ही वह बीना को उसके क्वार्टर पर छोड़ कर वहाँ से चला, उसके मन में एक बार फिर विचारों का आन्दोलन उठ खड़ा हुआ और वह मन के अन्तर्द्वन्द्व में ऐसा फँसा कि सम्पूर्ण रात्रि निद्रा-भोग न कर सका। यह तो अच्छा ही हुआ कि जब उसने क्वार्टर में कदम रक्खा, उस समय तक गुरु और गोपाल सो चुके थे तथा रवीन्द्र अपने 'काम के लिये' जा चुका था। किन्तु प्रातःकालीन वेला के द्वारा उसने एक नवीन पथ का अन्वेषण कर लिया—और वह था, कर्त्तव्य-पथ! जिस पर चलने के लिये अब वह दृढ़-प्रतिज्ञ हो चुका था। अतः एक दीर्घ-श्वांस खींच कर वह अन्दर की ओर मुड़ा और अंगड़ाई लेकर उसने रात भर की खुमारी दूर की तथा उस कमरे की ओर चला, जहाँ गुरु और गोपाल सोये थे।

'कहो भई कमल, क्या हाल हैं?' गुरु और गोपाल दोनों ही इस समय, शायद बहुत देर पहले, जाग चुके थे; क्योंकि वे इस समय दाढ़ी बना रहे थे।

'ठीक ही है।' कमल ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया और अपने शेविंग का सामान निकालने लगा।

'कल देर से आये थे?' गुरू ने मुस्कुरा कर पूछा।

'हां, करीब साढ़े नौ बजे.......'

'यह क्या?—क्या रात भर सोये नहीं थे?'

'कहाँ—नहीं तो?' कमल एकदम से घबड़ा गया और गुरु ने उसकी चोरी बहुत सफाई से पकड़ ली—

'बस-बस, ज्यादा उड़ो मत! बेटा मजनू बन जाओगे—उसकी याद में अगर घुलते रहे तो?'

'तुमको गलतफहमी हुई है।' कमल ने साबुन से भीगा ब्रश दाढ़ी पर फेरते हुये कहा।

'मेरा नाम गुरु है, कमल ! और गुरु को कभी गलतफ़हमी नहीं हो सकती। बेटा, पक्का ज्योतिषी हूँ। अगर तुम कल रात भर 'उसकी' याद में न जागते रहे हो तो अभी सर कलम करवा दूं !'

'अच्छा, भई तुम जीते मैं हारा।'

'तो क्या कल बीना मिली नहीं थी।' गोपाल जब चला गया तब गुरु ने पास सरक कर पूछा।

'मिली थी।'

'तो प्रोग्राम कैन्सिल ?'

'मैंने इस विषय में कोई बात ही नहीं की, फर फायदा भी कुछ नहीं होता। क्योंकि नेता जी का आदेश....'

'हाँ, यह तो है ही।' गुरु ने सहानुभूति जताई--'और जब वह चली जायेगी, तब तुम क्या करोगे ?'

'ढपली बजाऊँगा, और क्या ?' कमल कुछ चिढ़-सा गया।

'हाँ, यही काम तेरे लिये है और इसके सिवाय हो भी क्या सकता है ?' गुरु ने उसकी झुंझलाहट में थोड़ा सा घी डाला।

'गुरु, प्लीज.... ।'

'अच्छी बात है बेटे, इस बार तो छोड़े देता हूँ, लेकिन अगली बार गच्चा खा जाओगे।'

कहता हुआ गुरू उठा और स्नान-घर की ओर चल दिया तथा कमल पुनः अपने कार्य में जुट गया।

\+ × +

उधर जैसे ही बीना अपने क्वार्टर में पहुची, उसने आशा और नीना दोनों को ही अपना स्वागत करने को तैयार पाया।

'कहिये रानी जी, क्या तय हुआ ?'

'किस बारे में ?' बीना ने पलंग पर बैठते हुये कहा।

'जाने के विषय में।'

'बिल्कुल जाऊँगी।'

'और बेचारे कमल का क्या होगा ?' नीना ने आशा को कोहनी मारते हुये बीना पर व्यंग्य कसा।

'वह रवीन्द्र की तरह नहीं है।' बीना ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया और उठकर कपड़े बदलने लगी। उधर, आशा और नीना को जिन्हें यह विश्वास था कि बीना उनके इस वार को सहन न कर सकेगी और दिल ही दिल में खूब तपेगी तब मजा आयेगा। लेकिन परिणाम आशा के विपरीत निकला और बीना के स्थान पर स्वयं उन दोनों को, अपना-सा मुँह लेकर रह जाना पड़ा। बीना के इस उत्तर से दोनों एक-दूसरे का मुँह देखने लगी और कुछ देर की फुसफुसाहट के बाद जब नीना की दृष्टि बीना की ओर घूमी तो उस समय वह साड़ी उतार कर रखने जा रही थी।

'अरे यह क्या ? कपड़े क्यों बदल रही हो ?'

'क्यों ?' बीना के हाथ रुक गये।

'हम लोगों का बुलावा आया है, जाओगी नहीं ?'

'कहाँ से ?'

'वो ''खाँ साहब ने कहलाया नहीं था—मेक-अप के लिये ?'

'हाँ, अच्छा—जल्दी चलो, देर हो गई।' उसने फिर से साड़ी की पर्तों को खोल दिया।

'अब देर हो रही है, क्यों····और जब पिया की प्रेम छाया में लेटी थीं, तब देर नहीं हो रही थी ?' आशा ने फिर चुटकी ली।

'उस समय तो समय का पता ही नहीं चला होगा !' नीना भला कैसे चूकती, अतः उसने भी मौके का फायदा उठाया।

'दीदी, आप सब कुछ जानती-बूझती हैं, फिर भी आप····

'अच्छा भई नीना, चलो नहीं तो देर हो जाएगी।'

'चलो भाई !'

'बीना, प्लीज डोन्ट माइन्ड !'

बीना की आंखों में आ गई आँसू की बूँदों को पोंछते हुये आशा ने कहा और फिर तीनों बाहर निकल कर शाह नवाज के कैम्प की ओर चल दीं। लेकिन वातावरण इस समय उदासी से बोझिल न होकर तीनों के मधुर हास्य से गूँज रहा था।

× × ×

दस बजे के करीब, कमल, गुरु और गोपाल अपनी रोज की सैनिक-शिक्षा समाप्त करके जब कैम्प में वापस आए तो वहाँ पर एक वृद्ध अंग्रेज और दो ऐंग्लो इंडियन नवयुवतियाँ उपस्थित थीं। उन लोगों को देखकर, यकायक, वे लोग चकरा गये।

'कहिये, आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?' गोपाल की वाणी से उसकी शुष्कता स्पष्ट हो रही थी।

'अरे वाह ! उलटा चोर कोतवाल को डाँटे ?' उस अंग्रेज ने साफ हिन्दी में जब कहा तो वे तीनों ऐसे उछल पड़े मानों उनके शरीरों पर एक साथ हजार वोल्ट के द्वारा प्रचालित बिजली का नंगा तार छुआ दिया गया हो।

'अरे तुम और यह....' गुरु ने एकदम से पहचान लिया।

'धत् तेरे की, अब भी नहीं पहचान पाये ?... यह बीना है और यह नीना !'

'हे भगवान, हम लोग तो चक्कर में पड़ गये थे।'

गोपाल ने बैठते हुये कहा। उसी समय आशा ने वहाँ प्रवेश किया।

'क्या पहचान लिया ?'

'नहीं भाभी, इन लोगों में इतनी ताकत कहाँ..'

'कुछ तो ख्याल कर !'

कमल ने मेरे कानों में कहा और आशा भी मुस्कराती हुई बैठ गई। इससे पहले कि मैं कमल को कुछ कहूं, गोपाल ने पूछा—

'आज जा रहे हो ?'

'हाँ, दो बजे हवाई अड्डे पर पहुँचाना है कि यहाँ से एकदम अकेले हम लोग हवाई अड्डे पर पहुंचेंगे और ढाई बजे ठीक प्लेन छूट जायेगा ?'

'सफर कहाँ तक का है।'

'इसके लिये मजबूर हूँ।'

'ओह, वैसे वहाँ भाई साहब (भगवान चन्द्र) से तो मिलोगे ही ?'

'यह भी नहीं कह सकता।' यद्यपि इन शब्दों को कहने में मुझे अपनी सारी ताकत खर्च करनी पड़ रही थी, लेकिन मरता क्या न करता—मजबूर जो था। हमको इन्स्ट्रक्शन्स ही कुछ ऐसे मिले थे। कमल और गुरू के चेहरे पर जरूर कुछ भाव आये लेकिन गोपाल मेरा आशय समझ गया अतएव बोला—

'खैर कोई बात नहीं—मैं तुम्हारा मतलब समझ रहा हूँ। अगर तुम उनसे मिलो तो उन्हें मेरा यह पत्र दे देना।'

'हाँ, यह सम्भव हो सकता है।'

कहते हुए मैंने उसका पत्र लेकर अपनी जेब में डाल लिया और फिर उससे हम लोग बातें करने लगे।

लगभग बारह बजे हम लोग वहाँ से विदा हुए। बीना का हृदय, ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो निकाल लिया गया हो। उसके नेत्रों से गंगा-जमुना उमड़ी पड़ रही थीं। वह लगातार कमल और गोपाल की तरफ ही देख रही थी। अचानक वह पलंग पर गिर कर सिसकने लगी। गोपाल और कमल के निरन्तर प्रयत्न के पश्चात् वह कुछ स्वस्थ हुई।

चलते समय का हृदय द्रावक दृश्य वर्णनातीत था। बीना को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो उसका सब कुछ जबरदस्ती छीन लिया गया हो। उसकी दशा इस समय झुण्ड से बिछुड़ी हिरनी की सी थी, जो अपने झुण्ड को सामने पाकर भी उसमें नहीं मिल सकती थी। उसके सामने उसका प्रीतम खड़ा था, लेकिन वह उससे दो बात भी नहीं कर सकती थी, उसके साथ कुलांचें नहीं भर सकती थी। उसके चारों ओर कर्त्तव्य के बन्धनों का जाल जो बुन चुका था। अब उसके पास कोई चारा, सिवाय आँसुओं को पीने के, न था। उसके आँसू सूख चुके थे और भावनाएँ कर्त्तव्य की बलिवेदी पर बलिदान हो चुकी थीं।

एक बार फिर हम लोगों का हृदय कसका और फिर हम लोग कैम्प से निकलकर अपने लक्ष्य की ओर चल दिये, और गोपाल,,आशा, कमल तथा गुरु वहीं अपने हृदयों को थाम कर रह गये। न जाने मुझे,

गोपाल को देखकर, क्यों ऐसा प्रतीत हुआ कि शायद यह हम लोगों का अन्तिम साक्षात्कार है। किन्तु मैं कह न सका। शायद यह मेरा भ्रामक विचार था, अथवा मेरी कमजोरी थी।

वहाँ से निकल कर विचारों में बहते हुये हम लोग एक टैक्सी के द्वारा हवाई-अड्डे की ओर चल दिये।

१४

प्रात:काल और पालम हवाई अड्डा। चूंकि शरद ऋतु का प्रारम्भ हो रहा था और वर्षा की वृद्धावस्था थी, अत: सम्पूर्ण पालम-भूमि हल्के कोहरे और ओस की बूंदों से ढंका हुआ था। फिर भी पालम पर व्यस्तता दीख रही थी, क्योंकि आज कुछ ही देर बाद वहाँ पर एक ऐसा युद्ध' यान सिंगापुर से आ रहा था, जिसमें वहाँ के स्थाई अथवा अस्थाई अँग्रेज निवासी आ रहे थे। वहाँ के निवासियों में जो पदाधिकारी थे वे तो जापान-सरकार के द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये थे और उनकी दया-दृष्टि पर निर्भर थे जो उसके कृपा-भाजन बनकर भारत को भेजे जा रहे थे। उनके इस कृत्य पर ब्रिटिश सरकार क्रुद्ध थी, किन्तु परिस्थितिवश कुछ अवश्य करने में असमर्थ थी। वह अवसर की प्रतीक्षा कर रही थी क्योंकि सिंगापुर की पराजय और आजाद हिन्द फौज की स्थापना से वह बुरी तरह बौखलाई हुई थी।

कुछ ही देर बाद आकाश में गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी और सुदूर पूर्व में क्षितिज पर एक काला धब्बा दृष्टिगोचर होने लगा जो क्रमश: अग्रोन्मुख होता जा रहा था। दस मिनट के अन्तर में पालम पर यान की कर्ण-भेदी भयंकर ध्वनि गूंज उठी। और फिर चीखती हुई वह मशीन सदैव के लिये शान्त हो गई जब तक कि उसे फिर से कार्यान्वित न किया जाए।

यान का द्वार खुला और एक-एक करके यात्री-गण पालम पर उतरने लगे। वे सब अँग्रेज और ऐंग्लो-इंडियन थे। सबके चेहरों पर एक कभी न मिटने वाली उदासी का अभिन्न साम्राज्य स्थापित था। पालम किसी वीरान मरुस्थल की भांति सूर्य की रश्मियाँ परावर्तित कर रहा था — कारण कि ओस से सारी पृथ्वी भीगी हुई थी। फिर उन अतिथियों का स्वागत करने के लिये वहाँ पर केवल कस्टम के अधिकारी ही थे, उन अतिथियों का कोई अन्य निकट सम्बन्धी भी वहाँ उपस्थिति न था क्योंकि सभी एक तो विदेशी थे और दूसरे जापान या सिंगापुर के निवासी !

कस्टम अधिकारी अपने-अपने कर्त्तव्य-पालन में व्यस्त थे। कोई पास-पोर्ट (वीसा) चेक कर रहा था तो कोई सामान। अधिकारीगण एक-एक व्यक्ति को बारी-बारी से चेक करके छोड़ते जा रहे थे। सबसे अंत में एक वृद्ध अँग्रेज प्रोफेसर था जिसके साथ दो नवयुवतियाँ थीं। तीनों के चेहरों और आँखों में उदासी झलक रही थी। प्रोफेसर के चेहरे की झुर्रियाँ और उसके निचले ओंठ का कुछ लटक-सा जाना उसके चेहरे पर एक अद्भुत रोब प्रकट कर रहा था। वह नीले सर्ज का गर्म सूट पहने था और हाथ में घड़ी तथा आँखों में चश्मा उसके प्रभावशाली व्यक्तित्व को और भी अधिक उभार रहा था। उसने जब यह देखा कि अधिकारी बहुत ही तेजी और सतर्कतापूर्वक सब वस्तुओं का निरीक्षण कर रहे हैं तो वह बुरी तरह से खाँसता हुआ एक पास की बेंच पर बैठ गया और दोनों युवतियाँ उसके अगल-बगल। उसने आस-पास निगाह घुमाई और समीप की युवती के कन्धे पर अपना सिर टिका दिया और कुछ फुसफुसाया तथा पुनः सिर लटका कर बैठ गया। दोनों में कुछ इशारे हुये किन्तु प्रतिक्रिया का अभी कोई प्रश्न ही न था।

लगभग पन्द्रह मिनट पश्चात् जब सब आदमी पालम से बाहर

हो गये तो उनका (अधिकारियों का) ध्यान इन लोगों की ओर आकर्षित हुआ और वे उनके पास आकर आंग्ल भाषा में अत्यन्त नम्रता से बोले—

'पासपोर्ट, सर ?'

'व्हाट ! हू आर यू–गेट आउट, यू इडियट, ब्लास्टर.....'
प्रोफेसर एकदम से चीख पड़ा और बुरी तरह से खांसने लगा।

'आप मेरे साथ आइये, मैं आपको पासपोर्ट देती हूं।' एक युवती उस अधिकारी से बोली और फिर उसने दूसरी से कहा—'लूसी, तुम डैडी को संभालो मैं आई।'

'हां, हां !' लूसी ने आश्वासन दिया।

'हां, यह लीजिए।' उस युवती ने अधिकारी को बीसा देते हुये कहा।

'बात क्या है ?'

'दरअसल यह एक बड़े वैज्ञानिक हैं, जोनाथन हार्वेड। यह एक अन्वेषण करने के लिये अमेरिका से सिंगापुर आए थे—सन् १६३७ में, लेकिन परीक्षण पूरा हुआ नहीं और युद्ध शुरू हो गया। कुछ दिन पहले इनका लड़का मार दिया गया, बस तभी से इनका दिमाग.......'

'ओह, वेरी सारी ! लेकिन आप दोनों.......'

''मैं तो उनकी सेक्रेटरी हूं, मेरेलिन, और दूसरी उनकी लड़की है, लूसी। लेकिन क्या हुआ ?' मेरेलिन उसकी आंखों में छुपी हुई वासना की काली लकीर को पहचान गई अतएव उसने सोचा, मूर्ख बनाकर काम निकाल लो वर्ना फंसोगी बुरी ! वही हुआ भी, उसकी यह चाल काम कर गई। उसने बीसा लौटाते हुए कहा—

'कुछ नहीं, कुछ नहीं। वैसे आप लोग ठहरेंगे कहां ?'

''फिलहाल तो एम्पायर होटल में.........'

'आप मिलेंगी ……?'

'जरूर, अच्छा बाई बाई !'

कहकर वह मन ही मन मुस्काती हुई अपने साथियों के साथ बिना किसी चेकिंग के बाहर आ गई।

पालम के बाहर आकर प्रोफैसर ने इशारे से एक टैक्सी को बुलाया और उसमें वे तीनों पिछली सीट पर बैठ गये।

'काश्मीरी गेट !'

प्रोफेसर का आदेश पाते ही टैक्सी अपने गन्तव्य स्थान की ओर उड़ चली।

'वहाँ क्या मतलब हल होगा, हमारा ?' मेरेलिन ने पूछा।

'सबसे पहले वहाँ चलकर ... फिर तुम्हारे घर चलेंगे, क्यों लूसी ठीक है न ?'

'हाँ यही ठीक रहेगा। मुझे तो भई, यह स्कर्ट वगैरह पहनने में ही शर्म मालूम होती है।' लूसी ने कहा।

इसके उपरान्त सब चुप हो गये और टैक्सी सड़क रौंदती रही।

राय साहब और भगवान चन्द्र अब अकेले ही देहली में रह गये थे। एडवर्ड व जेनी सितम्बर के दूसरे ही सप्ताह में छुट्टियाँ समाप्त हो जाने के कारण वापस कानपुर लौट गये थे। पर भगवान चन्द्र अभी न जाने क्यों वहाँ रुके हुये थे। देहली अब भी पूर्ववत् आंतक का केन्द्र बना हुआ था। वातावरण में अजब सी कठोरता व्याप्त थी। इसका प्रमुख कारण था—पाकिस्तान की मांग ! मुस्लिम लीग के नेता मि० जिन्ना इसी को सफलता में जोर-शोर से लगे हुए थे, लेकिन कांग्रेस

इस मांग की खिलाफत कर रही थी। गांधी जी का कहना था कि' हम लोगों को अंग्रेजों के बहकावे में आकर उत्तेजित नहीं होना चाहिये। शताब्दियों से हम दोनों एक हैं हमारी भाषा एक है, हमारी संस्कृति व सभ्यता एक है, हमारा मादर-ए-वतन एक है; और फिर जब हम एक हैं तो हमारा अलग होना कैसा? अंगरेज लोग हमको बहका कर अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं और इस प्रकार वे दो भाइयों में फूट डलवा कर दूर से तमाशा देखना चाहते हैं। ऐसे हालातों में हमको सब्र से और अक्लमन्दी से काम लेना चाहिए। और अगर हम ऐसा नहीं करते हैं तो निश्चय ही वे हमें आपस में लड़ाकर दूर से तमाशा देखेंगे और हम उनके लिए, दुनिया वालों के लिये, तमाशा बनेंगे। हम आजादी चाहते हैं, अपनी मां का आधा शरीर नहीं।'

इस प्रकार की तकरीरें रोजाना देश के विभिन्न भागों में दी जातीं, लेकिन परिणाम कुछ भी नहीं दिखाई दे रहा था और बजाय इसके दिल्ली लाहौर और कलकत्ते में खासतौर से छिपी हुई सशस्त्र बगावत के होने का अंदेशा हो रहा था। दूर क्षितिज में भयानक काली आंधी के आगमन के आसार स्पष्ट रूप से दृष्टि गोचर हो रहे थे। दोनों वर्गों में इस बँटवारे के मांग की प्रतिक्रिया हो रही थी, यह कहना कोई खास कठिन न था। इस चीज को हर देशवासी भलीभांति समझ सकता था कि किसी समय एक की रक्त-पिपासा, दूसरे के रक्त से शांत अवश्य होगी, और इसके अतिरिक्त कोई अन्य परिणाम नहीं हो सकता।

इधर कांग्रेस का राजनीतिक दृष्टि कोण यह था कि वह अपनी स्वतंत्रता की मांग बहुत ही भीषण ढंग से पेश कर रहा था और ब्रिटेन की समझ में यह बात आसानी से आ गई थी कि अब भारत को किसी भी हालत में स्वतंत्रता बहुत जल्द देनी पड़ेगी। यह बात उसकी समझ में सन् ३७-३८ में ही आ गई थी लेकिन इसी बीच

द्वितीय विश्वव्यापी महायुद्ध के कारण उसकी नीति में पुनः परिवर्तन आ गया था और उसने इस माँग को कुछ काल तक स्थगित करने के लिये 'पाकिस्तान की माँग' को प्रश्रय दे दिया था। लेकिन इससे आंदोलन घटने की बजाय और भी अधिक गम्भीर होता गया, जिसका परिणाम अभी बीच ही में लटका हुआ था, क्योंकि ब्रिटेन शायद युद्ध समाप्ति की प्रतीक्षा कर रहा था और तभी कोई कदम उठाना चाहता था। पर इतना धैर्य रख पाना भारतवासियों के लिये एक असम्भव कार्य-सा प्रतीत हो रहा था।

और उधर दुनिया की राजनीतिक अवस्था और भी अधिक, दिन-ब-दिन डाँवाडोल होती जा रही थी। क्योंकि यह युद्ध विश्वव्यापी हो गया था। रोजाना समाचार-पत्रों से जर्मनों की पराजय और मित्रराष्ट्रों की सेना की विजय के समाचार भारतवासियों को मिल रहे थे। आज भी ऐसा ही एक महत्व पूर्ण समाचार भारत के पत्रों में था—'मित्र-राष्ट्रों द्वारा नेपल्स (इटली का प्रमुख शहर) पर विजय।'

इस समय राय साहब और भगवान चन्द्र दोनों ही धूप में, लान पर, कुर्सियाँ डाले बैठे हुये थे। इस साल सर्दी भी कुछ अपने समय से पहले ही शुरु हो गई थी। थोड़ी देर बाद चाय आ गई और भगवान चन्द्र ने अखबार को एक ओर रखते हुये कहा—

'नेपल्स की पराजय से हिटलर का अब दम बिल्कुल ही टूट गया। यह हार उसे बहुत महँगी पड़ेगी?'

'हिटलर को क्या कमजोर समझ रहे हो? फिर हार-जीत तो लगी ही रहती है—और अब तो मुसोलनी भी उसके साथ हैं।'

'लेकिन राय साहब, एक बात तो तय है कि अब हिटलर को समर्पण करना ही पड़ेगा। चाहे वह आज करे या कल।'

'क्यों ?'

'क्योंकि मित्रराष्ट्रों की सेनाओं ने उसकी सेना को बुरी तरह से खदेड़ना शुरू कर दिया है और एक दिन वह अवश्य आयेगा जब…'

'ऐसा शायद ही हो !'

'राय साहब आप तो ऐसा कह रहे हैं जैसे आप……' भगवान चन्द्र ने चाय का प्याला उठा कर कुछ मुस्कराते हुए कहा।

'नहीं भई, यह मेरा नहीं बल्कि जर्मनी का एलान है कि हर हिटलर कुछ ऐसे अणु-अस्त्रों की प्रतीक्षा कर रहा है, जिनके तैयार होते ही वह सबके साथ-साथ रूस को भी बुरी तरह से कुचल देगा और……'

'यह सब गीदड़ भभकियाँ है, राय साहब ! उसने इंग्लैंड के खिलाफ भी तो कहा था कि दुनियाँ में इंग्लैंड नाम का कोई द्वीप ही न होगा। लेकिन चर्चिल की हिम्मत से उसे अपना इरादा बदल कर रूस की तरफ मुड़ना पड़ा। लेनिनग्राड में भी उसने मुँह की खाई और उसे पीछे लौटना पड़ा। जब आज उसने नेपल्स छोड़ा है, कल रोम छोड़ेगा और परसों इटली छोड़ कर फ्रांस छोड़ेगा और फिर एक दिन ऐसा भी आयेगा जब कि उसे इनसे डरकर जर्मनी से भी भागना पड़ेगा।' भगवान चन्द्र ने चाय का प्याला रखते हुए कहा।

'और लो…नहीं-नहीं, बस एक कप और। देखो भगवान हकीकत और ख्यालात दो अलग-अलग चीजें हैं। रशिया (रूस) से तो उसे केवल अत्यधिक शीत के कारण पलटना पड़ा। फिर जहाँ तक इंग्लैंड का सवाल है, उसे परेशान करने के लिये उसने अपने धुरीगुट के राष्ट्रों में से जापान को चुन ही लिया है। अभी कुछ ही दिन पहले यह एनाउंस हुआ था कि भारत पर जापान की बुरी दृष्टि पड़ चुकी है और भारत पूरी तौर पर खतरो से घिरा हुआ है। लेकिन जापान सीधी तौर पर सामने न आ कर आजाद हिंद फौज को सामने करके

और उसके कन्धे पर बन्दुक रखकर भारत का शिकार करना चाहता है। इसलिये आज हर भारतवासी का यह परम कर्तव्य है कि वह अपनी मातृभूमि को जापानियों की कुदृष्टि से बचाने के लिए अंगरेजी सरकार का अपना सक्रिय सहयोग दे ताकि हम इस पवित्र भूमि की सुरक्षा कर सकें।'

'लेकिन यह तो चालिबी है?'

'बिल्कुल है। वह यहाँ पर अपने को सुरक्षित करना चाहते हैं और इसी के लिए वह हमको आजादी का लालच दे रहे हैं।'

'लेकिन फिर आजाद हिंद फौज को बेकार ही में बदनाम किया जा रहा है, क्योंकि न तो उसका कोई सिपाही जापानी है और न ही उसका नेता।'

'फिर भी उसे हर तरह की मदद तो जापान दे रहा है।'

'हाँ यह तो है।'

'अब देखना यह है कि इसकी प्रतिक्रिया हमारे नेताओं पर क्या होती है?'

'तो क्या वे लोग इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेंगे।'

'अभी कुछ कहा नहीं जा सकता...'

रायसाहब कहते-कहते रुक गये क्योंकि बाहर किसी कार के रुकने की आवाज आई थी। कुछ ही सेकण्ड बाद एक युवती हाथ में सूटकेश लिये हुये अन्दर प्रविष्ट हुई।

'कौन– नना? तू यहाँ कैसे?'

राय साहब झपटे। नीना भी 'डैडी' कहकर उनसे लिपट गई। भगवान चन्द्र अवाक् से खड़े देख रहे थे। उन्हें विश्वास ही न हो रहा था कि यह स्वप्न है या सत्य। उसी समय एक युवक व एक अन्य युवती और प्रवेश किया।

'कौन रवीन्द्र और बीना ?'

'हां भाई साहब, नमस्कार !' मैंने व बीना ने एक साथ ही हाथ जोड़े।

'अरे; तुम लोग यहां कैसे ?'

'अन्दर चलिये, वहीं बताऊँगा।'

'हां, हां; आओ-आओ !'

रायसाहब ने कहा और हम लोग उनके साथ-साथ बंगले में प्रविष्ट हुये। अन्दर एक बड़े, शानदार, कमरे में जाकर हम लोग बैठे। तब भगवान चन्द्र ने मेरा और बीना का परिचय कराया और पूछा —

'अब बताओ।'

'लेकिन ……'

'डरो नहीं, यह स्थान पूर्णरूप से सुरक्षित है। यहां से तुम्हारा कोई भी शब्द बाहर नहीं जायेगा—इस बात की मेरी गारन्टी है, क्योंकि यह कमरा ही साउन्ड-प्रूफ है।'

'तब ठीक है।' मैं कुछ आश्वस्त हुआ अवश्य, लेकिन, मेरी चिन्ता पूर्णरूप से दूर नहीं हुई जो कि रायसाहब के बाह्य व्यक्तित्व के कारण मन में पनप रही थी। फिर भी मैंने इस बात को स्पष्ट न करते हुये एक शंकित दृष्टि उनके ऊपर से होती हुई भगवान चन्द्र पर डाली, जिसे राय साहब शायद समझ गये अतएव बोले—

'डोन्ट वरी माई सन ! तुम मेरे ऊपर उतना ही विश्वास कर सकते हो जितना कि भगवान पर करते हो।'

'धन्यवाद, रायसाहब !' मैं उनकी इस स्पष्टवादिता से कुछ लज्जित हो गया जो प्रत्येक व्यक्ति के लिये ऐसी अवस्था में स्वाभाविक

ही हो जाता है। और अंततः मुझे उनकी शंका का समाधान करना ही पड़ा। पूरी बात सुनकर राय साहब मुस्कुराये—

'बस इतनी सी बात ! मेरा बंगला इस नेक कार्य के लिये हाजिर है, तुम लोग जब तक चाहो यहाँ रह सकते हो। क्यों नीना ?'

'थैंक्यू डैडी !'

'कोई बात नहीं, कोई बात नहीं।''''अच्छा भगवान अब तो मैं चला, अब तुम्हीं संभालना।' कहकर बिना किसी उत्तर की अपेक्षा किये राय साहब चले गये। उसके पश्चात् भगवान चन्द्र मुस्कुराकर बोले—

'मैं समझता हूँ कि तुम असलियत अवश्य कुछ छिपा गये हो ?'

'जी हाँ।' मैं नत हो गया।

'मुझे तो बताओगे ?'

'बिल्कुल।' कहकर मैंने नीना और बीना को कुछ देर के लिये बाहर जाने के लिये कहा और उनके जाने के पश्चात् मैंने कहा— 'वास्तव में हम लोगों को नेता जी ने यहाँ गुप्तचरी के लिये और फौज के प्रति भारतवासियों में श्रद्धा उत्पन्न करने के लिये भेजा है। इसके साथ ही आज शाम को मुझे गांधी जी से भी मिलना है ताकि उनके विचारों को मैं वहाँ शीघ्र से शीघ्र भेज सकूँ।'

'तो क्या युद्ध घोषित..'

'हाँ कदाचित इसी माह के अन्त में !'

'ओह !... अच्छा आशा कैसी है ?'

'ठीक ही है।'

'और गोपाल, कमल वगैरा....?'

'सब ठीक हैं।....लेकिन जितेन्द्र....'

'क्या हुआ जितेन्द्र को ?' वह बुरी तरह से चिहुंक पड़े । मानो उनके शरीर से सैंकड़ों वाट की विद्युत् का स्पर्श हो गया हो ।

'वह.....वह.....' मेरा गला बुरी तरह से रुँध गया ।

'फिर भी ?'

'वह.....वह..... शहीद हो गया ।' मैं फफक पड़ा ।

'कब—कैसे ?'

तब मैंने बड़ी कठिनता से अपने को संयत किया और सम्पूर्ण स्थिति से उन्हें अवगत कराया ।

'ओह !.....अच्छा जाओ, नीना तुम्हें कमरा आदि दिखा देगी ।'

'जी ।'

कहकर मैं कमरे के बाहर निकल आया और वह शोकमग्न मुद्रा में वहीं बैठे रहे ।

भोजनोपरान्त हम लोग अपने-अपने कमरों में सोने के लिये चले गये क्योंकि गत सम्पूर्ण रात्रि, यान पर जागरण हुआ था । नीना की नींद जिस समय टूटी उस समय दोपहर बीत चुकी थी और अपराह्न के लगभग तीन बजे होंगे । नींद के खुलते ही उसके कानों में दो व्यक्तियों के बात करने की स्पष्ट आवाजें पड़ीं और वह चिहुंक पड़ी क्योंकि बातों के मध्य उसका भी नाम आया था जिससे स्पष्ट था कि वे बातें उसी के सम्बन्ध में हो रही थीं । वह दबे पांव बड़े कमरे के पास पहुँची और किवाड़ की आड़ में खड़ी होकर बातों को ध्यान से सुनने लगी । अन्दर राय साहब, भगवान चन्द्र से कह रहे थे—

'अरे यार, दो-चार दिन और रुक जाओ तो मेरी एक समस्या हल हो जाये, जो अब बिलकुल सामने आकर खड़ी हो गई है ।'

'रुकूंगा तो है ही, मगर बात क्या है आखिर ?'

'वह नीना है न ....' राय साहब ने वाक्य अधूरा ही रहने दिया जिससे नीना की उत्सुकता और बढ़ गई।

'हाँ तो उसको क्या हुआ ?' भगवान चन्द्र पूर्णतः शान्त थे।

'वह बीस की हो गई है और अब मैं ....'

'उसके हाथ पीले करना चाहते हो न।' भगवान चन्द्र के इन शब्दों से नीना के सम्पूर्ण शरीर में एक प्रकार की सुरसुरी सी दौड़ गई। उसके हृदय की धड़कनें तीव्र हो उठीं। एकांत में ही लज्जा ने उसे आदेश दिया कि वह वहाँ से भाग जाये और उनकी बातों को न सुने किन्तु आन्तरिक उत्सुकता ने उसके पाँवों को जकड़ लिया और वह कान लगाये रही, भाग न सकी।

'हाँ भगवान, यह एक बहुत बड़ा काम है, जिसके बिना मेरी मुक्ति संभव नहीं।'

'तो तुम भी मुक्ति की अनिवार्यता को मानते हो ?'

'समय पर सब मानना पड़ता है, मेरे दोस्त। कर्त्तव्य से मुक्ति कौन नहीं चाहता ?'

'हाँ हाँ, क्यों नहीं; तो मुझसे बताओ कि मैं इसमें क्या कर सकता हूँ। जो भी होगा मैं हरदम तैयार हूँ।'

'केवल एक काम।'

'क्या ?'

'तुम्हारी निगाह में कोई लड़का हो तो बताओ।'

'लेकिन इतनी जल्दी.........'

'हाँ भगवान, तुम तो अच्छी तरह से मेरे रोग को जानते हो, न जाने कब एकदम से अटैक हो जाये और यह काम अधूरा ही रह जाये।'

'वह तो ठीक है राय साहब, लेकिन फिर भी....'

'मै इस शुभ-कार्य में देरी नहीं करना चाहता, तुम ख्याल दौड़ाओ शायद कोई लड़का तुम्हारी निगाह में हो।'

इसके पश्चात् अन्दर शान्ति का विस्तृत साम्राज्य स्थापित हो गया। लेकिन नीना के हृदय में विचारों का मंथन हो रहा था। उसका कलेजा रह-रहकर होठों तक आ रहा था और वह सोच रही थी कि किस तरह वह अपने डैडी से जाकर कह दे कि वह 'किसी' से प्यार करती है और वह अपने प्रियतम से ही विवाह करेगी लेकिन वह आगे न बढ़ सकी। उसकी जुबान पर ताला लग गया और वह भगवान चन्द्र के उत्तर की प्रतीक्षा करने को तैयार हो गई। उधर भगवान चन्द्र भी सोचते-सोचते परेशान हो रहे थे कि कौन ऐसा उपयुक्त वर हो सकता है ? अचानक उनके मस्तिक में बिजली सी कौंधी—

'अच्छा राय साहब, आप किस प्रकार का लड़का चाहते हैं ?'

'किस प्रकार का क्या मतलब ?'

'मेरा मतलब जो मेरी निगाह में है वह अपने परिवार में अकेला है। मां-बाप का स्वर्गवास हुये एक अरसा बीत गया। अपने ऊपर निर्भर होकर उसने पढ़ा और फिर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ा।'

'यानी कि अन-इम्प्लायेड है ?'

'जाहिर है। लेकिन लड़का है होशियार !'

'कौन है ?'

'एक गरीब किन्तु ऊंचे खानदान का लड़का।'

'तो क्या वह शादी के बाद यहीं रहने के लिये तय्यार हो जायेगा और मेरी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनाना स्वीकार करेगा ?'

'उम्मीद तो पूरी है ?'

'फिर उसका नाम क्या है ?'

'रवीन्द्र।'

'रवीन्द्र ? लेकिन उसमें तो ......'

'यहीं पर गलती कर रहे हो, राय साहब ! उसमें बाह्य व्यक्तित्व की अवश्य कमी है किन्तु आंतरिक व्यक्तित्व उसका महान् है। वह हिन्दी साहित्य का एक होनहार लेखक है और है एक सच्चा देश भक्त।'

'सच ?'

'उतना ही, जितने कि हम और आप।'

'लेकिन क्या वह तैयार हो जायेगा ?'

'इसकी जिम्मेदारी मेरे ऊपर है। मैं सब ठीक करके ही देहली से कानपुर को रवाना होऊँगा।'

'तब ठीक है।'

इसके बाद नीना न सुन सकी। उसका दिल बेकाबू हो उठा, उसका प्रियतम जो उसे मिल रहा था। वह उछलते हृदय से बीना के कमरे की ओर चल दी, अपने दिल का हाल सुनाने।

× × ×

जब उसने यह बात पूर्णतः सुन ली कि अब वह उस व्यक्ति को आसानी से पा जायेगी जिसे पाने में उसे बहुत सी दिक्कतों का सामना करना पड़ता, तो वह अपने विचारों को अपने अन्दर दबाने में सफल न हो सकी और बेचैन हो उठी किसी ऐसे व्यक्ति पर व्यक्त करने के लिये जो इस बात से पूर्णतः अनजान हो और साथ ही विश्वासपात्र भी हो। और ऐसे व्यक्ति केवल दो ही थे—बीना और रवीन्द्र ! रवीन्द्र के पास जाकर वह कह नहीं सकती थी इसलिये वह बीना के पास ही भागी क्योंकि एक नारी होने के नाते वही नारी की भावनाओं को भलीभाँति समझ सकती थी।

बीना के कमरे में जिस समय वह पहुँची, बीना सो रही थी। उसके श्यामल मुखड़े पर एक निश्छल मुस्कान तैर रही थी तथा सम्पूर्ण शरीर एक ऊनी चादर से ढंका हुआ था। नीना ने बिना कुछ सोचे समझे ही अपने शरीर को उसके ऊपर डाल दिया।

'उई मां!' बीना चिहुँक उठी—'तो तुम हो?'

'और नहीं तो क्या कमल है?'

'अच्छा जी,' बीना ने पलंग पर बैठे-बैठे ही अँगड़ाई ली और बोली—'आज बहुत खुश नजर आ रही हो?'

'हाँ बीना, जी चाहता है कि इस खुशी के मौके पर सारे शहर में नाचूँ।' कहते हुये नीना बीना से लिपट गई।

'क्यों नहीं। शहर क्या हिंदोस्तान भर में नाचो, लेकिन बात क्या है। हम भी तो सुनें?'

'हाय! यही न पूछो।' बीना ने सीने पर हाथ रख कर ठंडी सांस भरते हुये कहा।

'तो फिर जाओ अपना काम करो, मुझे सोने दो।' बीना कृत्रिम झुंझलाहट के साथ बोली।

'अरे नाराज हो गई, अच्छा बताती हूँ ···' कहकर नीना उठी और उसने कान में कुछ कहा।

'सच?'

'हां री, आज डैडी और अंकल में बात हो रही थी।'

'अरी वाह! फिर क्या है, अब तो पासपोर्ट पक्का— हनीमून की तैयारी करो। चट मंगनी और पट ब्याह।'

'लेकिन वह भी तो तैयार हो जायें, तब न।'

'कौन रवीन्द्र?····अरे उसको मैं तैयार कर लूंगी, उसकी बहन जो ठहरी।'

'कब ?'

'आज ही लो।'

'सच, बीना ?'

'हाँ भाभी, कहो तो उलटी लटक कर कहूँ।'

'नहीं !' कहते हुये नीना ने अपनी सहेली को अपने अंक में खींच लिया। उसकी प्रसन्नता उबली पड़ रही थी। वह बार-बार बीना के चेहरे पर स्नेह के चिन्ह अंकित कर रही थी, और बीना चुपचाप बैठी मुस्कुरा रही थी।

'डैडी, हम लोग घूमने जा रहे हैं।' नीना ने कमरे के बाहर से ही पुकार कर कहा।

'अभी से ? अभी तो चार बजे हैं।'

'हाँ डैडी, हम लोग जल्दी ही लौट भी आना....'

'अच्छा, अच्छा जाओ।'

राय साहब से आज्ञा लेना वैसे तो नीना के लिये कोई आवश्यक न था, फिर भी उसने पूछ लेना ही उचित समझा। बाहर आकर उसने कार निकाली और स्वयं ड्राइवर की सीट पर जम गई। बीना के साथ मैं भी पीछे बैठ गया। थोड़ी देर बाद ही कार बिड़ला मंदिर के सामने थी। मुझे कुछ आश्चर्य हुआ—

'यहाँ कैसे नीना ?'

'यह देहली का सबसे बड़ा और दर्शनीय मंदिर है।'

'यह तो मुझे भी मालूम है। लेकिन आज मैं दुनिया का आठवाँ आश्चर्य देख रहा हूँ।'

'क्या ?'

'कि आज बीना और मंदिर'''' भई अपनी कुछ समझ में नहीं आया।'

'सब समझ में आ जायगा, भाई साहब। अगर आप मंदिर नहीं जाना चाहते तो न जाइये, लेकिन कम से कम मुझे तो देख ही आने दीजिये।'

बीना के इन शब्दों ने मुझे आश्चर्य में और अधिक डाल दिया। इतना तो समझ ही गया था कि आज दोनों ने या तो मुझे मूर्ख बनाने की ठानी है और या फिर कोई खास बात है। मैंने, फिर भी, इसे पूछ लेना ही उचित समझा।

'आखिर बात क्या है, बीना ?

'कुछ भी तो नहीं, भाई साहब, आप तो बेकार शक कर रहे हैं।'

'यह तो मैं मान ही नहीं सकता कि तुम लोग बिना किसी खास मकसद के यहाँ आई हो और फिर वीना''''''

'क्यों -- क्या मैं औरत नहीं हूं ?'

'यह मैंने कब कहा ?'

'वाह, यह भी अच्छी रही। मार भी दिया और फिर पूछते हैं कि खून कहाँ निकला?'

'नहीं, नहीं सुनो तो सही।'

'देखिये साहब, अगर चलना हो तो चलिये, नहीं तो हमारे पास बहस के लिये समय नहीं है, क्यों बीना ?'

'बिल्कुल ठीक।'

'चलो भाई, अब तो फँसे हैं ही।'

मेरे इस कथन पर दोनों मुस्करा दीं लेकिन मैंने इस मुस्कराहट को भाँप लिया कि आज किसी न किसी बात का रहस्योद्घाटन अवश्य होगा। चलते-चलते बुद्ध के मन्दिर में हम लोग पहुँचे और एक स्थान पर बैठ गये। सामने गौतम बुद्ध की निर्वाणावस्था में निर्मित लगभग बीस फुट ऊँची पीतल की मूर्ति बैठी हुई थी। मैं एक क्षण के लिये अवाक् रह गया। मूर्ति की आकृति पर एक अद्भुत तीव्र प्रकाश दैदीप्य हो रहा था, जिसके कारण उनकी आकृति पर दृष्टि न ठहर कर उनके उस हाथ पर ठहरती थी जिससे वह विश्व को आशीर्वाद व विश्वशांति का उपदेश दे रहे थे। उनकी निर्वाण-मुद्रा इस बात की परिचायक थी। लेकिन शांति का प्रकाश तो जैसे सम्पूर्ण विश्व से लुप्त हो चुका था और उसके स्थान पर साम्राज्यवादी कलह तथा अशान्ति का एक ऐसा दौर चल रहा था, जिसके प्रवाह में इन्सान, इसान की वास्तविकता को भूलता जा रहा था। घरों में फूट पड़ चुकी थीं। भाई, भाई के खून का प्यासा हो रहा था। दोनों की नजरें बदल चुकी थीं और भारत के क्षितिज पर एक ऐसे अन्धड़ के आगमन का आभास हो रहा था जिसमें क्या होगा, कोई नहीं जानता था। मैं धीरे धीरे कल्पनालोक में उड़ने लगा। अचानक मुझे समीप में निर्मित बौद्ध भिक्षुओं की मूर्तियों में सजीवता नजर आने लगी। वे कह रहीं थी और उनकी आवाज उत्तरोत्तर तीव्र होती जा रही थी—

'बुद्धं शरणं गच्छामि।
संघं शरणं गच्छामि।
धम्मं शरणं गच्छामि॥'

मैं आश्चर्य के सागर में उतरा रहा था। दीवारों पर बनी चित्रकारी जैसे सजीव होकर बोल रही और मैं खोता जा रहा था—डूबता जा रहा था। उसी समय बीना ने टोका।

'भाई साहब, कहाँ खो गये ?'

'आँ''''हाँ, कहीं नहीं। नीना कहाँ गई ?'

'उसकी फ्रेण्डस आ गई'''''

'अच्छा, जाने दो। यह भगवान् बुद्ध की प्रतिमा देखी ? वाह, कितना अलौकिक तेज है, आकृति पर। इच्छा होती है कि मूर्तिकार के हाथ चूम लूं।'

'एक बात कहूँ भाई साहब ?'

'जरूर।'

'आप 'नाहीं' तो नहीं करेंगे ?'

'अगर बात ठीक होगी तो नहीं।'

'तो फिर रहने दीजिये।'

'आखिर बात क्या है ?'

'कुछ भी नहीं।'

'नाराज हो गई, मेरी बहन।'

'नाराज मैं क्यों होने लगी ? मैं हूँ कौन आपकी'''

'बीना; ऐसी बात मत कहो। मैं मेरे बारे में तो तुम अच्छी तरह से जानती हो कि न तो मेरे माँ है और न बाप। मैंने बचपन में किसी का प्यार नहीं पाया और अब तुम'''

'नहीं भाई, साहब मेरा यह मतलब न था।' वह मेरी आँखों में आँसू देखकर एकदम घबड़ा गई।

'मेरी अच्छी बहन, अब कभी ऐसी बात न कहना मैं'''

'मैं माफी माँगती'''

'अच्छा अब बता, क्या कह रही थी ?'

'नहीं पहले वादा !' बीना मुस्कुराई।

'अच्छा वायदा किया।'

'ऐसे नहीं मेरे सिर पर हाथ रख कर ।'

'चल यह भी मंजूर है, अब बता ।'

'बात यह है कि अब आप शादी कर लीजिए ।'

'शादी ? नहीं बीना, कम से कम अभी यह संभव नहीं''''मेरी बात का कहीं तुम कोई और अर्थ न लगा लेना ।'

'लेकिन मैं यही तो जानना चाहती हूँ कि आखिर आप क्यों इन्कार कर रहे हैं ?

'बीना, तुम यह तो जानती ही हो कि हम लोग किस दल के सदस्य है और किस शपथ के अन्तर्गत हम अपनी अंतिम श्वास तक की आजादी के लिये अर्पित कर चुके हैं ?'

'मैं समझती हूँ भाई साहब; मैं स्वयं उसी शपथ के कारण आपके सामने इस बात को न चाहते हुये भी कहने को विवश हो गई हूँ ।'

'सब कुछ जानते हुये भी ?'

'हाँ, भाई साहब । वास्तव में भगवान चन्द्र जी की भी यही''''

'क्या ?''' ओह !'

'राय साहब ने असल में उनसे नीना के लिए लड़का तलाश करने को कहा था और इत्तिफाक से उन्होंने आपका नाम तजवीज कर दिया । अब आपके तैयार''''

'और राय साहब ?'

'वह तो आपकी 'हाँ' का इन्तजार कर रहे हैं ।'

'लेकिन बीना तुम मेरे विषय में सब कुछ जानते हुए भी यह काम करने को कह रही हो ? तुम तो जानती ही हो मुझ पर कितनी समस्यायें एक साथ आ पड़ेंगी, पहली चीज तो मेरा कोई स्थाई निवास स्थान नहीं है । दूसरे, मेरे परिवार में मेरे सिवाय और कोई भी नहीं

है। तीसरे, मैं तो ठहरा फक्कड़ आदमी क्योंकि नौकरी वगैरह तो मुझसे हो नहीं सकती।'

'इन सबकी चिन्ता करने की आपको कोई आवश्यकता नहीं.....'

'सब सोच-समझ लो वीना; कहीं ऐसा न हो कि नीना बाद में पछताए.....'

'तो क्या आप नीना से प्रेम नहीं करते ?'

'इससे मैंने कभी इंकार नहीं किया। चूँकि मैं उससे प्रेम करता हूँ इसीलिये मैं इससे इन्कार कर रहा हूँ, वीना। प्रेम और शादी दो अलग-अलग वस्तुएँ होती हैं।'

'मैं आपकी इस बात को नहीं मानती।'

'देखो वीना, मैं नहीं चाहता कि शादी के बाद मेरी वजह से नीना को कोई तकलीफ हो।'

'भाई साहब, आप यह क्यों भूलते हैं कि औरत को दौलत नहीं मोहब्बत चाहिये।'

'खैर भई, तुम जैसा समझो, करो।'

'सच !'

'हाँ वीना, अगर मैं किसी से हारा हूँ तो सिर्फ तुमसे।'

'आपकी बहन जो ठहरी। आइये अब चलें।'

'और नीना ?'

'वह बाहर है !'

'तो इसीलिये तुम लोग मुझे यहाँ लाई थीं, क्यों ?'

'अब भी नहीं आया समझ में ?'

'शैतान कहीं की !'

मैंने उसे पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाया और वह खिलखिलाती हुई बाहर भाग गई। मजबूरन मुझे भी चलना पड़ा। बाहर निकलते

ही मेरी दृष्टि नीना और बीना पर पड़ी। वह नीना के कान में कुछ कह रही थी तथा नीना मुस्कुरा रही थी। उसी समय मैं वहां पहुंचा मुझे वहां पाकर नीना की दृष्टि एक बार उठकर मुझसे टकराई और फिर फूलों के बोझ से लदी हुई डार की भांति पृथ्वी की ओर झुक गई।

'अब चला जाये ?' बीना ने प्रश्न किया।

'हां' और नहीं तो क्या ? तुम्हारी नीना का मतलब तो हल हो गया। लेकिन एक सिर-दर्द और पैदा हो गया।'

'वह क्या भाई साहब ?'

'तेरी शादी कब करूं ? आज ही कमल को बुलवाता हूं।'

'भाई साहब !' बीना शरमा गई।

'अच्छा भई, अब घर चलना चाहिये - सात बज चुके हैं। फिर अपना असली काम.........'

'हां, चलो।'

लेकिन चलते-चलते भी हम भगवान शिव के दर्शन करना नहीं भूले। शिव की मोहक व आकर्षक आकृति को देखकर मैं एकदम से ठिठक गया। न जाने क्यों, भोले नाथ की वह भोली आकृति आवेशयुक्त दीख पड़ रही थी। उनका रूप परिवर्तित हो चुका था। ताण्डव नृत्य विनाश-लीला में बदल चुका था। प्रलयंकारी शिव के तीसरे नेत्र से अग्नि का प्रकोप स्पष्ट हो रहा था। मैं सर से पांव तक कांप उठा।

'हे भगवन् ! क्या होने वाला है ?'

'ओऽम् नमः शिवाय।'

उसी समय किसी भक्त की आवाज सुनाई और मैं चौंका दी फिर उसके बाद मैं वहाँ एक पल भी न ठहर सका और सीधे घर वापस आ गया, जहाँ दो दिन पश्चात् चुपके से एक मन्दिर में हम दोनों का विवाह हो गया। लेकिन तीसरे ही दिन..........

१५

आज सूर्य कुछ तेजी से चमक रहा था। सिंगापुर का बच्चा-बच्चा उमड़ा पड़ रहा था। कैथे इमारत के चारों ओर एकत्रित जन-समूह सागर की भांति दीख पड़ रहा था। कन्धे से कन्धा छिल रहा था। क्या बच्चा और क्या वृद्ध, क्या नर और क्या नारी, क्या युवा और क्या अधेड़, सभी वर्ग व जाति के लोग उस अपार जनसमूह में उपस्थित थे। चारों ओर दृष्टिपात करने पर प्रतीत होता था कि उमड़ता हुआ ये जनसमूह अपने अंतर में एक क्रांतिमय हलचल भी छुपाये है। जैसे सागर में लहरें उठ रही थीं, जो साधारण न होकर तूफानी थीं। सम्पूर्ण जनसमूह उत्तेजित था और वातावरण भी गर्म था। प्रत्येक व्यक्ति आपस में कानाफूसी कर रहा था जैसे कोई असाधारण घटना घटित होने जा रही हो। और वास्तविकता भी यही थी। आज एक ऐसी महत्वपूर्ण घटना घटित होने जा रही थी जो भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखी जायेगी। वह कानाफूसी जो पहले मन्द स्वरों में हो रही थी अब उत्तरोत्तर तीव्र होती जा रही थी। अचानक एक तूफान उठा। हजारों आवाजें सिंगापुर में गूंज गईं। वातावरण गर्म हो उठा और जन-समुद्र के मध्य यकायक रास्ता बनने लगा'

'नेता जी की जय''' '''भारतमाता की जय'' ''आजाद हिन्द फौज जिन्दाबाद'''' '''नेता जी जिन्दाबाद.......'

सम्पूर्ण जनसमूह काई की भांति फटता जा रहा था और उसके मध्य बने हुए रास्ते पर एक फौजी जीप मन्थर गति से कैथे की ओर बढ़ती दिखाई दे रही थी, जिस पर आजाद हिन्द फौज के दो प्रमुख नेता उपस्थित थे। सूर्य की तीव्र रश्मियों के मध्य नेता जी और रास बिहारी बोस की सौम्य आकृतियां जीप पर खड़ी होकर जनता के अभिवन्दनों का उत्तर दे रही थीं। दोनों की मुखाकृति पर प्रसन्नता का असीम, तथा अजेय साम्राज्य स्थापित था, जिसका प्रमुख कारण था—पराधीन भारत की स्वतंत्रता के लिये आजाद हिन्द सरकार की स्थापना।

मन्थर गति से चलती हुई जीप लगभग पन्द्रह मिनट में कैथे के दरवाजे पर पहुँची। स्वागत के लिये वह अपार जनसमूह एकबार पुनः उत्तेजित हो उठा। इस उत्तेजना से ऐसा प्रतीत हुआ मानो कोई अप्रिय घटना घट ही जायेगी किन्तु ऐसा कुछ न हुआ। नेताजी व रास बिहारी के उतरते ही भीड़ ने उन्हें रास्ता दिया और वे सकुशल द्वार तक पहुँच गये। द्वार से एक बार फिर दोनों ने जनता का अभिवादन किया और इसके पश्चात् कैथे में प्रवेश किया।

कैथे का हाल भी खचाखच भरा हुआ था। नेता जी के प्रवेश के साथ ही हाल 'नेता जी की जय' व अन्य नारों से गूंज उठा। किन्तु मंच तक पहुँचते ही वह नारे कानाफूसी में बदल गये। परन्तु यह कानाफूसी भी अधिक देर तक स्थाई न रह सकी। कुछ देर के बाद श्री रास बिहारी बोस ने स्वागत-भाषण तथा कर्नल चटर्जी ने सेक्रेटेरियट की रिपोर्ट पढ़ी और उसके पश्चात् नेता जी की वह भव्य मूर्ति मंच पर खड़ी हुई, जिसकी एक ललकार पर सारा देश बिना कुछ सोचे-समझे ही आग में कूद जाने को तैयार था। कहते हैं कि डूबते को तिनके का सहारा ही काफी होता है, किन्तु इस समय तो नेता जी एक ऐसे जहाज थे जिस पर पूर्वी एशिया के सभी भारतीय सवार होने के लिये तैयार थे। नेता जी के मंच पर आते ही हाल में उपस्थित व्यक्तियों की सांसे रुक गईं। हर आदमी उनके मुख से उच्चरित एक-एक शब्द को सुनने

के लिये लालायित हो रहा था। सर्वप्रथम नेताजी ने इस नवनिर्मित सरकार की स्थापना का महत्व समझाया और उसके पश्चात् रास विहारी बोस ने उन्हें शपथ दिलवाई। शपथ के पूर्व ही सम्पूर्ण भवन गगन-भेदी हर्ष ध्वनियों से गूंज उठा। वे इस समय अत्यधिक विह्वल हो रहे थे। उनके नेत्र अश्रुपूर्ण थे तथा कण्ठ भावावेश के कारण अवरुद्ध हो चुका था। पर उनकी आवाज़ तेज और हिमालय की भांति दृढ़ थी। शपथ का एक-एक शब्द उनके हृदय की गहराइयों से निकलता प्रतीत हो रहा था और वे भावविह्वल से माइक पर बोल रहे थे :

'ईश्वर को साक्षी करके मैं यह पुनीत शपथ लेता हूँ कि मैं सुभाष चन्द्र बोस, हिन्दुस्तान और अपने ३८ करोड़ देशवासियों को स्वतंत्र करने के लिए स्वतंत्रता की इस पुनीत लड़ाई को अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक जारी रक्खूंगा।' इस स्थान पर वे एक क्षण के लिए रुके। ऐसा मालूम हो रहा था कि अब वह रो पड़ेंगे किंतु वह एक संयमी तथा दृढ़ व्यक्ति थे। इसके विपरीत हर उपस्थित व्यक्ति अचेतावस्था में ही उनकी ओर झुकता जा रहा था। हर एक के ओंठ बन्द थे और साँसे रुकी हुईं। वे आगे कह रहेथे—'मैं सदा हिन्दुस्तान का वफादार सेवक बना रहूँगा और अपने ३८ करोड़ भाइयों और बहनों के कल्याण-क्षेम की रक्षा करूंगा। यह मेरा सबसे बड़ा कर्त्तव्य होगा। और स्वतंत्रता लेने के बाद भी हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता को कायम रखने के लिए सदैव अपने रक्त की अन्तिम बूंद तक बहाने को तैयार रहूँगा।'

शपथ लेने के पश्चात् वह पुनः मौन होकर बैठ गए और तब उस आजाद-हिन्द सरकार के प्रत्येक सदस्य ने मंच पर आकर नेता जी व हिन्दुस्तान के प्रति वफादारी की शपथ ली—

'ईश्वर को साक्षी करके मैं यह शपथ लेता हूँ कि मैं अपने देश हिन्दुस्तान को अपने ३८ करोड़ देशवासियों को स्वतंत्र कराने के लिए

अपने नेता सुभाषचन्द्र बोस के प्रति पूरी तरह से वफादार रहूँगा और इस उद्देश्य के लिये अपना जीवन तथा सर्वस्व न्योछावर करने को सदा तैयार रहूँगा।'

इस प्रकार शपथ-कार्य लगभग दोपहर तक चलता रहा और दोपहर के पश्चात नेताजी ने पुनः मंच पर खड़े होकर एक घोषणा की उनकी आवाज में एक ललकार थी – ब्रिटिश सरकार के लिए, और एक नवचेतना का संदेश थी, भारतवासियों के लिये —

'सन् १८५७ में बंगाल में अंग्रेजों से पहली बार हारने के बाद हिन्दुस्थान के लोगों ने सौ वर्ष तक कठिन और भीषण लड़ाईयाँ लड़ीं। इस समय तक इतिहास में अद्वितीय वीरता और आत्म-बलिदान के सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं। इतिहास के इन पन्नों में बंगाल के सिराजुद्दौला और मोहनलाल, दक्षिण के हैदरअली, टीपू और वेलू थावरी, महाराष्ट्र के अप्पा साहब और पेशवा बाजीराव, पंजाब के सरदार श्यामसिंह और रानी लक्ष्मीबाई, तात्याँ टोपे, डुमराँव के नाना साहब तथा महाराज कुँवर सिंह के नाम स्वर्णाक्षरों में खुदे हुये हैं। दुर्भाग्य से हमारे पूर्वजों ने पहले यह अनुभव नहीं किया कि अंग्रेज पूरे हिन्दुस्तान के लिये खतरनाक हैं, इसीलिये उन्होंने संयुक्त मोर्चा बनाकर उनका मुकाबला नहीं किया। अंत में जब हिन्दुस्तानियों ने असली स्थिति का अवलोकन किया तो उन्होंने संगठित होकर कार्रवाई की और सन् १८५७ में मुगल बादशाह बहादुरशाह के झण्डे के नीचे आकर उन्होंने स्वतंत्र मनुष्यों के रूप में अपनी अंतिम लड़ाई लड़ी।

'सन् १८५७ में अंग्रेजों द्वारा बलात् निःशस्त्र किये जाने और आतंक व पाशविकता का शिकार बनाए जाने के बाद, हिन्दुस्तानी कुछ समय के लिये दब गये। लेकिन राख से ढकी चिन्गारी १८८५ में फिर दहक उठी राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस की स्थापना होने पर नवीन जागृति का युग आरम्भ हो गया। पहले महायुद्ध तक हिन्दुस्तानियों

ने अपनी खोई हुई स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिये आन्दोलन व प्रचार, अंग्रेजी (विदेशी) माल का बहिष्कार, आतंकवाद तथा तोड़-फोड़ और सबसे अंत में सशस्त्र क्रांति जैसे सभी तरीके आजमा लिये। और जब सब ओर से वे निराश हो कर अंधकार में भटक रहे थे तो उस समय १६१० में महात्मा गांधी असहयोग और सविनय अवज्ञा की नयी मशाल लेकर आगे बढ़ाये और अग्रणी बने।

'इस प्रकार हिन्दुस्तान के लोगों ने अपनी-अपनी राजनीतिक चेतना ही नहीं प्राप्त की, बल्कि वे फिर राजनीतिक दृष्टि से संगठित हो गए। अब वे एक आवाज में बोल सकते थे, और सम्मिलित उद्देश्य की इच्छा को लेकर एक साथ लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कदम बढ़ा सकते थे। १९३७ से ३९ तक आठ प्रांतों में जो कांग्रेसी सरकारें बनीं उन्होंने यह दिखा दिया कि हिन्दुस्तान के लोग अपना शासन कार्य खुद संभाल सकते है। और इस प्रकार वर्तमान विश्व युद्ध (द्वितीय विश्व महायुद्ध) से पूर्व ही हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता के लिये अंतिम युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थीं।

'भारत में अंग्रेजी राज्य ने हिन्दुस्तानियों को अपनी मक्कारी से निराश कर दिया था और उन्हें अपनी लूट-पाट से भुखमरी और मृत्यु की हालत में पहुंचा दिया था। इससे अंग्रेजी राज्य के प्रति हिन्दुस्तानियों की रही सही सद्भावना भी जाती रही थी और उसकी हालत डावांडोल हो गई थी। अब इस दुखदायी राज्य के अन्तिम तख्ते को तोड़ने के लिए केवल एक चिन्गारी की जरूरत है। और इस चिन्गारी को फूंक मारकर जलाना ही हमारी इस स्वतंत्रता की सेना का ध्येय है।

'अब चूंकि स्वतंत्रता का वह सुप्रभात क्षितिज में दिखाई पड़ रहा है, जिसकी हम वर्षों से प्रतीक्षा कर रहे थे, इसलिये हिन्दुस्तानियों का कर्त्तव्य है कि वे अपनी स्थाई सरकार बना लें और उस सरकार के

झण्डे के नीचे अन्तिम संघर्ष छेड़ दें। लेकिन चूंकि इस समय हिन्दुस्तान के सब नेता जेलों में हैं और देश के भीतर लोग बिल्कुल बेहथियार हैं, इसलिए अब पूर्वीय एशिया के भारतीय स्वतंत्रता संघ का यह कर्त्तव्य है कि वह अस्थाई आजाद हिन्द सरकार बना ले।

'अस्थाई सरकार को इस बात का हक है और वह इसके लिए मांग भी करती है कि हिन्दुस्तानी उसके प्रति वफादार रहें और उसका साथ दें। वह नागरिकों को गारंटी देती है कि उनको धार्मिक स्वतंत्रता के साथ-साथ समान अधिकार प्राप्त होंगे। वह अपना यह इरादा भी घोषित करती है कि वह सारे राष्ट्र के सुख व समृद्धि के लिए सदैव प्रयत्नशील होगी और राष्ट्र की सब सतानों के साथ समान व्यवहार करेगी तथा भूतकाल में विदेशी सरकार ने चालाकी से जो मतभेद उत्पन्न कर दिये हैं उनका उन्मूलन करेगी।

'ईश्वर और पिछली पीढ़ियों के नाम पर जिन्होंने सब लोगों को एक जाति में मिला रखा था और उन मृत वीरों के नाम पर जिन्होंने हमारे लिए वीरता और बलिदान की परम्परा छोड़ी है, हम हिन्दुस्तानियों का आवाहन करते हैं कि वे इस झण्डे के नीचे इकट्ठा होकर हिन्दुस्तान की आजादी के लिए लड़ें। हम उन्हें आमंत्रित करते हैं कि वे अंग्रेजों के विरुद्ध और भारतीय गद्दार मित्रों के विरुद्ध अंतिम लड़ाई छेड़ें और वीरता तथा धैर्य के साथ, अंत में अपनी विजय पर विश्वास करके, उस समय तक इस लड़ाई को चलायें जब तक कि दुश्मन हिन्दुस्तान की भूमि से पूरी तरह खदेड़ न दिया जाए और हिन्दुस्तान के लोग एक बार फिर स्वतंत्र जाति के न बन जायें जय हिन्द!'

इसके पश्चात् उन्होंने अस्थाई सरकार के उन सदस्यों के नाम पढ़े जिन्होंने उस घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर किये थे और तत्पश्चात् वह सभा अनिश्चित काल के लिए विसर्जित कर दी गई।

हाल के भीतर तो एक अवश्य अस्फुट शांति थी किन्तु हाल के बाहर और इमारत के चारों ओर उपस्थित अपार जन-समूह में एक नवीन उत्तेजना थपेड़ें मार रही थी। लाउड-स्पीकरों द्वारा प्रसारित उस शपथ का जो नेता जी द्वारा ली गई थी, तथा उस घोषणा का भीड़ पर व्यापक प्रभाव पड़ा। हर हिंदुस्तानी का हृदय अपने प्रिय नेता के प्रति सम्मान और श्रद्धा से भर गया। उनका शीश आज गर्व से पर्वत की भांति ऊँचा उठा हुआ था। उनके मन-मस्तिष्क में केवल एक ही विचार था—भारत स्वतंत्र होगा, चाहे कितनी ही भयंकर लड़ाई के बाद क्यों न हो अब हम पराधीन नहीं रह सकते। हम पराधीनता की बेड़ियों को काटने की हर संभव कोशिश करेंगे"'और सिर्फ कोशिश हीं नहीं बल्कि इस प्रण को पूरा करके दिखायेंगे। इस प्रकार इस अंतिम स्वतंत्रता-संग्राम में, अन्त में, हमारी ही जीत होगी और भारत पराधीन नहीं कहलायेगा। वह स्वतंत्र हो जायेगा—आजाद हो जायेगा। हम गुलाम देश के निवासी नहीं वरन् स्वतंत्र भारत के पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त नागरिक होंगे। हमारा भारत विश्व में किसी भी देश से, किसी भी हालत में, कम नहीं रहेगा। भारत विश्व का नेतृत्व करेगा और विश्व में अग्रणी बनेगा।""इस पुनीत कार्य को पूर्णता प्रदान करने के लिए हम अपना सब कुछ कुर्बान कर देंगे। तन-मन-धन होम कर देंगे।'

हर व्यक्ति यही सोच रहा था और अस्थाई सरकार की स्थापना हो जाने और नेता जी का दृढ़ आश्वासन पाकर वह अपनी कल्पना को सुदूर क्षितिज में प्रकृति और सत्य के सतरंगी रंगों से रंगने का प्रयास कर रहा था। वातावरण आवश्यकता से अधिक उत्तेजित था। जन-समूह मुट्ठियाँ बांधकर और अपने-अपने हाथों को आकाश की ओर उठाकर एवं गगन भेदी नारों, के द्वारा अपनी उत्तेजना को प्रदर्शित कर रहा था। अचानक वे नारे अत्यधिक तीव्र हो उठे, क्योंकि नेता जी की वह दृढ़ व सौम्य आकृति कैथे के द्वार पर आकर खड़ी हो

गई। जन-समूह एक बार पुनः गगनभेदी नारे लगा कर मौन हो गया। चारों ओर यकायक स्तब्धता का विराट् साम्राज्य स्थापित हो गया। नेता जी ने एक बार मुस्कराकर एवं दोनों हाथ जोड़कर जनता का अभिवादन किया।—'जय हिन्द!'

'जय हिन्द !!'

वातावरण में हजारों आवाजें एक साथ उभर कर गूंज गई और नेता जी पुनः मुस्कुराते हुये अपनी जीप पर खड़े हो गये तथा जीप उस अपार जन समूह के मध्य मन्थर गति से तैर चली।

'भई एक चीज है।' कपड़ा उतारते हुए कमल ने कहा।

'क्या ?'

'व्यक्तित्व के साथ साथ नेता जी की आवाज में एक ललकार है। जिसकी वजह से हर आदमी उनकी ओर आकर्षित हो जाता है। कोई भी व्यक्ति, उन्हें एक नजर भर देखने के पश्चात्, ऐसा नहीं होगा जो उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना रह जाये।'

'हाँ यह सत्य है कि उनकी आवाज और सूरत में एक ऐसा जादू है जो किसी को भी आसानी से अपने वश में कर सकता है।' गुरु ने कमल की बात का अनुमोदन किया।

'देखो, अगर उनकी आवाज में यह ललकार और जादू भरा जोशन होता तो आज आजाद हिन्द फौज अपने कर्त्तव्य-पथ पर इतनी शीघ्रता से कभी नहीं बढ़ सकती थी। इसका सारा श्रेय उनकी आवाज को ही है जिसके कानों में भी पड़ती है वह उनका बेदाम का गुलाम हो

जाता है। इसका एक मात्र उदाहरण नेता जी की वह दो-तीन स्पीचें हैं जिनके द्वारा ही उन्होंने कांग्रेस के अध्यक्ष का पद पा लिया था।'

'वह कैसे ?'

'विदेश से शिक्षा प्राप्त कर जब नेता जी भारत वापस आये तो इस समय कांग्रेस के अध्यक्ष का चुनाव होने जा रहा था। इन्होंने भी अपना नाम दे दिया। अब उस पद के दो उमीदवार थे—एक तो डॉ अम्वेदकर, जो गांधी जी के द्वारा खड़े किये गये थे और दूसरे नेता जी। डॉ० अम्वेदकर के लिये गांधी जी का साथ पंडित जवाहर लाल नेहरू दे रहे थे और नेता जी अकेले थे। फिर भी इन्होंने हिम्मत नहीं हारी। जहाँ कहीं भी नेहरू और अम्वेदकर का भाषण होता वहीं नेता जी भी पहुँच जाते और अपने भाषणों के द्वारा जनता को अपनी ओर कर लेते। फल यह हुआ कि कांग्रेस के अध्यक्ष नेता जी चुन लिये गये और डॉ अम्वेदकर हजारों वोटों से पराजित हुये, जिससे महात्मा गांधी को शायद भारी दुख हुआ। उसी समय नेता जी ने अपनी हिम्मत का परिचय दिया। वे तुरन्त गांधी जी के पास पहुंचे और अपना त्याग-पत्र उनके चरणों पर रखकर बोले—'महात्मा जी यह पद का इस्तीफा रखा है और मैं स्वतंत्र रहकर ही भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रयत्न कर सकूंगा। आप केवल यूं ही बैठे रहिये और मैं हिन्दुस्तान की आजादी लाकर आपके कदमों पर डाल दूंगा।' यह था उनका आत्म विश्वास और साहस, जो आज साकार होने जा रहा है।'

'तो क्या युद्ध होगा ?' कमल ने प्रश्न किया।

'बिल्कुल होगा !'

'कब ?'

'इसकी भी घोषणा बहुत शीघ्र की जायेगी—जहाँ तक मेरा ख्याल है कि इन्हीं तीन-चार दिनों के अन्दर।'

'लेकिन गांधी जी और उनके साथी इसमें अपना सहयोग देंगे ?'

'इसमें सन्देह है। अभी कल की रवीन्द्र के द्वारा, प्राप्त सूचना के अनुसार गांधी जी का यह कथन है कि न तो वह ब्रिटिश सरकार का ही साथ देंगे और न हमारा ही।'

'यानी कि वे हमसे पूर्णतः पृथक रहेंगे ?'

'भई, उनकी इस बात से तो यही जाहिर होता है और आगे की भगवान जाने। यह सूचना रवीन्द्र ने तभी दी है जब कि उसने स्वयं इसे सुना होगा।'

'इस पर नेता जी का क्या विचार है ?'

'कुछ नहीं। वे अपनी बात और अपने कार्यों पर दृढ़-प्रतिज्ञ हैं।'

'अच्छा, रवीन्द्र ने कुछ और भी कहा था ?' कमल ने पुनः प्रश्न किया।

'हाँ एक सूचना हम लोगों के लिये भी थी। उसका और नीना का ब्याह बड़ी मुश्किलों के बाद परसों हो गया है।'

'लेकिन मुश्किलें कैसी ....?' गुरू ने अपना पलंग बिछाते हुए कहा।

'वही अमीर-गरीब वाला मामला था। नीना के पिता जी बंगाल के गवर्नर के रिटायर्ड सेक्रेटरी हैं। उनके पास पैसा है, सब कुछ है। उन्होंने भगवान चन्द्र से किसी लड़के को, नीना के लिए ढूँढने को कहा तो उन्होंने रवीन्द्र का नाम प्रस्तुत कर दिया। इस पर पहले तो नीना के पिता जी कुछ चौंके लेकिन फिर उन्होंने इस कार्य का सारा भार उनके (भगवान चन्द्र के) ऊपर छोड़ दिया। नीना और वह दोनों का एक दूसरे से प्रेम था तो, लेकिन यह बाहर स्पष्ट

नहीं था। रवीन्द्र इस बात पर तैयार न था कि आजादी के पहले उसकी शादी हो जाए। लेकिन बीना और भगवान चन्द्र के तर्कों ने उसे विवश कर दिया और मजबूर होकर बेचारे को शादी करनी पड़ी।'

'पड़ गए यह भी चक्कर में— !' गुरू ने माथा ठोका।

'घबड़ाओ नहीं गुरू जी, कभी मौका आयेगा तब पूछूंगा आटे-दाल का भाव।' कमल ने पलँग पर लेटते हुए कहा।

'आजकल युद्ध के कारण बहुत मँहगाई है, कमल बेटे— !'

'अच्छा भई, अब शांति ! रात बहुत हो गई है, सबेरे भी जल्दी ही उठना है। क्या पता कब जरूरत पड़ जाये ?'

'अच्छा साथियों जय हिन्द !'

'जय हिन्द।'

कहकर वे सब अपने-अपने पलँग पर लेट गये और खो गए अपनी मधुर कल्पनाओं के सतरंगी महलों के मध्य !

अन्तत: वह दिन आ ही गया जिसका भारत गत छियासी वर्षों से इन्तजार कर रहा था आज से लगभग पच्चासी वर्ष पूर्व अप्रैल १८५७ में एक भारतीय सैनिक मंगल पाण्डे के नेतृत्व में कुछ सैनिकों ने अंग्रेजों के विरुद्ध भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का श्री गणेश किया था और आज फिर एक बार भारतीयों ने नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में पुन: दूसरे स्वतंत्रता-संग्राम को शुरू करने का बीड़ा उठाया था। उनकी स्वतंत्रता की इच्छा शक्ति अत्यधिक बलवती हो उठी थी। एक ओर तो महात्मा गांधी के नेतृत्व में 'भारत-छोड़ो-

आन्दोलन' भारतीयों ने शुरू किया हुआ था और दूसरी ओर आज से विदेशों में प्रवास करने वाले भारतीयों ने नेता जी के नेतृत्व में 'दिल्ली चलो आन्दोलन' की शुरुआत करने का निश्चय पूर्ण रूप से कर लिया था।

सिंगापुर के म्युनिसिपल भवन के सामने एक बार फिर, शायद आखिरी बार ही, अपार जन समूह उमड़ पड़ा। इसमें अधिकतर भारतीय और आजाद हिन्द फौज के ही सैनिक मात्र थे। इस विशाल जन सभा में प्रत्येक सैनिक को, जो आजाद हिन्द फौज में था, उपस्थिति पूर्णत: अनिवार्य थी। हर एक व्यक्ति भाँति-भाँति की अटकलें, अपने-अपने दिमाग के अनुसार इस सभा को बुलाने के विषय में, लगा रहा था। हर व्यक्ति इस सभा को अचानक बुलाने का आशय जानना था। लेकिन फिर भी किसी व्यक्ति को सपने में भी गुमान नहीं था कि आज आजादी के युद्ध की घोषणा की जायेगी। हाँ, लोगों का यह अनुमान अवश्य था कि आज कोई असाधारण घटना अवश्य घटने वाली है। यही हुआ कि :— और वह असाधारण घटना भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी गई।

ठीक साढ़े दस बजे म्युनिसिपल भवन से भारतीयों की चिर-परिचित मानवाकृति बाहर आई। सारा वातावरण नारों की बुलन्द आवाजों से गर्म हो उठा और हर व्यक्ति के मुख पर अपने प्रिय नेता के दर्शन करते ही प्रसन्नता की एक लहर दौड़ गई। हर आदमी उनके मुख से निकलने वाले शब्दों का इन्तजार कर रहा था। नेता जी ने सर्वप्रथम प्रत्येक दस्ते की क्रमश: सलामी ली और उसके पश्चात् उन्होंने माइक पर सबको सम्बोधित करते हुए कहा।

'मंत्रियों की कौंसिल ने अपनी दूसरी बैठक में कल आधी रात के बाद यह प्रस्ताव पास किया है कि 'अस्थाई आजाद हिन्द सरकार ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करती है।''

इस घोषणा के साथ ही नारों से आसमान फटने लगा। गूँज से ऐसा प्रतीत होता था मानो भूमण्डल पर भूचाल आ गया हो। क्या सैनिक और क्या नागरिक दोनों ही, एकदम प्रसन्नता से उछल पड़े थे। पन्द्रह-बीस हजार आदमियों की भीड़ अपनी प्रसन्नता और कर्त्तव्य-परायणता प्रदर्शित करने को आतुर हो रही थी। शीघ्र तिशीघ्र नेता जी के पास पहुँच जाना चाहती थी। बहुत प्रयत्न करने पर भी भीड़ पर नियंत्रण, लगभग पन्द्रह मिनट तक न किया जा सका। लोगों ने उत्तेजित होकर एक-दूसरे को हाथों पर उठा लिया। महिला संगठन की कुछ सदस्याएँ अत्यधिक प्रसन्नता और उत्तेजना के वशीभूत हो मूर्छित होकर गिर गईं। मारे प्रसन्नता के उनके चेहरों के रक्त की लालिमा अत्यधिक स्पष्ट हो गई थी। उनकी मुट्ठियाँ उत्तेजना के कारण बन्द हो गई थीं तथा हाथ ऊपर को उठे हुये थे। उनका तन तो अवश्य अचेत हो गया था, किन्तु मन में तो प्यारा भारत बसा हुआ कुलांचें मार रहा था। इस बात का प्रमाण स्पष्ट था कि अचेत होने पर भी वे बड़बड़ा रही थीं—'दिल्ली चलो'''' दिल्ली चलो !'

उधर भीड़ का यह हाल था कि वह किसी भी प्रकार काबू में नहीं आ रही थी, रोकने के लिये बनाये गये घेरों को उत्तेजनावश तोड़ दिया गया। जब नेता जी ने यह देखा कि भीड़ किसी भी प्रकार से काबू में ही नहीं आ रही है तो वह पुनः माइक पर आये।

'देखिये, इस प्रकार से हमारा मतलब हल न हो सकेगा। आप लोग शांतिपूर्वक अपने स्थान पर ही खड़े रहकर अपनी स्वीकृति हमें प्रदान कर दें।'

नेताजी के इन शब्दों का भरपूर प्रभाव पड़ा और भीड़ जहाँ की तहाँ थम गई और यकायक ऐसा मालूम हुआ मानो नागरिकों की ओर से हाथों का एक जंगल खड़ा हो गया हो, उसी समय सैनिकों ने

भी अपनी-अपनी संगीनें ऊँची करके अपनी सहमति और स्वीकृति प्रदान कर दी। और इस प्रकार स्वतंत्रता-संग्राम के अन्तर्गत अंतिम अध्याय का आरम्भ हुआ।

यह घोषणा उसी समय जापान तथा सिंगापुर (बर्मा) के रेडियो द्वारा सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित कर दी गई।

१६

सिंगापुर आने और आजाद हिन्द फौज में भर्ती होने पर गोपाल की वह पुरानी आदत फिर से उभर आई, जिसे वह समझदार होने अर्थात् यूनीवर्सिटी के समय पर त्याग चुका था—और वह थी उसकी डायरी लिखने की आदत। वह अपनी इस आदत को बहुत बुरा समझता था। उसके अनुसार, किसी भी व्यक्ति के रहस्य उसकी डायरी के द्वारा अत्यन्त सरलतापूर्वक जाने जा सकते हैं। क्योंकि एक ऐसा व्यक्ति जिसे सदैव डायरी लिखने का शौक रहा हो कभी भी इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि वह अपने रहस्यों को अपनी डायरी में प्रकट न करे। यही कारण था कि गोपाल ने अपनी यह आदत छोड़ दी थी, किन्तु फौज में आ जाने पर उसकी इस आदत ने फिर जोर पकड़ा और वह फिर से इसमें रुचि लेने लगा था। इसका प्रमाण मुझे उस समय मिला जब कि कमल के द्वारा मुझे उसकी डायरी की प्रत्येक बात सुनने को मिली थी और मैंने स्वयं उसका अध्ययन किया था। वह रोजाना रात को सोने से पूर्व दिन भर का पूरा ब्योरा लिख डालता था।

गोपाल को सुभाष ब्रिगेड की बटालियन न० २ में कप्तान के पद पर नियुक्त कर दिया गया था और उसी में कमल तथा गुरु भी सैनिक की भाँति हो गये थे। यह बटालियन रंगून पहुँच कर

मिगलडोन की फौजी बैरकों में ठहरी और फिर गोपाल ने मेजर जनरल शाह नवाज खाँ के साथ मिलकर कूच करने की आखिरी तैयारियां प्रारम्भ कीं। जिसका पूर्ण विवरण एक दिन कमल ने गुरु को गोपाल की डायरी से सुनाया। गोपाल ने लिखा था—

यहाँ पहुँच कर हमारे सामने, कूच करने के वक्त, बहुत सी कठिनाईयाँ उत्पन्न हो गईं। जिनकी वजह से हमको आगे चलकर कुछ दिक्कतों का सामना करना पड़ा। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण कठिनाई है, यातायात की। हमारे पास कुल पांच लारियाँ थीं, जो सब रसद, हथियार, गोला-बारुद तथा घायलों को ढोने के लिये पूर्णतः अपर्याप्त थीं। उनकी मरम्मत के लिये हम लोग न तो एक उचित वर्कशाप की ही व्यवस्था कर पाये और न ही उनके कल-पुर्जों की। यदा-कदा जापानी कम्पनियाँ हमारी मदद कर देती थीं जो किसी भी हालत में नहीं के बराबर थी। हमने जापानियों से मदद लेने की भरसक कोशिश की लेकिन वह भी बेकार ही सिद्ध हुई। अन्त में हम लोगों ने स्वयं ही सारा सामान ढोने का बीड़ा उठाया है। इसके अलावा हमारे पास कपड़ों और मच्छरदानियों की भी कमी है और यह कठिनाई एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में हमारे सामने खड़ी है, क्योंकि हम अच्छी तरह से यह समझ चुके हैं कि अगले मोर्चों पर हमको भयानक शीत और इससे भी भयंकर रोग मलेरिया का सामना करना पड़ेगा। फिर भी मुझे खुशी है कि मेरी कम्पनी और ब्रिगेड के सभी सैनिक इन सब बातों से अनभिज्ञ न होते हुए भी अनभिज्ञ हैं। इसका पता मुझे उस दिन चला जब कि (रंगून में) यहाँ नेता जी ने सबकी एक सभा बुलाकर इन कठिनाइयों का पर्दाफाश किया। इस पर सैनिकों ने कहा कि आप बेकार ही इस झंझट में पड़े हैं, हम लोगों को सिर्फ मोर्चे पर पहुँचने की आज्ञा दे दीजिए, बस! बाकी इंतजाम हम लोग स्वयं ही कर लेंगे और जब नेता जी ने पूछा 'कैसे' तो उन्होंने कहा कि यह सब सामान हम अंग्रेजों की रसद से प्राप्त हो

जायेगा। इस पर नेता जी केवल मुस्करा कर रह गए और उन्हें आश्वासन देकर वह उसी जापानी प्लेन के द्वारा जापानी फौज से समझौता करने के लिए जापान को उड़ गए।

जापानी फौज से समझौता करने के पश्चात् (जनवरी के अन्तिम सप्ताह में) हम लोगों, अर्थात् 'सुभाष ब्रिगेड' के कमाण्डर मेजर जनरल शाहनवाज खां, को उसकी मुख्य बातें मालूम हुई मैं यद्यपि एक साधारण कप्तान मात्र ही हूँ, किन्तु मुझे गर्व है कि मैं खां साहब ऐसे महान् व्यक्तित्व का कृपापात्र बन सका हूँ। वह मुझसे असीम स्नेह रखते हैं और यही कारण है कि मैं उनके हर रहस्य से अवगत रहता हूँ।

जापानी फौज के साथ जो समझौता हुआ है उसकी मुख्य बातों से अवगत होते ही मेरे हृदय में नेता जी के प्रति श्रद्धा का असीम सागर उमड़ आया और मैं मन ही मन उस व्यक्तित्व के समक्ष नत हो गया जो वास्तव में देशभक्त है। मेरी इस भावना से कमल और गुरू भी अवगत हैं! काश! मैं आशा तथा रवीन्द्र, वीना व नीना को भी अवगत करा पाता। यद्यपि वे शर्तें गुप्त हैं फिर भी मैं उन्हें लिख रहा हूँ, क्योंकि भविष्य से अनजान हूँ न जाने कब शहीद होना पड़े। इन शर्तों पर पहले तो जापानी जनरल ने विवाद किया किन्तु बाद में उसे स्वीकार करना पड़ा। वे निम्न है—

'सर्वप्रथम तो यह कि फौज के छोटे-छोटे टुकड़े न किए जायें और बटालियन के सभी अफसर हिन्दुस्तानी हों। दोनों फौजें एक ही नीति पर चलें। युद्ध के मोर्चे का एक हिस्सा आजाद हिन्द फौज को सौंपा जाये। हिन्दुस्तान की जमीन का चप्पा-चप्पा आजाद होने पर इन्तजाम के लिए आजाद हिन्द फौज को सौंप दिया जाये। साथ ही अंग्रेजों से छीना हुआ सामान भी। आजाद हिन्द फौज का दरजा हर बात में बराबर समझा जाये। दोनों तरफ के दो अफसर जब मिलें तो

छोटा अफसर, चाहे वह किसी ओर का भी क्यों न हो, बड़े अफसर को सलाम करे और जब वे समान श्रेणी के हों तो दोनों के हाथ एक साथ उठें। आजाद हिन्द फौज का अपना एक अलग कानून है और हमारे साथी उसी के मुताबिक कार्य करेंगे, साथ ही हम अपने कायदों व उसके अनुशासन में जापानियों को किसी भी प्रकार की दखलन्दाजी बरदाश्त नहीं कर सकते।'

जापानी जनरल ने इस अन्तिम बात को स्वीकार करने में आपत्ति दिखाई, इस पर नेता जी ने कहा, 'मैं तथा पूर्वी एशिया के सभी लोग इस लड़ाई को 'आजादी की लड़ाई' के नाम से पुकारते हैं, इसलिए हम चाहते हैं कि हम हिन्दुस्तान के लिए अपना सब कुछ कुर्बान कर दें। मैं चाहता हूँ कि इस लड़ाई के अगुआ हम ही रहें और हिन्दुस्तान की जमीन पर जो पहली खून की बूंद गिरे वह आजाद हिन्द फौज के सिपाही के शरीर की हो। यह बात मैंने अपने देशवासियों से भी कह दी है। इसके साथ दो बातें और हैं—पहली, हिन्दुस्तान की जमीन पर जो भी व्यक्ति लूट-मार या बलात्कार करता हुआ पाया जाये उसको तुरंत गोली मार दी जाये चाहे वह हिंदुस्तानी हो, या जापानी। दूसरी बात यह कि हिंदुस्तान की जमीन पर सिर्फ तिरंगा ही फहराने दिया जायेगा।'

इसके बाद नेता जी वापस लौट आये और कल मैं, मेजर जनरल शाहनवाज खाँ के साथ जापानी कमाण्डर इन चीफ से जाकर विदा ले आये और अब कूच का इन्तजार कर रहे हैं।

गोपाल मेजर राम सिंह की मातहत रहने वाली कम्पनी में था और कमल तथा गुरू भी इसी कम्पनी में थे। और जब यह कम्पनी

हाका और फालम के इलाके में पहुँची तो गुलाबी जाड़ा पड़ रहा था और उधर मौसम भी सुहावना ही रहता था। हाका और फालम का इलाका पहाड़ी है और दोनों क्रमशः ६००' और ७२००' की ऊँचाई पर स्थित हैं। इस कम्पनी ने मीया हाका (नौचांग) पर अपना डेरा डाला और जब यह मालूम हुआ कि फालम पर रसद खत्म हो गई है, तो कम्पनी ने मेजर जनरल शाहनवाज के द्वारा जापानियों से सम्बन्ध स्थापित किया, लेकिन जापानियों ने जब आ० हि० फौज को टका सा जवाब दिया तो विवश होकर सिपाहियों ने यह तय किया कि वे अपने साथियों को रसद अपने सिर पर ढोकर पहुँचायेंगे। और ऐसा ही हुआ। यद्यपि उस स्थान से फालम करीब एक सौ तीस मील पड़ता था और रास्ता था पहाड़ी। लेकिन वाह रे जवानों! हिम्मत न हारी और अपने साथियों को रसद पहुँचाने के लिए वे तैयार हो गए। गोपाल चूँकि शाहनवाज का प्रियपात्र था इस कारण उसने बखूबी इस कार्य का उत्तरदायित्व अपने सिर लेकर निभाया।

रसद पहुँचाने के लिए आठ-आठ मील पर कई चौकियाँ बना ली गई थीं और हर आदमी लगभग सोलह मील रोज चलता था। इस प्रकार से बाकायदा फालम पर रसद पहुँचायी गयी।

फालम में पहुँचने पर मालूम हुआ कि वहाँ बड़ी भयानक सर्दी पड़ रही थी, फिर रसद की भी दिक्कत थी इस कारण वहाँ केवल १०० ही आदमी रक्खे जा सके। उनके पास भी केवल एक गरम कुर्ता और एक ही कम्बल था, अतः वे रात भर आग तापते रहते थे क्योंकि सर्दी में नींद ही नहीं आती थी। ऐसे ही ग्रुप में एक रात कमल और गुरु तथा कई अन्य सिपाही बैठे बातें कर रहे थे।

'बाप रे! कितनी तेज सर्दी पड़ रही है।' एक सिपाही ने हाथों को आग से सेंक कर मलते हुये कहा।

'अमाँ, तुम्हें सर्दी की पड़ी है, यहाँ साले मच्छर नहीं सोने देते।'

कमल ने बीच में टांग घुसेड़ी, क्योंकि बैठे-बैठे वहां सबका दिल ऊब रहा था।

'यह बात तो है। अंग्रेज तो इस घाटी में साले घुस भी नहीं सकते हैं—बिना मच्छरदानी के! क्योंकि अगर मान लो कि वे हमारा मुकाबिला कर भी लेंगे ता मच्छरों से कैसे लड़ेंगे?' एक ने यह कहकर कई के समर्थन प्राप्त किये। लेकिन तभी एक तम्बाकू मलते हुये सिपाही बोला—

'ये भी खूब कही! अमां यह भी कोई तुक की बात है - करेंगे क्या, साले डी० डी० टी० की दवा छिड़का करेंगे, हमें भी कुछ फायदा ही होगा?'

'क्यों नहीं, क्यों नहीं! अमां पहले तम्बाकू तो फांक लो।' गुरू ने उसे पानी पर चढ़ाया।

'अरे नहीं यार, कसम खुदा की, अगर नेताजी का हुकुम हो जाये तो सालों को हुक्के का पानी पिला-पिलाकर नाक न रगड़वा दूं तो मेरा नाम लल्लन नहीं!'

'अमां ऐसी कसम खाओगे, लल्लन मियां?' गुरु ने उकसाया।

'लेकिन हुक्का कहां से लाओगे?' कमल ने भी साथ दिया।

'बिल्कुल गंवार हो यार, अमां हुक्के के पानी का मतलब है, उनको हिन्द से हम बाहर खदेड़ देंगे।'

'पहले इन मच्छरों को तो खदेड़ो!' कमल कहना चाहता था लेकिन तभी गोपल को आता देख कर चुप हो गया और सभी ने उसे सलामी दी।

'मेरे साथ आओ।'

कहकर वह आगे बढ़ गया और गुरु तथा कमल उसके पीछे हो लिये। दूसरे दिन प्रातः ही वे ढाका के मोर्चे पर पहुंच गये। वहां

दुश्मनों की बहुत ज्यादा चौकियाँ थीं और गोपाल, गुरु तथा कमल तीनों अब ढाका कैम्प में ही रह रहे थे।

एक रात... अचानक कैम्प में कहीं गोली चलने की आवाज सुनाई दी और गोपाल तुरंत एक जबरदस्त पतरौल लेकर दुश्मन की खोज में बाहर निकल आया। लेकिन तब तक दुश्मन पीछे भाग गया था। फिर भी गोपाल ने उसकी खोज की पर बेकार।

'अब पलट चलो—सूखे हाथ, आए थे हरि भजन को, ओटन लगे कपास!' कमल ने गुरु के कन्धे पर हाथ मारते हुये कहा।

'अभी नहीं! क्योंकि कहावत ठीक स्थान पर नहीं बैठी।'

'तो न बैठे! अपन तो अब उकता गये हैं। इतने इन्तजार के बाद तो आज एक मौका हाथ आया था कि जरा दो-दो हाथ होते —लेकिन वह सूरत देखते ही। इतना डर गये कि बिना सूरत दिखाये ही वापस लौट लिये। —डरपोक कहीं के, अगर कहीं....'

'हाँ, हाँ बहुत ज्यादा बहादुर हो बेटे, शायद एक ही गोली में तुम उनका सफाया कर देते?'

'नहीं, तुम तो अब...'

'भई कमल, तुम्हारी बातों से तो अब मैं तंग आ गया।' गोपाल ने लौटने का आर्डर देते हुये कहा।

'अभी कहाँ? इब्तिदाये इश्क में रोता है क्या' आगे-आगे देखिये होता है क्या?'

'अच्छा, अच्छा, बात कम, काम ज्यादा।'

'चल-चल रे नवजवान, पीछे को तू पलट कर....'

'आ गये साहित्यकार के शागिर्द! एक हैं जो बेचारे शादी कर के मौज कर रहे हैं....'

'और दूसरे हैं जो बेचारे शादी के लिये तरस रहे हैं?'

घाटी के चारों ओर ऊँची पहाड़ियाँ हैं—जिनपर ढाका बसा बसा हुआ है—इन्हीं के आगे कुछ दूर पथ पर क्लॅग-क्लॅग नामक स्थान है, यहीं मेजर महबूब अहमद को पहुँचना था। सिपाही अत्यधिक उत्साह से भरे हुये थे।

चारों ओर से खड़ी ऊँची चट्टानों के मध्य स्थित यह चौकी अत्यन्त सुरक्षित थी। इसके रास्ते पर दुश्मन की बन्दूकें तैनात थी, अतः जब कोई और रास्ता नहीं दिखाई दिया तो कुछ साथियों की मंत्रणा हुई और निश्चय किया गया कि आक्रमण सामने से ही किया जाये। इस कार्य की सिद्धि के लिये गोपाल ने अपना नाम प्रस्तुत किया और दस आदमियों को साथ लेकर उसने उन उड़ी चट्टानों पर चढ़ना शुरू किया, जिन पर पैर रखने को भी स्थान नहीं मिल सकता था। यहाँ गोपाल का वह अनुभव बहुत कारागर सिद्ध हुआ, जो उसने स्कूल-शिक्षा के दौरान कैम्प में जाकर प्राप्त किया था और उसे किसी भी प्रकार के पहाड़ पर चढ़ने की कुशलता में सर्वश्रेष्ठ होने का प्रमाण पत्र मिला था; इसालिये उसका प्रस्ताव स्वीकृति भी हो गया। फिर ईश्वर और गोपाल का भाग्य भी साथ दे रहा था जो उचित समय पर चन्द्रोदय भी हो गया, लेकिन कुछ ही क्षणों के लिये क्योंकि पाँच मिनट बाद ही अर्थात् चन्द्रोदय होने के बाद—एक बड़े बादल के टुकड़े ने चाँद को ढंक लिया। यह पाँच मिनट का समय ही गोपाल के लिये बहुत था, क्योंकि वह केवल एक बार उस पहाड़ी को देखना चाहता था, और इतने ही समय में उसकी कुशल दृष्टि से वह स्थान छिपा न रह सका जो इस कार्य में उसकी सहायता कर सकता था। उस स्थान पर पहुँच कर उसने एक रस्से को अपनी कमर से बाँधा और खूँटे गाड़-गाड़ कर उसने चढ़ना शुरू किया। वास्तव में यह एक अत्यन्त साहस का कार्य था, क्योंकि जरा भी पैर फिसलने के अर्थ थे सीधे हजारों फिट गहरी खाई में गिरकर काल के गाल में समा जाना। लेकिन वह बढ़ता जा

रहा था और उसी का अनुकरण अन्य भी सिपाहियों को करना था। उस पहाड़ी के कुछ दूर नीचे ही दीवार में एक ऐसा प्राकृतिक स्थान था जहाँ सरलता से बारह-चौदह व्यक्ति लेट सकते थे, अतः गोपाल ने वहीं रुक कर पहले तो अपने साथियों को ऊपर चढ़ाया और इसी भाँति आवश्यकतानुकूल सामान को भी। इस स्थान से उनका लक्ष्य-स्थान कुल छः फुट की ऊँचाई पर था और दुश्मन पूर्णतः असावधान था। क्योंकि वह सपने में भी नहीं सोच सकता था कि इसके पीछे से भी कोई आ सकता है। गोपाल ने उसकी इस विचारधारा का लाभ उठाया और बहुत ही सावधानी से दो मशीनगनें उपयुक्त स्थानों पर रखवा कर वह हटने ही जा रहा था कि दुश्मन की नजर पड़ गई और उसने गोलियों की बौछार दी जिसका प्रत्युत्तर गोपाल के सैनिकों ने 'ईंट का जवाब पत्थर से' के पूर्णतः अनुकूल ही दिया, जिससे दुश्मन की बन्दूकें बन्द हो गई और गोपाल तथा उसके साथी सावधानी से आगे बढ़े।

अभी वे कुछ ही दूर आगे बढ़े होंगे कि दुश्मन की अन्य पास की बन्दूकों से गोलियों की चार बौछारें आईं जिसके कारण कुछ पलों के लिये गोपाल को निष्काम-सा लेटा रहना पड़ा, क्योंकि उठने के सीधे अर्थ थे—मौत, और इतनी साधारण मौत गोपाल तथा उसके साथी चाहते नहीं थे; अतः गोपाल के संकेत पर वे सब पूर्णतः निश्चेष्ट भूमि पर पड़े रहे हो। कुछ सेकण्ड प्रतीक्षा करने के पश्चात् गोपाल ने जेब से दो हथगोले—हैण्डबम—निकाले और अपने साथियों को सावधान होकर बढ़ने का आदेश दिया जब उसने अनुमान लगा लिया तो अचानक ही खड़े होकर वह चिल्लाया 'जय हिन्द' और इसके साथ ही 'धाँय-धाँय' की आवाज के साथ वह दोनों बन्दूकें हमेशा के लिये बेकार हो गई। और कैम्प का बाहरी घेरा टूट गया।

थोड़ी देर की लड़ाई के बाद ही दुश्मन चौकी छोड़ कर भाग निकला लेकिन गोपाल के साथियों ने इस पर भी उसे नहीं छोड़ा और भागते हुए दुश्मन पर गोली बरसाकर चौकी पर पूर्ण अधिकार

स्थापित कर लिया, जहाँ से उन्हें बहुत से फल, मक्खन, भोजन, हथियार तथा गोला बारूद मिले। तब तक पूर्वाकाश में प्रातःकाल के चिह्न दृष्टि-गोचर होने लगे थे और कुछ ही देर में, सूर्योदय के पश्चात् और कोहरे के दूर होने पर, आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों ने अपनी प्रथम विजय के दर्शन किये—कि क्लैंग-क्लैंग पर ब्रिटिश झंडे के स्थान पर भारतीय तिरंगा लहरा रहा था.........

नागा पहाड़ियों पर लगभग १२०० फुट की ऊँचाई पर एक कोहिमा नामक स्थान है और इसके बाद ही इम्फाल का क्षेत्र शुरू हो जाता है। मेजर जनरल शाह नवाज के नेतृत्व में सुभाष ब्रिगेड ने यहाँ पर डेरा डाला था। मीठा हाका से कोहिमा पहुँचा कर गोपाल ने पुनः अपनी डायरी खोली, जो अनेक कठिनाईयों के कारण उस प्रथम विजय श्री के कारण बन्द सी हो गई थी। कोहिमा पर अवसर पाकर उसने पुनः २ जून को लिखा।

क्लैंग-क्लैंग की चौकी पर अधिकार कर लेने के पश्चात् हम आगे के लिये आर्डर का इन्तजार कर रहे थे, तभी एक ऐसा समाचार प्राप्त हुआ कि जिससे कम्पनी के सैनिक प्रसन्नता से नाच उठे मेजर महबूब अहमद को एक नया हुक्म मिला कि 'दुश्मन की चौकी को पूरी तौर पर बरबाद करके जितनी जल्दी हो सके तुरत हाका लौटो, क्योंकि ब्रिगेड को दूसरा काम सौंपा गया है, जिसके अनुसार ब्रिगेड का एक बड़ा हिस्सा कोहिमा जायेगा और इम्फाल पर अधिकार होते ही ब्रह्मपुत्र को पारकरबंगाल में जा घुसेगा' हमारे सैनिकों के लिए यह हुक्म एक वरदान था; कहते हैं न, कि तोड़ना आसान है बनाना कठिन, लेकिन सेना में हुक्म अनुशासन का एक सर्वोच्च अंग है; अतएव तुरंत हम हाका लौट आये।

इस वक्त इम्फाल में बड़ी भयानक वर्षा हो रही थी और वहाँ की जापानी पलटन ने जिस अंग्रेजी फौज को घेर रक्खा था उसकी मदद को वहाँ एक हिन्दुस्तानी डिवीजन हवाई जहाजों के जरिये पहुँच चुका था, इसके अतिरिक्त उनकी एक और पलटन दीमापुर और कोहिमा की तरफ से हमला करने जा रही थी, जिसका भरपूर दबाव जापानियों पर पड़ रहा था, इसी कारण से हमें वहाँ पहुँचने का हुक्म मिला था। यहाँ से (मीठा हाका से) तामू तक का सफर जापानी लारियों में तय किया गया, इनमें सत्तर फीसदी वह व्यक्ति थे जो मलेरिया से पीड़ित होने पर भी इस शुभ कार्य में पीछे नहीं रहना चाहते थे। तामू से खरासोम और कोहिमा तक का सफर पैदल तय करना पड़ा। यहाँ पहुँचकर हमने पहला कार्य यह तय किया कि कोहिमा की पथरीली भूमि पर भारतीय तिरंगा फहरा दिया। तब तक अँग्रेजों की मदद पहुँच जाने के कारण वे रोजाना बड़ी तेजी से छुट-पुट हमले कर रहे थे, लेकिन हमारे सैनिक भी उनका अच्छी तरह से मुकाबला कर रहे थे। लेकिन यहाँ की भयंकर बरसात के कारण वह पहाड़ी सड़क बह गई है जिससे रसद हम तक पहुँचती थी, और अब हमारे सामने सबसे बड़ी दिक्कत रसद की थी जो दिन पर दिन भयानक होती गई। स्थिति इतनी भयंकर हो गई है कि आज दो हफ्तों से सैनिकों को भोजन का एक अंश भी नहीं प्राप्त हुआ है और सैनिकों ने वहाँ की घास को उबाल कर तथा उसमें नमक मिलाकर खाना शुरू कर दिया है। ईश्वर जाने आगे क्या होगा! साथियों की यह हालत देखकर कभी-कभी तो परिस्थितियों पर गुस्सा आता है और कभी आँख से आंसू बह निकलते हैं, लेकिन इस पर भी हम यहां से हटने को तैयार नहीं हैं और इम्फाल को जीतने की आशा में तुले बैठे हैं। गजब साहस है! धन्य है वह भारत माँ, जिसकी धरती पर ऐसे-ऐसे वीर लाड़ले जन्म लेते हैं........!

अभी, जब मैं और शाहनवाज खाँ राउन्ड पर गए तो पता

चला कि डाक्टरों के पास दवाइयाँ भी समाप्त हो चुकी हैं। साथ ही जंगल में अब बारिश के कारण इतनी भयंकर मक्खियां पैदा हो गई हैं, जो जख्म पर सीधे और बुरी तरह से हमला करती हैं और उन पर कीड़ों की शक्ल में अण्डे दे देती हैं, जिसके परिणामस्वरूप एक-आध घंटे में ही वह जख्म इतना उभर जाता है कि सैनिकों के पास सिवाय 'जय हिन्द' के नारों के साथ प्राण त्यागने के और कोई चारा नहीं रह जाता देखकर हमने कल ही जापानी कमाण्डर से मिलने का फैसला किया है। है। यह इसके बाद ही कुछ तय किया जा सकेगा।

× × ×

२७ जून शाहनवाज खां के द्वारा जापानी जनरल ने सुभाष ब्रिगेड को तामू तक पीछे हटने का हुक्म दिया। वास्तव में, यह हुक्म हम लोगों के लिए बहुत ही ज्यादा खतरनाक साबित हुआ। एक सिपाही के लिए उसके कमाण्डर का हुक्म बहुत बड़ी अहमियत रखता है, इस वजह से हम पीछे हटने को मजबूर हो गए। पीछे हटने में भी दिक्कतें थीं और कोहिमा में रहने पर भी। हमारे साथ यही कहावत चरितार्थ हो रही थी कि एक ओर कुआं तो दूसरी ओर खाई। सारी सड़कें और पगडंडियां मूसलाधार पानी के गिरने से बह गई थीं या उन पर भारी कीचड़ हो गई थी। हमने नए रास्ते बनाए, लेकिन थोड़ी ही देर में वे भी कीचड़ और पानी से भर गए और घुटनों तक कीचड़ में चलना कितना दुष्कर कार्य हो सकता है, इसकी कल्पना वही कर सकता है जो ऐसी विकट परिस्थितियों में कभी रह चुका हो। परिणाम यह हुआ कि काफी संख्या में सैनिक मरने लगे। पेचिश और मलेरिया की वजह से एक तो वे पहले ही कमजोर थे और अब वे इस भयानक यात्रा के कारण एक दूसरे की मदद भी न कर सकते थे। फलस्वरूप अधिकांश सैनिक इस दैवी चक्र में फंसकर मर गए। सड़क के दोनों ओर हिन्दुस्तानी और जापानी सैनिकों की लाशें पड़ी हुई थीं, यह लोग

भूख, बीमारी और कमजोरी के कारण मर गए थे। इसके साथ ही कुछ ऐसे भी लोग थे जिन्होंने अधिक तकलीफ न बर्दाश्त कर सकने की वजह से आत्म-हत्या कर ली थी। वे नहीं चाहते थे कि वे अंग्रेजों के हाथ पड़ें। भूख के कारण सैनिकों की यह हालत थी कि वे चार-चार दिन के मरे हुए घोड़ों का कच्चा माँस तक चबा डालने में नहीं हिचक रहे थे। इसी समय अंग्रेजों की मक्कारी का एक और सबूत मिला; उन्होंने यह सोचकर, कि आजाद हिन्द फौज को खत्म करने का यह सुनहरा मौका है, हवाई जहाज से कुछ पर्चे गिराये, जिनमें से एक पर्चा कमल और गुरु लेकर मेरे पास आए।

'गोपाल भय्या, यह साले अंग्रेज बहुत कमीने हैं।' कमल ने एक फीकी मुस्कान के साथ कहा, क्योंकि अन्य सिपाहियों की भाँति वे भी भूख के कारण अत्यन्त कमजोर हो गये थे, लेकिन तारीफ तो यह थी कि उनके शब्दों से आत्म-विश्वास और दृढ़ता टपक रही थी। यह समझते हैं कि हम लोग कमजोर हो गये हैं। अरे ऊपर से ही पर्चियाँ उछालते हैं, साले सामने आयें तो हमलोग बतायें कि हम कितने कमजोर हैं—अभी एक-एक साथी हमारा दस-दस को मारने का दम रखता है हुँ! लालच देते हैं, कमीने...' क्रोध के कारण गुरु और कमल दोनों का चेहरा लाल हो रहा था, और अत्यधिक संयमित न होने के कारण मुँह से कुछ अन्य गालियाँ भी निकल रहीं थी। चूँकि शाहनवाज खाँ भी साथ में थे, इस कारण उन्होंने समझा बुझाकर उन्हें शान्त कर दिया। यह हालत केवल उनकी ही हो, ऐसी बात नहीं थी बल्कि हर सैनिक उन पर्चों को हिकारत की नजर से देख रहा था। उसमें छपा हुआ था—

'आ० हि० फौज के सिपाहियों, तुम्हारे पास न गोला-बारूद है, न दवाइयां हैं और न रसद। तुम जंगली जनवरों की तरह घास पर गुजारा कर रहे हो। अगर तुम हमारी तरफ आ जाओ तो हम तुम्हें

अच्छा खाना व कपड़ा देंगे ! तुम्हारी दवा-दारू होगी और तुम्हें अच्छी तनख्वाह तथा इनाम मिलेगा। हम तुम्हें तीन महीने की छुट्टी पर भी भेज देंगे, तुम इतने पत्थर दिल क्यों हो गये ? तुम्हारे बाल-बच्चे तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। हम तुमसे सच्चा वादा करते हैं। हमारी तरफ आते हुये डरो मत ! हम तुम्हारा स्वागत करेंगे !'

इसके प्रत्युत्तर में बिना किसी अपवाद के सैनिकों ने कहा कि 'हमें जंगली जानवरों की तरह ही गुजारा करना मंजूर है, बशर्ते कि वह गुजारा हमें अपने वतन के लिये करना पड़े, लेकिन हमें बाल-बच्चों के पास गुलामी में बेइज्जत होकर रहना मंजूर नहीं हमारे अन्दर लाठियां लेकर लड़ने की ताकत है, हमें गोला बारूद कुछ नहीं चाहिये ! ... और बीबी-बच्चों की हमें फिकर नहीं है ! हमारी मां आज पराधीन है, उसे जंजीरों से जकड़ कर रक्खा गया है। उसके आर्त्तनाद हमारे कानों को चीर रहे हैं - मां पहले और बीबी-बच्चे बाद में ! बीवी। इन असंख्य भारतवासियों की -- मां कदापि नहीं बन सकती। हम भारत की धरती पर जन्मे हैं - इंग्लैण्ड की धरती पर नहीं ! हमारी शान, हमारा गौरव, सदैव इसी में रहा है कि हम दूसरों की भलाई करें लेकिन इसके यह मायने कभी नहीं हैं कि तलवार के जोर पर हमें दबाया सकता है; हमारे पास अगर गोला-बारूद नहीं तो कम-से-कम पेड़ों की डालें तो हैं ...और रसद नहीं है तो धरती मां की कोख से उत्पन्न हरी घास तो है !' इसी प्रकार के विचार लगभग हर सिपाही प्रकट कर रहा था, जिससे हमारा टूटा हुआ साहस — क्योंकि ऐसी पंक्तियां वास्तव में लालच उत्पन्न कर सकती थीं -- फिर से जुड़ने लगा और हमें पुनः आगे बढ़ने में स्वाभिमान का गौरव प्रतीत हुआ। हमारी सभी कठिनाइयां धूल धूसरित हो गईं।

× × ×

तामू पहुँचने पर मालूम हुआ कि हम फिर एक बार धोखा खा

गये। हमको बताया गया कि हम इम्फाल नहीं भेजे जायेंगे वरन् जापानी कमांडर-इन-चीफ हमें रिजर्व रक्खेगा। इससे यह लाजिमी था कि हमारे सैनिकों का साहस छिन्न-भिन्न हो जाता और ऐसा हुआ भी। अन्त में शाहनवाज खाँ ने निश्चय किया कि जिन व्यक्तियों में कुछ मील चलने की शक्ति शेष है वे इज्जत के साथ चलकर दुश्मन पर हमला करें और उनसे लड़ते हुये ही अपने प्राण त्याग दें। इस योजना को कार्यान्वित करने के प्रयत्न शुरू हुये, लेकिन बीच ही में जापानी अध्यक्ष को कदाचित यह निश्चय मालूम हो गया, अतएव उसने एक दर्दभरा पत्र नेता जी को लिखा, जिसका उत्तर भी शीघ्र ही आ गया और उसे हमारे अफसर शाहनवाज ने एक आम सभा में, जिसमें केवल आ० हि० के ही सैनिक थे, पढ़ कर सबको सुना दिया। यह एक आज्ञा-पत्र था, जिसमें लिखा था—

'आजाद हिन्द फौज के साथियो!

'इस वर्ष, मार्च के मध्य में, हमारी अग्रगामी टुकड़ियाँ अपने साथी जापानी फौजों के साथ कंधे-से-कंधा मिला कर लड़ रही थीं। उन्होंने हिन्द-बर्मा-सीमा पार कर ली थी और हिंदुस्तान की आजादी की लड़ाई हिंदुस्तान की जमीन पर लड़ी जा रही थी। अंग्रेजों ने एक शताब्दी से ज्यादा हमारे देश का शोषण किया है और विदेशी फौजों को लाकर खड़ा किया है कि वे उनके लिये लड़ें। इस प्रकार उन्होंने हमारे सामने एक शक्तिशाली सेना खड़ी कर दी है। अपने ध्येय की पवित्रता से प्रेरित होकर हमारी फौजों ने उनको पग-पग पर पराजित किया, यद्यपि वह हमसे संख्या में और अस्त्र-शस्त्र के मुकाबले में कहीं अधिक बलवान थे। हमारी सेना चूँकि शिक्षित, नियंत्रित और 'करो या मरो' की दृढ़ भावना से प्रेरित होकर हिन्दुस्तान की आजादी के पथ पर अग्रसर हुई थी इस-लिए वे तुरन्त दुश्मन पर हावी हो गई और हर पराजय पर दुश्मनों का नैतिक पतन होता चला गया। अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में लड़ते

हुये भी हमारे अफसरानों और सिपाहियों ने ऐसे साहस और वीरता का परिचय दिया है जो सराहनीय है और हर अवस्था में प्रशंसा के योग्य है। अपने खून और बलिदान से इन शूरमाओं ने जिस परम्परा को कायम किया है, उसको आजाद हिन्द फौज के सिपाही भविष्य में भी उसी प्रकार से जारी रखेंगे। इम्फाल पर हमला करने की पूरी तैयारियाँ हो चुकी थीं, अंतिम मोर्चाबन्दी की जा चुकी थी कि उसी समय हमें मूसलाधार बारिश ने आ घेरा और इम्फाल पर हमला करके उसे लेना असंभव हो गया। इसीलिये हमें अपना निश्चय बदल देना पड़ा है और फिर उस मोर्चे पर डटे रहने में कोई लाभ न था, हम स्थिति और भी दृढ़ करना चाहते हैं ताकि उचित अवसर आने पर हम अच्छी स्थिति में रह कर दुश्मन पर आक्रमण कर सकें, यही कारण हैं कि हम फौजों को पीछे बुलाकर बीच का समय इस कार्य में लगाना चाहते हैं अनेक मोर्चों पर दुश्मन को पछाड़ने के बाद अपनी अंतिम विजय में और नई अमेरिकन सेनाओं का पछाड़ने में हमारा विश्वास और भी अधिक दृढ़ हो गया है। ज्यों ही हमारी तैयारी पूरी हो जायेगी, हम एक बार फिर दुश्मन पर भारी ताकत के साथ हमला करेंगे और अच्छे योद्धा होने से हम जिस निष्ठा और उत्साह के साथ युद्ध में उतरेंगे, उससे हमारी विजय सुनिश्चित है। इस युद्ध में हुये शहीदों की आत्माएँ हमें प्रेरित कर रही हैं कि हम और भी अधिक हिम्मत और साहस के साथ वतन की आजादी की लड़ाई की अगली चढ़ाई में प्राणपन से जूझ पड़ें। -जयहिन्द।'

'अब आप लोगों की क्या राय है?' इसे पढ़ने के बाद, कुछ देर रुक कर शाहनवाज खाँ ने अपने साथियों से प्रश्न किया और काफी देर बाद इसका उत्तर बहुत ही मद्धिम अवाज में मिला।

'राय से क्या होगा, खाँ साहब? हम लोग और आप, सभी सिपाही हैं जिनका धर्म है सैनिक अनुशासन का पालन करना और

अनुशासन के अर्थ होते हैं, आज्ञापालन करना। अतएव हमें जो नेता जी से आज्ञा मिली है, उसका पालन करना अनिवार्य है।.........हम कलेवा वापस चलेंगे।'

'लेकिन हमारे बीमार सैनिक ?' एक अन्य ने प्रश्न किया।

'वे भी चलेंगे।' शाहनवाज खाँ ने कहा, 'अगर हमें बैल गाड़ियां मिल जाती हैं तो ठीक है, नहीं तो हम अपनी पीठ पर अपने भाइयों को ले जायेंगे ?'

'हमें मंजूर है।'

एक साथ सबने कहा और अगले दिन चलने की बात तय हो गयी।

अगले दिन कुछ बैलगाड़ियां सैनिक ढूंढ़ लाये और उसमें अपने साथियों को लिटाकर सुभाष ब्रिगेड के सारे सिपाही यू नदी के किनारे-किनारे बहलो नामक स्थान पर पहुँचे। जापानियों के वादे के मुताबिक यहीं नावों का इन्तजाम होना चाहिये था; लेकिन चूंकि नदी मे बाढ़ आई हुई थी, इसलिये कोई भी नाव नजर नहीं आई। एक और धोखा मिला। फिर भी हिम्मत न हारी और कुछ बर्मी नाविकों की सहायता से सुभाष ब्रिगेड ने उस उफनती नदी को पार किया। तब तक रसद भी खत्म हो चुकी थी और नयी के मिलने की कोई उम्मीद न थी क्योंकि आस-पास के गांवों में जो कुछ भी मिल सकता था वह सब जापानी पहले ही उठा ले गये थे और आजाद हिन्द फौज को उनके भाग्य पर छोड़ दिया गया था। एक तो सैनिकों पर भूख की मार पड़ रही थी और ऊपर से प्रकृति का प्रकोप मूसलाधार वर्षा के रूप में वज्र के सदृश फटा पड़ रहा था।

चारों ओर घुटनों तक कीचड़ और भयानक घने जंगल थे जिनमें बारिश की वजह से मलेरिया के मच्छर और जहरीली कीड़ों का प्रादुर्भाव होना स्वाभाविक ही था। लगभग सभी को मलेरिया और पेचिश सता रही थी। डॉक्टरों के पास एक तो दवाइयाँ ही नहीं थीं दूसरे वे स्वयं भी इन रोगों से ग्रसित थे। तामू तक पीछे हटते वक्त हमें जिन मक्खियों का सामना करना पड़ा था, उनकी भयंकरता और संख्या यहाँ बहुत अधिक बढ़ गई थी। आश्चर्य तो यह था कि ये मक्खियाँ मुर्दों के मांस पर ही जीवित रहती थीं।

इस भयंकर जंगल के बीच सैकड़ों सैनिक असहायावस्था में पड़े थे, जिनकी तकलीफें देख कर गोपाल और शाहनवाज का दिल भी काँप गया। सैनिकों की हिम्मत इन सब तकलीफों को सहने के बावजूद भी वैसी की वैसी ही बनी हुई था। एक बार कुछ सैनिक, जो पेचिश और बेरी-बेरी के कारण बहुत कमजोर हो गये थे, हिम्मत हार कर बैठ गये; उसी समय उनके अफसरों ने उनसे कहा —

'क्या तुम उस वादे को भूल गये जो तुमने नेता जी से किया था कि तुम हर कठिनाई का सामना बहादुरी से करोगे? नेता जी पचास मील नीचे कलेवा में तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। क्या तुम उनका दर्शन करना चाहते? आओ, आगे बढ़ो।'

इन शब्दों का उन पर कितना गहरा असर हुआ, कहा नहीं जा सकता, केवल इतना ही पर्याप्त है कि वे सिपाही तुरंत उठ खड़े हुए और आगे बढ़ने लगे; यद्यपि उनकी टाँगें और चेहरे सूजे हुये थे। वे नेता जी की एक झलक देखने के लिए चल क्या रहे थे, हाथ-पैरों के बल रेंग रहे थे। यह देखकर हमारी (शाहनवाज और गोपाल) की आँखों में आँसू आ जाना स्वाभाविक था।

अभी हम कुछ ही दूर आगे बढ़े थे कि एक सैनिक पर निगाह पड़ी, जो हमें हाथ के इशारे से बुला रहा था। वह सड़क के एक किनारे

पड़ा था और उसके घावों में कीड़े पड़ गये थे। जब हम उसके पास पहुँचे तो उसने इशारे से बैठने को कहा और फिर टूटती आवाज में कहने लगा —

'साहब, आप लौटकर नेता जी को देखेंगे, पर मैं····मैं उनके दर्शन न कर सकूँगा ···। आप ···आप उनसे 'जय हिन्द' कह कर यह कह दीजियेगा कि मैं ···मैंने जो वादा किया था, उसे अपने जीते-जी पूरा किया। उनसे कहियेगा कि कीड़ों ने मुझे जिन्दा खा लिया, पर इस महान् कष्ट मैं ·· में मुझे अजीब शांति और सुख का अनुभव हो रहा है। ····जी हाँ, शांति और सुख ·· क्योंकि मैं जानता हूँ कि यह सब मातृ-भूमि के ·· छुटकारे के लिये ही है। जय····हि"

कहते हुए उसकी गर्दन एक ओर लटक गई और उस शहीद के सम्मान में हमने अपनी श्रद्धा प्रकट करके पुनः प्रस्थान किया—कलेवा की ओर, जो यहाँ से करीब चालीस-तीस मील दूर था।

१७

भगवान चन्द्र की कोठी का ड्राइंग रूम इस समय कहकहों से गूंज रहा था। भगवान चन्द्र का यह नित्य-क्रम बन गया था कि वह शाम को नीना और बीना के साथ या तो एडवर्ड के बंगले पर चले जाते थे और या एडवर्ड और जेनी को अपनी ही कोठी पर बुला लेते और किसी न किसी प्रकार के मनोरंजन के द्वारा अपना दिल बहला लेते थे, या कभी क्लब अथवा सिनेमा अथवा पिकनिक का कार्यक्रम सबकी राय से बन जाता था। आज पांचों साथी वहीं पर जमकर ताश खेल रहे थे और उनके कहकहों से कमरे का वातावरण भी हँस रहा था।

नीना और बीना को देहली से कानपुर ले आने के लिये उन्हें राय साहब की अचानक मौत ने विवश कर दिया था। देहली में एक दिन अचानक ही राय साहब का देहान्त हो गया जिसका कारण उनकी दिल की बीमारी थी। मेरा तार पाते ही वह (भगवान चन्द्र) कानपुर से देहली को रवाना हो गये लेकिन उनके पहुँचने के पूर्व ही राय साहब का दाह-संस्कार मेरे द्वारा किया जा चुका था। नीना की अवस्था अत्यन्त दयनीय हो रही थी, उसे रह-रह कर 'फिट' आ रहे थे, उसे पितृ-शोक का अत्यधिक आघात लगा था, कारण कि उसका विवाह हुए अभी केवल छः-सात माह ही बीते थे, अतएव एक नवविवाहिता के लिये इतना कठोर आघात वास्तव में वज्र के समान था। दाह-क्रिया इत्यादि के पश्चात् भगवान चन्द्र मेरे पास आकर बोले—

'रवीन्द्र, मैं नीना वगैरह को बिल्कुल अपनी ही बेटी और बहन की तरह से समझता हूँ, और मुझसे उसकी यह विक्षिप्त अवस्था अब देखी नहीं जाती।'

'आप ही बताइये, भाई साहब, मैं क्या करूँ? जो कुछ होना था वह तो हो ही गया, अब आप जो उचित समझें वही करें। आप बुजुर्ग हैं, मैं क्या कहूँ?'

'तो ठीक है, मैं नीना और बीना दोनों को कानपुर लिये जा रहा हूँ। वहाँ हवा भी बदल जायेगी और ईश्वर चाहेगा तो नीना का दुःख भी कम हो जायगा?'

'ठीक है।'

इसी बात पर वह दोनों को कानपुर ले गये और मैं वहीं रह गया क्योंकि मुझे अपना अधूरा कर्तव्य पूर्ण करना था। नीना का पितृ-शोक, पितृ-तुल्य स्नेह पाकर, धुल गया और वह भगवान चन्द्र के स्नेह की छत्र-छाया में विश्व को भूल गई। वह नित्य प्रति बीना से कहती—

'बीना, भगवान अंकल न जाने क्या हैं—न तो मानव हैं और न भगवान! एक अनाथ लड़की को इतना स्नेह....उफ! किस प्रकार मैं उनका यह ऋण अदा कर सकूँगी?'

'पगली कहीं की! भय्या तो अपना कर्तव्य निभा रहे हैं, जो हर मनुष्य को बिना किसी भेद-भाव के निभाना चाहिये। वह मानव से बहुत ऊँचे हैं—महामानव! महात्मा गांधी या नेताजी जो कुछ भी कर रहे हैं, अपनी जननी के प्रति अपना कर्तव्य समझ कर, उन्हें परिणाम या प्रतिदान की कामना नहीं है। वे महान् हैं, सखी, उन्हीं के समान मैं भय्या का भी आदर करती हूँ, क्योंकि उनके दान में भी प्रतिदान की इच्छा नहीं है और जब कोई व्यक्ति बिना किसी फल की इच्छा से प्रेरित होकर कोई कार्य करता है, तो वह महान् बन जाता है,

उसकी आत्मा पवित्र हो जाती है, और उसका सान्निध्य प्राप्त करने वाले बिना किसी तप के मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं, ऐसी आत्माओं के दान को ऋण नहीं समझा जाता पगली, वरन् वे दान उनके प्रसाद के समान हैं, फिर उनको चुकाना या चुकाने की बात भी सोचना मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। फिर तुम ही सोचो कि हम लड़कियाँ क्या पितृ-प्रेम के ऋण को चुका सकती हैं ? कदाचित् जीवन भर नहीं ! इसलिये नीना इसका विचार तू त्याग दे।'

ऐसी बातें सुनकर नीना का हृदय और भी अधिक श्रद्धा से भर जाता और फिर धीरे-धीरे वह स्वतः ही इन विचारों भूलने लगी। उनका ऐसा व्यवहार केवल नीना के लिये ही हो, ऐसी बात नहीं थी; बल्कि बीना भी उन्हें इसी भाँति प्रिय थी और वह उसके साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार करते थे, जिस प्रकार का नीना के साथ। दोनों ही उन्हें समान रूप से प्रिय थीं। अतएव बीना को भी, उनके प्रति, उतनी ही श्रद्धा थी जितनी नीना की। वे दोनों में कोई अन्तर नहीं समझते थे।

इस समय भी जब वे ताश खेल रहे थे, बात का सिलसिला घूमता हुआ एक ऐसे मोड़ पर पहुँच चुका था, कि ताश का खेल कुछ अरुचिकर सा लग रहा था। तभी एडवर्ड ने चाल को रोकते हुये कहना शुरू किया—

'मि० भगवान, आपके कहने के मुताबिक मैंने बुद्ध और राम दोनों के विषय में अध्ययन किया है, और इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि जब राम और बुद्ध दोनों ने ही अपने को मनुष्य बताया तो फिर उनकी मूर्ति-पूजा क्यों की जाती है ?'

'भई, जहाँ तक मूर्ति-पूजा सवाल है तो यह प्रथा करीब-करीब हर धर्म के अन्तर्गत आ जाती है। आपके यहाँ यीशू ने भी तो अपने को 'ईश्वर का पुत्र' बताते हुये यही कहा था न, कि 'मैं ईश्वर नहीं हूँ,

मुझे ईश्वर मत कहना वरना स्वर्ग में भी मैं तुम्हें देखकर मुंह मोड़ लूंगा। मेरे बाद भी एक 'दूत' आयेगा, जिसके पैरों की मैं धूल भी नहीं हूं।' क्यों ? यही कहा था, न ?'

'हूँ !' एडवर्ड के कहते ही तीनों, जेनी, मीना और बोना उठ कर भोजन की तैयारी करने चल दीं।

'जब यीशू ने यह कहा था तो फिर आप उनके क्रूस के सामने मोमबत्ती क्यों जलाते हैं ? उस लकड़ी के क्रूस को इतना पवित्र क्यों मानते हैं ? केवल इसीलिए न, कि वह आपके लिये एक संकेत का काम देता है ताकि आप इधर-उधर भटकने न पायें, क्योंकि यीशू के ही शब्दों में, 'सर्प (शैतान) विश्व में हर समय घूमा करता है', और उसी से बचने के लिये आप ईश्वर का चिन्तन करते हैं। ठीक यही दशा हिन्दू धर्म की भी है। हम लोगों ने भी माया से बचने के लिये कुछ पत्थर की प्रतिमाओं के स्वरूप में अपने संकेत निर्मित कर लिये हैं ताकि हम उसके सहारे एकाग्र चित्त होकर परम पिता परमेश्वर का चिन्तन कर सकें और मुक्ति को प्राप्त कर सकें। यह वही मुक्ति है, जिसे आप स्वर्ग का नाम देते हैं।'

'यह तो ठीक है, लेकिन एक शंका है कि यीशू, राम अथवा बुद्ध के इतना मना करने पर भी उनकी पूजा का प्रारम्भ क्यों हुआ ?'

'इतना तो नहीं बता सकता, लेकिन जहां तक यीशू और बुद्ध का सवाल है, ये दोनों ही एक हैं। और जहां तक मूर्तिपूजा का सम्बध है तो मेरी समझ से एक ही कारण मुझे दिखाई पड़ता है। क्योंकि ईश्वर साधना में इन्सान को साध्य के आकार और माध्यम की आवश्यकता प्रतीत हुई। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये समकालीन मूर्तिकारों ने प्राकृति और ईश्वर के सम्मिलित रूपों की कल्पना की, जिसने जनसामान्य को आकर्षित ही नहीं किया। वरन् मानव के विश्वास को मूर्ति की पवित्रता के प्रति ऐसा स्थायित्व भी दे दिया जो

मानव मात्र के समक्ष ईश्वर का एक ऐसा साकार रूप आया जिससे उसके अन्तर में भगवान के प्रति आस्था जमती चली गई और वह बुरे कार्य करने में उस पाषाण निर्मित मूर्ति से भय खाने लगा। इसीलिए मूर्तियों की आवश्यकता हुई तथा जिसका प्रचार प्रतिदिन बढ़ता ही गया।' इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि मूर्तियों की पूजा का जन्म केवल इसीलिए हुआ है कि मनुष्य अपने मन को एकाग्र कर सके।'

अभी भगवान चन्द्र की बात खत्म ही हुई थी कि जेनी ने आकर टोका—

'प्रिय दार्शनिक भाइयों, आप लोगों की बहस खत्म हुई कि नहीं ?'

'यह विषय कभी भी समाप्त नहीं होने का जेनी।' एडवर्ड ने हँसते हुये कहा और भगवान चन्द्र मुस्कुरा भर दिये।

'इस पर तो फिर भी बहस हो सकती है, लेकिन खाना फिर गरम न हो सकेगा। न जाने कब से तैयार हो सजा हुआ हैं।'

'चलो भाई!'

कहकर भगवान चन्द्र उठ खड़े हुये और साथ में एडवर्ड भी उनके साथ खाने के कमरे की ओर चल दिया। मेज पर हर प्रकार का भोजन सजा हुआ था। और मेज के चारों ओर पाँच कुर्सियाँ पड़ी थीं, जिन पर आकर भगवान चन्द्र, एडवर्ड व जेनी जम गये। नीना और बीना पहले ही से वहाँ उपस्थित थीं। काँटे खटके और भोजन शुरू हुआ। लेकिन न जाने क्यों बीना का हाथ रुक गया, उसकी वह प्रसन्न मोहक मुद्रा उदास हो गई और वह 'क्षमा कीजियेगा' कहकर उठ गई और अपने कमरे की ओर भागी। उसे हटते देख न जाने क्या सोचकर नीना भी उठी और बीना के पीछे-पीछे उसके कमरे में जा

पहुँची। बीना पलंग पर पेट के बल लेटी हुई थी। उसके नेत्रों के सामने कमल की फोटो रखी हुई थी तथा नेत्रों से अश्रु-धारा बह रही थी।

'क्या हुआ बीना ? उठ क्यों आई ?'

'ऐसे ही, तुम क्यों आ गई ?'

'तुमने खाना क्यों नहीं खाया ?' नीना ने उसके प्रश्न पर कोई ध्यान न देकर ममत्व भरे स्वर में पूछा।

'न जाने क्यूँ नीना, मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरा कमल कई दिनों से भूखा है। ऐसी दशा में मैं कैसे खा सकती हूँ ? वह भूखे रहें और मैं भोजन करूँ—यह मेरा हृदय नहीं स्वीकार करता। तू जा नीना !'

यह केवल तुम्हारा भ्रम है बीना, जरा सोचो भगवान अंकल के दिल पर क्या गुजरेगी, जब वह सुनेंगे अथवा जब कमल वापस आयेगा तो उस पर क्या बीतेगी जब उसे पता चलेगा ? वह इस समय मोर्चे पर डटा हुआ है। क्या तुम स्वयं को भूखा रखकर उसके प्रति अन्याय नहीं कर रही हो ?'

'नीना, प्रेम की शक्ति महती होती है। यदि प्रेमी को कोई भी कष्ट होता है तो प्रेमिका को उसका अनुभव अवश्य हो जाता है। दिल को दिल से राह होती है।'

'लेकिन बीना, मेरा न सही तो कम से कम अंकल का ख्याल करो।'

'अच्छा !'

कहकर बीना ने कुछ सोचा और आंसू पोंछकर उठ खड़ी हुई और पुनः मेज पर आकर खाने पर बैठ गई, लेकिन ठीक से भोजन न कर सकी। उसकी इस अन्यमनस्कता को भगवान चन्द्र भाँप गये और एडवर्ड तथा जेनी के जाने के बाद उन्होंने पूछा—

'बीना, मुझे गोपाल की तरह समझकर अपना सारा कष्ट कह दिया करो। तुम तो जानती हो कि मेरा संसार में अब कोई नहीं है और वास्तव में मैं तुम्हीं लोगों के प्रेमभाव से अब तक चल रहा हूं। ... खैर छोड़ो, तुम्हें कोई तकलीफ है ?'

'नहीं भय्या; जरा दिल घबराने लगा था।'

'कोई बात नहीं, मुझसे कभी संकोच मत करना अन्यथा मुझे दुःख होगा।'

यह कहकर भगवानचन्द्र अपने कमरे में चले गये और बीना अपने कमरे में जाकर सोने का उपक्रम करने लगी, किन्तु सो न सकी। इसके दो कारण थे, पहला तो वह इसी विचार से परेशान हो रही थी कि उसने एक देवता-सदृश महान् व्यक्ति को धोखा दिया था और दूसरा कमल का विचार था। वह लाख चाहने पर भी कमल के उस मोहक चेहरे के आकर्षण को न भुला पा रही थी जिसने उसके हृदय को अपने वश में करके अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने के लिये उसे विवश कर दिया था। इसी विचार-क्रम में करवट बदलते-बदलते कब सुबह हो गई, इसका उसे ध्यान ही न रहा। ध्यान तो तब आया जब उषा ने उसके कमरे को अपने गुलाबी रंग से भर दिया। वह उठी और टूटते शरीर ने एक अँगड़ाई ली, किन्तु उसमें पहले की सी मादकता परिलक्षित नहीं हो रही थी, उदास नेत्रों में दर्द का सागर लहरा रहा था, जिनमें रात्रि के जागरण की गाथा स्पष्ट थी। उसकी समस्त चंचलता लुप्त हो चुकी थी—विचारों की उथल पुथल के बीच वह मन्द गति से स्नानागार की ओर बढ़ गई।

इसी प्रकार दिन पर दिन व्यतीत होने लगे और साथ ही बीना का स्वास्थ्य भी गिरने लगा। वह कमल के विषय में अत्यधिक चिन्तित थी। जब भगवान चन्द्र से बीना की अवस्था देखी न गई तो उन्होंने

नीना की सलाह से रवीन्द्र को तार भेज कर सूचित कर दिया और उसके शीघ्र आने की आशा की।

अपनी शैशवावस्था से ही मैं जिस स्वप्न की कल्पना कर रहा था, वह मेरे विवाहोपरान्त तीसरे ही दिन, सत्य में परिवर्तित होने लगा। मेरे इस स्वप्न का प्रारम्भ कब हुआ था, मैं नहीं जानता; मुझे स्वप्न में क्या दिखाई दिया था, वह भी नहीं याद। हाँ, केवल इतना ही याद है कि भारत को स्वतंत्र होना है, अंग्रेजों के शिकजे से मुक्त होना है। इसका—इस संघर्ष का—प्रथम चरण समाप्त हुआ और नेता जी के नेतृत्व में भारतीयों ने अपना एक स्वतंत्र संगठन किया और उसी की सफलता के हेतु उस महान् व्यक्तित्व ने एक महान् कार्य के हेतु बीड़ा उठाया और भारत से विदेशियों का शासन समाप्त कर देने की घोषणा कर दी। इसकी क्या प्रतिक्रिया हुई, इसकी कल्पना करना भी संभव नहीं है। अधिकांशतः यही मत थे कि यह संघर्ष असफल रहेगा, पूर्व की भाँति ! फिर भी इतना तो मेरा दृढ़ विश्वास है कि अब भारत स्वतंत्र होकर ही रहेगा और यह बात दूसरी है कि उसका श्रेय सुभाष को न मिल कर गांधी को मिले, लेकिन इसके बाद भी मेरी दृष्टि में सुभाष का स्थान गांधी से ऊँचा है, क्योंकि एक महाबलशाली सत्ता, जिसका प्रभुत्व विश्व पर रहा है, की सैनिक शक्ति को केवल मुट्ठी भर सैनिकों को साथ लेकर इतनी बड़ी चुनौती दे देना कोई खेल नहीं है।

आजाद हिन्द फौज का यह कृत्य मुझे व्यक्तिगत रूप से बहुत पसन्द आया और मैं भारत की स्वतंत्रता का दिवा-स्वप्न देखने लगा तथा अपने कर्त्तव्य के प्रति और भी अधिक जागरूक हो गया।

मैं, रायसाहब, नीना व बीना बहुत खुश थे और विदेशी सत्ता की इस घोषणा के कारण उत्पन्न हुई बौखलाहट का आनन्द ले रहे थे। इसी प्रकार दिन बीतते जा रहे थे कि एक दिन हमारी प्रसन्नता पर तुषारापात हुआ और रायसाहब परलोक सिधार गये। अचानक हुई इस दुर्घटना से प्रत्येक व्यक्ति विक्षिप्त हो गया। क्रिया इत्यादि के पश्चात् नीना व बीना को भगवान चन्द्र अपने साथ लेते गये और यहाँ कर्त्तव्य-परायणता का प्रमाण देने के लिये केवल मैं ही शेष रह गया। मेरे ऊपर भी इस घटना का व्यापक प्रभाव पड़ा जिसका वर्णन कर पाना मेरे लिये असम्भव है, फिर भी इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरे सिर पर से मेरे पिता का साया उठ गया हो—वैसे मेरे पिता का देहान्त तो बहुत पहले ही हो गया था। फिर एकान्त में दिल और भी घबराने लगा, यद्यपि एक साहित्य-कार के लिये एकान्त आवश्यक है, लेकिन इतना नहीं कि वह ऊब ही जाये। किसी तरह दिन कट रहे थे, अब तो आजाद हिन्द की विस्तृत खबरें भी नहीं मिलती थी क्योंकि सभी तो मोर्चे पर थे और विवरण लेने वाला मुझे कुछ भी बताने में असमर्थ सिद्ध होता था, यह ठीक भी था; संभव है मेरे ही मुँह से कभी ऐसी बात निकल जाये जिससे अर्थ का अनर्थ हो जाये!

दूसरी ओर योरप की राजनीति का पाँसा दिन पर दिन उलटता जा रहा था और मित्रराष्ट्रों की सेना ने महत्वाकांक्षी हिटलर को रोम छोड़ने के लिये मजबूर कर दिया था। दूसरी तरफ रूस भी बड़ी तेजी से हिटलर को मारता हुआ आगे बढ़ता चला जा रहा था और उसका विजय-पथ वारसा की ओर हो गया था। अपनी पराजय से हिटलर बहुत ज्यादा बोखला गया और आखिरकार उसने एक मूर्खतापूर्ण घोषणा कर दी कि दुनिया में मैं इंग्लैंड नाम का कोई द्वीप ही नहीं रहने दूँगा। यही नहीं उसने इंग्लैंड पर राकेट बम फेंकने का भी आदेश दिया, जिसका मुँहतोड़ जवाब चर्चिल ने दिया और हिटलर

को अब अपनी फिकर सताने लगी, क्योंकि फ्रांस पर जनरल आइजनहावर के नेतृत्व में सेना उतर चुकी थी और उसे घेरने का काम भी शुरू हो चुका था।

वास्तव में मेरे लिए यह योरोपीय मसला इतना रोचक हो गया था कि मैं पल भर के लिए आज यह भी भूल गया कि ब्रिटेन के खिलाफ हमने भी एक युद्ध छेड़ा हुआ और जर्मनी की पराजय ब्रिटेन की शक्ति को उत्साहित भी कर सकती है, जिसका परिणाम कम से कम भारत के हक में खतरनाक साबित हो सकता है। इसका ध्यान तो मुझे तब आया जब कि मैंने पेपर में नयी वारदात पढ़ी —"जापानी और आजाद हिंद फौज के संयुक्त मोर्चे के लिए मित्र-राष्ट्रों की सम्मिलित सेना का भारत में प्रवेश!" इसे पढ़ते ही ऐसा मालूम हुआ जैसे मेरे हाथ के तोते उड़ गये। मैं तुरत लान से कमरे की ओर भागा और हेड क्वार्टर को इसकी खबर दी, तब कुछ शांति महसूस हुई। अभी मैं इसके अलावा कुछ और कार्यों से निबट कर चाय पीने जा ही रहा था कि पोस्टमैन ने तार लाकर दिया। खोला तो वह नीना का तार था, जिसमें मुझे तुरन्त उसने बुलाया था क्योंकि बीना की तबियत ठीक नहीं थी। यह ठीक है कि काम की अधिकता के कारण मुझे अवकाश नहीं है, लेकिन यह मेरी बहन का मामला है, जिसे मैं अपनी जान से भी ज्यादा चाहता हूँ इसलिये चाहे किसी तरह जाऊँ जाऊँगा जरूर। अगर बीना के स्थान पर नीना होती तो शायद न भी जाता; लेकिन बीना मेरी बहन है, जिसने मुझे स्नेह का मूल्य अदा करना सिखाया है और मेरी दृष्टि में तो बहन पहले है, पत्नी बाद में, क्योंकि पत्नी तो कोई भी स्त्री हो सकती है; लेकिन मेरे विचार से हर स्त्री बहन नहीं हो सकती और न हो वह बहन का प्यार किसी पुरुष को—किसी अनजाने पुरुष को—दे सकती है।

अगले दिन मैं अपनी प्रिय बहन के लिए कानपुर पहुँचा। यह वही कानपुर है, जहाँ से एक दिन हम लोग सरकार को धोखा देकर कलकत्ता और कलकत्ता से सिंगापुर भाग गये थे और सरकार हाथ मलकर रह गई थी। उस घटना को हुये लगभग डेढ़ वर्ष का लम्बा समय व्यतीत हो चुका है। प्रातःकाल कालका मेल से चलकर मैं अपराह्न को कानपुर के प्लेटफार्म पर एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में उतरा। उतरते ही मेरे नेत्रों के समक्ष आज से डेढ़ वर्ष पूर्व का दृश्य फिल्म की भांति नाच गया जब मैं इसी प्लेटफार्म पर एक बन्दी के रूप में उतरा था। प्लेटफार्म के बाहर आकर मैंने एक टैक्सी की और आनन-फानन में ही भगवानचन्द्र की कोठी पर जा पहुँचा। भगवानचन्द्र किसी आवश्यक कार्यवश कोठी के बाहर गये हुये थे और वहाँ नौकरों के अतिरिक्त केवल नीना और बीना ही थीं।

'अरे आप .... ?' नीना को आश्चर्य हुआ—'तार कब मिला ?'

'कल। बीना कैसी है ?'

'कुछ ठीक नहीं है। दरअसल उसके दिल में कुछ भ्रम बैठ गया है कि उसका कमल कई दिनों से भूखा है ; बस इसी बात पर उसने खाना-पीना छोड़ दिया। हम लोग जब बहुत जोर देते हैं तो वह केवल दूध ले लेती है।...... इस समय भी वह अपने ही कमरे में है। चलिये।' कहकर वह मुझे अपने साथ, अत्यन्त प्रेमपूर्वक लेकर आगे चली और कमरे की ओर संकेत करके बोली—''आप चलिये, मैं तब तक नाश्ते का इन्तजाम करती हूँ।'

मैंने सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी और कमरे में प्रविष्ट हुआ। सामने पलंग पर बीना लेटी हुई थी और चिन्तित नेत्रों से छत को निहार रही थी। आंचल वक्ष से सरककर पलंग पर लोट रहा

था। मैंने जब उसे इस विक्षिप्ता अवस्था में देखा तो मेरे आंसू आ गये। मेरी आहट का आभास पाकर वह कुछ सचेत हुई और उसने उठने की कोशिश की, लेकिन मैंने उसे उठने न दिया—

'बीना, यह क्या हालत बना ली? तुमने यह भी न सोचा कि मेरे ऊपर क्या बीतेगी?' उसे गर्दन तक चादर से उढ़ाते हुये मैंने कहा और उसके सिरहाने बैठकर उसका माथा सहलाने लगा।

'भाई साहब, न जाने मुझे क्यों भ्रम हो गया है कि....'

'मैं जानता हूँ और इसी को गलत सिद्ध करने मुझे आना पड़ा। वास्तविकता तो यह है कि कमल को टुकड़ी मोडले में आराम कर रही है, उसे मोर्चे से वापस बुला लिया गया है।'

'भाई साहब, आपकी झूठ बोल के भरमाने वाली आदत नहीं गई।' उसने फीकी मुस्कुराहट के साथ कहा।

'बीना, मेरी बहन, मैंने कभी आज तक तुमसे झूठ बोला है? ....फिर तुमने कैसे समझ लिया कि यह झूठ है?' मैंने आँख में आंसू भर कर एक्टिंग की और इसका प्रभाव भी अच्छा पड़ा, यद्यपि इसमें कितना झूठ है और कितना सच यह भगवान ही जानता है।

'नहीं भाई साहब, मैंने...'

'फिर चलो, मेरे साथ नाश्ता करने!'

न जाने बीना को मेरे इन शब्दों में क्या आकर्षण प्रतीत हुआ कि वह अपने कमजोर शरीर को संभाल कर उठी और उसके पहले ही मैंने उसकी चप्पल उठा कर उसे पहनानी चाही। मेरे इस कृत्य का उसने विरोध करना चाहा, किन्तु मैंने अपने भ्रात-स्नेह की सौगन्ध दिलाकर उसे मौन कर दिया और उसे सहारा देकर मैं भोजन के कमरे में ले आया, जहां नीना अत्यन्त प्रसन्नता से मेरे लिए इन्तजाम करवा रही थी। बीना को कुर्सी पर बैठाने के उपरान्त के उपरान्त वह चहकी--

'भई वाह, संसार का एक महान् आश्चर्य !'

'क्यों, क्या हुआ ?'

'अगर मुझे पहले ही से मालूम होता कि मेरी ननद जी को आपकी जरूरत थी तो मैं अपनी ननद का स्वास्थ्य गिरने ही न देती और मौके पर ही आपको तार भेज देती।'

'भाभी, यह भाई के स्नेह का फल है। किसी को भाई बना कर देखो।'

'हाँ भई, कोई ऐसा मिला ही नहीं।'

नीना ने यह कहते हुये मेरी और वीना की ओर चाय की प्यालियां सरका दीं। यद्यपि मैं नीना के रुख को पहले से ही पहचान रहा था, फिर भी मैं वीना की उपस्थिति के कारण प्रत्यक्ष रूप से कुछ न कह सका। उसी समय भगवान चन्द्र आ गये और फिर नाश्ते के बाद बातों ही बातों में कब दस बज गया और डिनर भी समाप्त हो गया, यह पता ही न चला। आज भगवान चन्द्र विशेष रूप से प्रसन्न थे क्योंकि आज करीब एक हफ्ते बाद वीना ने डिनर और बात-चीत के दौरान में अपना पूरा सहयोग दिया था। लेकिन मैं प्रतिक्षण नीना के नेत्रों को भांप रहा था जिनमें नारियोचित ईर्ष्या-भाव जागृत हो चुका था अर्थात् वह मेरे और मेरी बहन वीना के मध्य स्थापित पवित्र रिश्ते को कलुषित दृष्टि से देखकर उसे भी कलुषित कर रही थी एक क्षण के लिये मेरा मन नीना के प्रति घृणा से भर उठा, किन्तु दूसरे ही पल मुझे अपने अध्ययन का परिणाम भी ज्ञात हो गया कि एक नारी कभी भी किसी दूसरी स्त्री को अपने प्रेम का भागीदार बनता नहीं देख सकती। यही उसकी ईर्ष्या का मूल कारण था और मुझे इसका खण्डन करना अनिवार्य हो गया था अन्यथा अनर्थ होने की पूर्ण संभावना थी।

इस कार्य की पूर्णता के लिये अवसर की आवश्यकता थी और उपयुक्त अवसर भी मुझे नीना की ही ओर से मिला। रात में मेरे

सोने का इन्तजाम भी नीना ने अपने ही कमरे में किया था, अतः हम दोनों बीना को उसके कमरे में पहुँचाकर अपने कमरे में गये और जब मैं पलंग पर लेटा तो उसने अत्यन्त प्रेमपूर्वक मेरे बालों में अपनी उँगलियां नचाते हुए कहा—

"एक बात पूछूं ?"

'जरूर !'

'आपने आते ही ......'

'मेरे विषय में न पूछकर बीना के विषय में क्यों पूछा ? यही बात तुम कहना चाहती हो न !' मैं होले से हँस दिया और उसके नेत्र अपराधिनी की भाँति झुक गये। 'देखो नीना, बुरा मत मानना; तुम पत्नी हो और वह बहन। एक व्यक्ति पर पहला अधिकार बहन का होता है और दूसरा अधिकार पत्नी का। तुम्हें मैं कुछ दिन से जानता हूँ, लेकिन उस देवी को मैं उस दिन से जानता हूं जब मैं क्रान्तिकारी दल में आया भी नहीं था। तुम्हारे लिये वह एक इस जगत की स्त्री मात्र है लेकिन मेरे लिए वह सरस्वती है, माँ है !····चौंको मत ! यह सत्य है कि मैं लेखनी के माध्यम से जिस माँ की अर्चना करता हूं वह यही देवी है। मैंने बीना का प्रतिबिम्ब अपनी कलम में और माँ की आकृति में देखा है। मैंने सदैव सरस्वती के रूप में बीना की ही अर्चना की है इसलिये नीना कभी भी सन्देह का बीजारोपण अपने हृदय में मत होने देना—'वह देवी है और मैं अर्चक, सदैव इसका ध्यान रखना :'

'........' नीना मौन रही, किन्तु नेत्रों ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसे अपनी करनी पर अत्यन्त ग्लानि हुई है। यह देख मैंने कहा—

'नाराज हो गई ?'

'नहीं मेरे देवता !'

और मैंने उसे आलिंगनपाश में आबद्ध करके कपोलों पर एक प्रेम-चिह्न अंकित कर दिया।

प्रभात के पश्चात् सन्ध्या अवश्य होगी और उदय के पश्चात् अवसान। क्षितिज पर दूर संध्या का लाल अस्ताचलगामी सूर्य अपनी लाल किरणों के साथ इस प्रकार से जाज्वल्यमान हो रहा था, जिस प्रकार से दीपक बुझते-बुझते भी एक बार पुन: जागृत हो लपलपा उठता है। कुछ ही देर में वह प्रकृति के क्रमानुसार अस्त हो गया और रह गई केवल कुछ रश्मियाँ, जिनकी पृष्ठभूमि गहन व भीषणतम अन्धकार से पूर्ण थी। मैं इस समय प्रकृति के इस अनुपम मिलन का रसपान कोठी की छत से कर रहा था और एक ऐसे स्थान पर खड़ा था कि यदि मैं चाहूं तो सड़क पर चलने वाले हर व्यक्ति को देख सकता था, किन्तु सड़क का कोई भी व्यक्ति मुझे देख सकने में पूर्णत: असमर्थ सिद्ध होता। इस कारण मैं कुछ निश्चित था, चिन्ता का कारण मेरे लिये तब तक था, जब तक मैं कानपुर में था, फिर इसी विचार से मैंने आज ही नीना और बीना के साथ देहली जाने का प्रोग्राम भगवान चन्द्र से पक्का कर लिया था। लेकिन जब मैंने अपने भय को उन्हें बताया तो हँसकर उन्होंने कहा—

'पहली बात तो यह कि तुम्हारा भय निर्मूल है; और फिर अगर मान लो तुम्हें कुछ हो भी जाता है तो याद रखो मैं अपनी जान भी भिड़ा दूंगा तुम्हें बचाने के लिये, क्योंकि........'

'मुझे अपनी परवाह नहीं है भाई साहब, आपने गलत सोचा

मैं दरअसल इन लोगों को बचाना चाहता हूँ कि यह लोग सरकार की निगाह से बची रहें और फिर मेरा क्या है—जैसे घर में वैसे जेल में।'

'वह सब ठीक है रवीन्द्र! मुझे भी ऐसा ही शक था तभी मैंने दोनों की अलग-अलग सीटें रिजर्व करवाई हैं।'

इतना कहकर वे रुके नहीं और कहीं चले गये तथा मैं छत पर आ गया। सन्ध्या की लालिमा जब पूर्णतः लुप्त हो गई और आकाश में तारे छिटक आए तो मैं नीचे उतरकर बीना के पास गया। नीना भी वहीं थीं और दोनों चलने के लिये बिल्कुल ही तैयार थीं, सिर्फ भगवान चन्द्र कि आने की देर थी। मैं बोला—

'देखो बीना, तुम लोग मेरे साथ नहीं रहोगी।'

'क्या मतलब?' दोनों ही आश्चर्य से मेरा मुँह ताकने लगीं, क्योंकि मेरा वाक्य ही स्वयं मुझे अटपटा महसूस हुआ, और शायद यही उनका भी कारण होगा।

'मतलब यह कि तुम और नीना अलग और मैं अलग।'

'लेकिन ऐसा हमलोगों से दुराव क्यों?'

'दुराव कोई नहीं है।'

'फिर भी कोई न कोई बात जरूर है, जिसने आपको परेशान...'

'मेरा मतलब यह है कि मेरे पीछे पुलिस लग गई है और कोठी की निगरानी उस समय से हो रही है जब से मैंने कानपुर में कदम रखा है, समझीं?'

'समझी!'

बीना ने सिर हिलाया और फिर मैंने दोनों को अपनी योजना बताई और स्टेशन की ओर उसी पुराने गुप्त मार्ग से गंगा तट पर निकलकर चल दिया।

ठीक समय पर भगवान चन्द्र, नीना व बीना के साथ स्टेशन पहुंचे । गाड़ी प्लेटफार्म पर लग चुकी थी । रिजर्वेशन के कारण कोई खास तकलीफ न हुई और वे दोनों डिब्बे में बैठ गईं । उनके सामने ही बर्थ पर मैं लेटा हुआ था, लेकिन वेष-परिवर्तन के कारण मैं पह-चाना न जा सका, यद्यपि भगवान चन्द्र इस बात को जानते थे, लेकिन उन्होंने उन दोनों को पहले ही से कुछ, न पहचानने सम्बन्धी, हिदायतें दे रक्खी थी । यही कारण था कि उन्होंने कोई कोशिश भी न की और मैं मुंह दूसरी ओर किये बर्थ पर लेटा रहा । ट्रेन छूटने में करीब अब पांच ही मिनट शेष रह गये थे और जब तक ट्रेन चल न दी मेरी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे ही रही । डिब्बे में अन्य कोई व्यक्ति न था । फिर भी रात के सन्नाटे के साथ वे दोनों सो गईं—अतिरिक्त मेरे और ट्रेन के ।

× × ×

फिर एक नवीन प्रभात—नीना अब भी गहन निद्रा के वशीभूत होकर बर्थ पर निश्चेष्ट पड़ी थी । उसका आंचल वक्ष से होता हुआ नीचे लटक रहा था और साथ ही दायां हाथ भी । उसका बायां हाथ उसके सीने पर रक्खा हुआ था, जो श्वांसों की गति के साथ उठ-बैठ रहा था । उसके ओठों पर प्राकृतिक लालिमा छाई हुई थी तथा वे एक नवयौवना के ओंठ होने के कारण कभी-कभी किंचित कम्पित हो फड़फड़ा उठते थे । यद्यपि वह मेरी पत्नी थी और उस पर मेरा पूर्ण अधिकार था, तथापि मैं उसे इस प्रकार देख रहा था मानो मैंने उसे, इस समय जीवन में प्रथम बार ही देखा हो । उसकी इस निश्छल प्राकृतिक सुन्दरता के आकर्षण से वशीभूत होकर मैं अचेतन होता जा रहा था । मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसका सौन्दर्य मुझे हिप्नो-टाइज कर रहा हो, किन्तु तभी गाड़ी एक झटके के साथ रुकी और

नीना की आंख खुल गई। वह एक झटके के साथ उठी और स्टेशन का नाम जानकर संतोष प्रकट किया तथा जब उसने मुझे सोता हुआ पाया तो उसने एक मादक अंगड़ाई ली और वेटर से चाय लाने को कहकर उसने बीना को जगाया।

'कौन-सा स्टेशन है?'

'गाजियाबाद!'

'उफ, अभी तो करीब एक घण्टे का रन और और है?'

'हूं! लो चाय बनाओ।'

कहकर वह बाहर की ओर झांकने लगी, किन्तु पुनः वह डिब्बे के अन्दर मुखातिब हो गई और कप को मुंह में लगाते हुए फुसफुसाई—'बीना, तुम्हारे भाई साहब को कैसे जगाऊं?'

'क्यों?'

'मुझे कुछ यहां खतरा नजर आ रहा है........'नीना ने यद्यपि यह शब्द बहुत धीमे स्वर में कहे थे, किन्तु मैं उसके शब्दों को मुंह की चाल से ही समझ गया और उपाय सोचने में मग्न हो गया। नीना के यह शब्द सुनकर बीना भी कुछ चिन्तित हो उठी और जैसे ही उन दोनों ने कप खाली करके रक्खे, एक हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति ने दो कान्स्टेबिल के साथ डिब्बे में प्रवेश किया। उनको ऊपर एक उड़ती नजर डालकर दोनों फिर नाश्ता करने लगीं।

'एक्सक्यूज मी मैडम—टिकट?'

'यस श्योर!'

कहकर नीना ने पर्स से दो टिकट निकालकर उसे थमा दिए और साथ ही ट्रेन भी एक थके व्यक्ति की तरह गहरी आह और सांस खींचकर आगे बढ़ी। उस व्यक्ति—टिकट चेकर—ने टिक कोट

चेक करके 'थैंक्स' के साथ वे टिकट नीना को लौटा दिये और मेरी ओर आकर बोला—

'मिस्टर टिकट ?'

'यस !' मैंने जेब से टिकट निकाल कर उसे दे दिया और शान्त भाव से सिगरेट निकाल कर सुलगा ली। टिकट-चेकर ने टिकट चेक करके मेरी ओर बढ़ाया और अपना हाथ वापस खींचने के साथ-साथ उसने मेरी फ्रेंचकट दाढ़ी भी खींच ली।

'अगर मेरी याददाश्त धोखा नहीं दे रही है तो शायद आप ही अज्ञात जी हैं ?'

'आपको गलत फहमी तो नहीं हुई है ?' मैं यद्यपि सकपका गया था, किन्तु फिर भी मैं इस कृत्य पर तमक कर खड़ा हो गया। नीना और बीना भी इस अप्रत्याशित हमले से अत्यधिक परेशान-सी हो गई थीं और उनके चेहरे की रंगत फीकी पड़ गई थी। यह मेरा उलटा प्रश्न सुनकर वह दृढ़ खड़ा मुस्कुराता रहा और कन्धे पर हाथ रख मुझसे बहुत ही साफ हिन्दी में बोला—

'मि० अज्ञात, सिगरेट आपने बेकार ही गुस्से में मसल दी, लीजिए दूसरी पीजिए।'

'नो थैंक्स !' कहकर मैंने स्वयं एक दूसरी सिगरेट सुलगाई।

'आप तो नाराज हो गये, जरा पहचानने की कोशिश कीजिये।' यह कहते हुए उसने अपने चेहरे पर चढ़ी झिल्ली उतार ली। अब मैं समझ गया कि फंस गये फिर चक्कर में, अतः फिर भी आश्चर्य प्रकट करते हुए मैंने कहा—

'अरे आप जेलर साहब ?'

'हाँ भई, भटके तेरी तलाश में जाने कहाँ-कहाँ, मिले भी तो रेल में ऐसी जगह !' मेरे पास ही बैठते हुए उस अंग्रेज जेलर ने कहा।

'वाह, आप तो शायरी भी करने लगे, हिन्दी कब सीखी ?'

'तुम्हारे ही चक्कर में यह भी करना पड़ा।'

'चलिये यह भी अच्छा ही रहा कि मेरी वजह से आप हिन्दी भी सीख गये।' मैं हँस पड़ा और उसकी नजर के चूकते ही मैंने वीना और नीना को संकेत कर दिया। 'हथकड़ी-बेड़ी नहीं नजर आ रही है ?'

'सोचता हूँ कि अब दोस्ती में उसकी जरूरत नहीं पड़ेगी, क्योंकि उसके स्थान पर मैं दो अंगरक्षक साथ लेता आया हूँ।"

'और अगर मान लीजिए कि मैं फिर भाग जाऊँ तो ?"

'बेटे! यह कानपुर की जेल नहीं है और नहीं कोई वैसा पहरेदार यहां है, कहो तो उड़ती चिड़िया गिरा दूँ।'

'लेकिन मान लीजिये कि मैं गोली से भी न गिरा और बचकर निकल गया तो ?'

'मक्खन बाजी यहां नहीं चलेगी बेटे, आज तक रिकार्ड है कि इस अधेड़ अंग्रेज का एक भी कारतूस खाली नहीं गया है।'

'अच्छा सिगरेट निकालिये।'

'अब आए रास्ते पर''''लो!'

'हां, फिर भी मान लीजिए कि मैं बच गया तो ?'

'चलो यह भी मान लिया कि तुम मेरी गोली से बच गए, लेकिन बेटे कानून से कैसे बचोगे ? कानून के हाथ बहुत लम्बे होते हैं और अपराधी को सात समुन्दर से भी निकाल कर फांसी के तख्ते पर लाकर खड़ा कर देते हैं।'

'जेलर साहब, अगर फांसी का ही डर होता तो इस आग में कूदता ही नहीं और अगर कूदा भी था तो जेल से भागता कभी नहीं।

"" जेलर साहब, आग से खेलने वाले अंगारों से नहीं डरा करते। अगर इन अंगारों का ही डर होता न, तो पलट कर कानपुर कम से कम न आता।'

'लेकिन जेल से तुम भागे क्यों ?'

'देश के लिये मरने वालों के पास सिवाय देश के अलावा और कुछ काम नहीं रहता। आज हर आदमी को आजादी चाहिये—केवल व्यक्तिगत ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण देश की, अपनी मातृभूमि की ! हर आदमी के पास एक ही काम है— देश के लिये मरो। उसका सिद्धांत यही है कि हमारी लाशों के ऊपर ही हमारे सपनों के आजाद भारत की नींव, आज नहीं तो कल जरूर ही, रक्खी जायेगी और फिर उस महल को दुनिया की कोई ताकत गिरा न सकेगी।'

'लेकिन अगर हम इस देश के रहने वालों से यह वायदा करें कि इस महायुद्ध के बाद हम उन्हें आजाद कर देंगे तो ?'

'माफ कीजियेगा जेलर साहब, पहले युद्ध के समय भी आपने हमसे यही वायदा किया था, लेकिन उसके एवज में आपने दिया क्या—रोलेट एक्ट और जालियाँ वाला बाग का निर्मम हत्याकांड ! अब आप ही सोचिए, हम कैसे आपकी बात का यकीन करें ?'

'खैर छोड़ो भी इस पचड़े को, और सुनाओ कहाँ-कहाँ घूम आये इन दिनों ?'

'देश के रहस्य गद्दार ही बताया करते हैं, जेलर साहब।'

'ओह, बहुत चालाक हो। अच्छा हमें शाहदरे पर ही उतरना है—तैयार हो लो।'

'अरे यहां क्या है, कहिये तो अभी उतर लूँ ?'

थोड़ी ही देर में शाहदरा आ गया और जब मैं उतरा तो

मेरी निगाह अचानक ही नीना और बीना की ओर चली गई, जिनकी आंखों में आंसू भरे थे। बात करने की इच्छा होते हुये भी, परिस्थिति का ध्यानकर मैंने केवल संकेत मात्र ही किया और तुरन्त जेलर के साथ आगे बढ़ गया।

और वे दोनों मुझे ओझल होते हुये देखती रहीं।

गाड़ी एकबार फिर चल दी, लेकिन उसकी उदासी कम होने के बजाय और भी अधिक बढ़ गई थी, फिर भी चलना तो था ही क्योंकि मंजिल करीब थी।

गाड़ी के चलते ही बीना फफक पड़ी और नीना की गोद में उसने निढाल होकर अपना सिर छिपा लिया। उसका निश्चेष्ट और दुर्बल शरीर रह-रहकर सिसकियों से कांप उठता था। कुछ देर तक तो नीना भी नेत्रों में अश्रु भरे वैसे ही बैठी रह गई, किन्तु तुरन्त ही उसे अपने दायित्व और कर्त्तव्य का ध्यान आया और उसने आंसुओं को पोंछ डाला और अदम्य साहस से इस दूसरे आघात को सहन करते हुये बोली—

'छि: पगली रो रही है? अरी मुझे देख, मैं मुस्का रही हूँ कि मेरा पति अपने कर्त्तव्य-पथ पर डटा हुआ है····तुझे तो गर्व होना चाहिये कि तेरा भावी पति कमल और तेरा प्यारा भाई दोनों ही अपने देश कर्त्तव्य पथ पर चल रहे हैं।'

'भाभी!'

'हां, बीना! रोने से क्या लाभ? रोने से कोई तेरे भाई

साहब छूट तो आयेंगे नहीं, अब तो केवल ईश्वर का ही सहारा है। धीरज से काम लो, मेरी बहन।'

'अभी कैसे धीरज धरूँ, एक ही तो भाई था जो इतना ख्याल रखता था कि अगर मेरे सिर में जरा-सी भी पीड़ा होती थी तो वह आसमान के तारे भी तोड़कर लाने को तैयार रहता था।'

'बीना, अब उसके लिये इतना शोक करके व्यर्थ अपना स्वास्थ्य मत खराब करो, तुम्हें उन्हीं की सौगन्ध!'

'भाभी!'

'हाँ बीना, हमें बहुत से कार्य करने हैं, जो तुम्हारे भाई साहब हम लोगों के लिये छोड़ गये हैं।'

अभी वह कह ही रही थी कि हाँपती हुई ट्रेन देहली के प्लेटफार्म पर ठहर गई और बीना तथा नीना दोनों ही मय सामान के नीचे उतर आईं। स्टेशन के बाहर आकर पहला काम नीना ने किया कि एक तार भगवान चन्द्र को भेज दिया और फिर बीना के साथ टैक्सी में बैठकर घर आ गई। और सीधे उस कमरे में दोनों गईं जहाँ ट्रान्समीटर सेट फिट था। नीना ने उसे चालू करके कानों पर रिसीवर चढ़ा लिया—

'मैं मिसेज नीना बोल रही हूँ—रवीन्द्र की पत्नी।.........जी हाँ, बात यह है कि मि० रवीन्द्र अरेस्ट हो गये हैं और अब उनके छूटने तक हमारे लिये क्या आर्डर है? ......जी? क्या इसे डिस्ट्रॉय (नष्ट) कर दूँ?.........अच्छा, क्या आप सुभाष ब्रिगेड की कुछ खबर दे सकते हैं?......अच्छी बात है, जयहिन्द!'

'क्या हुआ?'

'इसे नष्ट कर दूँ।' कहती हुई नीना ने सेट के तार अलग कर दिये।

'गोपाल भय्या की खबर है ?'

'उनकी ब्रिगेड मांडले में इस समय आराम कर रही है।'

'और कमल ?'

'अरी बन्नो, कमल और मुरु दोनों ही तो उनके साथ हैं, वे भी मौज से आराम ही कर रहे होंगे।'

'और आशा भाभी ?'

'वह बेचारी भी कहीं नर्सिंग ही कर रही होंगी, ईश्वर जाने।'

'ओह !' कहकर बीना कुछ सोच में पड़ गई। लेकिन फिर तुरन्त ही नीना के कहने पर स्नानादि से निवृत्त होने के लिये उसके साथ चल दी।

अगर किसी घर में दो ही लड़कियाँ अपने माँ-बाप के साथ रह रही हों और उचित वय पर माँ-बाप ने शादी करके एक साथ ही दोनों को विदा कर दिया हो तो क्या आप उस घर की उदासी का अनुमान लगा सकते हैं ? कदाचित् नहीं, क्योंकि आपके ऊपर बीती नहीं है, जब जिसके ऊपर पड़ती है वही उसका मूल्य जान पाता है—यह ध्रुव सत्य है। भगवान चन्द्र के साथ भी यही हुआ। नीना और बीना के जाते ही उनका हृदय उदास हो गया, दिन उदास हो गया और कोठी भी उदास हो गई। वे उन दोनों से बिल्कुल पुत्रीवत् स्नेह करते थे और उनके मृदु हास्य से दिन भर कोठी गुंजित रहती थी। शाम को जब वे आते थे तो दोनों के मृदु हास्य से उनकी सारी थकान बर्फवत् पिघल कर पानी-पानी हो जाती थी और फिर सारी सन्ध्या उन्हीं दोनों के साथ गुजरती थी। लेकिन उनके जाते ही फिर वही पूर्ववत् उदासी और थकान ने उन्हें आ घेरा और अब उनके लिये केवल एकबर्ड और बेबी ही रह गये, जो संबंध

(विदेशी) होते हुये भी अंग्रेज न प्रतीत होकर भारतीय सी प्रतीत होते थे। जब किसी व्यक्ति के आचार-विचार, खान-पान आदि पूर्णतः भारतीय परम्परा में रंगे हुये हों तो वह विदेशी कैसे कहा जा सकता है ? यही सिद्धांत भगवान चन्द्र भी अपनाये हुये थे।

सूर्य डूब चुका था और पूरे कानपुर पर अन्धकार का विस्तृत साम्राज्य छाया हुआ था। इस समय भी भगवान चन्द्र अपनी कोठी पर एडवर्ड और जेनी के साथ बैठे हुये बातें कर रहे थे।

'भाई साहब चलिये आज पिक्चर ही देख डाली जाये।' जेनी ने प्रस्ताव उन तीन आदमियों की कौंसिल में पेश किया।

'हाँ मि० भगवान, 'देवदास' लगी है। कन्हैया लाल सहगल की बेहतरीन एक्टिंग होगी।' जेनी के प्रस्ताव का समर्थन जब एडवर्ड ने कर दिया तो भगवान चन्द्र बेचारे क्या कहते, उन्हें उनकी बात माननी पड़ी और अन्ततः वह प्रस्ताव पारित हो गया। प्रोग्राम यह था कि डिनर किसी होटल में लेने के बाद पिक्चर में बैठ लिया जाये।

जैसे ही वे तीनों चलने को हुए नौकर ने एक तार लाकर भगवान चन्द्र के हाथ में रख दिया। तुरंत उनके मस्तिष्क में कोई विचार विद्युत गति से कौंध गया और उन्होंने लिफाफा फाड़ कर वैसे ही कागज पढ़ा। उनके चक्कर-सा आ गया और वह एक कुर्सी का सहारा लेकर उस पर निश्चेष्ट होकर पड़ गये।

'क्या बात है, मि० भगवान ?' एडवर्ड ने उनकी चिन्तित भंगिमा को देखकर प्रश्न किया और तार को पढ़ा. लेकिन कुछ समझ में न आया क्योंकि उसमें केवल एक ही शब्द लिखा था—'अरेस्टेड —नाना !'

बात क्या है, भाई साहब ?'

'जिस बात का डर था, जेनी वही हुआ।'

'क्या हुआ ?'

'रवीन्द्र पकड़ लिया गया।'

'ओह !' एडवर्ड ने कुछ क्षण सोचकर अपने अन्तर्द्वन्द पर विजय और पाई बोल—'डोण्ट वरी मि० भगवान, वी विल गो देहली टुडे।'

'तुम्हारी सर्विस ?'

'उसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं, रवीन्द्र आपका ही नहीं, हमारा भी भाई है; मैं रिजाइन कर दूंगा लेकिन रवीन्द्र को मैं छुड़ा कर ही दम लूंगा।'

'लेकिन तुम........'

'आप चिन्ता न करें। जेनी, तुम तैयारी करो, और तीन सीटें बुक करवा लो, हम इसी गाड़ी से जायेंगे।'

'अच्छी बात है।' कहकर जेनी चली गई।

'एडवर्ड !'

कहकर भीगे चेहरे से भगवान चन्द्र उठे और एडवर्ड को अपने सीने से भींच लिया।

१८

मांडले में पड़ी हुई आजाद हिन्द फौज को करीब छः मास बीत चुके थे। मौसम की प्रतिकूलता के कारण ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध चलाया गया यह अभियान एक प्रकार से असफल हो रहा और इस प्रकार प्रथम अभियान जो मई १९४४ में जापानियों की सहायता से चलाया गया था, सितम्बर ४४ में समाप्त हो गया; किन्तु दूसरी दृष्टि से यह अभियान बहुत कुछ सफल रहा। आजाद हिन्द फौज घटिया सामान और रसद की कमी के बावजूद भी हिन्दुस्तान की जमीन में १५० मील आगे तक बढ़ गई थी और इस लड़ाई के दौरान एक बार भी ऐसा अवसर नहीं आया कि आजाद हिन्द फौज को पीछे हटना पड़ा हो और ऐसा भी कम ही हुआ कि जिस चौकी पर इसने हमला किया वह जीती न जा सकी। यद्यपि इस अभियान में इसके चार हजार सैनिक वीर गति को प्राप्त हुए। इस बड़े बलिदान के बाद भी यह आ० हि० फौज का दुर्भाग्य ही था कि वह इम्फाल को न जीत सकी।

वह जापानियों के साथ इम्फाल को जीत सकती थी और एक बार तो अंग्रेज यहाँ तक मजबूर कर दिये गये कि वे अपनी फौज को इम्फाल से दीमापुर तक हटा लें; लेकिन यह उनके लिये सम्भव न हो सका क्योंकि कोहिमा की सड़क को इस मिली-जुली सेना ने

घर रक्खा था और इरादा तो यह किया गया था कि अंग्रेजों की सारी सेना और उसके सारे सामान को ज्यों-का-त्यों पकड़ लिया जाय, क्योंकि अगर वह सड़क खुली होती तो निश्चय ही अंग्रेज पीछे हट गये होते—और इस प्रकार इम्फाल की सारी पहाड़ी सड़कें इस सेना के द्वारा बन्द कर दी गयीं थीं। इसका एक और कारण था कि अंग्रेजी सेना पर अधिकार हो जाने से उसके सैनिकों को भी इस युद्ध में शामिल होने के लिये विवश किया जा सकता था और अच्छे हथियारों तथा अच्छी तोपों की मदद से सेना का आगे का कार्य भी आसान हो सकता था।

जब अंग्रेजी सेना के पास पीछे हटने के सभी मार्ग बन्द हो गये तो उसने जमकर लड़ना शुरू किया, क्योंकि इसके अतिरिक्त उसके पास और कोई चारा ही न था। इस लड़ाई को जारी रखने के लिये उसने एक इस्पाती घेरा—मोटरों और फौजी टैंकों की सहायता से—बनाया और इस प्रकार 'पेटीव्यूह' बनाकर उसने लड़ना शुरू किया। यह आजाद हिन्द फौज का दुर्भाग्य ही था कि प्रशांत द्वीप पर अमरीकन हमले से मजबूर होकर जापानी हवाई सेना उस ओर चली गई थी और वह अगर इस समय वहाँ होती तो व्यूह-भंग कोई कठिन कार्य न था, फिर उसकी पकड़ से अंग्रेज अपना कोई भी हवाई डिवीजन आकाश से नहीं ला सकते थे। इसी कारण उन्होंने अपने मौके का फायदा उठाया और इम्फाल की अंग्रेजी सेना हवाई जहाजों के जरिये सामान पाती रही। काश ! जापानी हवाबाज होते तो यह सेना अवश्य ही अंग्रेजों को हथियार डाल कर आत्म-समर्पण के लिए बाध्य कर देती।

लेकिन ईश्वर को शायद कुछ और ही मंजूर था। परिणाम यह हुआ कि जब बरसात शुरू हुई तो उस समय आजाद हिन्द फौज और जापानी सेना दोनों ही इम्फाल के लिए लड़ रही थीं। बरसात

की अधिकता के कारण जून में इन फौजों को सामान न पहुँचाया जा सका, फिर पानी और कीचड़ ने भी इन्हें मजबूर कर दिया कि ये अपनी मेहनत से बनाये हुए घेरे को उठा लें और वापस लौट आवें।

और यही हुआ भी, कि वे असफल होकर वापस मोहमे लौट आये तथा अब फिर आर्डर का इंतजार किया जा रहा था कि कब मौका मिले और भारत के सपूत आगे बढ़ कर अपना जौहर दिखा सकें। दूसरी ओर 'झाँसी की रानी' के दस्ते की अधिकांश लड़कियाँ वहाँ के अस्पतालों मे अपने भाइयों की सेवा तन-मन से कर रही थी, जो इस महान् किंतु अपूर्ण प्रयाण में घायल होकर वापस लौट आये थे।

जनवरी का महीना वैसे भी कड़कड़ाती ठंड का महीना होता है, लेकिन जनवरी के अंतिम दिनों में तो आफत ही हो जाती है। फिर उस सेना के सैनिकों का क्या हाल होगा, स । एकेजिसकेबल एक कमीज और एक ही पतलून हो ? यद्यपि उनको कपड़े की तंगी थी, वे ठंड से काँपते रहते तथापि उनके शब्द यही रहते, 'न जाने क्यों नेता जी इतनी देर कर रहे हैं ? अगर उनका केवल संकेतमात्र ही मिल जाये तो वतन की मिट्टी की कसम ! दुश्मन की इंट से इंट बजा दें। हमको कपड़ों नहीं चाहिये, रसद नहीं चाहिए, गोला बारूद भी नहीं चाहिये और न हो बन्दूकें चाहिये—हमका चाहिये सिर्फ नेता जी का हुक्म। हुक्म मिलते ही हम पेड़ की डालें ही लेकर दुश्मन पर टूट

कर उनके हथियार छीन लेंगे ...और फिर इम्फाल तो क्या, अपने वतन को भी आजाद करा लेंगे।'

इन शब्दों को। सैनिकों से दृढ़ता और उनके साहस तथा नेताजी के प्रति अटूट श्रद्धा व विश्वास दृष्टिगोचर होता है। सैनिकों के चरित्र और उनकी देशभक्ति पर अंततः यह विश्वास हो ही जाता है, 'जीत हमारी ही होगी।'

इस समय रात्रि का प्रथम पहर बीत चुका है। चारों ओर गहन सन्नाटा 'सांय-सांय' कर रहा है। ऊपर अमावस्या के कारण तारे भी नहीं चमक रहे हैं। शिविर मौन होते जा रहे हैं, जिनमें आजाद हिन्द फौज के जवान नेताजी के केवल एक संकेत की प्रतीक्षा कर रही हैं।

इसी प्रकार के एक शिविर में गुरु और कमल लेटे विश्राम कर रहे थे। अस्पताल से इन्हें एक माह पूर्व छुट्टी मिली थी और चूंकि आशा भी उसी अस्पताल में थी, इस कारण उसने अपनी ड्यूटी दिन को करवा ली थी और रात में वह भी इसी शिविर में रह जाती थी।

'भाभी, गोपाल भय्या अभी नहीं आए ?' कमल ने आशा की ओर मुंह करके कहा।

'कहीं गप्पें लड़ा रहे होंगे।' आशा ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।

'अरे नहीं भाभी, गोपाल भय्या और गप्पें ?—असंभव !' गुरु ने वैसे ही हाथ झटक कर कहा, गोपाल ने शिविर में कदम रक्खा। उसके आते ही कमल ने कहा'—भई वाह गोपाल भय्या, शैतान की उमर हो।'

'क्यों ?'

'अभी आपकी ही बातें हो रहीं थीं।'

'या भाभी से कोई साँठ-गाँठ हो रही थी।'

'अरे नहीं भय्या, आशा भाभी इतनी तेज हैं कि जल्दी हम लोगों के फंदे आ में नहीं सकतीं।' कमल के इन शब्दों को सुन कर आशा ने तेज निगाहों से कमल को घूरा और मुस्कुरा कर खाना परोसने लगीं। गोपाल ने कपड़े उतार कर रखते हुये कहा।

'कमल बेटे, जरा संभलकर फंदा फेंकना; कहीं ऐसा न हो कि खुद फंस जाओ और' माया मिले न राम, क्या समझे।'

'कुछ भी नही।'

'कहीं अपनी भाभी के चक्कर में आ गये तो एक तरफ तो मेरा बेड़ा पार होगा ही और दूसरी तरफ बेचारी वीना की भी थाती मारी जायेगी, जो बेचारी देहली में तुम्हारे इन्तजार में दुबली हो रही होगी।

'आप लोगों ने ये क्या शुरू कर दिया? यहाँ खाना ठंडा हो रहा है और आप लोगों को बेकार की बातों से छुट्टी नहीं है।' कमल कुछ कहने हो जा रहा था कि आशा की डाँट खाकर बोला -

'भय्या आपके कारण यह भी मंजूर है।'

'चलो भाइयो, खाना खालो वरना खैर नहीं है।'

गोपाल ने कहा और फिर चारों खाने पर बैठकर आराम से बातें करने लगे। आशा ने बीच में पूछा—

'रवीन्द्र का कुछ पता चला?'

'हाँ कल ही छूटा है।'

'कैसे?' तीनों के आग्रह पर गोपाल ने सारांश में सारी घटना कह दी—

'नीना ने ट्रेन से उतरते ही भगवान चन्द्र को तार दिया कि रवीन्द्र पकड़ लिया गया और तार पाते ही वह अपने एक अंग्रेज मित्र के साथ देहली पहुंचे।'

'अंग्रेज और मित्र ?' गुरु और कमल, दोनों ही, बुरी तरह चौंक पड़े।

'हाँ, मैं जानती हूँ—एडवर्ड साहब होंगे। बहुत मानते हैं भय्या को ! सज्जन आदमी हैं।'

'यह एडवर्ड कौन साहब हैं ?' तीनों की प्रश्नपूर्ण दृष्टि आशा की ओर घूम गई।

'जज हैं। इग्लैंड से यहाँ आए थे और यहीं आकर एक ऐसी अंग्रेज स्त्री से शादी कर ली, जिसके संस्कार पूर्णतः भारतीय हैं, बस फिर वह भी उसी की भाँति भारतीय संस्कारों में ऐसे रंगे कि सारी अंग्रेजियत भूल गये।'

'खैर !' गोपाल ने कहना शुरु किया—'देहली पहुँच कर उन उन दोनों ने सोर्स भिड़ाया और जब कुछ हालात आसान हुये तो यह दोनों गाँधीजी के पास पहुँचे और उनसे मदद करने को कहा। पहले तो उन्होंने कुछ आना-कानी की, फिर नेहरूजी से कहकर रवीन्द्र की वकालत करवाई और परिणामतः वह छूट गया।'

'ओह !' कहकर सबने भोजन समाप्त किया और अपने-अपने पलंग पर कड़कड़ाती रात काटने के लिये लेट गये। लेकिन केवल कमल न सो सका, कारण कि उसका मन बीना के पास घूम रहा था और वह था मौडले में !

'या भाभी से कोई सांठ-गांठ हो रही थी।'

'अरे नहीं भय्या, आशा भाभी इतनी तेज हैं कि जल्दी हम लोगों के फंदे आ में नहीं सकतीं।' कमल के इन शब्दों को सुन कर आशा ने तेज निगाहों से कमल को घूरा और मुस्कुरा कर खाना परो-सने लगीं। गोपाल ने कपड़े उतार कर रखते हुये कहा।

'कमल बेटे, जरा संभलकर फंदा फेंकना; कहीं ऐसा न हो कि खुद फंस जाओ और' माया मिले न राम, क्या समझे।'

'कुछ भी नहीं !'

'कहीं अपनी भाभी के चक्कर में आ गये तो एक तरफ तो मेरा बेड़ा पार होगा ही और दूसरी तरफ बेचारी वीना की भी थाती मारी जायेगी, जो बेचारी देहली में तुम्हारे इन्तजार में दुबली हो रही होगी।

'आप लोगों ने ये क्या शुरू कर दिया ? यहां खाना ठंडा हो रहा है और आप लोगों को बेकार की बातों से छुट्टी नहीं है।' कमल कुछ कहने ही जा रहा था कि आशा की डांट खाकर बोला

'भय्या आपके कारण यह भी मंजूर है।'

'चलो भाइयो, खाना खालो वरना खैर नहीं है।'

गोपाल ने कहा और फिर चारों खाने पर बैठकर आराम से बातें करने लगे। आशा ने बीच में पूछा—

'रवीन्द्र का कुछ पता चला ?'

'हां कल ही छूटा है।'

'कैसे ?' तीनों के आग्रह पर गोपाल ने सारांश में सारी घटना कह दी—

'नीना ने ट्रेन से उतरते ही भगवान चन्द्र को तार दिया कि रवीन्द्र पकड़ लिया गया और तार पाते ही वह अपने एक अंग्रेज मित्र के साथ देहली पहुंचे।'

'अंग्रेज और मित्र ?' गुरू और कमल, दोनों ही, बुरी तरह चौंक पड़े।

'हां, मैं जानती हूं—एडवर्ड साहब होंगे। बहुत मानते हैं भय्या को! सज्जन आदमी हैं।'

'यह एडवर्ड कौन साहब हैं ?' तीनों की प्रश्नपूर्ण दृष्टि आशा की ओर घूम गई।

'जज हैं। इग्लैंड से यहां आए थे और यहां आकर एक ऐसी अंग्रेज स्त्री से शादी कर ली, जिसके संस्कार पूर्णतः भारतीय हैं, बस फिर वह भी उसी की भांति भारतीय संस्कारों में ऐसे रंगे कि सारी अंग्रेजियत भूल गये।'

'खैर !' गोपाल ने कहना शुरु किया—'देहली पहुंच कर उन उन दोनों ने सोशँ भिड़ाया और जब कुछ हालात आसान हुये तो यह दोनों गांधीजी के पास पहुंचे और उनसे मदद करने को कहा। पहले तो उन्होंने कुछ आना-कानी की, फिर नेहरूजी से कहकर रवीन्द्र की वकालत करवाई और परिणामतः वह छूट गया।'

'ओह !' कहकर सबने भोजन समाप्त किया और अपने-अपने पलंग पर कड़कड़ाती रात काटने के लिये लेट गये। लेकिन केवल कमल न सो सका, कारण कि उसका मन बीना के पास घूम रहा था और वह था मांडले में!

हेडक्वार्टर से आउंग आने तक जनवरी को महीना खत्म हो गया और रवाना होने पर गोपाल को लेफ्टिनेंट तथा गुरू को सेकण्ड लेफ्टिनेंट बनाकर कर्नल ढिल्लन की कमाण्ड में तौंगजीन की ओर भेजा गया तथा कमल को कैप्टन बनाकर कर्नल सहगल के साथ तौंदविंगी को ओर भेजा गया।

एक बार फिर विदाई का समय आया। रात बीती और सबेरा हुआ। लगभग सभी ऐसा महसूस कर रहे थे कि जैसे वे फिर कभी एक दूसरे का न देख सकेंगे कमल तो खैर पुरुष था और पुरुष स्वभावत: कुछ कठोर हृदय के होते है, अत: वह प्रत्यक्ष रूप से गोपाल और गुरु से कुछ भी कह न सका और केवल मन मसोस कर रह गया। लेकिन आशा न मौन रह सकी और आखिरकार रो ही दी। उसका नारी-हृदय न जाने क्यों रह-रह कांप उठता था। उसने एक बार कुछ कहने की कोशिश भी की लेकिन गोपाल ने उसका मुँह बन्द कर दिया—

'पगली कोई मैं हमेशा के लिये तो जा नहीं रहा हूँ। लड़ाई में जीत हमारी ही होगी। हमारा वतन आजाद होगा। माँ की सदियों से पड़ी गुलामी की जंजीरें टूट कर बिखर जायेंगी। दिल्ली पर प्यारा तिरंगा लहरायेगा और तुम ऐसे खुशी के मौके पर रो रही हो? आशा! जरा सोचो कितनी ललनाओं के माँग के सिन्दूर इस लड़ाई में जुझ रहे हैं, कितना ही बहनों के भाई खुशी से अपने वतन के लिए खून देने को तैयार हैं, कितनी ही माँ अपने बच्चों को भारत माँ पर न्योछावर कर रही हैं; फिर मैं भला कैसे रुक सकता हूँ? नहीं आशा, मेरी माँ मुझे बुला रही है—विदा न दोगो?'

'अच्छा स्वामी, रुको जरा गुरू और कमल भैय्या को भी बुला लो, मैं उन्हें टीका काढ़ूँगी।'

'और मुझे!'

'आपका तो सर्वस्व है, नाथ!'

'सच !'

कहते हुए गोपाल ने आशा को कसकर अपने सीने से भींच लिया और फुसफुसाते हुए बोला—

'न जाने क्यों आशा, आज तुम्हें प्यार करने को जी चाह रहा है। जी में आता है कि बस तुम्हें देखे ही जाऊँ। एक बार फिर से तुम दुल्हन बनो और मैं तुम्हें अपने हाथों से सजाऊँ.......... अच्छा देखो बिगुल बज रहा है।'

'मैं अभी आई !'

कहकर आशा अश्रुभरे नेत्रों के साथ अन्दर भाग गई और थाली में रोली तथा चावल सजाने लगी। गोपाल के वे शब्द उसके कानों में बार-बार गूंज रहे थे'...... तुम दुल्हन बनो और मैं अपने हाथों से तुम्हें सजाऊँ.......' उसका हाथ थाली सजाते-सजाते रुक गया और अनायास ही उसके मुंह से निकल पड़ा - 'काश ! ऐसा संभव हो पाता मेरे स्वामी, तो जीवन की साध पूरी हो जाती।' लेकिन तुरंत उसे विचार आया और वह थाली लेकर बाहर आई, जहाँ कमल, गुरू और गोपाल खड़े हंस-बोल रहे थे। उसके हृदय पर फिर एक आघात लगा लेकिन बड़े यत्न से उसने अपने को संयत किया और आँचल से आँसू पोंछकर वह आगे बढ़ी। सबसे पहले गोपाल के टीका काढ़कर उसकी चरण-रज उसने मस्तक पर चढ़ाई और फिर कमल को टीका काढ़ा।

'भाभी, कुछ खिलाओगी नहीं ? अब न जाने कब मुलाकात हो ?'

'कमल, मेरे भैय्या !...... मेरे लाल ! ऐसा नहीं कहते।'

आशा के हृदय में मातृत्व उमड़ आया। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो कमल एक छोटा सा बच्चा हो और वह उसकी माँ हो। माँ !

कमल को भी ऐसा ही प्रतीत हुआ और वह अपनी भाभी के सीने में छिपकर सिसक पड़ा—

'भाभी—मेरी माँ !'

'मेरे लाल !'

कुछ क्षण यह अपूर्व मार्मिक दृश्य वहीं रहा। चारों के नेत्रों से आँसू बह रहे थे। आशा ने गुरू के टीका काढ़ते हुये कहा—

'गुरु भय्या, मेरे सुहाग की रक्षा करना !'

'भाभी, तुम घबड़ाओ मत ! हम दोनों साथ जा रहे हैं और साथ ही लौटेंगे।'

'जाओ मेरे भय्या !'

और वे तीनों जीप पर बैठकर रवाना हो गए। आशा बाहर खड़ी तब तक जीप को देखते रही जब तक कि जीप आँख से ओझल न हो गई। जीप के ओझल होते ही वह अन्दर आई और गोपाल की फोटो को सीने से चिपका कर सिसक पड़ी। लेकिन शीघ्र ही उसे अपने गौरव और कर्त्तव्य का ध्यान आया और वह दृढ़ता से उठी। उसने कपड़े उतार कर स्नान किया और स्वयं भी अपना कर्त्तव्य पालने को तैयार हो गई।

\+ + +

लेफ्टिनेंट गोपाल और सेकण्डलेफ्टीनेंट गुरू फरवरी के शुरू होते ही तीन तारीख का मिस्यान पहुँच गये। उन्हें कर्नल ढिल्लन के रेजीमेन्ट में रहकर अपना कर्त्तव्य-पालन करना था। मिस्यान पहुँचते ही वे दोनों सीधे कर्नल ढिल्लन के पास गये।

'जय-हिन्द सर !'

'जय-हिन्द ! आओ-आओ लेफ्टीनेंट गोपाल, आई वाज वेटिंग फार यू।'

'थैंक्यू सर। नेता जी का मेसेज है कि आपका यह चौथा छाग-बार रेजीमेन्ट म्यानगू और पगान के लिये रवाना होगा और वहाँ दुश्मन को नदी पार करने से रोकेगा। उस टुकड़ी के पीछे दूसरी सहायक सेना पकोकाऊ-तिलिन सड़क पर गश्त लगाने के लिये पकोकाऊ भेजी जायेगी। यह रहा आपका आज्ञा-पत्र!'

'ओह लेफ्टीनेंट, इटस् टू लेट! कम आन।' कर्नल ढिल्लन के मुख पर पढ़ते ही कुछ रेखायें उभरी और फिर पूर्ववत् मिट गईं।—' 'सेकण्ड लेफ्टीनेंट! यू प्लीज इन्फार्म आल द आफिसंस। फार द मीटिंग!'

'आल राइट सर!'

गुरु ने फौजी ढग से एड़ियाँ बजाकर सैल्यूट किया और कैम्प से निकल कर उसने सभी को उस आज्ञा के विषय में बता दिया। कुछ ही देर में मेजर ढिल्लन के कैम्प में एक गुप्त-सभा हुई और यह निश्चय किया गया कि रेजीमेन्ट को तुरन्त निर्दिष्ट स्थानों पर फैल जाना चाहिये ताकि दुश्मन इरावदी को न पार करने पाये।

'आप लोगों की राय से मैं पूरी तरह सहमत हूँ लेकिन हमारे पास वहाँ पहुँचने के लिये कोई साधन नहीं है और वह स्थान यहां से अस्सी मील दूर है। क्या आप लोग पैदल वहाँ पहुँचेंगे?' मेजर ने अपना सन्देह प्रकट कर दिया।

'जरूर पहुँचेंगे! हम लोगों ने दो-दो सौ मील दलदल में चल कर रास्ता पार किया है, सर! और जहाँ तक मेरा विचार है कि इस इलाके में इस प्रकार की कठिनाइयों का अभाव है?' लेफ्टीनेंट गोपाल के इस कथन को हर अफसर ने स्वीकार किया।

'ठीक है। मुझे भी यही उम्मीद थी, हम कल सबेरे ही कुछ सवारियों का इन्तजाम करके यहाँ से कूच कर देंगे और उम्मीद है कि दो-तीन दिन में वहाँ पहुँच भी जायेंगे। क्यों ठीक रहेगा ना?'

'यस सर !' सबका एक स्वर था।

'आल राइट ! आल आफ यू प्लीज इन्फार्म द रेजीमेंट दैट वी विल स्टार्ट फ्राम हियर बाई टूमारो मार्निंग ! (आप लोग कृपया रेजीमेंट को यह सूचना दें कि हम कल सवेरे ही यहाँ से कूच कर देंगे।) नाऊ यू कीन गो—जय-हिन्द !'

'जय हिन्द !'

पकोकाऊ पहुंचकर कर्नल ढिल्लम ने सर्वप्रथम उस क्षेत्र को भलीभांति जांच की और वहाँ की उचित व्यवस्था कर दी। सैनिकों ने वहां पहुँचते ही खाइयाँ खोदना शुरू कर दीं और बहुत कुछ मेजर जागीर सिंह के नेतृत्व में पूरी कर लीं किन्तु। अचानक ही सबेरे-सबेरे दुश्मन ने गोलाबारी शुरू कर दी। वाह रे भारत के सपूत, आ० हि० फौज के सैनिकों ! ने दुश्मन की तनिक भी परवाह न की और 'जय-हिन्द' के नारों से पहाड़ियों को गुंजाते हुये दुश्मन पर भूखे शेर की तरह टूट पड़े और उसे पुनः इरावदी पार करके भागने को मजबूर कर दिया। इस जीत ने सैनिकों के हौसले और भी बढ़ा दिये और वे अब कमर कस कर तैयार थे।

इस जीत से प्रभावित होकर कप्तान चन्द्रभान ने बड़ी ही बुद्धिमानी से काम लेते हुये लेफ्टीनेंट गोपाल से सलाह की और अपना प्लाटून को पगान के मोर्चे पर छिपा दिया तथा वे दोनों ही एक उचित स्थान पर बैठकर दुश्मन की बाट जोहने लगे।

लगभग आधी रात को गोपाल ने सावधान किया—कैप्टेन, कैप्टेन ! नदी पार देखो, शायद नावें बढ़ने को तैयार हैं। सावधान, आवाज न होने पाये।'

'तो क्या....'

अभी कैप्टेन अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि दुश्मन ने गोलाबारी शुरू कर दी और वे दोनों लेट कर दुश्मन पर निगाह रखते हुए आपस में बात करने लगे, यद्यपि वातावरण गोलों की आवाजों से लगातार गूंज रहा था—

'मेरा ख्याल है कैप्टेन, दुश्मन को मदद मिल गई है। लेकिन कोई बात नहीं, हमारे जवानों को इनकी तोपें कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकतीं।'

'वह कैसे ?'

'देखते नहीं, गोले कहां फट रहे हैं और हम उनसे कितनी दूर हैं—वह देखो नावें बढ़ रही हैं।'

'अब ?'

'सिपाहियों को आगे बढ़ने का आर्डर दो दुश्मन नदी के पार न आने पाये।'

'आल राइट सर !'

कहते हुये कैप्टेन ने इशारा किया और जैसे ही वे नावें, जिनकी संख्या लगभग पचीस होगी, बीच धार पर आईं; वैसे ही नदी के किनारे से 'जय हिन्द' की आवाज के साथ लगभग दो राउन्ड गोलियों की बाढ़ आई और दो नावें तलहटी में बैठ गईं।

'धांय-धांय-धड़ाम !' उधर से भी जवाब आया।

'धांय-धांय !'

आजाद हिन्द फौज के इस मोर्चे ने उन टामी सैनिकों की हिम्मत पस्त कर दी और लगभग बीस नावें डुबाकर उन्हें वापस लौट जाने के लिये मजबूर कर दिया।

इस हार से दुश्मन बुरी तरह बोखला गया और पौ फटते ही पक्षियों के कलरव के स्थान पर हवाई जहाजों का गड़गड़ाहट शुरू हो गई। वे इतने नीचे उड़ रहे थे कि मशीनगन से मार की जा सकती थी, लेकिन प्लाटून मजबूर था क्योंकि उसके पास मैदानी तोपें भी नहीं थीं और उधर दुश्मन एक तो नदी के किनारे से गोले बरसा रहा था और इसरे ऊपर से उसके करीब पांच जहाज पूरी तरह से कहर बरपा रहे थे। यह देखकर कैप्टेन ने गोपाल से कहा—

'सर, इस प्रकार तो कुछ देर में हम बिल्कुल खत्म कर दिये जायेंगे।'

'हूं, अब एक ही रास्ता है कि इनके जहाजों को हम खत्म कर दें। जैसे ही यह हमारे पास से होकर गुजरें गोली से इन्हें मार गिराओ।'

'आल राइट सर!'

'लेकिन ठहरो। एक जगह पर तुम रहो और दूसरी जगह मैं रहता हूं, मगर एक बात ध्यान रखना कि गोली चलाकर तुरत जगह बदल देना, समझे!'

'यस सर, ओ० के०!'

'जयहिन्द कैप्टेन,!'

'जय हिन्द!'

यह कहकर दोनों ही अलग-अलग स्थानों पर खिसक गये। यह यह काम होते ही—अर्थात् उचित स्थान पाते ही—गोपाल ने अपने मामने का इन्तजाम कर लिया, क्योंकि स्थिति बड़ी नाजुक थी। अभी

गोपाल एक झाड़ी से । निशाना लगा ही रहा था कि उसके सिर के ऊपर से एक जहाज होकर गुजरा और जैसे ही वह आगे बढ़कर कुछ ही दूर गया होगा कि, सामने की लगभग चालीस गज दूर स्थित, झाड़ी से एक फायर हुआ, जयहिन्द की आवाज गूंजी और के जहाज के पिछले हिस्से में आग लग गई । आग के कारण जहाज का संतुलन बिगड़ा और वह एक भयानक दहाड़ के साथ पेड़ से जा टकराया । उसमें भयानक रूप से आग धधक रही थी । उसी समय एक दूसरा जहाज आया और जैसे ही उसने झाड़ी के ऊपर गोला फेंका, उसी समय उसकी बाडी से एक दस्ती बम टकराया ।' 'जय हिन्द' की आवाज के साथ ही' 'धांय' की आवाज गूंजा और उसके भी धड़े उड़ गये ।

इसी प्रकार दुश्मन के पांचों जहाज खत्म कर दिये गये । और फिर गोपाल इत्यादि ने छिपकर शाम तक रुकने का फैसला किया, क्योंकि दिन की रोशनी में यह छोटी सी टुकड़ी एक शक्तिशाली दुश्मन का मुकाबला अच्छी तरह से करने में समर्थ न थी ।

उसी दिन शाम का लेफ्टीनेंट गोपाल को मेजर ढिल्लन ने बुलाया और उसे योजना समझा कर नये प्रकार से काम करने को कहा तथा उसको नियुक्ति गुरू के साथ पोजू पर कर दी गई । फरवरी भी खत्म होने की थी, किन्तु अभी तक वे लोग अन्य स्थानों की खबरें न पा सके थे, कारण यह था कि उनके पास टेलीफोन या वायलिस न था और काम केवल हरकारा ही करता था ।

जिस दिन गोपाल ने कमान सम्भाली, उसी दिन दुश्मन की एक एक टुकड़ी टैंकों की मदद लेकर क्योंकि यांदांग की ओर बढ़ी । उन्हें रोकना आवश्यक था, अत: गोपाल ने एक राउण्ड फायर किया, यद्यपि वे जानते थे कि इन गोलियों का टैंका पर कोई असर न होगा । लेकिन महान् आश्चर्य कि टैंकों के मुंह पीछे पलट गये और दुश्मन पीछे भागा ।

'अटैक ! पीछा करो—दुश्मन भाग रहा है।'

'जय हिन्द !'

गोपाल की ललकार सुनते ही सैनिकों में उत्साह का संचार हुआ और वे तेजी के साथ नारे लगाते हुये आगे बढ़ रहे थे तथा दुश्मन की टुकड़ी लगातार पीछे हटती जा रही थी। यहाँ तक कि दुश्मन य्यानगू पुल तक खदेड़ दिया गया और गोपाल की गश्ती टुकड़ी ने वहीं अपना डेरा डाल दिया।

दूसरे ही दिन गोपाल को हरकारे के द्वारा खबर मिली कि उसे मेजर ढिल्लन का इन्तजार करना है ताकि तौंगजीन को कब्जे में किया जा सके और इसकी तारीख मार्च की ग्यारह तारीख तय की गई।

दिन बीतते देर ही कितनी लगती है ? निश्चित दिन जब तौंगजीन पर हमला किया गया तो उसपर इतनी आसानी से कब्जा हो गया जितनी आसानी से होने की कल्पना ही नहीं की जा सकती थी। शायद दुश्मन को पहले से ही खबर लग गई थी, अतः उसने मदद पाने के लिये तौगंजीन को खाली कर देना ही उचित समझा था। तौंगजीन पर कब्जा करते ही मेजर ढिल्लन ने गोपाल को तौंगजीन के उत्तर-पूर्व में 'ब' कम्पनी के साथ भेजा और कैप्टेन खान मुहम्मद को सादेगांव के पास की एक पहाड़ी पर हमला करने की आज्ञा दी। इसके साथ ही लेफ्टीनेंट दित्तूराम की कमान में, उत्तर-पश्चिम में 'अ' कम्पनी को भी तौंगजीन के बचाव के लिये भेज दिया गया और मेजर ढिल्लन की आज्ञा से शेष रेजीमेन्ट वहीं रह गया तथा वे (मेजर ढिल्लन) अपने सदर मुकाम पर चले गये।

''गुरु अगले महीने हमलोगों को दो साल पूरे हो जायेंगे, जब हमने भारत छोड़ने के लिये प्रयाण किया था ?'

'हूं', भय्या ! अब न जाने कब अपना वतन नसीब होगा ?'

गोपाल और गुरू दोनों इस समय गश्त से वापस आकर अपने-अपने बिस्तर पर सोने के लिए लेटे थे। कैम्प के बाहर सैनिकों की पद-चापें कभी पास आती और कभी दूर जाती प्रतीत होती थीं — अर्थात् सैनिक मुस्तैदी से अपने कर्त्तव्यों का पालन कर रहे थे। सर्दी का प्रकोप बहुत कम हो गया था, और वैसे भी मार्च की पन्द्रह तारीख के आते-आते सर्दी बहुत कम - बिल्कुल नहीं के बराबर ही — रह जाती है; या दूसरे शब्दों में पूर्णतः समाप्त हो जाती है क्योंकि वसन्तागमन से ही शीत-काल के ह्रास का समय प्रारम्भ हो जाता है. इसलिए उन्हें अपने दायित्वों को निभाने में कोई विशेष असुविधा नहीं हो रही थी। गोपाल और गुरू चूंकि पिछली कई रातों से लगातार ड्यूटी दे रहे थे, अतएव आज जब वे गश्त से करीब एक बजे लौटे तो अपने मातहत सैनिकों के अत्यन्त अनुग्रह पूर्ण आग्रह से विवश होकर उन्हें कैम्प में रात बिताने के लिये आना ही पड़ा। यद्यपि इस कार्य के लिये — सोने के लिये— उनकी तनिक भी इच्छा नहीं थी, फिर भी वे बाध्य हो गये क्योंकि सैनिकों की इस प्रेमपूर्ण आग्रह को अस्वीकार कर देना। उन्हें अत्यन्त ही दुष्कर कार्य प्रतीत हुआ। अतएव उन्होंने कैम्प में आकर बूट उतारे और मोमबत्ती बुझाकर अपने-अपने बिस्तर पर लेट गये, लेकिन जब करीब आध घण्टे तक उन्हें नींद नहीं आई तो गोपाल ने बात शुरू की और उसका जवाब गुरू ने अपनी ठंडी आह से दिया।

'अरे ! तुम तो निराश हो गये ?'

'नहीं भय्या, मैं कभी भी निराश नहीं हुआ। दसवीं में था तब पिताजी का स्वर्गवास हुआ लेकिन मैंने अपनी माँ को संभाला। मेरे पिताजी अपने पीछे भारी पैसा छोड़ गये थे, मगर मेरे रिश्तेदारों — चाचा और ताऊ — ने मेरी भोली-भाली माँ को बहका लिया और सारा पैसा उन नरपिशाचों ने माँ को धोखा देकर छीन लिया। मैं उस

समय अबोध ही था, अतः उन जालिमों को न समझ सका और उनके मिला कि माँ के कहने पर पुनः शहर चला आया। फिर एक दिन मिला कि माँ का भी स्वर्गवास हो गया। खबर पाते ही गाँव गया तो रिश्तेदारों ने धक्का देकर निकलवा दिया और माँ की लाश को तो नदी में पहले ही फिकवा दिया था, उन जालिमों ने ! ....उस समय मैं सोलह साल का था और ग्यारहवीं में था। मैं माँ के गम में पागल होकर नदी की ओर भागा। लेकिन रास्ते में ही एक सन्यासी ने मुझे टोका और कहा—'बेटा, आत्मघात करना पाप है। मुझे बताओ, मैं तुम्हारी तकलीफ दूर करने की कोशिश करूंगा।' उसका आश्वासन पाकर मैंने पूरी घटना उसे बताई और उससे उचित मार्ग पूछा। उसने कहा—'बेटे, तेरी माँ वह नहीं थी, असली माँ तो तेरी भारत माता है। हर इन्सान की माँ उसे सिर्फ पैदा ही करके अपना दायित्व पूर्ण कर देती है, लेकिन उससे भी बड़ी माँ है—भारत माता, जो हर इन्सान को खिला-पिलाकर बड़ा करती है। तू अपनी इसी माँ की सेवा कर—यही तेरी माँ है।....नहीं समझा ? खैर कोई बात नहीं सुन, आज तेरी भारत माँ गुलामी की जंजीरों में जकड़ी खड़ी है। इस माँ को आजाद कराना हर आदमी का फर्ज है। जा, कोशिश करके या तो उसकी बेड़ियाँ काट फेंक और या फिर कोशिश करते-करते ही मौत की गोद में सो जा। अगर तू सफल हो गया तो 'विजयी' कहलायेगा और अगर रास्ते में ही मर गया तो 'शहीद' कहलायेगा। बोल काटेगा ना, माँ की बेड़ियाँ ?' मेरे मुँह से अनायास ही 'हाँ' निकल पड़ा। ....फिर एक दिन मुझे वंदिनी अवस्था में भारत माँ के दर्शन हुये और मैंने प्रण किया कि मैं अपनी माँ को छुटकारा दिलाऊँगा—और जरूर दिलाऊँगा अगर बीच ही में मर गया तो कोई बात नहीं।'

'गुरु, तुम्हारे यह शब्द मुझे सत्य होते प्रतीत हो रहे हैं। यह

नहीं कह सकता कि कब लेकिन मेरा दिल गवाही दे रहा है कि भारत के आजाद होने में अब देर नहीं है। मैं रोज स्वप्न में देखता हूँ कि देहली के लालकिले पर एक गोरा हिन्दुस्तानी सफेद कुर्त्ता, चूड़ीदार पायजामा, सफेद बास्केट पहने हुये हमारा तिरंगा लहरा रहा है। उस महान हिन्दुस्तानी के चेहरे पर दैवीय मुस्कान अंकित है और उसके पास ही महात्मा गांधी अपनी उसी तेजयुक्त आकृति के साथ खड़े मुस्कुरा रहे हैं, तथा वह गोरा व्यक्ति अपनी प्रिय जनता के समक्ष खड़ा भाषण दे रहा है। अच्छा, अब सो जाओ; दो बज चुके हैं। जय हिन्द !'

'जय हिन्द !'

कहकर गुरू तो प्रयत्न करके सो गया, किन्तु गोपाल न सो सका। उसकी आत्मा, उसका मन और उसका मस्तिष्क कभी बाबा, कभी रवीन्द्र, कभी कमल, और कभी मुहँ-बोली बहन बीना की ओर चला जाता। यही सोचते-सोचते न जाने कब सो गया, इसका भी उसे ध्यान न रहा।

वे दोनों घोड़े बेचकर सोये थे, अतः सुबह जल्द ही जब खुद न उठ सके तो हरकारे ने स्वयं जाकर गोपाल को जगाया और उसे अभिवादन करने के पश्चात गत रात्रि की घटना संक्षेप में बतानी शुरू की—

'कल रात कैप्टेन खान मुहम्मद को निर्दिष्ट पहाड़ी पर आक्रमण करने का आर्डर मिला। इस पहाड़ी पर दुश्मन की एक पलटन ने अच्छी व्यवस्था की होगी, इस अनुमान द्वारा कैप्टेन ने होशियारी के साथ एक टुकड़ी सेना ली और पहाड़ी के नीचे की नदी में उतर गये। उन्होंने अपने कुछेक साथियों को साथ लेकर उस खड़ी और सीधी पहाड़ी पर चढ़ना शुरू किया और शेष को वहीं छोड़ दिया ताकि वे हमले के बाद रास्ता खुला रख सकें। कैप्टेन ने चढ़ने का काम बहुत ही सावधानी से किया, लेकिन इतनी सावधानी बरतने के

बावजूद भी शत्रु को पता लग गया और उसने दोनों ओर से गोलाबारी शुरू कर दी। कैप्टन की टुकड़ी इस हमले के लिये पूर्णतः तैयार थी, अतः वह तेजी से बचाव करती हुई आगे बढ़ी और चौकी के बिलकुल पास पहुंच कर तेजी से उन पर हमला कर दिया। अभी दोनों में लड़ाई चल ही रही थी कि दुश्मन की मांगी मदद आ गई, जिसमें करीब चार सौ आदमी थे। इस मदद के आ जाने से हमारे सैनिक दुश्मन की दो गोलियों के बीच आ गये और उन्होंने मुड़कर मुकाबला करते हुए बचाव के लिये पीछे हटना शुरू किया। लेकिन फिर अचानक ही दुश्मन पर 'दिल्ली चलो' और 'नेताजी की जय' के साथ एक जोरदार हमला किया। इसी समय उस टुकड़ी ने भी, जो कि कैप्टन की आज्ञा से पीछे नाले में ही रह गई थी, अचानक ही, 'भारतमाता की जय' और 'नेताजी की जय' के नारों से आकाश को गुंजाते हुये दुश्मन पर हमला बोल दिया और जब उनके कारतूस खत्म हो गये तो बजाय पीछे पलटने के वे संगीन चढ़ाकर दुश्मनों के बीच बिना जूतों के ही कूद पड़े। इस अप्रत्याशित और जोरदार हमले से दुश्मन बुरी तरह बौखला गया और उसे मजबूर होकर पहाड़ी छोड़कर भागना पड़ा।'

'तो क्या सारे पहाड़ी पर.........'

'यस सर, करीब दो सौ आदमी दुश्मन के मारे गये और सत्तारह हमारे शहीद हुये।'

'ओह मां!' प्रसन्नता से दोनों ही उछल पड़े— 'अच्छा तुम अपनी ड्यूटी पर जाओ।'

'आलराइट सर!'

वह हरकारा वापस लौट गया। और थोड़ी ही देर बाद जैसे ही गोपाल और गुरु बाहर आए, उन्हें एक बर्मी व्यक्ति ने खबर दी कि दुश्मन मोर्चा बांधकर आगे बढ़ रहा है। गोपाल ने गुरु की सहायता से शीघ्र ही अपनी कम्पनी को खाईयों में बैठाकर एक मजबूत मोर्चा

तैयार किया। आठ बजते ही मुख्य सड़क से होकर दुश्मन सावधानी से आगे बढ़ा, उसके साथ पन्द्रह टैंक, ग्यारह बख्तरबन्द गाड़ियाँ और दस मोटर ठेले थे। आगे बढ़ते ही दुश्मन की ओर से कम्पनी की अगली पंक्ति की ओर गोलियों की एक बाढ़ आई और जवाब में तगड़ी बाढ़ खाकर उसने वहीं से मोर्चेबन्दी शुरू कर दी।

इस समय गोपाल की कम्पनी जिस स्थान पर मोर्चा ले रही थी वह एक चौरस खुला हुआ मैदान था और पास में एक सूखा सा उथला तालाब ! जिसमें छिप कर हमला करना एक प्रकार से मूर्खता ही थी। फिर इस कम्पनी के सैनिकों के पास मशीनगनों के स्थान पर केवल बन्दूकें ही थीं और मेजर ढिल्लन के मुताबिक गोपाल की 'ब' कम्पनी का काम यह था कि वह दुश्मन को अगले तिराहे पर, किसी भी कीमत पर, पहुँचने से रोकें।

इसी प्रकार गोपाल और गुरु ने दुश्मन को दो दिन तक आगे बढ़ने से रोक दिया, क्योंकि जैसे ही दुश्मन आगे बढ़ता गोपाल और गुरु के संकेत पर चली हुई गोलियों की बाढ़ उन्हें पीछे लौटने को बाध्य कर देती। सैनिक दुश्मन की इस मूर्खता पर हँसकर उनका मजाक उड़ा रहे थे। गोपाल ने एक और व्यवस्था की और तालाब के पास अपने कुछ दस्तों का मोर्चे पर बिठा दिया।

न प्रातःकाल होते ही दुश्मन के हवाई जहाज आकाश में मंडराये और ग्यारह बजे तक कई बम गिराये, लेकिन गोपाल की कम्पनी को किसी प्रकार का कोई नुकसान, दुश्मन द्वारा, न पहुँचाया जा सका। भगवान को याद करते-करते हवाई-हमला समाप्त हुआ और तभी दुश्मन ने तोपों से गोले बरसाना शुरू किये। गोपाल दुश्मन की चाल का समझ गया था, लेकिन उसका भी फैसला था कि दुश्मन को आगे नहीं बढ़ने देंगे। संकेत पाते ही सैनिक तालाब के पास की खाईयों में छिप गये और दुश्मन गोलों की बाढ़ लेता हुआ तालाब के

पास आ गया। गोपाल का विचार था कि वह पैदल टुकड़ो को अपनी लपेट में लेगा, लेकिन उसकी योजना असफल हो गई क्योंकि दुश्मन के इस्पाती राक्षस जैसे ही उन खाईयों के पास पहुँचे उन्होंने खाईयों पर तेजी से हमला करना शुरू कर दिया। गोपाल ने जब देखा कि दुश्मन को आगे बढ़ने से रोकना मुश्किल है तो उसने सुरंगें फेंकी, लेकिन वाह री किस्मत! दुश्मन बिना किसी प्रकार का नुकसान उठाये आगे बढ़ता रहा, क्योंकि दुर्भाग्यवश वे फटी ही नहीं थीं।

अब गोपाल ने अपने पास के सैनिकों से सलाह की—'देखिये अब एक ही रास्ता है कि हम या तो मार दिये जायेंगे और या कैद कर लिये जायेंगे। इसलिये मेरी राय में अटैक कर देने से कम-से-कम वे कमजोर तो हो ही जायेंगे हालांकि यह तय है कि हमारी बन्दूकें उनका मुकाबला नहीं कर सकतीं, फिर भी हम लोगों के लिये शहीद हो जाना ही इस समय सबसे अच्छा है? अब आप लोगों की क्या राय है?'

'सर, हम शहीद होना ज्यादा पसन्द करेंगे आप बस आर्डर दे दीजिये।'

'ठीक है—बी केयरफुल!—अटैक!'

गोपाल ने आर्डर देते ही अपने साथियों के साथ खाई के बाहर कदम रख दिया। गोपाल के बाहर आते ही सैनिक दुश्मन के ऊपर 'नेताजी की जय,' आजाद हिन्द जिन्दाबाद' 'इन्कलाब-जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुये टूट पड़े और इस्पाती टैंकों की मार का जवाब अपने नारों से देते हुये वे पैदल पल्टन से भिड़ गये यद्यपि गोपाल और गुरू के साथ-साथ हर आदमी जान रहा कि वह मौत से लड़ रहा है, लेकिन उनका संकल्प हिमालय की भाँति अटल था। दुश्मन गोली चलाते हुये काँप रहा था और आ० हि० फौज के सैनिक केवल संगीनों से ही दुश्मन को छेद रहे थे। सबसे आगे गोपाल और फिर गुरू तथा अंत में उसकी कम्पनी थी।

चालीस सैनिकों की आहुति गोपाल की 'ब' कम्पनी ने दी और दुश्मन लड़ते हुये पीछे हटने लगा। इस समय लेफ्टीनेंट गोपाल तीसरे प्लाटून का नेतृत्व करने जा रहा था। गोपाल ने प्लाटून के सैनिकों को जैसे ही आर्डर दिया 'अटैक!' वैसे ही एक गोली उसके सिर को फाड़ती हुई पार हो गई—'जय हि.....'

...और गोपाल निर्जीव होकर गिर पड़ा! गोपाल के गिरने से प्लाटून एक क्षण के लिये रुका, लेकिन तुरत ही सेकण्ड लेफ्टीनेंट गुरू ने कमान संभाल ली और आगे बढ़ा। शायद भगवान को अभी कुछ और लेना था, अतः गुरू के आगे बढ़ते ही एक गोली आकर सीधे गुरु के सीने में धँस गई। गुरू ने अपना सीना पकड़ लिया और गिरने से पहलेही उसने एक ललकार लगाई—

'आगे बढ़ो! पीछे मत लौटना, जब तक दुश्मन खत्म न हो जाये।....आह नेताजी! हमने अपना वचन पूरा कर दिया....तौंगजीन हमारे ही हाथ में रहेगा....जय हिन्द!....भाभी, तुमने अपना सुहाग सौंपा था, लेकिन मैं तुम्हारी अमानत लौटा न सका। मुझे माफ कर देना, भाभी.. मेरी माँ : भारत माँ, तुम भय्या को अकेले ही गोद में सुला रही हो....मैं भी आया माँ!.. मैं आ रहा हूं!....' यह कहते ही गुरू का सिर एक ओर ढुलक गया। उसके सीने से अब भी रक्त-प्रवाह जारी था।

और जब उन दोनों की लाशें सदरे-मुकाम पहुंची तो उसी रात कर्नल ढिल्लन ने साधारण सैनिक सम्मान से उनकी अन्त्येष्टि कर दी, क्योंकि खतरा अभी दूर नहीं हुआ था, यद्यपि इन वीरों ने शहीद होकर भी अपनी आन पूरी कर दी थी।

प्रात:कालीन वासन्ती समीर चल रहा था और पूर्वाकाश में क्षितिज पर ऊषा के गोरे लाल मुखड़े की झलकी के कारण उसका सिन्दूरी रंग फैल चुका था। इस प्रातःकाल की स्वर्णिम मादक वेला में आशा अपने कमरे की पूरब वाली खिड़की पर खड़ी प्रकृति की अनुपम छटा को उनींदे नेत्रों से निहारती हुई उसके अमृत सदृश मधु का रसपान कर रही थी। जाने क्यों, उसके नेत्रों में व्याकुलता बढ़ गई थी। वह बार-बार दो भिन्न लिंगीय प्राणियों को केलि क्रीडा में रत देख रह-रह कर उदास हो जाती और उस समय उसके पास केवल उसके आंसू ही सहारा होते, जिन्हें वह गोपाल की फोटो को अपने सीने में छिपा कर उसकी याद में बहा देती और फिर अपने कर्त्तव्य का ध्यान आते ही वह इस मूक प्रेमालाप को बन्द कर कार्यरत हो जाती। इसी प्रकार उसने गत तीन माह काट दिये थे, किन्तु पिछली दो रातों में से गत रात्रि उसने आँखों ही आँखों में काट दी थी। आज से दो साल पहले की इसी रात की घटनाएं सम्पूर्ण रात्रि उसके समक्ष चक्कर काटती रहीं— दो साल पहले यही रात उसकी सुहागरात बनी थी। उसके नेत्रों के समक्ष चित्र आते जा रहे थे और वह अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखती जा रही थी···

कलकत्ते की हवेली के एक कमरे में उसकी पहली रात पिया के साथ बिताने का आयोजन किया गया था और लगभग नौ बजे उसे कमरे में बीना और नाना ने सजा-सँवार कर पलंग पर बैठा दिया था। और तब वे दोनों उससे ठिठोली करती हुई बाहर भाग गई थीं। जाते-जाते भी बीना फिर पलट कर वापस आई थी और घूंघट उठाकर बोली थी—'भाभी, सच आज बड़ी हसीन लग रही हो। जी चाहता है कि तुम्हारे इन अमृत के समान मीठे ओंठों को चूम लूं। लेकिन ऐसी मेरी किस्मत कहां ? ···सच कहती हूं भाभी, अगर मैं मर्द होती तो तुम्हारे इन रस भरे ओठों का जी भर कर पान करती और ·· और ···खैर

जाने दो भाभी ! मैं भय्या का हक नहीं मारूंगी। लेकिन एक बात है भाभी, मेरे भय्या बहुत सीधे हैं उन्हें ज्यादा तंग मत करना।' बीना कि एक-एक शब्द उसके सीने पर अमृत की बरसा कर रहे थे और वह लाज के लाल रंग में डूबती जा रही थी। बीना के जाने के पश्चात उसने घूंघट हटाकर कमरे की ओर दृष्टिपात किया था और देखा था कि कमरा लाल रंग के मद्धिम प्रकाश से जगमगा रहा था और पलंग पर बेला और गुलाब की पंखुरियां बिखरी हुई थीं। अभी ठीक प्रकार से कमरे को वह देख भी न पाई थी कि किसी के आने को आहट पाकर उसने फिर घूंघट गिरा लिया और ओट से ही दरवाजे का ओर देखने लगी थी। दरवाजे के खुलते ही उसका प्रियतम गोपाल अन्दर आया और वह एक अजीब अनुभूति से भर उठी थी। किवाड़ बन्द करके गोपाल उसके पास आकर बैठ गया था और ठोढ़ी से चेहरे को ऊपर उठाते हुये उसने कहा था—'सौन्दर्य और यौवन की साक्षात प्रतिमा हो या स्वर्ग की मेनका हो या धरती की आशा····हाँ हाँ, तुम धरती की आशा हो, मेरा भाग्य आज मुस्कुरा रहा है अपनी आशा पर !' गोपाल के शब्दों को सुनकर उसे ऐसा अनुभव हुआ था, जैसे उसका हृदय रूपी कमल वाणी की मधुर तान के साथ धीरे धीरे खिल रहा हो, और वह बरबस ही उसके चरणों में झुक गई थी। लेकिन इसके पहले ही गोपाल ने उसे अपने अंक में भरकर अपने में आत्मसात कर लिया था और फिर दोनों पूर्णत्व को प्राप्त हो गये। ·· रात्रि के पश्चात जब प्रातःकाल हुआ तो आशा की आँख पहले खुल गई। उसने देखा कि गोपाल का हाथ अब भी उसके शरीर के चारों ओर लिपटा था। यह देख वह लाज से नहा गई और फिर ख्याल आते ही अनायास उसकी मेंहदी रची हथेली गोपाल के सर पर चली गई और अपने आप ही उंगलियां उसके बालों में उलझ गई। गोपाल पहले तो कुछ कुनमुनाया और फिर उसने आशा के हलके फुलके शरीर को पुनः अपनी ओर खींच कर अपने में भींच लिया। आशा पहले तो बन्धन में बंध गई और फिर कुछ देर बाद उसने अपने

को हौले से गोपाल की बाहों से अलग किया और पलँग से उतर कर कपड़ों को ठीक करने के पश्चात् उसने पलँग पर पड़ी पंखुरियों पर दृष्टिपात किया जो उसके जीवन की सार्थकता क कहानी स्पष्ट कह रही थीं। ....और फिर वह शरमाकर वहाँ से भाग गई थी, वहाँ ठहर न सकी थी।....

वे बातें अब आशा को स्वप्नवत् लग रही थीं। जाने किस प्रेरणा से वशीभूत होकर रात में उसने शृंगार किया और पलँग पर पड़ी रात भर सिसकती रही थी। आज न मालूम क्यों उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उसकी सुहागरात की याद अब कभी यथार्थ में न परिवर्तित होगी और प्रियतम की स्मृति स्वप्न हो जायेगी। इसी दुःस्वप्न के कारण वह रात भर सो न सकी और सिसकती रही। प्रात:काल उसी अस्त-व्यस्त वेश-भूषा में वह प्रकृति के इस मिलन का रसपान करने को उद्यत हो गई और अपने आपको रोक न सकी। जाने क्यों, उसे यह मिलन अत्यन्त शांतिदायक प्रतीत हो रहा था।

वह स्वप्नों में इतनी अधिक लीन थी कि उसे ध्यान ही न रहा कि कोई व्यक्ति दरवाजा भी खटखटा रहा है। अचानक की उसके कानों में किसी के पुकारने की आवाज पड़ी और उसका स्वप्न भंग होकर बिखर गया। उस आवाज को सुनते ही बिजली की तेजी से उसने आँचल से अपने आँसू पोंछे और द्वार खोल दिए। बाहर जनरल भोंसले के स थ नेताजी खड़े थे।

'जनरल भोंसले ....और.. नेताजी ?' वह आश्चर्य के सागर में गोते लगाने लगी — 'आइये नेताजी, बैठिये ! मैं चाय ला रही हूँ।'

'नहीं मिसेज आशा, चाय की कोई जरूरत नहीं है। हम तुम्हारे लिये एक जरूरी खबर लाये हैं।' नेताजी के बलने से पूर्व ही जनरल भोंसले बोल पड़े।

'आज्ञा दीजिए, सेविका हर कार्य के लिये तैयार है !' कांपते हृदय को संभालते हुये आशा ने कहा, क्योंकि 'खबर' का शब्द सुनते ही उसका हृदय जाने क्यों बैठने लगा था।

'बहन, तुम एक भारतीय नारी हो और जहां तक मुझे यकीन है कि एक भारतीय नारी हर कठोर से कठोर बात को भी बड़ी आसानी और धीरज से सुनने की क्षमता रखती है ?' नेताजी ने स्नेहयुक्त हाथ आशा के कन्धे पर रखकर कहा। यद्यपि उनकी दृढ़ आकृति पर आशा की सुहागन वेश-भूषा को देखकर चिन्ता की रेखायें उभर आई थीं और नेत्रों में करुणा उभर आई थी, फिर भी वे और उनकी आवाज भी दृढ़ थी।

'नेताजी, जब आप इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं तो फिर पहेलियां क्यों बुझा रहे हैं, साफ साफ क्यों नहीं कह देते कि क्या बात है ? आप विश्वास रखिये कि भारतीय नारी एक बार हर बात सुनने के लिये तैयार रहती है, चाहे वह बात कोई भी हो : मैं भारत की सुहागन हूं। आपको मालूम होगा सुहागन की बात एक होती है, दो नहीं।'

'ओह !' नेताजी मन के मन आशा के प्रति श्रद्धा से भर गये और मन में ही प्रणाम करते हुये बोले—

'बहन आशा, मुझे सख्त अफसोस है कि लेफ्टीनेंट गोपाल और सेकण्ड लेफ्टीनेंट गुरु दोनों सपूत अपनी मां की सेवा करते हुये…'

'शहीद हो गये ना !' खिलखिला पड़ी—'बस नेताजी ! मैं तो समझती थी कि कोई और बात होगी। मुझे खुशी है कि मेरा पति और देवर मां की सेवा करते करते धरती मां की गोद में सदा के लिये…अच्छा नेताजी, जय हिन्द ! मैं भी उन्हीं के पास जा रही हूं। मैंने उन्हें अग्नि को साक्षी देकर वचन दिया था कि मैं जीवन-पर्यन्त उनका साथ निबाहूंगी। मै जा रही हूँ !' कहती हुई आशा पलंग पर गिर पड़ी।

'आशा !' नेताजी और जनरल भोंसले दोनों ही उसके पास पहुंचे।

'हाँ नेताजी, मैं अब नहीं हूँ। आज का दिन मेरे सुहाग का पहला दिन था ना''''वे इन्तजार कर रहे होंगे''''आह नेताजी क्षमा''' वन्देमातरम्''''!'

और उसका सर एक ओर झूल गया। नेताजी और जनरल भोंसले ने उस महान् नारी के सम्मान में अपनी-अपनी टोपियाँ उतार कर हाथ में ले लीं और उसे प्रणाम करते हुये नेताजी ने फौजी सम्मान के साथ उसकी अन्त्येष्टि करने की आज्ञा दी और बाहर निकल आए।

१९

कहते हैं कि इन्सान की लगन से की गई मेहनत कभी बेकार नहीं जाती, उसका परिणाम सदा अच्छा ही होता है और मेहनत करने वाले के हक में होता है—चाहे देर उसमें भले ही हो, किन्तु परिणाम अवश्य ही अच्छा होगा, इसमे कोई शक नहीं। भगवान चन्द्र और एडवर्ड की मेहनत व्यर्थ न हुई और उनका ध्येय पूरा हो गया। भगवान चन्द्र तो मेरे छुटकारे के लिए केवल इसलिये प्रयत्नशील थे कि वे मुझसे अत्यधिक आत्मीयता रखते थे, किन्तु एडवर्ड के विषय में अवश्य ही यह एक आश्चर्यजनक बात परिलक्षित हुई कि हर इन्सान, चाहे वह किसी भी जाति का क्यों न हो, सबसे ज्यादा स्वतंत्रता को प्यार करता है। एडवर्ड के प्रयत्नों के पीछे पहली भावना तो यह थी कि वह स्वयं स्वतन्त्रता-प्रेमी था। दूसरे, देशभक्ति का मूल्य जानता था। तीसरे, जेनो से विवाह कर लेने के बाद उसमें भी भारतीय संस्कारों का जन्म हो गया था। और चौथे, भगवान चन्द्र ऐसे व्यक्ति का साहचर्य एवं मित्रता का भाव।

इन्हीं दोनों महान् व्यक्तियों के महती प्रयासों का परिणाम मेरा छूटना था, जिसमें बीना जैसी महान् देवी-सी पूज्य बहन के स्नेह और देवी सरीखी पत्नी नीना के पवित्र प्रेम का भी लम्बा हाथ था, और या फिर मेरे ही पूर्वजन्मों के सत्कर्मों का फल था; अन्यथा फाँसी का

फन्दा गले से लिपट चुका होता। यदि ऐसा होता तो उस समय मुझे सबसे बड़ा दुःख यही होता कि मैं कितना अभागा था जो अपनी भारत-माँ के लिये सौंपे गये एक कार्य को ही पूरा न कर सका—क्योंकि हमारा ध्येय अभी भी अन्धकार में ही था।

छूटने के पश्चात् ऐसा प्रतीत हुआ मानो साक्षात् माँ मेरी सहायता कर रही हों। फाटक पर ही मि० एडवर्ड व जेनी, भगवान भय्या, बीना और नीना खड़े थे। मुझे देखते ही बीना 'भाई साहब' कहते हुये लिपट गई। प्रसन्नता का रोमाञ्च इतना अधिक हो रहा था कि हम दोनों भाई-बहनों के मुख से एक भी शब्द न निकल पा रहा था। बीना सीने से लगी सिसकती रही और मैं उसके केश सहलाता रहा। नीना लाज के कारण अपनी भावनाओं को क्रियात्मक रूप न दे सकने के कारण डबडबाई आँखों से सिर्फ निहार रही थी। भगवान चन्द्र की निगाहें भी अत्यन्त प्रसन्नता के कारण चमक रही थीं।

'गुड लक एंड हैप्पी द न्यू इयर!' एडवर्ड और जेनी ने मुझसे हाथ मिलाते हुये कहा। मैं प्रसन्नता के आवेश में 'थैंक्स' के अतिरिक्त कुछ न कह सका और दूसरे ही क्षण मैंने तीव्रगति से भगवान चन्द्र के पैर छू लिये।

'अरे, अरे, यह क्या? उठो-उठो!' भगवान चन्द्र मुझे उठा-कर सीने से लगाते हुये बोले—'यह कैसा बचपना?'

'भय्या,... आपको बहुत...' मैं भावावेश में बह रहा था।

'पागल! इसमें कष्ट की क्या बात?' भगवान चन्द्र की महा-नता स्नेह में परिवर्तित हो लक्षित हो रही थी 'फिर यह सब कुछ हमारे ही करने से कब हुआ है यह तो नियति का कर्म है, जिसके हम लोग सहायक मात्र हैं। विश्व रंगमंच है और हम सब उस मंच पर पात्रों के रूप में अभिनय कर रहे हैं। नियति ही हमारी

निर्देशिका है। अतएव न तो यह कार्य मेरा है, न एडवर्ड का है और न किसी और का।'

'नहीं भाई साहब यह आपकी महानता है।'

'अच्छा भई महानता ही सही। कुछ भी कह लो, लेकिन घर भी तो चलना है।'

'चलिए!'

और फिर सब कार पर बैठकर घर आ गये। अन्य कार्यों से निवृत होकर मैंने एडवर्ड के मन की थाह लेने का यत्न किया। भगवान चन्द्र किसी कार्यवश शाहदरा चले गये थे और एडवर्ड अकेले ही लान पर बैठा कुछ सोच रहा था। जाड़े की अधिकता के कारण उसने अपनी कुर्सी नौकर से कह कर बाहर धूप में डलवा ली थी। जेता, वीना और नीना तीनों ही भोजन-निर्माण में व्यस्त थी। मैं टहलता हुआ सीधे एडवर्ड के पास पहुँच गया।

'आओ रवीन्द्र बैठो!'

'थैंक्स!' मैंने समीप की एक अन्य कुर्सी पर बैठते हुये कहा — 'मि० एडवर्ड एक बात अगर पूछूँ तो आप बुरा तो न मानेंगे?'

'कभी नहीं। यह आदत मैंने नहीं पाली है। बेखटके सवाल पूछो।'

'मैंने आपसे यह बात इसलिये पूछी कि सवाल बहुत ही अशिष्टतापूर्ण है, सम्भव है आप बुरा मान जायें।'

'इस बात से बेफिकर रहो। मैं अंग्रेज हूं और अंग्रेज हमेशा स्पष्ट कहता तथा सुनता है। इसलिए सवाल चाहे जैसा भी हो सही होना चाहिए''''मैं समझ रहा हूं। मैंने बहुत ही स्पष्ट कहा है, आशा है समझ गये होगे।'

मि० एडवर्ड की इतनी स्पष्ट बात मेरे हृदय में तीर की भाँति लगी, किन्तु सहन किया। सत्य सदा कड़ुवा होता है। एडवर्ड की बात भी सत्य थी, अतः मैंने स्वीकारोक्ति में सिर हिलाकर प्रश्न किया। आवाज में हिचकिचाहट साफ थी।

'मुझे एक सवाल बुरी तरह से परेशान कर रहा है कि आपने अपनी नौकरी तक की परवाह न करके मेरी पैरवी क्यों कर की?'

'सिर्फ इन्सानियत के नाते!' एडवर्ड का इतना छोटा जवाब होगा, मुझे स्वप्न में भी आशा न थी, फिर भी मैंने अपनी आशा की डोर नहीं छोड़ी और पुनः कुरेदा—

'लेकिन आप तो....'

'अंग्रेज हैं, यही कहना चाहते हो ना?' एडवर्ड मुस्कुरा उठा बोला—'भाई रवीन्द्र, मुझे दुख है, तुमने गलत सोचा। फिर भी तुम्हारा यह सोचना किसी हद तक सही भी है, क्योंकि हम तुम्हें दास बनाये हुये हैं और हमारी जाति ने तुम्हारे ऊपर अनेकानेक दुर्दमनीय अत्याचार किये हैं, जिससे सदभावना समाप्त हो चुकी है। तुमने यह क्यों नहीं सोचा कि पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होतीं वरन् छोटी-बड़ी होती हैं।' एडवर्ड की इस स्पष्टवादिता ने मुझे सकोच से भर दिया। मैंने तो सोचा था कि एडवर्ड मुझे भगवान चन्द्र का वास्ता देकर टाल देगा, लेकिन यहाँ तो रास्ता ही बदल चुका था। मेरा सन्देह कपूर की भाँति उड़ गया था और उस महान व्यक्ति के प्रति हृदय में श्रद्धा भरती जा रही थी। वह अवरुद्ध कण्ठ से कहे जा रहा था—'रवीन्द्र, मैं अंग्रज जरूर हूँ लेकिन मेरी भावनायें भारतीय हैं। जेनी मेरी पत्नी है जिसका जीवन इसी भूमि की महान गोद में पला है। मेरा उसका प्रतिपल सम्पर्क रहा है और उसी के प्रयासों व कार्य-कलापों ने मुझे बाध्य कर दिया कि मैं भी उन रंगों में रंग जाऊँ जिसमें वह स्वयं रंग चुकी है। जेनी के अतिरिक्त मि० भगवान भी इस कार्य

में मेरे लिये वरदान स्वरूप हैं।' एडवर्ड ने जेब से सिगरेट निकाल कर एक मुझे दी और दूसरी स्वयं लेकर सुलगा ली—'दूसरा कारण मेरी स्वतन्त्रता के प्रति आसक्ति है। हर स्वतंत्र व्यक्ति दूसरों को भी स्वतन्त्र देखना चाहता है।....'

'इसके बावजूद भी अंग्रेज हमें गुलाम बनाये रखना चाहते हैं, ऐसा क्यों ?'

'मेरी बात पर विश्वास करोगे ?' एडवर्ड ने मेरी स्वीकृति पाने पर ही अपनी बात आगे बढ़ाई—'भारत सदियों से पराधीन रहा है। मुहम्मद गोरी से लेकर अन्तिम मुगल बादशाह बहादुर शाह 'जफर' तक ? इस पराधीनता का कारण था—पारस्परिक वैमनस्य! भारत छोटे-छोटे स्वतन्त्र खण्डों में विभक्त था। लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य के कारण वे एक हुए। उनमें एकता और स्वतंत्रता की भावना का जागरण हुआ। हिन्दू मुसलमान एक हो गए और एक साथ उन्होंने आजादी के लिये प्रयत्न किया। हमेशा याद रखना, असफलता ही सफलता की कुंजी है। सन् ५७ के गदर में ब्रिटिश का पलड़ा भारी रहा। इस बात ने हमारे अन्दर विद्रोहाग्नि की होलिका जला दी। हमने आजाद होने की कसम खा ली और उसके अनुरूप स्थान-स्थान पर कार्य करना शुरू किया। इसके कारण हमने हर तरह की कुर्बानियाँ दी और मेरे दोस्त! वह समय दूर नहीं है, जब हमारा प्यारा तिरंगा लाल किले पर फहरा रहा होगा और ब्रिटिश जैक अपने देश को वापस जा रहा होगा।"

'अर्थात् ब्रिटिश साम्राज्य ने हमको आजाद करने की तैयारी कर ली है ?'

'आज से नहीं, बल्कि सौ साल पहले से ही।'

'वह कैसे ?'

'अरे भई, यह कामनसेंस की चीज है कि न अँगरेज यहाँ हकूमत करते और न हिन्दू-मुस्लिम एक होते। न अँगरेजों का अत्याचार होता और न ही हमारे दिलों में जोश पैदा होता। प्रथम महायुद्ध में जो आश्वासन हमें मिला था उसे पूर्ण न करने का एक ही कारण मेरी समझ में आता है कि हम अपनी आजादी को कायम नहीं रख सकते थे।...नहीं, पहले बात तो पूरी हो जाने दो। उसके बाद ही गांधी ऐसा महान् व्यक्ति प्रकाश में आया सत्याग्रहों और आन्दोलनों ने तेजी पकड़ी। सरकार का दमनचक्र चला और उसने अपने अत्याचारों से वातावरण को पूर्ण रूप से आक्रान्त कर दिया। फलस्वरूप हमारी भावना और दृढ़ हुई और हमने इस बात के लिये कमर कस ली कि हम आजादी लेकर रहेंगे।' एडवर्ड ने पुनः एक सिगरेट सुलगाई—'तुम इस बात को चाहे मानो या न मानो लेकिन सच यही है कि इन अत्याचारों की बदौलत ही आज हममें आजादी की इतनी तीव्र और दृढ़ भावना है।...नहीं, तुम मानो तो! मैं पक्षपात नहीं कर रहा हूँ। मैं अंगरेज न होकर, समझ लो, भारतीय ही हूँ। तुम यह क्यों सोचते हो कि तुम अंग्रेज एडवर्ड से बात कर रहे हो—यह क्यों नहीं सोचते कि तुम अपने ही एक साथी से, अपने भाई से बात कर रहे हो!'

एडवर्ड की बातों ने मुझे चक्कर में डाल दिया और मैं यह सोचने पर मजबूर हो गया कि इस आदमी का व्यक्तित्व क्या है? कभी यह अंगरेजों की बुराई करता है और कभी प्रशंसा।

'शायद तुम यह सोच रहे हो कि मैं कभी अंगरेजों की तारीफ करता हूँ और कभी बुराई?' मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मैं रंगे हाथों चोरी करता पकड़ लिया गया होऊँ। लेकिन उसकी वाणी के कम्पन और आँखों के आँसुओं ने मुझे अपना ही एक साथी समझने के लिये बाध्य कर दिया—'रवीन्द्र, काश! मैं तुम्हें अपना हृदय चीर कर दिखा सकता कि मेरे दिल में इस देश की मिट्टी के लिये कितनी मुहब्बत भरी हुई

है।....तुम तो एक लेखक हो, क्या तुम सत्य की प्रशंसा नहीं करोगे? मैं समझता हूं तुम जरूर करोगे, क्योंकि तुम्हारा उद्देश्य ही मानव को सत्य का बोध कराना है.........'

अभी शायद वह आगे कुछ और कहता, किन्तु बीना से खाने की खबर पाकर हम दोनों उठे और अन्दर चले गये।

एकबार फिर उल्लास और प्रसन्नता का साम्राज्य कमरे में छा गया और मेरे मस्तिष्क से एडवर्ड के प्रति उत्पन्न सन्देहास्पद विचार स्वप्न की भांति तिरोहित हो गये।

शाम को भगवान चन्द्र के वापस आ जाने की उम्मीद थी, लेकिन उनकी जगह पर आया उनका टेलीफोन कि आज के स्थान पर वह कल प्रातः आयेंगे। मजबूरन प्रोग्राम बदलना पड़ा। नाश्ते की मेज पर तय यह हुआ कि आज कनॉट प्लेस ही घूमा जाये, सो पूरी मंडली शाम को वहां चलने को तैयार हुई। आज जेनी ने भी साड़ी पहनी और नीना तथा बीना के साथ भारतीय फैशन में सज-धज कर बाहर आई।

उस समय कनॉट-प्लेस देहली का सर्वोत्कृष्ट फैशनेबुल मार्केट था—आज के तो कहने ही क्या हैं? सारा बाजार एक अजब सी खामोश चहल-पहल से भरपूर था। वहां टहलने वाले युवक-युवतियों को देखकर कोई भी व्यक्ति निश्चित रूप से कह सकता था कि देहली में सर्दी पड़ती ही नहीं है। चारों ओर हर प्रकार के नवयुवक व नवयुवतियां फैशन के नशे में चूर लड़खड़ाते हुए नजर आ रहे थे। दूकानें अपने विचित्र रंगों के प्रकाश में चमचमाती हुई अपना एक

अलग ही सिक्का जमाये हुये थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा मानो वहां चहलकदमी करने वाले निश्शंक हों, निश्चिन्त हों। हर देखने वाले को वहां कृत्रिम सुन्दरता के दर्शन सरलता से हो सकते थे। किन्तु वास्तविकता कुछ और ही थी। हर व्यक्ति आतंकित था। हर समय हर व्यक्ति यही सोच रहा था कि जाने कब ब्रिटिश फन्दा उसके गले में आकर अटक जाये! कुछ व्यक्ति इस आतंक से परे भी थे और कुछ ऐसे भी थे जो अपने वतन को दरिन्दों के हाथ में ही देखना पसन्द करते थे। उन्हें गुलामी पसन्द थी। वे आजादी नहीं गुलामी चाहते थे। वे डरते थे कि आजादी पाकर वे 'सर' और 'साहब' या 'रायसाहब या राय बहादुर' न कहलायेंगे। आन्दोलनों से यह पूर्णतः स्पष्ट होता जा रहा था कि भावी भारत का रूप क्या होगा। भारत के प्रमुख नेताओं गांधी, नेहरू, आजाद और पटेल आदि ने अपने प्यारे स्वतन्त्र भारत के भविष्य की कल्पना कई अंशों तक निर्मित कर ली थी। लेकिन उन कल्पनाओं से समाज के यह सभ्य ठेकेदार डरते थे। ये समझते थे कि स्वतंत्र भारत की सरकार उन्हें वह सुविधायें किसी भी कीमत पर देने को तैयार न होगी जो उन्हें इस समय ब्रिटिश सरकार दे रही थी। वे ब्रिटिश सरकार के तलुए चाटने वाले कुत्तों से भी गिरे हुए थे, इस बात का अनुमान मुझे एडवर्ड के साथ वीनस क्लब में जाकर हुआ।

मेरी इच्छा तो न थी, क्योंकि मैं जरा इस प्रकार के सभ्य समाज से कोसों दूर रहना पसन्द करता हूं जहां सभ्यता की आड़ में असभ्यता का पूर्ण प्रदर्शन होता है, अतः मैंने इन्कार कर दिया। लेकिन 'हर इच्छा भगवान की' वाली कहावत मेरे ऊपर चरितार्थ हुई। बातों ही बातों में एडवर्ड ने मुझसे पूछा कि क्या तुम अपने वतन के गद्दारों और फिर भी देशभक्त कहलाने वालों का घिनौना रूप देखना न पसन्द करोगे। अनायास ही मुंह से निकल गया, हां! कारण यह था कि हर आदमी एक नया अनुभव प्राप्त करने को सदा उत्सुक रहता

है। मुझमें भी उत्सुकता थी, अतः हम सब चल पड़े, वीनस क्लब की ओर। मैं यह भी अपनी आँखों से देखना आवश्यक समझता था कि देशभक्तों की नकाबों के पीछे वे गद्दार चेहरे आखिर हैं कौन-कौन ?

देहली में वीनस क्लब का अपना एक अलग महत्वपूर्ण स्थान था। उसकी भव्यता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह साधारण व्यक्ति की पहुँच के बाहर था। वस्तुतः वह शासक-वर्गीय मनोरंजन केन्द्र था। अन्दर प्रवेश करते ही लम्बा सा हाल था, जो हरे रंग के प्रकाश में नहाया हुआ था। हाल में उच्चवर्गीय परिवारों के गण-मान्य व्यक्ति वहाँ सभ्यता के आवरण को कदाचित् उतार कर घर पर रख आये थे—या फिर यह देहली नहीं वरन् पेरिस था। हाल का वातावरण व्हिस्की और अट्टहासों की गर्मी से गर्म हो रहा था। चारों ओर दूधिया वस्त्रों में सज्जित बेयरे सभ्यता के नुमाइंदों को 'सर्व' कर रहे थे। हाल के एक सिरे पर मञ्च बना था जिस पर आर्केस्ट्रा मधुर धुन प्रसारित कर रहा था। एडवर्ड के साथ हम चारों व्यक्तियों ने एक सीट घेर ली। लेकिन अधिक समय तक वह हमारा साथ न दे सका और उठकर सामने की सीट पर जा बैठा। उस पर पहले ही से दो व्यक्ति व एक स्त्री बैठे हुए थे। इन व्यक्तियों को मैं भलीभाँति पहचानता था, यद्यपि वे मुझे नहीं पहचानते थे।

'हैलो मि० एडवर्ड, हाऊ आर यू ?'

'आल राइट।'

'सिट डाउन प्लीज !' उन दोनों ने एक पेग व्हिस्की एडवर्ड को भी पेश की और उसके पी लेने पर उनमें से एक बोला—

'मि० एडवर्ड आप तो अंग्रेज हैं। क्या ब्रिटिश साम्राज्य का झण्डा यहाँ से उठ सकेगा ?' नशे में वह बहक रहा था।

'कभी नहीं ! ऐसा कभी नहीं होगा।' दूसरे ने कहा।

अलग ही सिक्का जमाये हुये थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा मानो वहाँ चहलकदमी करने वाले निश्शंक हों, निश्चिन्त हों। हर देखने वाले को वहाँ कृत्रिम सुन्दरता के दर्शन सरलता से हो सकते थे। किन्तु वास्तविकता कुछ और ही थी। हर व्यक्ति आतंकित था। हर समय हर व्यक्ति यही सोच रहा था कि जाने कब ब्रिटिश फन्दा उसके गले में आकर अटक जाये ! कुछ व्यक्ति इस आतंक से परे भी थे और कुछ ऐसे भी थे जो अपने वतन को दरिन्दों के हाथ में ही देखना पसन्द करते थे। उन्हें गुलामी पसन्द थी। वे आजादी नहीं गुलामी चाहते थे। वे डरते थे कि आजादी पाकर वे 'सर' और 'साहब' या 'रायसाहब या राय बहादुर' न कहलायेंगे। आन्दोलनों से यह पूर्णतः स्पष्ट होता जा रहा था कि भावी भारत का रूप क्या होगा। भारत के प्रमुख नेताओं गांधी, नेहरू, आजाद और पटेल आदि ने अपने प्यारे स्वतन्त्र भारत के भविष्य की कल्पना कई अंशों तक निर्मित कर ली थी। लेकिन उन कल्पनाओं से समाज के यह सभ्य ठेकेदार डरते थे। ये समझते थे कि स्वतंत्र भारत की सरकार उन्हें वह सुविधायें किसी भी कीमत पर देने को तैयार न होगी जो उन्हें इस समय ब्रिटिश सरकार दे रही थी। वे ब्रिटिश सरकार के तलुए चाटने वाले कुत्तों से भी गिरे हुए थे, इस बात का अनुमान मुझे एडवर्ड के साथ चीनस क्लब में जाकर हुआ।

मेरी इच्छा तो न थी, क्योंकि मैं जरा इस प्रकार के सभ्य समाज से कोसों दूर रहना पसन्द करता हूँ जहाँ सभ्यता की आड़ में असभ्यता का पूर्ण प्रदर्शन होता है, अतः मैंने इन्कार कर दिया। लेकिन 'हर इच्छा भगवान की' वाली कहावत मेरे ऊपर चरितार्थ हुई। बातों ही बातों में एडवर्ड ने मुझसे पूछा कि क्या तुम अपने वतन के गद्दारों और फिर भी देशभक्त कहलाने वालों का घिनौना रूप देखना न पसन्द करोगे। अनायास ही मुँह से निकल गया, हाँ ! कारण यह था कि हर आदमी एक नया अनुभव प्राप्त करने को सदा उत्सुक रहता

है। मुझमें भी उत्सुकता थी, अतः हम सब चल पड़े, वीनस क्लब की ओर। मैं यह भी अपनी आँखों से देखना आवश्यक समझता था कि देशभक्तों की नकाबों के पीछे वे गद्दार चेहरे आखिर हैं कौन-कौन ?

देहली में वीनस क्लब का अपना एक अलग महत्वपूर्ण स्थान था। उसकी भव्यता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह साधारण व्यक्ति की पहुँच के बाहर था। वस्तुतः वह शासक-वर्गीय मनोरंजन केन्द्र था। अन्दर प्रवेश करते ही लम्बा सा हाल था, जो हरे रंग के प्रकाश में नहाया हुआ था। हाल में उच्चवर्गीय परिवारों के गण-मान्य व्यक्ति वहाँ सभ्यता के आवरण को कदाचित् उतार कर घर पर रख आये थे—या फिर यह देहली नहीं वरन् पेरिस था। हाल का वातावरण व्हिस्की और अट्टहासों की गर्मी से गर्म हो रहा था। चारों ओर दूधिया वस्त्रों में सज्जित बेयरे सभ्यता के नुमाइंदों को 'सर्व' कर रहे थे। हाल के एक सिरे पर मञ्च बना था जिस पर आर्केस्ट्रा मधुर धुन प्रसारित कर रहा था। एडवर्ड के साथ हम चारों व्यक्तियों ने एक सीट घेर ली। लेकिन अधिक समय तक वह हमारा साथ न दे सका और उठकर सामने की सीट पर जा बैठा। उस पर पहले ही से दो व्यक्ति व एक स्त्री बैठ हुए थे। इन व्यक्तियों को मैं भलीभाँति पहचानता था, यद्यपि वे मुझे नहीं पहचानते थे।

'हैलो मि० एडवर्ड, हाऊ आर यू ?'

'आल राइट।'

'सिट डाउन प्लीज !' उन दोनों ने एक पेग व्हिस्की एडवर्ड को भी पेश की और उसके पी लेने पर उनमें से एक बोला—

'मि० एडवर्ड आप तो अंग्रेज हैं। क्या ब्रिटिश साम्राज्य का झण्डा यहां से उठ सकेगा ?' नशे में वह बहक रहा था।

'कभी नहीं ! ऐसा कभी नहीं होगा।' दूसरे ने कहा।

'लेकिन ऐसा होगा, मेरे दोस्तों !' एडवर्ड ने मुस्कुराते हुये कहा।

'गलत ! तुम मूर्ख हो ! हिन्दोस्तान में अंग्रेजों को ही राज्य करना चाहिये। गांधी, जिन्ना, नेताजी वगैरह सब मूर्ख हैं। इनके प्रयासों का परिणाम कभी वह नहीं होगा जो वे चाहते हैं, बल्कि वही होगा जो हम चाहते हैं।'

'तुम क्या चाहते हो ?'

'यही कि ब्रिटिश सरकार बनी रहे।'

'तो तुम्हें आजादी नहीं चाहिये ?'

'नहीं ! हमारे लिये आजादी का कोई महत्व नहीं। क्योंकि आजादी मिलने पर हमारी इन्कम घट जायेगी—हम भिखमगे हो जायेंगे।'

'कमीने कुत्ते !' एडवर्ड बुदबुदाया—'लेकिन अंग्रेजों को भगाने का पूरा इन्तजाम तो नेताजी ने कर लिया है।'

'लेकिन सक्सेस नहीं हो पायेंगे, क्योंकि फ्रेन्ड कन्ट्रीज की सेनाएं मोर्चे पर पहुंच चुकी हैं और आई० एन० ए० की फौज खदेड़ी जा रही है। सिंगापुर के हाथ आते ही जापान भी अंग्रेजों के हाथ आ जायेगा और फिर नेता जी का नामो.......'

'खामोश !'

मैं आवेग को न रोक सका और एक झटके के साथ मेज पर जा पहुँचा।

'आप की तारीफ ?'

'तुम लोगों का काल !'

'अच्छा ! फर्माइये मि० काल क्या पीजियेगा ?'

'खून ?'

'ओह ! तो आप तो.........'

उसके कुछ कहने से पूर्व ही मैंने एक झापड़ उसके रसीद कर दिया और द्रुत-गति से क्लब के बाहर आ गया । मेरे पीछे-पीछे अन्य लोग भी बाहर आ गये । एक क्षण के लिये वीनस का अट्टहास शान्त हो गया, किन्तु दूसरे ही क्षण पुन: शायद अपनी ही मूर्खता पर कहकहों में डूब गया ।

वहाँ से हम लोग सीधे टैक्सी द्वारा घर चले आये । लेकिन मैं चाह कर भी रास्ते में एडवर्ड से बात न कर सका ।

बीनस क्लब से वापस आकर मैं सीधे अपने अध्ययनकक्ष में चला गया । पुस्तकों से अस्थिर मन को स्थिर व एकाग्र करने की बहुत कोशिश की किन्तु सफल न हो सका । मन व मस्तिष्क भयानक अन्तर्द्वन्द के उदय होने के कारण संघर्षरत थे । मैं बार-बार, लाख रोकने पर भी, बीनस क्लब के अन्दर चक्कर लगा रहा था । वहाँ अनायास ही घटित हो जाने वाली घटना से मेरा मूड बुरी तरह खराब हो चुका था । अत: मैंने पुस्तकों के अन्दर खो जाना ही उचित समझा । सामने पुस्तक खुली हुई थी और मन में अन्तर्द्वन्द छिड़ा हुआ था । मैं अचानक ही बोल उठा —

'यह देश भक्त हैं ? नहीं ! ये देशभक्ति के नाम पर बदनुमा-दाग हैं जो दिनभर तो देशभक्ति के गीत गाया करते हैं और छिप छिप कर ब्रिटिश सरकार की मदद करते हैं-- गद्दार कहीं के !... भेड़ की खाल में भेड़िये हैं ।'

'यह क्यों भूल जाते हो कि जहां दो दोस्त होते हैं वहां दस दुश्मन भी तो होते हैं ?' मस्तिष्क ने आश्वासन दिया।

'यह व्यर्थ का आश्वासन है। मित्र, देश के साथ विश्वासघात करने वाला व्यक्ति दुश्मन नहीं बल्कि गद्दार है। उसे जिन्दा रहने का कोई हक नहीं। उसे मर जाना चाहिये। वह धरती का बोझ! भारत मां के शुभ्र मस्तक पर कलङ्क है।'

'मैं स्वीकार करता हूँ कि ऐसे व्यक्तियों को जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है पर हमें यह भी न भूलना चाहिये कि हर व्यक्ति में सोचने का एक अपना ढंग होता है। एक व्यक्ति एक ढंग से सोचता है तो दूसरा दूसरे ढंग से! दोनों की विचार धाराएँ पूर्ण-रूप से अलग होती हैं, एक नहीं ? तुम्हारी समझ से एक कार्य सही हो सकता है, लेकिन दूसरे की समझ से वही कार्य गलत भी हो सकता है। यह तो दुनिया है, दोस्त ! यहां तुम्हें हर तरह के लोग मिलेंगे। अगर खोजो तो तुम्हें सौ में एक या दो उन लोगों जैसे मिल ही जायेंगे।'

'कुछ भी हो, अगर मेरा वश चले तो मैं एक-एक को चुन-चुनकर गोली से उड़वा दूं।' मनःस्थित द्वारा घृणा स्पष्ट व्यक्त हो रही थी।

'लेकिन जब वश चलेगा तभी तो ऐसा करोगे ?' मस्तिष्क ने छींटा कसा—"मेरे दोस्त ! कहना जितना आसान है, करना उतना ही कठिन। जो गरजते हैं वो बरसते नहीं। फिर किस-किसको मारोगे ?.........इसलिए वही कहो जो करने का दम हो। जिसे कर नहीं सकते उसे कहना ही व्यर्थ है। और जो करना हो उसे तुरत कर डालो, फल तो मिलेगा ही—चाहे अच्छा हो या बुरा। सोच-विचार करने से कार्य क्षमता घटती ही है, बढ़ती नहीं !'

'अच्छा इस प्रकृति के व्यक्ति स्वाधीनता का विरोध क्यों करते हैं ?'

'इस बात को तो कोई वैशाखनन्दन भी समझ लेगा कि उस अवस्था में उन्हें वे सुविधायें न प्राप्त हो सकेंगी जो आज इस समय प्राप्त हैं।'

'तो क्या वे लोग केवल व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये ही ...।'

'और नहीं तो क्या दूसरों के लिये।' मस्तिष्क ने झिड़की दी—'अरे मूर्खाधिराज ! मनुष्य जन्म से ही स्वार्थी होता है। अपने आगे उसे कुछ नहीं सुझाई देता। जब वह ज़रा सी बात और जायदाद के लिये अपने जन्मदाता और सगे भाई तक से लड़ बैठता है, उनका खून तक कर देने को तैयार हो जाता है तो यहां तो देश की आजादी का सवाल है जहां छड़तीस करोड़ आदमी रहते हैं।... जब वह अपने आराम के लिये मानव हत्या जैसे जघन्य तथा घृणित कृत्य कर सकता है तो यह देश-हत्या उसके लिये कोई महत्व नहीं रखती।'

प्रत्युत्तर में मन कुछ कहने ही जा रहा था कि उसी समय एडवर्ड ने कमरे में प्रवेश किया और कंधे पर हाथ रखकर पलग पर बैठते हुए बोला—

'नाराज हो गये ?'

'नहीं एडवर्ड भाई, इसमें नाराज होने की क्या बात थी ? आपने तो सत्य-दर्शन कराया था। सत्य को देखकर नाराज होना मूर्खता है ... और फिर सत्य तो कड़वा होता ही है।'

'तब तो मुझसे ही गलती हुई। मेरा आइडिया गलत निकला। मैं सोच रहा था कि शायद तुम नाराज हो गये तभी सीधे इधर आ गये।' एडवर्ड की निश्छल मुस्कराहट मेरे हृदय की पर्तों में उतर गई।

'नाराज तो नहीं, हाँ मूड जरूर कुछ ऑफ हो गया था, अतः आकर किताबों से उलझ गया।'

'किताबों से बहुत प्रेम है ?'

'यही तो अपनी जिन्दगी है, एडवर्ड भाई ! आज़ादी के बाद दूसरा लक्ष्य है, सरस्वती की साधना।'

'गुड, विश यू गुड लक माई ब्वाय !'

'थैंक्स !'

'अच्छा, गुड नाइट !'

'गुड नाइट।'

कहकर एडवर्ड चला गया और मैं पुनः सामने की से पुस्तक उलझ गया। लगभग एक घण्टे पश्चात् मेरी कलम चल रही थी और मैं पलंग पर बैठा कागज रंगता जा रहा था। मुझे इस बात का भी भास न हुआ कि नीना कब आकर मेरे ही बिस्तर पर लेट गई और सो भी गई।

लगभग तीन बजे के करीब मुझे इस बात का तब आभास हुआ जब नीना ने अपना सिर मेरी गोद में डाल दिया। इच्छा तो उस घटना पर आधारित एक लेख को समाप्त कर देने की थी, किन्तु नीना के बार-बार कहने पर भी जब मैंने लेखन न बन्द किया तो उसने स्वयं हाथ बढ़ा कर स्विच ऑफ कर दिया और मैं उसके स्वाभाविक आग्रह को न टाल सका। मजबूरन कलम रखना पड़ा और फिर दो शून्य धीरे-धीरे सिमटकर एक हो गये !

मार्च के महीने में वैसे भी गर्मी पड़ने लगती है, फिर देहली का तो कहना ही क्या ! भगवान चन्द्र, एडवर्ड व जेनो यह तीनों व्यक्ति मेरे छूटने के ठीक एक सप्ताह बाद कानपुर वापस लौट गये। जेल से बाहर आकर मुझे विश्व के राजनीतिक मंच पर बड़ा भारी परिवर्तन लक्षित

हुआ। योरप में जहाँ किसी समय हिटलर का पलड़ा भारी था वहाँ अब मित्र-राष्ट्रों की सेनाएँ बड़ी तेजी से जर्मनी को चारों ओर से घेर कर बढ़ रही थीं। जर्मन पीछे हटते जा रहे थे। दूसरी ओर पूर्वेशिया में जहाँ किसी समय जापान का बोलबाला था वहाँ फिर से मित्र-राष्ट्रों का कब्जा होता जा रहा था। लेकिन हिन्दोस्तान की सीमा पर आजाद हिन्द फौज के सैनिक उनके छक्के छुड़ा रहे थे। फिर मित्र-राष्ट्रों की सेना को देखते हुये उनके पास शस्त्रास्त्रों व अन्य उपयोगी सामग्रियों की बहुत कमी थी। यही कारण था कि आजाद हिन्द फौज कुछ कमजोर पड़ जाती थी, लेकिन यह भी सत्य है कि उन्होंने दुश्मनों के दाँत खट्टे कर दिये थे।

मार्च का अन्तिम सप्ताह चल रहा था। प्रातःकाल का समय था। मैं शेव कर रहा था, बीना स्नान के पश्चात् बाल सुखा रही थी और नीना बाथ-रूम में थी। मैं शेव करके सामान डिब्बे में रखने ही जा रहा कि बीना ने उसी दम रेडियो का स्विच ऑन कर दिया। अनाउन्सर कह रहा था —

'हम वाइस आव जापान से बोल रहे हैं। अब हम खास तौर पर हिन्द के सुननेवालों के लिये एक खास खबर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के व्यक्तिगत रूप से कहने पर पेश कर रहे हैं। परसों दिन में आजाद हिन्द फौज के दो अफसर अपने चालीस साथियों के साथ शहीद हो गये। प्रातःकाल ही दुश्मन के दस्तों ने वायुयानों द्वारा तौंगजीन पर गोलाबारी की और ग्यारह बजे के आस-पास उन्होंने तोपों से गोला-बारी करते हुये आगे बढ़ना शुरू किया, किन्तु आजाद हिन्द की टुकड़ी ने उन्हें रोकने के प्रयत्न में सुरंगें फेंकी जो दुर्भाग्यवश फट न सकीं और दस्ते को विवश होकर दुश्मन के ऊपर पैदली हमला करना पड़ा। परिणामतः चालीस व्यक्तियों के साथ लेफ्टीनेंट गोपाल और सेकण्ड लेफ्टीनेंट गुरू नारायण शहीद हो गये। तौंगजीन हमारे ही हाथ रहा।

वे दोनों हिन्द के सक्रिय क्रांतिकारियों में से प्रमुख थे। उनके नाम साम्राज्यवादी ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के द्वारा वारन्ट भी इशू किये गये थे, लेकिन उनके साथ कुछ अन्य आदमी भी वहाँ से सकुशल आजाद हिन्द में नेताजी के पास पहुँच गये थे। उनकी मृत्यु की खबर पाते ही उनकी एक अन्य साथी मिसेज़ आशा ने नेताजी व जनरल भोंसले के समक्ष प्राण त्याग दिये। आप झांसी की रानी रेजीमेन्ट में हवलदार के पद पर कार्य कर रही थीं ....'

'उफ !' मैं चकरा गया। मेरे होश फाख्ता हो गये। बीना लहराकर कोच पर 'गोपाल भय्या !' कहकर मूर्च्छित हो गई और नीना आधे शरीर पर केवल तौलिया लपेटे ही बाहर निकल आई।

'क्या हुआ ?'

'......' मैं चुपचाप अवाक् सा खड़ा रेडियो का मुँह देख रहा था। विचारों के गहन सागर में मैं गोते लगा रहा था, अतः नीना की न तो आहट ही पा सका और न ही शब्दों को सुन सका। उसने अपना प्रश्न पुनः दोहराया और फिर मुझे हिलाते हुये वह झुंझला उठी—

'आप बोलते क्यों नहीं ? क्या हुआ बीना को ?'

'आं....हां !'

'मैं पूछ रही हूँ कि बीना को क्या हुआ और आप हैं कि सो रहे हैं ?'

'किसे ! बीना को ?'

'और नहीं तो क्या आपको !'

'ओह ! नीना गजब हो गया। पहले एक गिलास पानी....' कहते हुये मैं सिर पकड़ कर एक कुर्सी पर बैठ गया। मेरी मुखाकृति देखते ही वह जैसे सब कुछ समझ गई। तुरत उसने नौकरानी को आवाज देकर पानी लाने को कहा और डॉक्टर को फोन कर दिया।

नौकरानी के पानी लाते ही मैंने वीना को होश में लाने का प्रयत्न किया और सफल भी हुआ लेकिन वह पुन: 'भइया' कहकर बेहोश हो गई।

'आखिर बात क्या है, आप बताते क्यों नहीं ?' अंतत: वीना कुछ झल्ला उठी।

'गोपाल और गुरू के साथ-साथ आशा भी शहीद हो गई।'

'नहीं ! यह बिल्कुल झूठ है। ऐसा नहीं हो सकता।'

'वीना, सब कुछ संभव है। रोने से कुछ नहीं बनेगा, हमें अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। फिर मौत तो हर किसी को आती है, किसी को जल्दी तो किसी को देर में। और वे तीनों तो शहीद हुये हैं— रोने से क्या फायदा ?'

'आप डायरेक्ट मालूम क्यों नहीं करते कि क्या सच है और क्या झूठ ?'

'वह तो मालूम करना है।'

'तो करिये न ?'

उसके आग्रह पर मैं उठने ही वाला था कि डाक्टर की कार के रुकने की आवाज सुनाई दी अत: वीना तेजी से अर्द्धनग्न होने के कारण पास के कमरे में घुस गई। तभी डाक्टर ने कमरे में नौकर के साथ प्रवेश किया।

'क्या हुआ, मि० रवीन्द्र ?'

'कुछ नहीं डाक्टर साहब वीना बेहोश हो गई थी इसलिये.....'

'ओह डोन्ट वरी...डोन्ट वरी !' कहते हुये डाक्टर ने स्टैथ-स्कोप को कानों पर चढ़ा लिया और कुछ क्षण पश्चात् उठकर मुझसे बोले —

'मैंने इन्जेक्शन लगा दिया है। लगभग पन्द्रह मिनट में यह होश में आ जायेंगी····'

'कोई खास····'

'अरे नहीं, सिर्फ शाक लगा है किसी बात का। घबराने की कोई बात नहीं है····लेकिन हां, बी केयरफुल। कोई ऐसी बात न हो जिससे इन्हें दुबारा शाक लगे क्योंकि दुसरा शाक इनके लिये घातक सिद्ध हो सकता है।'

'क्या मतलब ?'

'इनका हार्ट बहुत कमजोर है—वेरी वीक ! इसलिये कोई ऐसी बात न होने दीजिये जिससे मिस बीना को जरा सा भी मानसिक कष्ट हो।'

'ओह !'

कहकर मैंने डाक्टर को फीस देकर विदा किया। उसके जाते ही नीना कमरे से निकल आई। इस समय तक उसने कपड़े पहन लिये थे। मैंने उससे कहा—

'नीना तुम जरा बीना को संभालना मैं अभी आया।··· और हां, अगर होश में आते ही बीना गोपाल भय्या के विषय में पूछे तो यह मन बताना कि वे लोग मर···चुके हैं।'

यह कहकर मैं तेजी से कमरे के बाहर निकल गया क्योंकि आँसुओं के कारण मेरा कण्ठ अवरुद्ध-सा हो गया था। नीना ने कोच पर बैठकर बीना का सिर अपनी गोद में ले लिया और उसके केश सहलाने लगी। गोपाल, गुरू और आशा की मौत से उसे भी कठोर आघात लगा था। गोपाल चाहे कुछ भी था उसकी प्रेरणा था। गुरू से उसकी कभी ज्यादा बात नहीं हुई फिर भी वह भाई तो था—मंडली का एक सदस्य होने के नाते, और आशा ! वह तो सहेली ही थी। एक

साथ यह तीन आघात किसी भी पत्थर हृदय को पिघलाने के लिये पर्याप्त थे। फिर नीना तो नारी थी, जो स्वभाव से ही कोमल हृदया होती है; लेकिन इतना सब होते हुये भी नीना ने अपने व्यथित हृदय को आश्चर्यजनक रूप से संभाला और आ बहने वाले आँसुओं को चुपचाप पी गई। बीना के केश सहलाते समय उसकी नेत्रों से दो अश्रु बिन्दु टपक पड़े, किन्तु नीना ने उन्हें तुरन्त आंचल से पोंछ लिया। कहते हैं कि नारी बड़े-बड़े तूफानों में अडिग रहती है, पुरुष की अपेक्षा नारी के धैर्य का बांध अधिक सुदृढ़ होता है। पुरुष विपत्तियों से शीघ्र ही घबरा जाता है जबकि नारी सरलता से उन विपत्तियों को झेल जाती है। इन बातों का जीवित प्रमाण मेरी नीना थी। उसके इस साहसिक कृत्य को देखकर मैं रोमांचित हो उठा कि हे भगवान, यह नारी है या कुछ और (रणचण्डी), जिसके मुख पर अश्रु की छाया तक नहीं। यह मैंने उसी दिन अनुभव किया कि प्रत्येक स्त्री अपने पति की मां भी होती है, क्योंकि विपत्ति के समय जिस प्रकार मां अपने बच्चे को समझाती है उसी प्रकार पत्नी अपने पति को सांत्वना देती है। अगर कहीं ऐसा न हो तो निश्चय ही विपत्ति के समय पति पागल हो जाये। कमरे से बाहर निकल कर मैंने सत्यता की जाँच की और जब घटना को सही पाया तो पुनः उसी कमरे में वापस आ गया। इस समय तक बीना होश में तो नहीं आ सकी थी किन्तु उसकी आकृति पर चिन्ता के भाव पूर्णतः लुप्त हो चुके थे और वह सामान्य दीख रही थी। मैं आकर वैसे ही एक कुर्सी पर बैठ गया। वह धीरे-से उठकर मेरे पास आई और सहानुभूति के स्वर में बोली—

'क्या वह खबर.....'

'हाँ नीना, वह सोलहों आने सही है।'

'ओह !' वह कुछ सोचने के पश्चात् पुनः बोली—'तो क्या हुआ, हमें तो खुश होना चाहिये कि वे अपने ध्येय के लिये शहीद हो

गये।''' मैं समझती हूँ। लेकिन क्या हो सकता है, जो होना था वह तो हो ही चुका। उनका शोक मनाने से वे वापस तो आ नहीं जायेंगे।'

'नीना !'

'हाँ मेरे देवता, मैं गलत नहीं कह रही हूँ। अब वीना को बचा लीजिये, और उसके लिये गम की नहीं चेहरे पर हँसी जरूरत है।',

'ओह !'

उसकी बातें मेरे दिमाग को छेद रही थीं कि तभी वीना कुनमुनाई और नीना के पहुँचते-पहुँचते वह उठकर बैठ गई। उसके रतनारे नेत्रों से आँसू लगातार बह रहे थे। उसने अश्रु सिक्त स्वरों में पूछा —

'भाई साहब''''!'

'हाँ वीना, वह खबर गलत थी। जापानी ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को धोखा देना चाहते हैं'

'और इस कार्य के लिये उन्होंने भय्या, भाभी और गुरु भय्या को चुना, क्यों ? आप झूठ बोलते हैं, भाई साहब !' कहते हुये उसने मेरे सीने में मुँह छिपा लिया और फफक पड़ी।

'मेरी रानी बहन, आज तक मैंने तुझसे कभी झूठ नहीं कहा फिर आज ही क्यों कहूँगा ?'

'आपकी नजर में औरत का दिल कमजोर होता है ना !'

'औरत का हो सकता है, लेकिन मेरी रानी बहन का कभी नहीं।'

'फिर आप सत्य से परदा क्यों नहीं उठा देते ? भाई साहब, मेरा दिल कहता है कि यह खबर सही है मगर आप नहीं कहते, क्यों — आखिर क्यों, आप छुपाना चाहते हैं ?'

'तुम लेट जाओ वीना। तुम्हारी तबियत ठीक''''

'आज समझी, आप नाहक मेरे प्रति इतने स्नेह का दम भरते हैं।''''आपको मेरी कसम भय्या, आपको बहन बीना की कसम भाई साहब, अगर आपने सच नहीं बताया।'

'बीना !'

'हे भगवान ! काश, आज कोई मेरा भाई हो''''

'बीना, यह शब्द मत कहो ! ईश्वर के लिये मत कहो। वह खबर सच्ची है...'

'ओह !'

कहकर वह सीधी लेट गई और छत की ओर शून्य में ताकने लगी। उसकी सिसकियाँ बन्द हो चुकी थीं, आंसू सूख चुके थे। उसकी पीड़ा तो वही समझ सकता था जो स्वयं कभी ऐसी परिस्थिति में फँस चुका हो।

प्रकृति ने भूमंडल पर जो अनिवार्यता सांझ और सवेरे को दी है, जीवन को वही अनिवार्यता सुख और दुख के रूप में मिली है। मानव की गति थककर रुक न जाय इसलिये सुख का पक्ष आवश्यक है और सुखके आलस्य की मादकता में गति का ध्यान ही न रहे इसलिये दुख का पक्ष भी अनिवार्य है। प्रकृति की प्रेरणा और जीवन से उसका सामंजस्य एक ऐसा आदिकालीन सिद्धान्त बन चुका है, जिसे मानव का ज्ञान भंडार बिना विश्लेषण के परम्परागत मानता आ रहा है और शायद यही कारण है कि दोनों पक्षों में फंसकर भी वह संतोष का आंचल नहीं छोड़ता और उसकी गति में गत्यावरोध नहीं आता।

कदाचित् यही सत्य भी है। हर सुखी कहा जाने वाला व्यक्ति हर समय दुःखों (विपत्तियों) से घिरा रहता है। कठोर विपत्तियों के आने पर भी वह चीखता नहीं है— प्रतिष्ठा के भय से !

हम तीनों के साथ भी ऐसा ही हुआ। पहले नीना के पिता राय साहब की मृत्यु का आघात लगा। उससे संभल भी न पाये थे कि मेरी गिरफतारी ने बीना और नीना को चोट पहुँचाई और अब उसका भी दुःख कम न हुआ था कि एक गाज और गिरी, हम चोख भी न सके। आशा, गोपाल और गुरू जैसे अनन्य मित्रों को महापथ पर जानकर हम किंकर्तव्यविमूढ हो गये।

सारे दिन बीना उसी हालत में कोच पर लेटी रही और अन्त में मैंने उसे गोद में उठा कर उसके कमरे में पलँग पर लिटा दिया। वह इस समय अर्द्धचेतनावस्था में थी। जब उसकी यह दशा असह्य हो गई तो मैंने पुनः डाक्टर को बुलाया। परीक्षण के पश्चात् उसने कहा 'खतरा तो टल गया, मि० रवीन्द्र!'

'लेकिन डाक्टर...... ...'

'अच्छा हो आप इन्हें कहीं और ले जायें। जलवायु-परिवर्तन भी हो जायेगा और मिस बीना पूर्णतः स्वस्थ हो जायेंगी।'

'ओह! थैंक्स डाक्टर।'

डाक्टर के कहने के अनुसार मैंने मसूरी जाने का निश्चय किया। आजाद हिन्द फौज के सौंपे गये कार्य के विषय में हमें आर्डर मिला था कि अब हम उनसे किसी भी हालत में सम्बन्ध न स्थापित करें क्योंकि दुश्मन ने मांडले को चारों ओर से घेरा हुआ था। अतः कुछ समय के लिये मैं भी स्वतन्त्र था।

रात भर बीना की गिरी हुई अवस्था देखकर मैं अन्त में रो पड़ा और नीना से सामान बांधने को कहा। इस समय पौ फट रही थी और मैं बीना को कॉफी पिला कर स्वयं पीने ही जा रहा था कि हाथ 'पोस्ट-मैन' की आवाज पर रुक गया।

'नीना जरा देखो तो सही, शायद तार हो।'

'जी कहकर वह चली गई और तुरन्त तार लेकर आई। मैंने खोल कर पढ़ा तो हाथों के तोते उड़ गये—

'सर भगवान चन्द्र की अवस्था प्रात:काल से ही चिन्तनीय है। शीघ्र आओ।—तुम्हारा शुभचिन्तक एडवर्ड!'

'हे भगवान्!'

'क्या हुआ?'

तार उसकी ओर बढ़ा कर मैंने सिगरेट सुलगा ली।

'उफ? यह क्या हो गया?'

"नीना अब बीना का क्या होगा—मुझे तो वहाँ जाना ही पड़ेगा। ......क्या करु, समझ में नहीं आ रहा है।"

'मैं बताऊँ?' उसके हाथ मेरे सिर के बालों में उलझ गये और मेरी प्रश्नपूर्ण दृष्टि उसकी ओर उठ ही तो गई—'यहाँ से हम तीनों एक साथ चलते हैं। आप कानपुर रुक जाइयेगा और हम दोनों लखनऊ होती हुई मसूरी निकल जायेगी। क्यों, ठीक है?"

"हाँ यही ठीक रहेगा। सामान सब तैयार हो गया है?"

"वह तो रात ही में ठीक कर लिया था।"

"अच्छा, जब तक तुम बीना को कपड़े इत्यादि पहनाओ, मैं टिकट लेकर आता हूँ।"

मुझे बाहर जाते देख नीना की आंखों से दो बूंद आंसू ढुलक पड़े और वह पुन: बीना की ओर मुड़ गई। बीना ने एक कराह के साथ करवट ली—'पानी!" नीना ने तुरन्त उसे पानी पिलाया।

"भाभी!" बीना के स्वरों में दर्द था। उसके नेत्रों की कोरें भीगी हुई थी।

'बीना, पगली रोती है ! अरी सखी, वे लोग मरे नहीं वरन् अमर हो गये। वे कभी नहीं मरेंगे। वे तो अब सदियों तक जीवित रहेंगे। भारत की भूमि जब तक रहेगी, तेरे भय्या व भाभी व गुरू का नाम रक्त की बूँदों से लिखा रहेगा। वे शहीद हुये हैं।'

"नीना भाभी !"

'हां बीना, देख भारत का भाग्योदय अब दूर नहीं है। तेरी इस दुःखी अवस्था को देखकर क्या तेरे भय्या व भाभी की शहीद आत्माओं को शांति मिलेगी ? कदापि नहीं।"

'मैं इस अवस्था को त्यागूँ तो कैसे ?'

'जाकर स्नान करो और कपड़े बदल लो, हम लोग अभी साढ़े आठ की गाड़ी से मसूरी चल रहे हैं।'

'मसूरी, लेकिन क्यों ?'

'अच्छे बच्चे कारण नहीं पूछा करते।'

'भाभी !'

मुस्कुराकर बीना ने अपनी भाभी के सीने में मुँह छिपा लिया और गम्भीरता का वातावरण दो पल के लिये तिरोहित हो गया।

दहाड़ता हुआ कालका मेल कानपुर के प्लेटफार्म पर जाकर ठहर गया और फूली हुई साँस के साथ हांफने लगा। सामने नौ नम्बर पर पैसेंजर खड़ी हुई थी। कुली पर सामान लदवाकर मैंने नीना और बीना को प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बिठा दिया। बीना पूर्णरूप से तो नहीं फिर भी कुछ अंशों तक तो अपने को संभाल ही चुकी थी। आकृति से

आघात की प्रतिच्छाया स्पष्ट हो रही थी, फिर भी होठों पर मुस्कुराहट थी। उसकी वह क्षीण मुस्कुराहट देख कोई भी व्यक्ति सरलता से कह सकता था कि वह कृत्रिम है, प्राकृतिक नहीं। सारा सामान अन्दर कुली ने रख दिया—केवल मेरा अटैची छोड़कर। ट्रेन छूटने ही वाली थी अतः मैं बाहर प्लेटफार्म पर आ गया।

'मैंने वहाँ होटल का एक फ्लैट टेलीग्राम द्वारा बुक कर लिया है।'

'लेकिन मालूम कैसे होगा ?' बीना मुस्कुराई।

'यह कार्ड रख लो। वैसे होटल का आदमी तुम्हें मसूरी के बस स्टैण्ड पर ही मिल जायेगा।'

'और आप कब आयेंगे, भाई साहब ?' बीना ने उसी क्षीण मुस्कुराहट के साथ नीना की ओर कटाक्ष किया और तुरंत ही 'उई माँ' कहकर बाँह सहलाने लगी।

'भाई साहब के पास कुछ दिन ठहर कर ही आऊँगा।' मैं हँस ही पड़ा। इस समय मुझे बीना के प्रति एक आश्चर्यजनक अनुभूति हुई कि वास्तव में नारी रहस्यों की खान है, वह बड़े-बड़े तूफानों को हँसते हुये झेल जाती है। वैसे यह वाक्य मेरे कान में कई बार पड़े थे, किन्तु सत्य मुझसे कोसों दूर था सो आज सत्य के दर्शन कर कई बार चकित होना कोई अस्वाभाविक बात नहीं थी।

'कहीं ऐसा तो नहीं है कि फिर याद ही न आये।'

'किसकी ? तेरी !—भला बहन को भी कोई भूल सकता है। बहन का प्यार सदा हरा रहता है। माँ का प्यार अपार गंगा की धार है और पिता का प्यार अथाह सागर तो बहन का प्यार मीठे जल का स्त्रोत जो हमेशा प्रवाहित ही होता रहता है, बीना, कभी सूखता नहीं।'

'और बीवी का प्यार ?'

उसी समय गार्ड ने सीटी दी और ट्रेन सरकने लगी। बात अधूरी रह गई और मैं वहाँ से बाहर निकलने को चल दिया।

स्टेशन से बाहर बाहर निकलते ही कहीं से कुत्ते के रोने की आवाज सुनाई दी। कदम अपने आप ठिठक गये। मस्तिष्क पर एक करारी चोट पड़ी थी। मैंने जेब से सिगरेट निकाल कर सुलगाई और शंकित मन लिये आगे बढ़ा। दो ही चार कदम आगे बढ़ा था कि जाने कहाँ से एक बिल्ली आकर रास्ता काट गई। मेरा दिमाग घूम गया कि हे भगवान क्या होने वाला है। मैं आगे बढ़ने ही वाला था कि एक टैक्सी आकर मेरे पास तेजी से रुक गई।

'टैक्सी साब ?'

'हूं !'

कहते हुये मैंने पीछे का दरवाजा खोला और भगवान चन्द्र की कोठी का पता देकर गद्दी की पीठ से सिर टिका कर एक प्रकार से लेट गया। मेरा मस्तिष्क इस समय कुछ भी सोचने के लिये पूर्णतः असमर्थ था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि अब क्या होने वाला है। यद्यपि मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करता फिर भी एक हिन्दू होने के नाते इस समय इन दो अपशकुनों से मैं कुछ घबरा अवश्य गया। टैक्सी अपनी गति से सड़क को रौंद रही थी और उससे भी तेज मेरा मस्तिष्क दौड़ रहा था, लेकिन बेकार ! क्योंकि वह किसी भी प्रकार का अनुमान लगाने में पूर्णतः असमर्थ था। न जाने क्यों मैं बार-बार भगवान से यही प्रार्थना कर रहा था कि हे भगवान, तू मेरे भाई साहब को बचा ले। यह प्रार्थना मैं जीवन में शायद पहली बार कर रहा था।

प्रार्थना असफल हुई। टैक्सी के रुकते ही मैंने बिल चुकाया और कोठी की ओर घूमा। कोठी में एक प्रकार की वीरानी छाई थी। जो मेरे लिये अपरिचित न थी। दिमाग में बिजली की भांति

विचार कौंधा और मेरे मुँह से अचानक ही निकला,' 'नहीं; ऐसा नहीं हो सकता !' मैं तुरन्त अन्दर की ओर भागा। दरवाजे पर एडवर्ड खड़ा था।

'मि० एडवर्ड.........'

'आई एम् वेरी सारी, मि० रवीन्द्र ! इट्स टू लेट एण्ड नाऊ ही बिलांग्स टु द एजेज़। (मुझे बहुत दुःख है, रवीन्द्र ! अब तो बहुत देर हो गई और वह (भगवान चन्द्र) चिरनिद्रा में लीन हो गये।' यह कहते हुये एडवर्ड की आँखें रो पड़ीं।

'कब ?'

'टेलीग्राम देने के चार ही घन्टे बाद—कल शाम ठीक सात बजे !'

'उफ, भय्या ! इन्तजार भी न कर सके....और उनका पार्थिव शरीर........'

'अग्नि की गोद में सुला दिया गया। डॉक्टरस् की राय के अनुसार मैंने शीघ्रता की अन्यथा शरीर विकृत हो जाता।'

'शरीर विकृत हो जाता ?'

'यस, इट्स् ट्रू ! वह एक लम्बे अर्से से फेफड़े के कैंसर से पीड़ित थे और उनके शरीर को अन्दर ही अन्दर कीड़ों ने खाना शुरू कर दिया था।....हम मजबूर थे, रवीन्द्र !'

'आह, मि०एडवर्ड मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं क्या करूँ?'

'अपने को सभालो रवीन्द्र और कर्त्तव्य-पथ पर डटो। रोने से कोई फायदा नहीं।'

'वह देवता थे, एडवर्ड !' मै उसके कंधे पर सिर रखकर फफक पड़ा।

'अगर वह देवता थे तो उनकी आत्मा को तुम्हारे रोने से शांति न मिलेगी। देवता कभी अश्रु-बिन्दुओं की श्रद्धांजलि नहीं चाहते। वे तो चाहते हैं कि लोग उनके अधूरे कार्य को पूरा करें। अगर वास्तव में तुम भगवान चन्द्र की आत्मा को शान्ति प्रदान करना चाहते हो तो उनके जीवन को आदर्श मानकर उसका अनुकरण करो। यही उनके प्रति तुम्हारी श्रद्धांजलि होगी। आओ अब चलें।'

'कहाँ ?'

'मेरे घर !'

'क्यों ?'

'यहाँ रहने से चित्त को शान्ति न मिलेगी और जब तक शान्ति न मिले तब तक उनका बताया हुआ कार्य कैसे अभीष्ट होगा ?'

'हूँ, चलिये !'

कहकर मैंने आँखें पोछते हुये अटैची उठा ली। एडवर्ड ने कोठी में ताला बन्द किया और गेराज से कार निकाल कर तथा चौकीदार को समझा-बुझाकर हम दोनों कार में बैठे। रास्ते में मैंने पूछा—

'उनका दाह संस्कार किसने किया था ?'

'मैंने !'

'आपने ?'

'हाँ, क्यों ?

'कुछ नहीं ऐसे ही !'

'शायद सोच रहे हो कि मैं क्रिश्च्यनिटी का अनुगामी हूँ। लेकिन अब इंडियन हूँ। परसों अस्थियाँ लेकर कार से ही हरिद्वार जाऊँगा।'

'मैं भी चलूँगा।'

'अच्छा है, साथ रहेगा।'

२०

कहते हैं कि समय परिवर्तनशील है, सही है; क्योंकि अगर समय अपरिवर्तनशील हो तो शायद ही मनुष्य जीवित रह सके। मनुष्य के आन्तरिक घावों व मानसिक व्याधियों का एक मात्र इलाज है— समय की परिवर्तनशीलता! जब मनुष्य पर दुखों का पहाड़ टूटता है तो वह अचानक हुये इस आक्रमण से घबरा जाता है, किन्तु धीरे-धीरे, जैसे-जैसे, घाव सूखता जाता है, उस पर पपड़ी की कठोर पर्त जमती जाती है, और फिर रात के बाद सवेरा तो प्रकृति की अनिवार्यता है।

मसूरी की सुन्दरतम मोहक वादियों को देख बीना अपने दुख: को भूल गई। उसका मन मयूर प्रफुल्लित हो नाच उठा। सत्य ही है कोई भी हो युवावस्था में प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होने से किसी भी मूल्य पर अपने को नहीं रोक सकता, फिर बीना ही कैसे अपने को रोक सकती है? वह तो आदि से ही सौन्दर्य की उपासिका रही है। प्राकृतिक पर्वतीय सौन्दर्य ने उसके अस्थिर चित्त को अपनी ओर आकर्षित कर अपने में स्थिर कर लिया। फिर दो-तीन माह का समय भी कम नहीं होता है। एक दिन की बात जब दूसरे दिन सरलता से भुलाई जा सकती है तो यह आघात भी, जो गोपाल, गुड्ड व आशा की मौत से बीना तथा हम लोगों को लगा था, दो-तीन माह के इस लम्बे अर्से में आसानी से भुलाया जा सकता था। समय के मरहम ने

उस घाव को शीघ्र ही भर दिया और उस दुर्घटना की एक धुंधली सी छाया मात्र ही हमारे मध्य रह गई।

दूसरी दुर्घटना भी हमारे जीवन की एक महान् दुर्घटना थी; जिसके अन्तर्गत हमने अपना एक सहयोगी और खो दिया। भगवान चन्द्र की मृत्यु का एकमात्र कारण शायद मेरी समझ से यही था कि वे इन तीनों की मौत-- खासकर आशा की मृत्यु—का सदमा बर्दाश्त न कर सके और उनकी हृदय गति बन्द हो गई। वास्तव में वह हमारे एक कर्तव्यपरायण सहयोगी थे, जिसने देश के लिये तन-मन-धन अर्पण कर दिया था। उनकी मृत्यु का समाचार मेरे सीने में ही दफन हो गया और मैंने इस बात का जिक्र न तो नीना से ही किया और न ही बीना से। क्योंकि मैं यह बताकर दोनों में से किसी को भी खोना नहीं चाहता था। एडवर्ड के साथ ही मैं कानपुर से हरिद्वार अस्थियाँ लेकर आया था और अस्थि प्रवाह के पश्चात वह एक कागज का पुलिन्दा मुझे देकर वापस लौट गया था और मैं विवश हो यहाँ चला आया था। बीना ने पूछने की बहुत कोशिश की किन्तु मैं टाल गया। मैं जानता था कि एक चोट के ताजेपन पर दूसरी चोट बर्दाश्त कर पाना उन दोनों के लिये पूर्णतः असम्भव था। उस पुलिन्दे को पढ़ने की मेरी उत्कट अभिलाषा थी, किन्तु हर समय नीना व बीना से घिरे रहने के कारण उसे पढ़ने का समय ही न मिल पाता था।

इन्सान जिस कार्य को करने का बीड़ा सच्ची लगन से उठाता है उसे वह किसी न किसी प्रकार पूरा कर ही लेता है। अन्ततः लगभग एक माह के पश्चात् रात्रि को दस बजे मैंने वह पुलिन्दा खोला और पढ़ा। उस समय उन दोनों का भय तो था नहीं, क्योंकि समीप के कमरे में बिस्तरों पर दोनों स्वप्नलोक में विचरण कर रही थीं, एक मैं ही जाग रहा था अतः निर्भय था। उन कागजों को पढ़ कर उस महान् आत्मा के प्रति मेरी श्रद्धा और भी बढ़ गई जिसका अपना

कहने वाला कोई न था। वे कागज वसीयत के कागज थे, जिनमें भगवान चन्द्र ने कमल के लौटने तक अपनी चल और अचल सम्पत्ति का वारिस एडवर्ड व जेनी को बनाया था और कमल के वापस आने पर सम्पत्ति का आधा हिस्सा (करीब सत्तरह लाख रुपये) राष्ट्रीय आन्दोलन के कोष में महात्मा गान्धी के हाथ में देने की इच्छा प्रकट की थी तथा शेष का आधा भाग कमल व बीना के नाम और शेष आधे भाग को नीना तथा जेनी के नाम कर दिया था।

पढ़कर हृदय में श्रद्धा की लहरें हिलोरें लेने लगीं — चाहे स्वार्थ-वश कह लीजिये या नि:स्वार्थ होकर, परन्तु सत्य यही था। उनके इस कृत्य से स्पष्ट हो गया था कि वे देश के साथ देश पर मर मिटने वालों को कितना चाहते थे।

आज भी जाने क्यों मुझे बार-बार उस महान् आत्मा की याद आ रही थी जिसने हम लोगों को एक पिता सरीखा प्यार दिया। नीना और बीना भी पास ही में सो रही हैं, किन्तु मैं जाग रहा हूँ। अन्त में थक कर मैं भी बत्ती बुझा कर लेट गया और कब करवटें बदलते-बदलते नींद आ गई पता ही नहीं चला।

नीना ने जिस समय लॉन पर कदम रक्खा, पूर्व में पहाड़ों के पीछे प्रात:काल की लालिमा फैल चुकी थी। धरती की घास पर निशा के आँसू ओस के रूप में बिखरे पड़े थे, जो उसने प्रभात के अचानक आगमन पर प्रियतम से बिछुड़ते समय विवश हो गिराये थे। एक को विषाद तो दूसरे को हँसी, यही प्रकृति का नियम है। निशा अगर रो रही थी तो उषा हँस रही थी, खिलखिलाकर; और मानव! — मानव मन्त्र-मुग्ध हो प्रकृति के इस अनुपम सौन्दर्य की छटा का रसपान

कर रहा था। देखते ही देखते निःशेष निशा का आंचल भी उषा के अद्वितीय सौन्दर्य के समक्ष म्लान पड़ गया और गगन में उषा का ही साम्राज्य स्थापित हो गया। लेकिन हँसी (खुशी) ज्यादा देर नहीं ठहरती, उसके बाद दुःख का आना अवश्यम्भावी है। बीना खड़ी टकटकी बांधे प्रकृति के सौन्दर्य को निहार रही थी और आकाश का रंग प्रति पल बदल रहा था, जैसे कोई चितेरा आसमान के चित्रपट पर अपनी अदृश्य कूँची की सहायता से अनोखे रंग चित्रित कर रहा हो। उसी समय बीना का ध्यान नीना की आवाज से भंग हुआ—

'अरे, घूमने नहीं चलोगी ?'

'चलूँगी क्यों नहीं, पहले चेस्टर तो पहन लो।'

'लो, अच्छा चाय पीलो फिर चला जाये।'

'और भाई साहब ?'

'उनको छोड़ो, वह तो सोते रहेंगे और हम वापस भी आ जायेंगे।'

'नहीं भाभी, आज मैं बिना भाई साहब को साथ लिये नहीं जाऊँगी।' बीना ने रूठते हुये कहा।

'तो न जाओ !' नीना भी कहती हुई कुर्सी पर जम गई।

'गये थे नमाज को रोजे गले पड़े····भाभी, उन्हें भी जगा लो न ? कल भाई साहब ने चलने का वादा किया था।'

'नहीं भाई, तू ही जा, मुझे गालियां नहीं खानी हैं। तुम्हें तो वह कुछ कहते नहीं हैं, मेरे जगाने पर मिलती है, डांट !'

'झूठ, भाभी सफेद झूठ ! आज तक उन्होंने कभी तुम्हें डांटा नहीं है। वैसे अगर तुम्हारा मन न हो तो मैं ही चली जाती हूँ।'

'कोशिश करो शायद सफलता मिल जाये।'

'क्यों ?' जाती हुई बीना पलट पड़ी।

'रात देर से सोये थे।'

'उँह! वह तो हमेशा देर से सोते हैं, कभी जल्दी भी सोते हैं!'

कहकर बीना सोने के कमरे में चली गई और नीना वहीं मेज पर कुहनियाँ टेक कर जाने क्या सोचने लगी। लगभग पाँच ही मिनट बीते होंगे कि बीना पुनः वापस आ गई।

'क्या हुआ—जागे ?'

'जागेंगे कैसे नहीं, आखिर बहन हूँ!'

'ओह! तो कहाँ अटक गये आपके भाई साहब ?' नीना ने हास्य किया।

'बाथ-रूम में!'

और दोनों खिलखिला कर हँस पड़ीं।

चाय पीकर जब हम लोग बाहर निकले तो सूर्य निकल चुका था, किन्तु पहाड़ी के पीछे होने के कारण उसकी छटा द्विगुणित हो गई थी। हमारा फ्लैट लँन्डोर बाजार के सबसे अन्तिम सिरे पर था। अतः वहाँ से निकल कर हम प्राकृतिक छटा निहारते हुए आगे की ओर बढ़ रहे थे। आज रोज की अपेक्षा सर्दी कुछ अधिक थी अतः अनजाने में ही सिगरेट की तलाश में हाथ जेब में चला गया और जब पैकेट गायब पाया तो याद आया कि सिगरेट तो रात में ही खत्म हो चुकी थी और साथ ही पर्स भी नदारद। उसे भी मैं मेज पर छोड़ आया था। मन ही मन सोचा, 'मारे गये। एक तो सिग्रेट नदारद और दूसरे

पर्स भी। अब क्या करूँ? नीना से ही ठीक रहेगा। 'इस बात पर मैं कुछ देर विचार- विमर्श करता रहा और अन्त में माँगना ही पड़ा। उस समय वे दोनों रेलिंग के सहारे खड़ी प्रकृति का आनन्द ले रही थीं।

'नीना कुछ फुटकर पैसे हैं?'

'पाँच का नोट है। क्या कीजियेगा?'

'कुछ नहीं।'

'यह लीजिये।' बीना ने पर्स से एक का नोट देते हुये कहा। 'नहीं, तुम रखे रहो।'

'ले भी लीजिये, घर पर दस दीजियेगा।'

'और नौ ब्याज के?'

'क्या करूं, इसके बिना महाजनी कैसी?'

'अच्छा भई!' जरूरत थी, सो हार माननी पड़ी—' तुम लोग यहीं रुको मैं अभी आ रहा हूँ।'

'कहाँ जा रहे हैं?'

'सिगरेट की तलब मिटाने!' बीना ने तुरन्त उत्तर दे दिया—'यह सिगरेट तो देखो क्या-क्या गुल खिलायेगी!"

'अरे भाभी, चाय और सिगरेट के बिना न तो राजनीति चलती है और न लेखनी। एक लेखक के लिये चाय और सिगरेट उतनी ही जरूरी है, जितना हम लोगों के लिये पोशाकें! एक लेखक को कुछ नहीं चाहिये सिवाय कागज, कलम, चाय और सिगरेट के!'

शायद अभी वह कुछ और नीना को उपदेश देती लेकिन मुझे आता देखकर चुप लगा गई और हम फिर आगे बढ़ चले। कुछ ही दूर पर एक बुक-स्टाल था। यद्यपि इतने सबेरे दुकान तो नहीं खुली थी तथापि अखबारों के 'प्रातः संस्करण' लगाये हुये एक आदमी बाहर

बैठा हुआ था। मुझे अकेले चलने में जब कुछ असुविधा प्रतीत हुई तो मैंने एक अखबार खरीद लिया और उस पर निगाह जमाये हुगे ही आगे बढ़ने लगा। लेकिन दो ही कदम बढ़कर ठिठक गया।

'क्या हुआ, रुक क्यों गये ?' वीना से पूर्व ही नीना बोल पड़ी।

'कुछ नहीं, घर वापस चलो।'

'क्यों ?' दोनों एक साथ चौंक पड़ीं।

'चलो तो, वहीं पूछना। यहाँ बताने लायक नहीं है।'

इसके बाद दोनों ने कुछ नहीं पूछा और आपस में ही फुसफुसाती हुई कुछ कदम पीछे रह कर चल दीं।

'मैं तो पहले ही कह रही थी कि आज कायदे से नहीं घूम पायेंगे।' नीना के स्वर की झुंझलाहट बीना से छुपी न रह सकी।

'भाभी, कोई न कोई बात गंभीर जरूर है वरना भाई साहब...'

'तू भी पागल है री, अगर मान भी लिया जाये तो कौन सी ऐसी खास बात हो सकती है ?'

'अभी मालूम हो जायेगी।'

इसी प्रकार बातें करती हुई वे दोनों घर तक आ गईं। बराण्डे में ही पड़ी कुर्सी पर मैं आराम से लेट-सा गया और अखबार उन दोनों के सामने रखकर चुपचाप सिगरेट के कश लेने लगा।

'आखिर बात क्या है ?'

'अखबार में पढ़ लो !'

खबार पर जैसे ही उन दोनों की निगाहें पड़ीं, वे ऐसे चौंक पड़ीं मानो शरीर से नंगा तार छू गया हो। मुख्य पृष्ठ पर ही मोटे-मोटे आया—

आज़ाद हिन्द फ़ौज के तीन महत्वपूर्ण अफ़सर आज प्रातः देहली में !

एक ही साँस में दोनों उस खबर को पढ़ गई, जिसके साथ ही उन तीनों अफ़सरों की फोटो भी दी गई थी। उस समाचार का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार था—

'विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि आजाद हिन्द फौज के तीन महत्वपूर्ण अफसर कर्नल शाहनवाज खाँ, कर्नल ढिल्लन और कैप्टेन कमल आज प्रातः आठ बजे देहली पहुँच रहे हैं और स्टेशन से पहरे में रखकर इन देशभक्तों को लाल-किले ले जाया जायेगा। जहाँ इन पर 'देश में विद्रोह' उत्पन्न करने का आरोप लगा कर मुकदमा चलाया जायेगा। इन अफ़सरों की पैरवी देश के प्रसिद्ध वकील श्री भूला भाई देसाई तथा कांग्रेस पार्टी के प्रमुख नेता श्री जवाहर लाल नेहरू के द्वारा की जाने की आशा की जा रही है। स्मरणीय है कि कुछ दिन पूर्व जिस टुकड़ी ने समर्पण किया था वह इन्हीं अफ़सरों के मातहत थी।'

इस समाचार को पढ़ते ही वीना के चेहरे पर एक कान्ति की एक आभा आई और लुप्त हो गई। किन्तु यह बात मुझसे छिपी न रही।

'पढ़ लिया ?'

'हूँ !' वीना की दृष्टि कमल पर ही जमी थी और गालों पर आँसू बह रहे थे।

'यह क्या वीना—रो रही हो ?'

'नहीं भाई साहब, सोच रही हूँ आसमान से गिरे खजूर में अटके। न जाने क्या फैसला हो ?'

'फैसला अच्छा ही होगा !'

'लेकिन बुरा भी तो हो सकता है, भाई साहब !'

'बीना, यह तुम नहीं कोई और बोल रहा है। वैसे मेरा दिल तो यही कहता है कि भूला भाई देसाई और नेहरू जी की मेहनत बेकार नहीं जायेगी। वे किसी को भी मौत के पंजे से बचाने में समर्थ हो सकते हैं।'

'शायद !.........ईश्वर करे, आपका विश्वास और मेरा सच्चा प्यार हम दोनों को वापस मिल जाये।'

'बीना ! मेरी बहन !'

'भाई साहब !'

और मैंने सिसकियाँ भरती हुई बहन, को एक पिता की भाँति स्नेह-क्सित होकर होने से लगा लिया।

'रोने से तो कोई काम न होगा और न ही हाथ पर हाथ रख कर बैठने से ही कुछ होगा।' नीना ने प्रारम्भ की मौनता तोड़ते हुये कहा।

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह कि अंकल से चलकर बात कीजिये शायद वही कुछ मदद कर सकें।'

'अंकल से ! ' मेरे मुँह से अनायास ही एक आह निकल गई।

'हाँ अंकल से। क्या हो गया ?'

'कुछ नहीं। हाँ, यही ठीक रहेगा—लेकिन उनसे कुछ बनेगा नहीं। वह असमर्थ हैं।'

'क्यों ? उनकी तबियत अभी ठीक नहीं हुई ?'

'नहीं तबियत तो ठीक है, लेकिन.........'

'लेकिन-वेकिन क्या ? आखिर बात क्या है, आप बताते क्यों नहीं ?'

'कुछ नहीं, वे दरअसल किसी जरूरी काम से लन्दन गये हैं।'

'कब ?'

'अभी एक सप्ताह पूर्व ! मेरे पास खत आया था, शायद मैं देना भूल गया।'

'कब तक लौटने को लिखा था ?'

'इसका तो कोई जिक्र उसमें था नहीं।' अब तक मैंने अपने आप को पूर्ण रूप से संयत कर लिया था—'देखो ऐसा करते हैं कि यहां से सीधे देहली चलते हैं और वहां पहुंचकर तदबीर लड़ायेंगे। चाहे कुछ हो, उन्हें बचाना है और वे बचेंगे— चाहे जैसे भी !'

२१

परिश्रम और लगन ही जीवन में दो ऐसे गुण है जो कठिन से कठिन कार्यों को भी पूरा कर देते हैं। और जब यही परिश्रम और लगन 'परहिताय' की भावना पर आश्रित होती है तो इसका आदर्श अत्युच्च हो जाता है।

श्री भूलाभाई देसाई और नेहरू जी का परिश्रम सफल हुआ और जुलाई के माह में उसका परिणाम भी प्रकाशित हो गया। कर्नल शाहनवाज, कर्नल ढिल्लन तथा कैप्टन कमल पर फौजी अदालत में चलाये गये मुकदमे को श्री देसाई और नेहरूजी की मेहनत ने बेकार सिद्ध कर दिया और अन्त में मजबूर होकर सरकार को रिहाई का आदेश देना ही पड़ा।

निश्चित समय पर मैं नीना और बीना को साथ लेकर प्रातः दस बजे लाल-किले के समक्ष पहुँच गया। हम तीनों के हाथों में फूलों के हार थे। मेरी और नीना की आकृतियों पर प्रसन्नता थी किन्तु बीना के नेत्रों में थी व्यथा और ललक से मिश्रित अकुलाहट! अपने प्रियतम का प्यारा मुखड़ा आज ढाई साल बाद देखने को मिलने वाला जो था। वह विचारों के अथाह सागर में डुबकियाँ लगा रही थी कि अब उसका और कमल मिलन होगा। वह प्रियतम को देखते ही दौड़कर उसके गले से लग जायेगी और उसके तब तक

लगातार प्रश्न करती रहेगी, जब तक कि वह तंग नहीं आ जायगा। लेकिन क्या उसकी नारी-सुलभ लाज यहाँ उसे ऐसा करने की आज्ञा देगी? इस प्रश्न का उत्तर जब बीना को न सूझा तो मौन हो वह किले के गेट की ओर देखने लगी।

घड़ी के काँटे चक्कर काटते हुये आगे बढ़ते जा रहे थे। जैसे ही ग्यारह बजे, लाल-किले का फाटक भारी आवाज के साथ खुल गया। उसके खुलते ही संतरियों से घिरे तीन व्यक्ति नजर आये। हम तीनों लपके और हार पहनाने के पश्चात् खाँ साहब ने मुस्कुराते हुये कहा—

'कहो रवीन्द्र, कैसे हो?'

'जी इनायत है।' दोनों के हाथ मिल गये।

'और तुम दोनों!'

'जी, ठीक ही हैं।' नीना और बीना ने मुस्कुराकर जवाब दिया। फिर तुरत ही वह मेरी ओर मुड़ गये और कमल की ओर इशारा करते हुये बोले—

'भाई रवीन्द्र, पूरी अमानत न लौटा सकने के कारण मैं क्षमा....'

'अरे खाँ साहब, क्यों शर्मिन्दा कर रहे हैं। होनी होकर रहती है, इसमें हमारा आपका क्या दोष?'

'अच्छा भाई, अब विदा दो—फिर मिलेंगे।'

'क्यों? घर नहीं चलियेगा?'

'अभी नहीं, फिर कभी आयेंगे—जयहिन्द!'

'जयहिन्द!'

और जब वे चले गये तब मैं कमल की ओर मुड़ा जो कुछ ही दूरी पर खड़ा नीना और बीना से बातें कर रहा था।

'हलो कमल!'

'सुनिये लेखक जी, हलो-अलो तो बाद में चलेगा। पहले बताओ मिठाई कहाँ है।'

'मिठाई। किस बात की?'

'वाह, वाह! क्या कहने हैं? क्या मैं जान सकता हूँ कि हुजूर भोले शंकर कब से हो गये। चुपके-चुपके शादी करके पूछते हो, मिठाई कैसी? देख रही हो भाभी अपने पति देवता की चालाकी?'

'शिकायत क्यों करते हो यार, मिठाई खाना हो तो गाड़ी पर बैठो।'

'हाँ, यह ठीक रहेगा।'

और सब गाड़ी पर बैठ गये। नीना मेरे पास आगे बैठ गई और कमल पीछे बीना के पास।

'यह क्या? आगे आओ!'

'क्यों टोंकते हो! इतने दिन बाद तो मिले हैं। बाद में आयेंगे।'

कमल के इस मजाक पर बीना शरमा गई और हम तीनों खिलखिला कर हँस पड़े।

खाने के समय कमल ने वही प्रश्न किया जिसकी आशा मैं उसके मिलने के समय से करता आ रहा था। जिस समय खाना प्रारम्भ हुआ अचानक कमल ने कहा—

'भगवान चन्द्र नहीं आये?'

'वह तो लन्दन में हैं, देखो कब लौटते हैं।' मेरे चुप रहने पर बीना और नीना दोनों ही बोल पड़ीं। कमल के खाने से बीना को

आकृति से जैसे प्रसन्नता फूटी पड़ रही थी। बीना भी खुश थी, मैं भी खुश था। मैं नहीं चाहता था कि प्रसन्नता का यह विशाल साम्राज्य विषाद में बदल जाये, अतः मैंने उस समय मौन ही रहना अधिक उचित समझा।

'लन्दन गये हैं! क्यों?'

'इनसे पूछिये, इन्होंने हम लोगों को तो कुछ बताया नहीं।' नीना ने मेरी ओर इंगित कर कहा।

'क्यों जी, यह कौन सी हरकत है?'

'तुमने वह कहावत नहीं सुनी कि औरतों के पेट में बात नहीं पचती। अब तुम्हीं बताओ कि अगर मैं बता देता तो अर्थ का अनर्थ न हो जाता?' मैंने नीना की ओर इशारा करते हुये कहा।

'हाँ, यह बात तो ठीक है।'

'क्या? तुम भी इनके साथ हो गये? बीना, अपना तो पत्ता ही कट गया।'

और बातों का प्रवाह हँसी-हँसी में दूसरी ओर मुड़ गया। खाने के खत्म होते ही मैंने कमल से कहा—

'कमल जरा कमरे में आओगे?'

'क्यों, कोई खास बात है क्या?'

'हाँ यार, जरा समस्या गम्भीर है।'

'तब तो चलना ही पड़ेगा।'

यह कहकर वह मेरे साथ कमरे में आ गया और मेज पर बिखरे कागजों को देखकर बोला—

'आज-कल क्या लिख रहे हो?'

'वन्देमातरम्!'

'वह तो बहुत पहले से लिख रहे थे।'

'हाँ, अब खत्म होने का समय आया है''''सिगरेट पियोगे ?'

'चार मीनार ! यह कब से ?'

'क्या करूँ यार, इसके बिना चलता ही नहीं।'

'लेखक जो ठहरे। खैर लाओ, भागे भूत की लंगोटी भली।' कहते हुये उसने सिगरेट सुलगा ली और मैंने भी। दो मिनट तक कमरे में मौनता छाई रही। अन्ततः मैंने ही उसे तोड़ा—

'तुम भगवान चन्द्र के बिषय में पूछ रहे थे ?'

'हाँ यार, वह लन्दन क्यों''''

'वह लन्दन नहीं गये हैं !'

'क्या ?' कमल के हाथ से सिगरेट छूटते-छूटते बची।

'हाँ कमल, थोड़े धीरज की आवश्यकता है। इसीलिये मैंने न तो बीना को बताया और न नीना को, क्योंकि स्त्रियों का दिल पुरुषों की अपेक्षा कम कठोर होता है।'

'आखिर बात क्या है ?'

'बात यह है कि वह एक ऐसी जगह गये हैं जहाँ से कोई वापस नहीं आता।'

'क्या मतलब ?'

'उनकी''''उनकी मृत्यु हो चुकी है।'

'कब ? - कैसे ?'

'गोपाल, गुरू और आशा का समाचार सुनकर !'

'उफ रवीन्द्र ! यह तो बहुत बुरा हुआ।'

'हाँ कमल, उनकी वसीयत तुम पढ़ लेना और फिर जिस प्रकार उचित समझना बीना को बता देना।'

'आह रवीन्द्र, यह क्या हो गया ?'

'जो होना था, मेरे दोस्त ! लेकिन ध्यान रखना, बीना का हृदय अत्यधिक कमजोर है।'

'हूँ !'

कहता हुआ वह भारी कदमों और भीगे नेत्रों से बाहर चला गया और मैं कुर्सी पर गिरकर सिगरेट के धुएं के बीच खो गया।

रात को करीब नौ बजे भोजनोपरान्त मैंने, नीना और बीना ने मिलकर कमल को घेर लिया और बातों में उसे विवश कर दिया, सम्पूर्ण घटना ब्यौरेवार बताने के लिये। पहल नीना ने ही की—

'कमल हम लोग बहुत बेताब हैं।'

'काहे के लिये, भाभी ?'

'वह घटना सुनने के लिये जिससे समर्पण के लिये तुम लोगों को मजबूर हो जाना पड़ा।'

'बहुत लम्बी कहानी है भाभी।' कमल ने टालने की कोशिश की, लेकिन सफल न हो सका।

'तो क्या हुआ ? रात तो अपनी है—जागरण ही सही।' नीना के पूर्व ही बीना बोल पड़ी।

'क्यों नहीं, यह रात अब और किसकी होगी ?' कमल ने फुस-फुसाते हुये इस प्रकार कहा कि केवल बीना ही सुन सके और जब प्रत्युत्तर में प्यार भरी डाँट मिली तो प्रत्यक्ष में बोला— 'ठीक है भाभी। चूंकि आपने पहली बार कहा है इसलिये टालूंगा नहीं, हालांकि सारी कारस्तानी इस रवीन्द्र की ही है। क्यों ?'

'झूठ तो आज तक बोला नहीं।' मैंने सिर झुका दिया।

'खैर भाभी, सुना तो रहा हूँ लेकिन संक्षेप में।'

'संक्षेप में क्यों ?' नीना ने प्रश्न किया।

'अरे भाभी, जहाँ तक याद रहेगा वहीं तक तो सुनाऊँगा। लेकिन बीच में आप लोग बोलेंगी नहीं।'

'ठीक है।'

'साथ ही काफी भी मिलती रहे—हर घन्टे पर, मंजूर ?'

'मंजूर !'

नीना और बीना ने एक दूसरे को देखकर सिर हिला दिया और कमल ने जो कुछ बताया उसे मैं यहाँ अपनी जुबान में रख रहा हूँ—

× × ×

'तौंदविग पर दुश्मन का अधिकार हो जाने पर आजाद हिन्द फौज और जापानी सेना करीब १२ मील पीछे मुकाबला करती हुई मगवे में आ गई। सेना की अगली टुकड़ी को मेजर रावत कमाण्ड कर रहे थे और पिछला भाग मेरे पास था। जापानी सेना और रावत की टुकड़ी दोनों ही मिलकर दुश्मन को नीचा दिखाने की कोशिश कर रहे थे लेकिन स्थिति प्रतिकूल होती जा रही थी अतः मेजर रावत ने मुझको मुकाम पर भेजा जो उस समय मगवे में था। लेकिन दूसरी आज्ञा न पहुँचाई जा सकी क्योंकि दुश्मन लगातार बढ़ता आ रहा था और फिर दिन में तो दुश्मन के हवाई जहाजों के कारण यह कार्य और भी कठिन था। मगवे में डिविजनल कर्नल शाहनवाज के पहुँचने पर मैंने अपने कमांडर कर्नल एस० एस० हुसेन की मदद से सारी स्थिति उन्हें समझाई। लेकिन दुर्भाग्यवश दूसरे ही दिन दुश्मन ने अचानक हमला कर दिया। यह हमला तीन बजे सायंकाल हुआ था अतः कर्नल ढिल्लन ने किसी प्रकार सैनिकों की सहायता से दुश्मन को आगे बढ़ने से रोक रक्खा और उसी दिन रात में छिपकर कर्नल

शाहनवाज के साथ कुछ व्यक्ति और कर्नल ढिल्लन कामा को हट आये, जहाँ से फिर उन्हें प्रोम की ओर हटने की आज्ञा मिली। मगवे में कर्नल हुसेन की कमाण्ड में बची टुकड़ी को दुर्भाग्यवश दूसरे ही दिन समर्पण करना पड़ गया किन्तु मैं एक टुकड़ी के साथ पहले ही शाहनवाज के साथ हो लिया था।

'२८ अप्रैल को, यह टुकड़ी एक बर्मी गाँव में पहुँची जिसका नाम मिन्डे था और यह गाँव कामा के करीब १०-१२ मील उत्तर-पश्चिम में पड़ता था। उसी रात बर्मी सेना, जिसने 'राष्ट्रीय लोक सेना' के नाम से कार्य करना शुरू कर दिया था और धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध का ऐलान कर दिया था, की सहायता से शाहनवाज की यह टुकड़ी कामा में इरावदी पार करके पूर्वी किनारे पर आ गई। उसी समय बर्मी सेना द्वारा खबर मिली कि दुश्मन प्रोम पर जल्दी से जल्दी कब्जा करने की कोशिश में है। इस खबर ने एकबारगी हम सबके कलेजों को हिला दिया, लेकिन बर्मियों का आजाद हिन्द फौज के प्रति व्यवहार अत्यधिक प्रेम व मित्रतापूर्ण बना रहा, जब कि बर्मी सेना ने जापानियों के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी थी। वे लोग गाँवों में सादे वेश में रहते थे और गुप्तचरों के द्वारा जापानियों की टुकड़ी की स्थिति मालूम होते ही वहाँ पहुँचकर उन्हें खत्म कर देते थे। इस सेना का सदर मुकाम इहायेटमायो में था और हर गाँव में कुछ सैनिक एक अफसर के आधीन छोड़ दिये गये थे। यह सत्य था कि बिना उनसे (बर्मी सेना से) मिले ग्रामीणों का सहयोग पाना या कोई सामग्री खरीद लेना पूर्णतः असम्भव था। यही कारण था कि जापानी सेना इतनी तेजी से पीछे हटती जा रही थी और दो पाटों के बीच पिस रही थी। जब जापनी फौज किसी गाँव में प्रवेश करती तो उसे पूरा गाँव खाली मिलता। इन्हीं सब बातों के कारण नेताजी ने पहले ही बर्मियों को अपने से मिला लेना उचित समझा और उनके प्रभाव-

शाली व्यक्तित्व के कारण बर्मी भी उन्हें अपना नेता मानने को विवश हो गये। फलत: बर्मी सेना के कमांडर जनरल आंगसांग ने अपने फौजियों को यह सख्त हिदायत कर दी थी कि वे यथासम्भव आजाद हिन्द फौज की सहायता करें और उससे लड़ने का कभी भी विचार तक न करें। नेता जी के इस प्रभाव एवं जनरल आंगसांग की इस हिदायत का परिणाम अपने अनुकूल निकला और आजाद हिंद फौज को बर्मी सेना की पूरी सहायता प्राप्त हुई। यदि ऐसा न होता तो कर्नल शाहनवाज के साथ की यह टुकड़ी कभी भी प्रोम तक नहीं पहुंच सकती थी।'

'इसके बाद क्या हुआ?' नीना ने प्रश्न किया।

'पहले काफी!'

'बन रही है। तुम अपना बयान जारी रक्खो।' नीना ने मुस्कुराते हुये कहा।

'हूं।' कमल सिगरेट सुलगाई और एक गहरा कश खींचते हुये बोला—'वहां से चलकर हम सब कर्नल शाहनवाज के साथ १ मई को कामा के पूर्वी तट पर जा पहुंचे। पूरी फौज के पार हो जाने पर कर्नल शाहनवाज के साथ आखिरी दल भी पार हो गया जिसके अन्तर्गत कर्नल रोडरीगज, कर्नल जी० एस० ढिल्लन, मेजर राम स्वरूप, मेजर मेहरदास, मेजर सिंह और मैं—कुल सात आदमी—थे। उस समय ढिल्लन तीव्र उदर-शूल से पीड़ित थे लेकिन फिर भी यह कारवां चलता हो रहा और प्रात: होते-होते हम लोग प्रोम से पांच मील उत्तर के एक गांव में पहुंचे। कर्नल शाहनवाज के कहने पर मैं पता लगाने गया तो मालूम हुआ कि जापानियों ने प्रोम को खाली करके उसे आग के हवाले कर दिया और तौंगू पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया है। वहां

से आते समय गाँव के मुखिया से एक और महत्वपूर्ण बात पता चली कि जापानियों ने रंगून भी खाली कर दिया है और नेता जी ने आजाद हिन्द फौज को हथियार डालने की आज्ञा दे दी है। मैंने उसे ही साथ ले जाकर शाहनवाज के सामने खड़ा कर दिया। पूरी बात सुनकर वह सोच में पड़ गये और उसे दा विकरके हम सभी अफसरों की एक आखिरी मीटिंग हुई।

'आप लोगों का क्या इरादा है,' शाहनवाज ने हम सबसे पूछा—'क्योंकि मैं अपनी राय पर अमल करने के लिये कहने से पहले आप लोगों के विचार जानना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि आप लोग मेरे दबाव में आकर कोई गलत काम कर जायें।'

'हम सब बिना आपकी राय जाने ही आपसे सहमत हैं।' हम सब ने एक स्वर में कहा।

'आप लोग फिर सोच लें!'

'यह बातें तो फौज में भर्ती होने से पहले ही सोचा ली जाती हैं।' कर्नल ढिल्लन ने एक हास्य का पुट छोड़ ही दिया।

'तो ठीक है। जैसा कि अभी हमें मालूम हुआ है कि नेताजी इस समय मौलमीन में हैं—हालांकि यह एक अफवाह ही है, फिर भी ऐसे नाजुक समय में यही बहुत है—और मैं उनसे दा बात जाकर करना चाहता हूँ क्योंकि नेताजी का हुक्म है 'समर्पण कर दो' और मेरा दिल इस हुक्म को न मानकर जंग जारी रखने के लिये गवाही दे रहा है।' इतना कहकर शाहनवाज एक क्षण के लिये रुके—'इसलिये·········इसलिये मैं चाहता हूँ कि, चूंकि मौलमीन का रास्ता बहुत खराब है, जो लोग बीमार हैं और घायल हैं वे सब कर्नल रोडरीग्स और मेजर रंगनाथन के साथ वालाबस्ती में रुक जायें और बाकी मेरे साथ मौलमीन चलें।········· आप दोनों को कोई एतराज तो नहीं है?'

'नहीं सर, हमें आपका हुक्म मानने में खुशी होगी।'

'फिर से सोच लीजिए। संभव है अंगरेजों का व्यवहार हमारे प्रति बहुत कठोर और अपमानजनक हो। आप लोगों को, जब दुश्मन प्रोम में आ जाये तो, तो सिर्फ आत्म-समर्पण कर देना है।'

'आत्म-समर्पण ?'

हम मजबूर हैं, हमारे पास कोई और दूसरा रास्ता नहीं है, कर्नल !'

'ठीक है सर !'

और इसके पश्चात् मीटिंग समाप्त हुई और प्रोम से हम बाकी सैनिक उसी दिन रवाना हो गये।'

इतना कहकर कमल रुक गया और एक दूसरी सिगरेट सुलगा कर काफी पीने लगा। कुछ देर तक सब चुप रहे, कोई न बोला। काफी के खत्म होते ही कमल ने कुछ क्षणों के लिये सिर को कोच की पीठ से सटा लिया और फिर आगे सुनाना शुरु किया—

'प्रोम से चलने का दृश्य अत्यन्त हृदय विदारक था क्योंकि अधिकांश सैनिक अपनी लम्बी बीमारी और गहरे घावों के बावजूद भी हमारे साथ ही जाना चाहते थे लेकिन डिविजनल कमाण्डर की आज्ञा का विरोध न कर सकने के कारण वे केवल रोकर ही रह गये और शत्रु की गोलाबारी के बीच से होकर भी हम सकुशल प्रोम से रंगून जाने वाली सीधी सड़क पर चल पड़े, क्योंकि दुश्मन अभी तक प्रोम के दक्षिण में नहीं पहुँच सका था। इस लम्बी यात्रा में हमें बेतार के तार के न होने की वजह से बहुत परेशान से हो गये क्योंकि हम चारों ओर की स्थिति जानने के लिये पूर्णतः भागती हुई जापानी सेना पर निर्भर थे। ...... लगातार चलते रहने के बाद ५ मई की सुबह हम लोग जापानी सेना के साथ-साथ ओकपो के पास के एक गाँव में पहुँच गये। इस गाँव के बाद जापानी फौज हमसे अलग हो गई क्योंकि वह तो पूर्व में पोगूयामा के पहाड़ों में चली गई थी और फिर कर्नल शाहनवाज ने आगे लैटपादान जाने का निश्चय किया।

'एक बार फिर कुछ देर के विश्राम कर लेने के उपरान्त हमलोग चल दिये। चलते-चलते हम लोग ७ मई को करीब आधी रात के समय तँकची पहुंच गये जहां हमें मालूम हुआ कि अंगरेजी फौज ने रंगून पर कब्जा कर लिया है और अब हम लोगों को पकड़ने के लिये उत्तर की ओर रवाना हो चुकी है। यह हमारे लिये एक नई परेशानी थी, जिसका अचानक हम लोगों को सामना करना पड़ा। इसलिये हम लोगों ने तँकची के बाद मुख्य सड़क छोड़ कर अपनी फौज से मिलने के लिये पूर्व में पीगूयोमा की पहाड़ियों में घुसने का निश्चय किया क्योंकि तँकची से रंगून कुल पचास मील ही रह जाता है।

'लगभग एक सप्ताह पश्चात् पीगूयोमा को पार कर एवं सघन जंगलों से होते हुये हम लोग १२ मई को नियाता पहुँच गये। यह गाँव पीगू के करीब २०-२५ मील पश्चिम में पड़ता है। यहाँ हम लोगों ने एक दिन रुक कर दुश्मन की स्थिति मालूम करने का निश्चय किया। कर्नल शाहनवाज ने मेरे नेतृत्व में करीब दस आदमियों का एक गश्ती दल भेजा और दूसरे दिन हम अपना काम करके वापस आ गये और अपनी रिपोर्ट पेश कर दी—'पीगू पन्द्रह दिन पहले ही दुश्मन के अधिकार में जा चुका है। हमारा यह दल भी चारों ओर से घिरता जा रहा है और हम दुश्मन के जाल में फँस चुके हैं। जापानी सेना के भी करीब ५० हजार सैनिक हमारी ही-सी अवस्था में फँस चुके हैं। दूसरी ओर जर्मनी ने बिना शर्त या समझौते के सरेण्डर कर दिया (आत्म-समर्पण कर दिया) है और नाजी सरकार के प्रधान हरहिटलर के साथ उसकी प्रेमिका ईवाब्रॉन तथा गोबल्स एवं उसकी पत्नी ने आत्महत्या कर ली है। मुसोलिनी भी अपनी प्रेमिका के साथ स्विट्जरलैण्ड भागते समय पकड़ा गया और दोनों को गोली मार दी गयी है। जर्मनी के बाद मित्र-राष्ट्रों के जहाज अब जापान की ओर कूच कर चुके हैं।' उसी समय दुश्मन ने हमारे दल पर तोप से गोले तथा बम बरसाना शुरू कर दिये, जिससे

हमारी सूचना की पुष्टि भी हो गई। जाहिर था कि हमारे बचने का अब कोई मार्ग शेष नहीं रह गया था, अतः हम उसी दिन गांव छोड़-कर रात बिताने के लिए एक घने जंगल में रुक गये और कर्नल शाहनवाज ने डिवीजनल कमाण्डर की हैसियत से सैनिकों को संबोधित करते हुये कहा—'हिन्दोस्तान की आजादी के लिये आपने जिस वीरता-पूर्ण ढंग से लड़ाई लड़ी है और जिस धैर्य और साहस से मार्ग की कठिनाइयों का मुकबला किया है उसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। ···· जिस प्रकार संसार की हालत बदल जाने, अणु·बम का अवि-ष्कार हो जाने और जर्मनी के पतन से हमारा संघर्ष जिसे हम पिछले करीब ९-३ वर्षों से चला रहे हैं, अब आशाप्रद नहीं रह गया है। फिर भी हमारा हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता प्राप्तिके उद्देश्य को लेकर शुरु किया गया यह संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है। हमें केवल अपने तरीके बदलने हैं। हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई जारी रहेगी, चाहे हमारे साथ कोई साथी हों या न हों। ····इस समय हमारे सामने सबसे अच्छा मार्ग मित्र-देशों को समर्पण करना और हिन्दुस्तान में वापस लौटना है। जो लोग जीवित बचे हैं उन्हें वहां जाकर पुनः आजादी की लड़ाई शुरू करनी है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मेरी आत्मा अंग्रेजों के सामने आत्म समर्पण करना स्वीकार नहीं करती। मैंने अंग्रेजों की फौज पर घातक आक्रमण करने और अपने जीवन को यों ही समाप्त कर देने का निश्चय किया है। क्या आप में से ५० सैनिक इस प्रकार के प्रयाण में सहयोग देंगे ?' उनके इस प्रश्न पर पूरे तीन सौ सैनिक तैयार हो गये। इस पर शाहनवाज ने उन्हें समझाया, जिनमें मैं भी एक था, कि हमारे पास बहुत कम रुपया बाकी है जिससे हम राशन खरीद सकें इसलिये मैं केवल पचास व्यक्ति चाहता हूं। कर्नल ढिल्लन उन व्यक्तियों को आप में से छांट लेंगे। किस्मत ने फिर जोर मारा और मैं उस छंटनी में आ गया।'

यहां कमल ने फिर काफी के लिये कहा और उसे तैयार पाकर

उसने एक नई सिगरेट सुलगाई और पाँच मिनट सुस्ताने के बाद उसने फिर कहना शुरू किया —

'इन पचास आदमियों के अतिरिक्त शेष आदमियों को मेजर रावत और मेजर सिंह की कमाण्ड में आत्म-समर्पण करने का आदेश दे दिया गया। सच कहता हूँ भाभी, अपनी माँ की सौगन्ध, अपने दोस्त रवीन्द्र और बीना की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि जीवन में वह पहला अवसर था जब मैंने सैनिकों की आँखों में आँसू देखे ! वे रो रहे थे भाभी — बच्चों की तरह सिसक कर ! उन बच्चों की तरह जिनकी माँ हमेशा के लिये उनसे बिछुड़ जाती है ! मैं आज तक नहीं रोया भाभी, मेरी माँ मर गई, नहीं रोया। बहन की इज्जत अंग्रेजी कुत्तों ने लूट कर उसे मार डाला, तब भी नहीं रोया। लेकिन भाभी उस समय मैं रो पड़ा, अपने साथियों की दशा देखकर। वे लोग बिलखते हुये सिसक रहे थे। कुछ ने तो 'जय-हिन्द' का नारा लगा बन्दूकों से आत्म-घात करना शुरू कर दिया। इस पर कर्नल शाहनवाज ने चीखते हुये कहा — 'अब अगर किसी भी सैनिक या अफसर ने आत्म-हत्या की तो मैं अपने सीने में गोली मार लूँगा।' इस कथन पर चारों ओर सन्नाटा छा गया और उसका व्यापक प्रभाव भी हुआ।

'दूसरे दिन प्रातः कर्नल शाहनवाज ने अपने ५० आदमियों के दल के अतिरिक्त अन्य आदमियों को मेजर रावत और सिंह के साथ जाकर समर्पण करने के लिये विदा किया। जाने के पश्चात हम अपने दल के साथ पोगयोगा के मध्य में चले आये जहाँ हम अपना अड्डा बना कर दुश्मन पर आत्मघाती अंतिम हमला करना चाहते थे। दूसरे दिन हम लोडा नामक गाँव में पहुँचे और मूसलाधार पानी के बरसने के कारण हमें उस गाँव में आश्रय लेना पड़ा जो अंग्रेजी जासूसों से पूरा भरा हुआ था। हम जहाँ भी जाते अंग्रेजों को खबर मिल जाती फलतः घेरा तंग होता जा रहा था। दूसरी कठिनाई यह थी कि हम

जंगलों में भी नहीं छिपे रह सकते थे क्योंकि राशन के लिये हमें गाँव के ऊपर ही निर्भर रहना पड़ता था। दुश्मन के द्वारा दुःखी लोगों के दुःख को देख कर हम जानकारी प्राप्त करने में असमर्थ थे और जिसके कारण हमें अपने काम में सफलता नहीं मिलती थी क्योंकि सफल हमले के लिये जानकारी आवश्यक थी और यह सब उन दुःखी लोगों से मालूम करना हमारे लिये अत्यन्त दुष्कर कार्य था। अतः वहाँ से एक चाँदनीरात में भागकर हमारा यह दल अन्त में १७ मई को लगभग ११ बजे रात को, हिर्तविजोवस गाँव के पास पहुँचा। लगभग सौ गज पूर्व ही कर्नल शाहनाज के संकेत पर दल रुक गया और तीन व्यक्ति उनके साथ घूमने गाँव में गये।

'सिर मुड़ाते ही ओले पड़े, वाली कहावत चरितार्थ हुई। गाँव में घूसते ही किसी ने पूछा—'तुम कौन ?'

'हम हिन्स्तानी हैं।' कर्नल शाहनवाज ने उत्तर दिया।

'तुम कौन हो ?' दुबारा प्रश्न होने पर धोखा हुआ क्योंकि कर्नल शाहनवाज ने सोचा कि शायद ये वे आदमी हों जिन्होंने शत्रु के पास जाने और समर्पण करने से इन्कार कर दिया हो, और इस विचार के आते ही उन्होंने ऊंची आवाज में कहा—'हम आजाद हिन्द फौज के आदमी हैं।'

'फौरन गोली चलाओ !'

कर्नल शाहनवाज के कहते ही एक अंग्रेज अफसर ने चीखकर आर्डर दिया और चारों ओर से हम चारों पर गोलियाँ दागी गईं। साथ के तीनों आदमी तुरंत शहीद हो गये, किन्तु यह महान् आश्चर्य था कि कर्नल शाहनवाज के जरा भी आँच नहीं आयी। हाँ, उनका वह बेग जरूर छूटकर वहीं गिर गया जो यहाँ लाल-किले में पेश किया गया था। वहाँ से बचकर वे दल में पुनः आ गये और दुश्मन पर हमला बोलकर हमने उसे गाँव छोड़ने के लिये मजबूर कर दिया। अगले दिन

सुबह हमारा यह दल उस स्थान पर पहुँचा जहाँ से दुश्मन का तोपखाना कुल ५०० गज रह गया था। हमारे अनुसार हमें यहीं से अपना आखिरी हमला शुरू कर देना था, लेकिन यह विचार केवल विचार ही रह गया। हमें चारों ओर से घेर लिया जा चुका था। यह देख कर्नल शाहनवाज ने कहा कि 'अब हमारे सामने कुल तीन रास्ते हैं। पहला और सबसे आसान तरीका खुद गोली मार कर मर जाना है, मगर मुझे यह पसन्द नहीं क्योंकि यह कायरों का तरीका है। दूसरा तरीका यह है कि दुश्मन की तोपों पर हमला बोलकर या तो खत्म कर दें या खुद खत्म हो जायें और तीसरा तरीका अपने आपको अँग्रेजों द्वारा पकड़ा देने और उनके हाथों मारे जाने का है। जाहिर है कि वे जीवित पकड़कर हमारा क्या करेंगे? परन्तु इससे यह भी सम्भव है कि शायद हम हिन्दुस्तान ले जाये जायें और फौजी अदालत के मुकदमे के बाद गोली से उड़ा दिये जायें। इस प्रकार एक उम्मीद है कि हम सम्भवतः अपने आन्दोलन के विषय में सब बातें देशवासियों को बता सकेंगे और साथ ही हमारी कब्रें भी वहीं अपने वतन में बनेंगी।'

'कर्नल शाहनवाज के इस कथन पर कर्नल ढिल्लन ने कहा— 'हमें पहला तरीका तो छोड़ ही देना चाहिये अर्थात् आत्मघात नहीं करना चाहिए। दूसरा तरीका यद्यपि वीरतापूर्ण है, लेकिन वह भी यहीं खत्म हो जायेगा। अब तीसरा ही तरीका है, जो सबसे अच्छा है, क्योंकि प्रथम यदि हमें मरना ही हो तो गोली मारने का काम अँग्रेजों पर छोड़ देना ही अच्छा होगा। इससे हमारे सम्बन्धियों और देशवासियों के हृदयों में अँग्रेजों के प्रति घृणा की जड़ और मजबूत हो जायेगी और वे कभी भी यह अनुभव कर सकेंगे कि हमारी मौतों का बदला लेना उनका कर्त्तव्य है। अब आप लोगों की क्या राय है?' इस पर सभी ने आखिरी रास्ता अपनाना स्वीकार कर लिया और अन्त में एक हिन्दुस्तानी पलटन ने हमें पकड़कर डिवीजनल ब्रिगेड के सदर मुकाम

पर पहुँचा दिया। यहाँ हमारे साथ अत्यन्त दयालुता तथा नम्रता का व्यवहार किया गया और फिर हम पीगू की जेल भेज दिये गये।

'इस जेल में हम तीन—नहीं, चार आदमी, कर्नल शाहनवाज, कर्नल ढिल्लन, कर्नल सहगल और मैं एक ही स्थान पर रक्खे गये। एक दिन कुछ अँग्रेज और हिन्दुस्तानी अफसर वहाँ आयें और एक अँग्रेज ब्रिगेडियर ने कर्नल शाहनवाज को बुलाकर बड़ी ऐंठ के साथ पूछा—'आप किसके लिए लड़ रहे थे ?'

'अपने देश की आजादी के लिए !' शाहनवाज ने उसी तरह उत्तर दिया।

'तब आपने समर्पण क्यों किया ?'

'कारण आप खुद जानते हैं, फिर यह सवाल पूछना बेकार है क्योंकि अँग्रेज समर्पण करने में बहुत चतुर हैं जिसका प्रमाण उन्होंने सिंगापुर में प्रत्यक्ष दे दिया था।'

'नॉनसेन्स !' कर्नल शाहनवाज से ईंट का जवाब पत्थर की तरह पा कर वह ब्रिगेडियर बहुत ज्यादा चिढ़ गया, लेकिन उसने फिर पूछा—'अगर आप हिन्दोस्तान में ले जाकर छोड़ दिये जायें तो आप क्या करेंगे ?'

'मैं हिन्दुस्तान में आजादी की लड़ाई जारी रक्खूंगा।'

'आपको जापानी क्या तनख्वाह दे रहे थे ?'

'मुझे जापानी नहीं हमारे नेता जी तनख्वाह देते थे। डिवीजनल कमांडर की हैसियत से मुझे २६० रुपये मिलते थे जिसका वास्तविक क्रय-मूल्य मुर्गियों के बच्चों के बराबर था।

'आपके नेताजी को रुपया कहाँ से मिला ?'

'हिन्दुस्तान के नागरिकों ने अपनी इच्छा से उन्हें दिया।'

इतना सुनते ही वह उखड़ गया और पैर पटककर बोला – 'मैं आशा करता हूँ कि वे तुम्हें गोली से उड़ा देंगे।' इस पर कर्नल शाहनवाज मुस्कुरा दिए और वह चला गया।

'पोगू से सख्त पहरे में हम चारों व्यक्ति रंगून पहुँचाए गए और वहाँ से हवाई जहाज द्वारा हमें कलकत्ता भेज दिया गया।'

इतना कहकर कमल फिर चुप हो गया और काफी तथा सिगरेट पीने पश्चात् पुनः उसने कहना शुरू किया —

'और जब कलकत्ते से हमें यहाँ लाया जाने लगा तो जेल म ही चार गोरखा सैनिकों और उसके अफसर को बुलाकर पूरी हिदायतें देते हुए कहा गया कि आप जिन आदमियों लेकर देहली जा रहे हैं वे तीनों बहुत ही खतरनाक व्यक्ति हैं और हमारी गवर्नमेंट के भारी शत्रु हैं। अगर आप जरा भी असावधान रहेंगे तो यह लोग आपकी बन्दूकें छीनकर या तो आपको गोली मार देंगे और या फिर भाग जायेंगे, और अगर यह भाग गये तो सारी बला आपके सिर आ जायेगी यानी या तो आप गोली से उड़ा दिये जायेंगे और या फिर कैद में डाल दिये जायेंगे। इसलिये जरा भी सन्देह होते ही इन्हें गोली मार दीजियेगा। यह सुनकर वह गोरखा अफसर चौकन्ना होकर बोला कि वह बिल्कुल वैसा ही करेगा जैसा उसे कहा गया है।'

'तो क्या उसने वैसा ही किया?' बीना जब अपनी उत्सुकता न रोक सकी तो अन्त में वह बोल ही पड़ी।

'सुनो तो सही, बड़ी मजेदार घटना है।' कमल ने मुस्कुराते हुए कहा —'वहाँ से हमें ट्रेन पर बिठाया गया, कर्नल सहगल को न जाने क्यों रोक लिया गया। एक फर्स्ट क्लास के डिब्बे में हमें बिठा दिया गया और उसके बाहर एक तख्ती लगा दी गई जिस पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा हुआ था—'खतरनाक कैदी! कोई अन्दर नहीं आ सकता।' गाड़ी के चलने पर हम तीनों बर्थ पर लेट गये और उस

अफ़सर ने अपने अन्य तीनों साथियों को हम लोगों पर कड़ी निगाह रखने के लिए अलग-अलग बांट दिया। फल यह हुआ कि जैसे ही हम-में से किसी का पैर भी हिलता, चारों बन्दूकें एक साथ उसके ऊपर उठा दी जातीं। यह स्थिति पहले दिन और पहली रात ही रही, दूसरे दिन सवेरे उस गोरखा आफिसर ने हम लोगों की बहुत सावधानी से जांच की। इस जांच से वह इस नतीजे पर पहुंचा कि इतनी कड़ाई की कोई आवश्यकता नहीं है तब वह शाहनवाज़ के पास जाकर बैठ गया और बात शुरू करते हुये पूछने लगा —

'आप कौन लोग हैं? आपका क्या अपराध है, जो आप देहली इस हालत में ले जाये जा रहे हैं?'

'मैं आजाद हिन्द फौज का अफसर हूँ। यह सेना अंग्रेजों की तरफ से लड़ने के लिये मलाया भेजी गई थी लेकिन जब आजाद हिन्द फौज का संगठन हुआ तो मैं हिन्दोस्तान की आजादी के लिये उसमें शामिल हो गया।'

'लेकिन आपको तो अच्छी तनख्वाह मिलती थी फिर आप उसमें क्यों गये और क्यों अंग्रेजों से लड़े?' वह शायद कर्नल शाहनवाज की बात को समझ नहीं सका था। इस पर उन्होंने फिर पूछा —

'अच्छा सूबेदार, क्या यह सच है कि वास्तविक लड़ाई में हिन्दुस्तानी और गोरखा पलटनें आगे रक्खी जाती हैं और उनके पीछे टामी (अंग्रेज) सैनिक!'

'जी हाँ!'

'और क्या गोरखा तथा टामी सैनिकों को बराबर तनख्वाह दी जाती है?'

'नहीं साहब, अंग्रेज टामी को चार गुनी ज्यादे तनख्वाह दी जाती है।

'ऐसा क्यों ? जब गोलियां खाने का सवाल आता है तो हिन्दुस्तानी और गोरखा सैनिक आगे रक्खे जाते हैं ?'

'हां साहब, यह तो अन्याय है !' कर्नल शाहनवाज की बात सुनकर सूबेदार सोच में डूब गया ।

'इसी अन्याय को खत्म करने के लिये हमारी फौज अंग्रेजों के खिलाफ लड़ी ताकि एक हिन्दुस्तानी सैनिक भी तनख्वाह, राशन, पेंशन, घर तथा यात्रा इत्यदि की सुविधायें उसी प्रकार पा सके जिस प्रकार एक टामी को मिलती हैं ।'

'तब तो साहब, आपने बहुत अच्छा किया । आपका प्रधान सेनापति कौन था ?'

'यह !' कहते हुये कर्नल शाहनवाज ने नेताजी का एक फोटो निकालकर उसे दिखाया । उसने अत्यन्त प्रशंसात्मक भाव से उसे देखा और कहने लगा—'ओह ! तो अब हिन्दुस्तानी लोग भी प्रधान सेनापति हो सकते हैं ?'

'क्यों नहीं !'

यह सुनते ही उसका रुख एकदम पलट गया और उसने अपने साथियों को बन्दूकें खाली करने का आदेश दे दिया और फिर शाहनवाज खां से कहने लगा —'साहब, यह साले अंग्रेज ही हमसे भेद-भाव बरत रहे हैं । अभी अमरीकनों ने बर्मा में गोरखों की एक पलटन बनाई थी और उन्होंने सबको वही तनख्वाह दी जो वे अपने आदमियों को देते थे ।'

इसी प्रकार बातें करते हुये अन्त में हम यहां आ गये । केस चला । किस्मत अच्छी थी और जिन्दगी के दिन कुछ बाकी थे इसलिए छूट गये ।'

यह कहते हुये कमल ने अपनी समर्पण की कहानी समाप्त की ।

'इसके मतलब तो यह हुये कि आजाद हिन्द फौज ने पूरी तरह से समर्पण कर दिया ?' नीना ने प्रश्न किया।

'नहीं किया है तो करना ही पड़ेगा।' कमल ने आह भरी।

'और नेता जी का क्या होगा ?' अन्त में मैंने पूछा।

'यह तो केवल भविष्य ही बता सकता है। वैसे मेरा अपना विचार तो यह है कि अंग्रेज मरते मर जायेंगे लेकिन उनकी परछांई तक नहीं पा सकेगें।'

'अच्छा भई, अब चलना चाहिए, तीन बज गये।' बीना ने टोका।

'तीन ?' कमल ने चौंकते हुए कहा —'कुछ पता ही न चला।'

'चलता भी कैसे, तीन डिब्बी तो तुम लोग सिगरेट पी गये फिर बराबर काफी मिलती रही।' नीना ने मुस्कुराते हुये कहा।

'अच्छा भाई, जयहिन्द !'

कहते हुए कमल उठ खड़ा हुआ और मीटिंग बर्खास्त हो गई।

मैं और नीना अपने कमरे में चले गये तथा बीना ने कमल के कमरे में प्रवेश किया और पलंग पर बैठ गई। कुछ क्षण बाद.......

'कमल, कहीं यह स्वप्न तो नहीं है ?' कमल का सिर अपनी गोद में रख बालों में उँगलियाँ फिराती हुई बीना बोली।

'नहीं बीना, यह यथार्थ है। स्वप्न तो हम देख रहे थे जो एक झटके में ही टूट गया।'

'क्या मतलब ?'

'साफ है बीना, हमने वतन की आजादी का स्वप्न देखा था जो आँख खुलते ही टूट गया। हमारा एक महान् प्रयास असफल हो गया और हम फिर उसी अवस्था में आ गए।'

'निराश मत हो मेरे देवता! असफलता ही तो सफलता की कुंजी है। हमें अपने उद्देश्य के लिये बार-बार प्रयत्न करना होगा तभी हमारे प्रयासों में कुछ सफलता दीख पड़ेगी।'

'सच वीना!' कहते हुए कमल ने उसे अपनी बाँहों में ले लेना चाहा।

'हाँ मेरे देवता, लेकिन समय से पूर्व नहीं।'

'अच्छा अब चलो सो जाओ।'

'क्या यहीं? एक ही.........'

'घत्!'

'क्यों?'

'पहले भाई साहब से तो बात कर लो।'

'किससे? रवीन्द्र से?'

'हूँ, और भगवान भय्या से।'

'उनको तो मैं तैयार कर लूँगा, लेकिन पहले तुम तो तैयार हो जाओ।'

'ऊँहूं!' बीना के सिर हिलाने पर उसने फिर कहा—

'तुम्हारी कसम बीना, मैं कोई शरारत नहीं करूँगा।'

'सच?'

'बिल्कुल!'

'अच्छी बात है।'

और जब बीना और कमल पलंग पर लेटे तो कमल ने कहा—

'वीना, अगर मान लो कहीं से हमें छः-सात लाख रुपया मिल जाये तो ?'

'छः-सात लाख !' बीना खिलखिला पड़ी—'फिर क्या है एक बंगला खरीद लेना, कार खरीद लेना और कोई अच्छी सी लड़की तलाश कर शादी कर लेना।'

'तुम्हें मजाक सूझ रहा है ?'

'और नहीं तो क्या ये सच है ? जाकर मूर्ख किसी और को बनाओ।'

'अच्छा मान लो कोई तुम्हें यह रकम दे दे तो ?'

'तो के आगे तुम सोचो ; मुझे रुपया-उपया कुछ नहीं चाहिये। मैं ठहरी औरत जात, रुपया लेकर क्या करूँगी ? जो भगवान से मांगा था वह मिल गया अब और क्या चाहिये मुझे ?'

'क्या मांगा था भगवान से ?'

'तुम्हें !'

बीना ने धीरे-से कहा और कमल के सीने में मुंह छिपा लिया।

'शरमा गईं ! अरे सुनो तो भगवान चन्द्र का अभी कुछ दिन पहले, कानपुर में कोई मि० एडवर्ड हैं, उनके पास से तार आया था कि वे बहुत ज्यादा बीमार हैं और उसके बाद खबर आई कि उनका देहान्त हो गया।'

'क्या ?'

'हाँ बीना ! मुझे और रवीन्द्र को भी शाम ही को मालूम हुआ जब मि० एडवर्ड ने उनकी वसीयत भेजी।.......इस तरह रोने से क्या फायदा, जो होना था वह तो हो ही गया। तुम्हें मेरी कसम बीना चुप हो जाओ।'

'कमल !'

'हां बीना, मृत्यु पर किसी का वश नहीं है।'

'उनकी वसीयत में क्या लिखा था ?'

'आधी जायदाद राष्ट्र के नाम और आधो की आधी तुम्हारे नाम और शेष में आधा-आधा मि० एडवर्ड और नीना के नाम उन्होंने कर दिया है।'

'ओह कमल ! वह देवता थे।'

'हां बीना, लेकिन अब रोने से कोई फायदा नहीं।'

'कमल !'

'बीना !'

और फिर""रात आगे सरकती रही। रात का थका हुआ राही बड़ी बेसब्री से सुबह की मंजिल की उम्मीद में झूमता हुआ जा रहा है, जैसे उसे विश्वास हो चला हो कि सुबह रूपी मंजिल की पहली किरण उसके पसीने से नहाये, थके हुए गाल को चूम लेगी""""

२२

दिन यों ही बीतते रहे। हिन्दुस्तान की राजनीति में विभिन्न भयंकर परिवर्तन होते रहे। अंतर्राष्ट्रीय राजनैतिक क्षेत्र में भी आमूल-चूल परिवर्तन हुए। जर्मनी के बाद जापान पर अब मित्रराष्ट्रों का धावा था क्योंकि धुरी राष्ट्रों में अब केवल एक ही महत्वपूर्ण राष्ट्र रह गया था जो समर्पण करने से साफ इन्कार कर रहा था, यद्यपि बर्मा में उसकी करारी हार हो चुकी थी। सुदूर पूर्व में आजाद हिन्द फौज भी धीरे-धीरे कम होती जा रही थी।

इस समय नेताजी बराबर कई दिनों से अस्थाई आजाद हिन्द फौज के रेडियो, जो सिंगापुर में स्थापित किया गया था, पर हिन्दुस्तान के निवासियों से बोल रहे थे और उनका पूर्ण संकेत लार्ड वेवल के प्रस्ताव से गांधी जी को बचने की आवश्यकता की ओर था। इसके साथ ही हमारे उस छोटे से परिवार में भी कुछ महान् परिवर्तन हुए। आशय यह है कि मेरे, नीना और एडवर्ड तथा जेनी के प्रयत्नों और समझाने-बुझाने से कमल और बीना दोनों ही शादी के लिए तैयार हो गए और दोनों का विवाह भी कानपुर में भगवान चन्द्र की कोठी में सुसम्पन्न हो गया था। अतः कुछ सप्ताह से मैं भी नीना के साथ वहीं ठहरा हुआ था।

एक दिन दोपहर का समय था वहाँ हम लोग खाना खाने के बाद बैठे बातें कर थे, एडवर्ड और जेनी भी मौजूद थे, कमल ने रेडियो का स्विच आन कर दिया और सुई को घुमाकर सिंगापुर स्टेशन लगा दिया। उस समय वह स्टेशन आजाद हिन्द फौज का गुप्त सेन्टर बना हुआ था, जहाँ पर से उस समय नेताजी का भाषण प्रसारित हो रहा था। हमारे कान स्थिर हो गये और हमारे कानों में नेताजी की दृढ़ किन्तु मृदु वाणी गूँजने लगी—

'भाइयो और बहनो ! हिन्दुस्तान के सामने इस समय एक राजनीतिक संकट है। यदि इस समय कोई गलत कदम उठा दिया गया तो हमारी स्वतंत्रता के मार्ग में रोड़े अटक जायेंगे। मैं आपको बता नहीं सकता कि मुझे कितनी चिन्ता है, क्योंकि एक ओर जहाँ स्वतंत्रता दिखाई पड़ती है, वहाँ दूसरी ओर गलत कदम उठाये जाने पर वह काफी पीछे हट जायेगी।""मेरे देश के नेता मुझसे इसलिए नाराज हैं कि मैं ब्रिटिश सरकार से समझौता करने की योजना का विरोध करता हूँ। वे मुझसे इसलिए भी नाराज हैं कि मैं कांग्रेस-कार्य-समिति और कांग्रेस की भूलों को जनता के सामने रखता हूँ और यह कहता हूँ कि कांग्रेस-कार्य-समिति देश के समस्त राष्ट्रीय लोकमत की प्रतिनिधि नहीं है। वे साम्राज्यवादी नेता जापानियों की सहायता लेने के कारण मुझे गालियाँ दे रहे हैं। पर मैं जापानियों की सहायता लेने से लज्जित नहीं हूँ। जापान के साथ मेरा सहयोग इस आधार पर है कि जापान हिन्दुस्तान की पूर्ण आजादी को स्वीकार करता है और यह स्वीकृति उसने अस्थाई आजाद हिन्द सरकार को प्रदान कर दी है।""इसके अलावा जापान ने हमें हथियार दिए हैं और उनकी सहायता से हमने एक सेना बना ई है जो हमारे एकमात्र शत्रु ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ रही है। इस सेना अर्थात् आजाद हिन्द फौज को हमारे फौजी शिक्षकों ने शिक्षा दी है – और वह भी हिन्दुस्तानी भाषा में ! इसका झंडा हिन्दुस्तान का झंडा है और इसके नारे हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय नारे हैं !

इनके अफसर सब हिन्दुस्तानी ही हैं और इसके अपने निजी सैनिक-प्रशिक्षण स्कूल हैं। जिनको पूरी तरह से हिन्दुस्तानी चलाते हैं। यह फौज लड़ाई के मैदान में हिन्दुस्तानी अफसरों के कमान में ही लड़ती है। इनमें से कई कमांडर जनरल के पद पर पहुँच चुके हैं यदि कोई फौज 'कठपुतली' कही जा सकती है तो वह ब्रिटिश सरकार फौज है जो अंग्रेजों की आधीनता में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की लड़ाई लड़ रही है....

'मेरे साथियो! हम अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई के पहले दौरे में हार गये हैं। लेकिन हम केवल पहले दौर में हारे हैं और अभी कई ऐसे दौरों में हमें लड़ाई लड़नी है। इस पहले दौरे में हारने पर भी मुझे निराश होने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। बर्मावासियों ने निःस्वार्थ त्याग की जो उच्च भावना दिखाई है उसे मैं जीवित रहते नहीं भूल सकता हूँ, और जब हिन्दुस्तान का इतिहास लिखा जायेगा तो उसमें बर्मा के हिन्दुस्तानियों को मुख्य स्थान दिया जायेगा।

'मैं तो जन्मजात आशावादी हूँ और आशा करता हूँ कि हिन्दुस्तान जल्द स्वतंत्र होगा। मैंने हमेशा कहा है कि प्रभात के पूर्व सदा घना अन्धकार होता है। हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता में मेरा दृढ़ विश्वास अभी तक ज्यों का त्यों कायम है। आपके राष्ट्रीय तिरंगे झण्डे को, आपके राष्ट्रीय सम्मान और हिन्दुस्तान की अच्छी-से-अच्छी वीरता की परम्परा को मैं आपके सुरक्षित हाथों में सौंप रहा हूँ। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैं दृढ़तापूर्वक उस प्रतिज्ञा पर अटल रहूँगा जो मैंने २१ अक्टूबर ४३ को 'अपने ३८ करोड़ देशवासियों के हित-साधन के लिये शक्ति भर प्रयत्न करने और उनकी स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ने के लिये' ली थी। अंत में मैं आपसे फिर अपील करता हूँ कि आप मेरे समान आशावादी बनें और मेरी ही तरह विश्वास रखें कि प्रभात के पूर्व सदा ही घना अंधेरा रहता है। हिन्दुस्तान आजाद होगा और बहुत जल्द आजाद होगा।

'ईश्वर आपका भला करे। इन्कलाब जिन्दाबाद ! आजाद हिंद जिन्दाबाद ! वन्देमातरम् ! जयहिन्द !'

और नेता जी का यह भाषण समाप्त हो गया जो उन्होंने आखिरी बार रेडियो पर दिया था।

और फिर दिन बीतते रहे —

एक दिन फिर अचानक रेडियो खुला और आवाज आई — 'हम अस्थाई आजाद हिन्द सरकार के गुप्त रेडियो से बोल रहे हैं और संभवत: आज के बाद आप कभी फिर हमारी आवाज न सुनें क्योंकि इस प्रमुख समाचार बुलेटिन के बाद स्टेशन तोड़ दिया जायेगा।' हम सब अर्थात् वही छहों व्यक्ति एकदम चेतनहीन से हो गये। खबर ही ऐसी थी ! एनाउन्सर कह रहा था —'कल नेता जी ने सब शिविरों का दौरा करके विदाई का एक संक्षिप्त-भाषण दिया तथा वीरता के पुरस्कार-वितरण के बाद वे काउन्ट तेराची से मिले और दूसरे दिन वह कर्नल हबीबुर्रहमान के साथ जापान के लिए रवाना हुये थे किन्तु दुर्भाग्यवश ताइहोकू के अड्डे से उठते समय एक गिद्ध हवाई जहाज से टकरा गया और जहाज नीचे गिर पड़ा। उसमें बुरी तरह से भयंकर आग लग गई। इस समय वह करीब ३००' ऊपर था। समीप के सैनिक अस्पताल के कर्मचारियों ने तुरन्त घटनास्थल पर पहुँचकर दोनों व्यक्तियों को जलते हुए यान से बाहर निकाला। उस समय नेता जी बेहोश थे। उन्हें काफी चोट आई थी और सिर पर दो बहुत गहरे घाव लगे थे। कर्नल के भी काफी चोटें आई थीं और उनके चेहरे तथा हाथ भी काफी जल गये थे। कर्नल हबीबुर्रहमान के अनुसार वे दोनों अस्पताल ले जाये गये, जहाँ ६ घन्टे बाद नेता जी की मृत्यु हो गई। उन्होंने हमारे प्रिय नेता के शव को सिंगापुर लाने की बहुत कोशिश की किन्तु अन्त में जहाज की कठिनाई के कारण ऐसा न हो सका।

अतः एवं उनका शव वहीं जला दिया गया है उनकी भस्म टोकियो के रेनकोजी नामक मंदिर में सुरक्षित रख दी गई है—बस, अंतिमविदा ! जय हिन्द !'

इसके बाद उसने क्या कहा हमने नहीं सुना; और अगर कुछ सुना था तो इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं जो बाद में उसने नेता जी के अन्तिम शब्दों को कर्नल हबीबुर्रहमान के टेप से सुनाया था—'उन्होंने मुझे पास देखकर मुझसे कहा कि कर्नल तुम्हें देखकर मुझे बहुत शांति हुई है। हमारे देश के बच्चे बच्चे से कहना कि सुभाष अपने जीवन को अन्तिम साँस तक भारतवर्ष की स्वाधीनता के लिये लड़ा और उसी के लिये, उसी की याद में, ही उसने अपनी साँस छोड़ी।'

हम सब से पैर तक सुन्न से पड़े थे। वहाँ व्यक्ति बच्चों की भांति बिलख रहे थे। मुँह बन्द था लेकिन आँखें सब कुछ कह रही थीं। हमारे बीच अब केवल सिसकियाँ ही रह गईं थीं और रह गया था वह अधूरा स्वप्न ! जो कभी हमने नेताजी के साथ रह कर देखा था। हिन्दुस्तान की आजादी का गौरवपूर्ण अध्याय, जिसे नेता जी सुभाष चन्द्र बोस ने शुरू किया था, इस दुःखजनक रूप से समाप्त हो रहा था। अन्त में कमल की ही उदास स्वर-लहरी ने वातावरण की मौनता को भंग किया—

'सब खत्म हो गया, रवीन्द्र।'

'हाँ कमल, बन्देमातरम् अधूरा रहा गया !'

और मैं सिसक पड़ा।

आधार-शिला

श्रद्धेय आचार्य चतुरसेन जी ने 'वैशाली की नगरवधू' को लेकर हिन्दी कथा साहित्य सोपान की जिस पाँचवी पैढ़ी का शिलान्यास किया था। उसके अन्तर्गत आज मैं अपनी रचना 'वन्देमातरम्' को रखते हुये अत्यन्त हर्ष एवं गर्व का अनुभव कर रहा हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह कृति इस विशाल पथ पर अपना एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगी।

हिन्दी कथा साहित्य सोपान की पांचवीं सीढ़ी और 'वन्देमातरम्'

वस्तुत: ऐतिहासिक उपन्यासों, काव्यों और कहानियों में जो ऐतिहासिक तथ्य होते हैं वे विशुद्ध ऐतिहासिक नहीं होते हैं। उनमें कल्पना और विकृति मिली हुई होती है अत: पाठकों को उनसे यह आशा कदापि न करनी चाहिये कि वे उपन्यास, काव्य या कहानी को पढ़कर ऐतिहासिक ज्ञान का अर्जन करेंगे। ऐसी पुस्तकों में तो उन्हें इतिहास के स्थान पर केवल 'इतिहास रस' की ही प्राप्ति होगी। भारतीय साहित्य में किसी समय रामायण व महाभारत को इतिहास माना जाता था, किन्तु आधुनिक गवेषणायें उनके ऐतिहासिक सत्य को स्वीकार नहीं करतीं। उनकी दृष्टि में वे केवल काव्य हैं, साहित्य हैं। इसी कारण ऐतिहासिक उपन्यासों, काव्यों व कहानियों का, इतिहास की मान्य सीमा का उल्लंघन करने पर इतिहास-कुल से विच्छेद कर दिया गया है। और यह बात केवल भारतीय साहित्य में ही नहीं वरन् पाश्चात्य साहित्य में भी है।

ऐतिहासिक साहित्य

यह कहा जा सकता है कि साहित्यकार को ऐसे ऐतिहासिक उपन्यास और कथानक लिखने से पूर्व इतिहास के विशेष सत्यों को जानना चाहिये। परन्तु ऐसा करने से वह कभी भी कोई रचना जीवन में नहीं कर सकता क्योंकि ऐतिहासिक तथ्यों का ज्ञान कभी पूरा नहीं होता, उनमें नवीन जानकारी के कारण निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। ऐसी अवस्था में फिर क्यों न साहित्यकार अपने उपन्यासों व कहानियों को चिर-सत्य के आधार पर ऐसे साँचे में ढाले जो अपने स्थान पर पूजित हों तथा उनमें एक अनिर्दिष्ट रस का समावेश हो! साहित्य के आचार्यों ने साहित्य-सृजन में नौ मूल रसों को महत्व दिया है, परन्तु उनके अलावा भी कुछ 'अनिर्दिष्ट रस' भी पाए गये हैं जिनमें एक 'इतिहास-रस' भी है।

इतिहास-रस

उपन्यासों और कहानियों में जिन पात्रों के सुख-दुख, सम्पत्ति-विपत्ति और जीवन के साहसपूर्ण परिणामों की झाँकी दिखाई जाती है, वह प्रायः ऐसी होती है जिनमें जीवन का लोभ बन्धु-परिजन और कुछ घनिष्ट व्यक्तियों के दायरे में ही समाप्त हो जाता है। मगर संसार में कुछ ऐसे भी पुरुष जन्मते हैं जिनके सुख-दुख विश्व की महत् घटनाओं से साथ सम्बन्धित होते हैं, रक्त की नदियाँ बहती हैं, प्रलय का मेघ-गर्जना के समान महाकाल की नियति-परम्परा में उनका राग-विराग अंकित होता है और कवि की भाव-कल्पना के सहारे जब उनकी कहानी मनुष्य के लिये ज्ञेय बन जाती है तो उसे देख-सुनकर मानव लोक-भाव-विमोहित हुये बिना नहीं रह सकता।

'इतिहास रस' की रचना विषयानुसार एक अथवा अनेक रसों के मिश्रण पर आधारित होती है ऐतिहासिक विषय का वृहत् आकार जब उपन्यास के रूप में परिणत किया

जाता है, तब उसका रस प्रवाह घटना चक्र के साथ कथानक में घूमता रहता है, तथा विविध अवसरों पर विविध रसों की मिश्रित रोचकता रचना में एक विशेष स्थान बनाती चली जाती है, और इसी आधार की सम्पूर्ण रचना को 'इतिहास रस' की संज्ञा दी जा सकती है। इतिहास रस के उदय का कारण कदाचित यही कहा जा सकता है। यह साधारण भी है और असाधारण भी। लेखक जब जीवन-भंग की इन घटनाओं पर विविध रसों के सम्मिश्रण से इतिहास-रस के भैरव-संहार की भेरी बजाता है तो कोटि-कोटि जनपद उन्मत्त, उद्भ्रान्त होकर लोटपोट हो जाता है लेकिन जब इस रस का 'राष्ट्रीय चेतना' का प्रबल वेग आगे की ओर ढकेलता है तो वह रोमांचित हो उठता है, क्रोधित हो उठता है और प्रलंयकारी भगवान् शिव की भाँति जटा-जूट खोल ताण्डव करने लगता है।

भारतीय साहित्य में यह मेरा पहला कदम है, जिसमें 'इतिहास-रस' के माध्यम से 'राष्ट्रीय चेतना' जागृत करने का प्रयास किया गया है। भारतीय सहित्य के

राष्ट्रीय चेतना

अन्तर्गत ऐसा बहुत-सा ऐतिहासिक साहित्य लिखा गया है जिसमें 'इतिहास' व ऐतिहासिक 'विशेष-सत्यों' को प्रधानता दी गई है और उनमें 'चिर सत्य' का लगभग अभाव हो है। ऐसे ऐतिहासिक उपन्यासकारों में श्रद्धेय डा० वृन्दावन लाल वर्मा हैं। उनके उपन्यास† इस बात के प्रमाण हैं। दूसरी ओर इतिहास-रस के जन्मदाता श्रद्धेय आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी

---

†श्रद्धेय वर्मा जी के कुछेक उपन्यासों —'मृगनयनी'—को 'चिर-सत्य प्रधान' उपन्यास कहा जा सकता है। अतएव ऐसे उपन्यासों को छोड़कर शेष सभी उपन्यास। —लेखक

हैं। उनकी 'नगरवधू' में चिर-सत्य अपने पूर्णत्व को प्राप्त हुआ है; इस कारण नगरवधू' इतिहास-रस की सर्वश्रेष्ठ कृति है। किन्तु 'वन्देमातरम्' में दोनों ही सत्य अपने-अपने स्थान पर प्रधान हैं। साथ ही वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन कर, राष्ट्रीय जागरण को ध्यान में रखते हुये ही मैंने उपन्यास में एक नवीन रस को प्रतिपादित किया है। अनिर्दिष्ट रसों में इसका भी उल्लेख किया जा सकता है 'राष्ट्र-प्रेम!'

राष्ट्र-प्रेम और इतिहास-रस का यह अनोखा मिश्रण आज, तीन-चार वर्षों की लगातार मेहनत के बाद, अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुये मुझे अत्यन्त गर्व हो रहा है। मैं कह सकता हूँ कि यह मिश्रण भारतीय हिन्दी साहित्यकारों की पिछली अन्य कृतियों में असम्भव तो नहीं, हाँ कठिन अवश्य है। ऐसा ही एक छोटा मिश्रण मैंने अपनी पूर्व कृति 'यह बस्ती है शहीदों की' में प्रस्तुत करने का प्रयास किया था, जो अपने स्थान पर अत्यधिक सफल भी हुई। यह कृति भी मैंने इसी के रचना-काल के मध्य सृजी थी।

राष्ट्र-प्रेम और इतिहास रस का मिश्रण

इस अनोखे मिश्रण को प्रस्तुत करने हेतु मैंने वह कथानक चुना है, जिसकी याद आज भी लोगों के दिलों में ताजा है। और शायद उसे भारतवासी कभी भी न भूल सकेंगे। उपन्यास का कथानक 'भारतीय आतंकवाद का इतिहास'† के उस महत्वपूर्ण अंग पर

कथानक

---

†'भारतीय आतंकवाद का इतिहास' (लेखक आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री)— यह पुस्तक स्वतंत्रता के पूर्व जब्त हो गई थी, किन्तु स्वतंत्रता के बाद पुनः संशोधित की गई। — लेखक

आधारित है, जिसके अन्तर्गत आजाद हिन्द फौज ने सुदूरपूर्व में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में गठित हो पराधीन भारत के विरुद्ध उसकी स्वतंत्रता के लिये युद्ध की घोषणा कर दी थी और उस समय उसे हमारे भारतीय नेताओं के द्वारा तनिक भी सहायता न पहुंचाई जा सकी थी। दुःख तो इस बात का है कि भारतीय इतिहास में भी नेता जी को वह स्थान नहीं दिया गया है जो कि उन्हें दिया जाना चाहिए था।

कोई माने या न माने, इतना अवश्य कह सकता हूँ कि भारत का सपूत सुभाष एक महान् नेता था; जिसे आज केवल बंगाल ही नहीं वरन् सुदूर पूर्व के वे राष्ट्र भी पूजते हैं जहाँ रहकर उस देशभक्त ने पराधीन भारत की स्वतंत्रता के लिये युद्ध की घोषणा की थी और संसार के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र ब्रिटेन की चूलें तक हिला दी थीं।

नेता जी और आजाद हिन्द फौज

अपनी पढ़ाई समाप्त कर नेता जी सीधे अपने वतन वापस आए और कांग्रेस में भारत की आजादी हासिल करने के उद्देश्य से प्रवेश किया। उस समय अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे और साथ ही भारत में भी। कांग्रेस में रहने पर भी उनके विचार महात्मा गांधी से पूर्णतः पृथक् थे। महात्मा गांधी अपने अहिंसा के सिद्धान्त पर अडिग थे, तो नेता जी का विचार था, इस प्रकार स्वतंत्रता की आशा करना निरी मूर्खता है। बिना युद्ध के भी किसी राष्ट्र ने स्वतंत्रता प्राप्त की है ? वे इसी ऊहापोश में थे कि १६३५ के बाद द्वितीय विश्वव्यापी महायुद्ध के बादल विश्व पर मँडराने लगे। उस समय की स्थिति इतनी डाँवाडोल थी कि कुछ कहा नहीं जा सकता था। अब नेता जी के सामने केवल दो ही मार्ग

थे। पहला, महायुद्ध के शुरू होते ही हिन्दुस्तान के अन्य राजनीतिक नेताओं के साथ वे भी एक लम्बे अर्से के लिये जेल में ठूंस दिये जायें; या फिर यहाँ से भागकर इंग्लैण्ड के दुश्मनों से जा मिलें ताकि सेना संगठित कर वे इस कार्य को सम्पन्न कर सकें।

अन्तिम रास्ते को अपनाने से पूर्व वह गांधी जी के पास गये और गोरीबाल्डी तथा जनरल फ्रैंको का उदाहरण देते हुये उन्होंने अपनी योजना उन्हें बताई, 'यदि सब नेताओं को जेल में बन्द कर दिया गया, तो उससे क्या लाभ होगा? हिन्दुस्तान की आजादी के लिये एक ही मार्ग है कि कोई नेता यहाँ से भाग निकले और हिन्दुस्तान के बाहर जाकर वह एक सेना संगठित करने के बाद हिन्दुस्तान पर आक्रमण कर दे।' इस पर गांधी जी ने मुस्कुराते हुये कहा—'सुभाष पहले तो मुझे इस पर विश्वास नहीं है। लेकिन यदि कहीं ऐसा हो गया और आप देश की आजादी हासिल करने में सफल हो गये तो मैं पहला व्यक्ति होऊंगा जो आपको बधाई देगा।'

इस वार्तालाप से नेता जी का साहस दुगुना हो गया, किन्तु उसी समय महायुद्ध के छिड़ जाने से सभी राजनीतिक नेताओं के साथ नेता जी भी जेल में ठूंस दिये गये। वहाँ बहुत सोच-विचार कर नेता जी ने भागने का निश्चय कर भूख-हड़ताल प्रारम्भ कर दी। पहले तो कोई परिणाम न हुआ, किन्तु अन्त में लगभग बारह दिन बाद नेता जी की हालत बहुत चिन्ताजनक हो गई और उन्हें रिहा कर दिया गया। रिहा होकर वे घर लाये गये। घर पर भी पुलिस और गुप्तचरों के लगभग ६२ आदमी हर समय तैनात रहते थे। अपने सोने के कमरे में वह करीब ४० दिन तक बन्द रहे और एक दिन जब वह कमरा खोला गया तो वह गायब हो चुके थे।

यह आज तक एक रहस्य बना हुआ है कि वह कैसे घर से भागकर काबुल पहुँचे ?

काबुल में जर्मन-राजदूत की सहायता से वह जर्मनी में हर्र हिटलर से मिले और उसके सामने जर्मन अधिकृत यूरोप में रहने वाले हिन्दोस्तानियों की सेना संगठित करने का प्रस्ताव पेश किया। इस प्रस्ताव को हर्र हिटलर ने स्वीकार कर लिया और सन् १९४१ के जनवरी मास में वहीं आजाद हिन्द फौज 'फ्री इण्डिया लेज़ान' के नाम से खड़ी की गई। इसके बाद पूर्वी एशिया में युद्ध की आग भड़कने पर आपने यही प्रस्ताव जर्मन स्थित जापानी राजदूत के समक्ष रक्खा। यह प्रस्ताव जापान सरकार को भी बहुत पसन्द आया और यह शुभ-कार्य तुरंत प्रारम्भ कर दिया गया।

पहली बार आजाद हिन्द फौज का संगठन श्री रास बिहारी बोस के नेतृत्व में किया गया जो कुछेक कारणों से असफल हो गई और इसका पुर्नसंगठन किया गया तथा जब नेता जी जुलाई १९४३ में सिंगापुर पहुँचे तो इसका नेतृत्व उनके बरद्-हस्तों में सौंप दिया गया। २१ अक्तूबर को कमान संभाल-कर नेता जी ने सिंगापुर की कैथे इमारत में 'अस्थायी आजाद हिन्द सरकार' को स्थापना को और २५ अक्तूबर को ब्रिटेन के खिलाफ़ युद्ध की घोषणा कर दी गई।

सन् १९४२ में नेता जी की कमान में शुरू किया गया भारत का यह द्वितीय स्वतंत्रता संग्राम तीन वर्षों में ही, १६ अगस्त १९४५ को, समाप्त हो गया—और इस संग्राम का वह महान् उद्देश्य, जिसकी पूर्ति के लिये आजाद हिन्द फौज का निर्माण हुआ था, अप्राप्य ही रह गया।

टोकियो के लिए सैगोन से रवाना होते समय नेता जी के साथ कर्नल हबीबुरेहमान थे तथा आजाद हिन्द फौज ने

नेता जी का स्वर्गवास

'समर्पण' दे दिया था। नेता जी की मृत्यु के सम्बन्ध में कर्नल हबीबुरहमान द्वारा दिये गये वक्तव्य के अनुसार, फारमोसा के हवाई अड्डे से उठते समय यान किसी गिद्ध से टकराकर, तीन सौ फिट की ऊँचाई पर से एक पहाड़ी ढाल पर गिर पड़ा और उसमें आग लग गई। कर्नल का कहना है कि 'वे यान के भूमि से स्पर्श करने के पूर्व ही यान से कूद गये थे जिससे उनके हाथ तथा शरीर के अन्य अंगों में काफी चोटें आईं ·· और सुलगते हुये यान में से उन्होंने नेता जी को खींचकर बाहर निकाला जो उस समय काफी आहत एवं अचेत थे उनके सिर पर दो गहरे घाव थे और शरीर के अन्य भागों में भी गम्भीर चोटें आई थीं।'

परन्तु कर्नल हबीबुरहमान का यह वक्तव्य अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होता है। साथ ही कर्नल हबीबुर्रहमान का यह तर्क सन्देहास्पद भी प्रतीत होता है, क्योंकि वह यान 'डकोटा यान' था जिसे ३००' की ऊँचाई से धरती तक आने में केवल कुछ ही मिनट लगे होंगे। अतएव इतने कम समय में एक व्यक्ति का यान से कूद पाना और चेतन रहना अविश्वसनीयसा लगता है।

इस उपन्यास के पूर्ण होने के काफी समय पश्चात् मुझे एक सम्मानित पाठिका कु० केसर के सहयोग के फलस्वरूप दो पुस्तकें * प्राप्त हुयीं जिनमें उस जाँच आयोग की रिपोर्ट के

---

*जापानी पुस्तक '10 Years of the Great Hurricance' एवं आत्माराम एंड संस द्वारा प्रकाशित तथा श्री हारेन शॉ (Mr. Harren Sha) द्वारा लिखित 'The Gallent End of Neta Ji Subhas Chandra Bose.'

—लेखक

विषय में पर्याप्त सामग्री प्रकाशित थी जो कि स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरान्त भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्वर्गीय पंडित जवाहर लाल नेहरू ने नेता जी की मृत्यु सम्बन्धी भ्रमों के निवारणार्थ गठित किया था। इस आयोग के अन्तर्गत 'आजाद हिन्द फौज' के कुछ प्रमुख व्यक्ति, जिनमें मेजर जनरल श्री शाहनवाज खाँ का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, भी सम्मिलित थे।

उस आयोग द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट संक्षेप में इस प्रकार है † —

'नेता जी जापानी 'डकोटा' यान पर यात्रा कर रहे थे, जो १७ अगस्त को मध्याह्न के कुछ समय पूर्व ही फारमोसा के तायहोकू Taihoku नामक सैनिक हवाई अड्डे पर उतरा और जब कुछ देर बाद उसने पुनः उड़ान भरी तो लगभग ३००' की ऊँचाई पर दुर्भाग्यवश एक गिद्ध से टकराकर ध्वस्त हो गया दुर्घटनास्थल चूँकि अड्डे के समीप था अतएव वहाँ के अधिकारियों ने तत्काल वहाँ पहुँचकर दोनों व्यक्तियों — नेता जी एवं कर्नल हबीबुर्रहमान—को लपटों के मध्य घिरे यान से खींचकर किसी प्रकार बाहर निकाला और समीपस्थ एक सैनिक अस्पताल में ले जाया गया। इस अस्पताल का नाम 'द तायहोकू साउथ गेट मिलेट्री हास्पिटल' था। दोनों व्यक्तियों को वहाँ के जनरल वार्ड नं० ६ में क्रमशः पलंग नं० १० और ११, भर्त्ती कर दिया गया तथा त्सान पी शा (Tsan Pi Sha) नामक एक नर्स उनके लिए नियुक्त कर दी गई।'

---

† बरेली से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'एकान्त' के मई १९६५ के अंक में प्रकाशित लेखक के लेख 'क्या नेता जी सुभाष चन्द्र बोस जीवित हैं ?' से उद्धृत।

आयोग के सम्मानित सदस्यों एवं नर्स तसान पी शा के बीच हुये प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं—

—क्या आप नेता जी को पहचानती हैं ?

—बहुत अच्छी तरह से। वैसे उनके चित्र प्राय: पत्रों में प्रकाशित होते रहे हैं और इसके अतिरिक्त वे यहाँ भी पहले कई बार आ चुके हैं।

—दुर्घटना के समय उनके साथ कोई अन्य व्यक्ति भी था ?

—जी हाँ! एक व्यक्ति और था दुबला, लम्बा-सा; जो शायद उनका अंगरक्षक प्रतीत हो रहा था।

- आप उसे पहचानती तो होंगी ?'

—मैंने उन सज्जन को केवल एक ही बार [अर्थात् उसके पूर्व नहीं] देखा था —और यदि मेरी स्मरण-शक्ति मुझे धोखा नहीं दे रही है तो उन सज्जन का नाम कदाचित् कर्नल हबीबुर्रहमान था।

—क्या कर्नल भी आहत हुए थे ?

—जी हाँ! जिस समय वे दोनों यहाँ लाए गए थे, दोनों ही अचेत थे। कर्नल के दोनों हाथों के अग्र-भागों के अतिरिक्त उनका शरीर भी कई स्थानों पर झुलसा हुआ था। नेता जी की अवस्था कर्नल से कहीं अधिक चिन्ताजनक थी। उनका सम्पूर्ण शरीर तो झुलसा हुआ था ही; परन्तु इससे अधिक चिन्ता की बात तो यह थी कि उनके सिर पर दो बहुत गहरे घाव थे जिनसे निरन्तर अबाध गति से रक्त-प्रवाह हो रहा था।

—दोनों को भर्ती कहाँ किया गया ?

—जनरल वार्ड ६; पलँग नं० १० और ११।

—फिर ?

— नेता जी की इस स्थिति को सुधारने हेतु अचेतनावस्था में ही उनका आपरेशन किया गया, लेकिन ...

—लेकिन क्या ? आगे कहिए, क्या हुआ ?

— लेकिन दुर्भाग्यवश आपरेशन असफल रहा !

— अर्थात् वे पल भर के लिये भी होश में नहीं आए और उसी अचेतनावस्था में ही उन्होंने प्राण त्याग दिए ?

— जी नहीं ! बीच में उन्हें एक वार होश आया था। होश में आते ही उन्होंने कर्नल को पूछकर उनसे अपनी भाषा में कुछ कहा। दुर्भाग्यवश मैं उस भाषा को समझ न सकी।

—अच्छा, अस्पताल में वह किस समय लाए गए थे ?

— दोपहर को; और लगभग छः घंटे के बाद ही नेता जी की मृत्यु हो गई। कर्नल ने उनके शव को सिंगापुर ले जाने की बहुतेरी कोशिशें कीं; परन्तु डॉक्टर ने उन्हें दो कारणों से मना कर दिया : प्रथम तो सिंगापुर अँग्रेजों के कब्जे में आ चुका था और दूसरे यान-यात्रा के लिए कर्नल का स्वास्थ्य कतई योग्य न था, उनके प्राणों को खतरा हो सकता था। विवश होकर कर्नल को अपने इस विचार को बदलना पड़ा और ...

— और फिर ?

— फिर चूंकि शव को अधिक दिन तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता था, अतएव शव की अन्त्येष्टि वहीं पर हुई।

— आप उस समय कहाँ थीं ?

— अस्पताल का हर कर्मचारी नेता जी के अंतिम दर्शनों के लिए उस समय चिता के समक्ष उपस्थित था। हमारे ही सामने इस महान् आत्मा का शव अग्नि-शिखाओं के मध्य

लुप्त हो गया। बाद में, कर्नल स्वयं उनकी भस्म को टोकियो ले गए थे।

इस प्रकार उक्त आयोग की रिपोर्ट से नेता जी की मृत्यु से सम्बन्धित सभी विवादों की अन्त्येष्टि हो जाती है।

कर्नल हबीबुर्रहमान के अनुसार, कर्नल ने नेता जी की अस्थि भस्म अपनी देख-रेख में ही टोकियो स्थित रेनकोजी* नामक मंदिर में रख दी थी। उनके

महान् पुरुष की अन्तिम याचना

अनुसार भारतवासियों को नेता जी ने मृत्यु के पूर्व जो सन्देश पहुँचाने का आदेश दिया था, वह इस प्रकार है "कर्नल, हिन्दुस्तान जाकर वहाँ के हर देशवासी से कहना कि सुभाष अपने जीवन की आखिरी साँस तक अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता के लिए लड़ा— और उसी को पाने के लिए कोशिश करते हुए ही उसने अपना दम तोड़ा है।"

ये एक महान् स्वतंत्रता-सेनानी, महान् देशभक्त के हृदय की अनन्त गहराइयों से उद्भासित शब्द हैं, जिनके पश्चात् वह महान् आत्मा हमसे सदैव के लिए बिछुड़ गई! आज हमें उस सपूत के बलिदान पर गर्व है जिसके सम्मान पर आज चन्द स्वार्थी लोगों के द्वारा वज्राघात होते देख मेरी लेखनी का हृदय विक्षोभ से भर उठा: उसी विक्षोभ का परिणाम प्रस्तुत कृति है।

प्रस्तुत उपन्यास के अन्तर्गत आए हुये पात्रों के सम्बन्ध

---

*स्थानीय दैनिक पत्र 'स्वतंत्र भारत' का २२ फरवरी १९६० का अंक।

— लेखक

में मुझे इतना ही कहना है कि केवल नेताजी, मेजर जनरल शाहनवाज़ खाँ, कर्नल ढिल्लन तथा जनरल भोंसले तथा अन्य आज़ाद हिन्द फौज से सम्बन्धित पात्रों के अतिरिक्त सभी पात्र पूर्णतः मेरे मस्तिष्क का परिणाम हैं - यहाँ तक कि मैं स्वयं भी एक काल्पनिक पात्र के रूप में उपन्यास में उपस्थित हूँ। वास्तव में आज़ाद हिन्द फौज मेरे लिए एक स्वप्न की भांति है, क्योंकि उस समय अर्थात् इस युद्ध की समाप्ति तक, तो मेरा जन्म भी नहीं हुआ था ! मेरी जन्मतिथि तो ७ जनवरी १९४६ है फिर मैं कैसे उस महान् पुरुष द्वारा नियंत्रित सेना में रहकर कार्य कर सकता था ? परन्तु इस समय एक काल्पनिक पात्र के रूप में आज़ाद हिंद फौज के नियत्रण में, उपन्यास के अंतर्गत रहकर भारत की स्वाधीनता के हेतु कुछ कर गुज़रने के लोभ का संवरण न कर पाया। अतएव पाठकों को सत्य और असत्य, वास्तविकता एवं काल्पनिकता के मध्य विभाजन-रेखा खींचते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

कल्पना और वास्तविकता

'वन्देमातरम्' के अन्तर्गत प्रस्तुत घटनाओं के विषय में भी मुझे केवल इतना ही कहना है कि केवल कुछेक घटनाएँ ही ऐसी हैं जिनके प्रणयन हेतु मुझे कल्पना का सहारा लेना पड़ा है, अन्यथा अवशिष्ट समस्त घटनाएँ पूर्णरूपा से सत्य एवं वास्तविकता पर आधारित हैं।

क्षमा-याचना

प्रकाशन की शीघ्रता के कारण प्रूफ पढ़ने में अनेकानेक त्रुटियाँ रह गई हैं, जिसके पूर्ण उत्तरदायित्व का सेहरा मेरी अस्वस्थता के सिर पर बँधना चाहिए। अतएव ऐसी त्रुटियों के लिए मैं पाठकों से क्षमा प्राप्त करने का इच्छुक हूँ एवं आशा करता हूँ कि वे

सहृदयतापूर्वक मेरी इस भयंकर त्रुटि को बाल-अपराध समझकर क्षमा कर देंगे।

प्रस्तुत उपन्यास 'वन्देमातरम' की रचना में मुझे अनेक विद्वान् मार्तण्डों का वांछित सहयोग प्राप्त हुआ है। मैं उन

आभार

सभी ज्ञात-अज्ञात विद्वानों का—विशेष रूप से: माननीय मेजर जनरल श्री शाहनवाज खाँ, उपमंत्री, कृषि एवं खाद्य मंत्रालय, भारत सरकार; माननीय श्री तात्साऊ हयाशिदा मेरे एक सम्मानित जापानी मित्र; श्री हरी शंकर जलोत्रा; कु० केसर—एक सम्मानित पाठिका एवं छोटी बहन चि० गीता श्रीवास्तव तथा अन्य अनेक विद्वानों हृदय से आभारी हूं, जिनके पर्याप्त सहयोग के फलस्वरूप ही यह कृति पूर्णत्व को प्राप्त हो सकी है।

अन्त में, मैं अपने पाठकों से पुनः निवेदन करना चाहूँगा कि वे कृपया पूर्ववत् प्रस्तुत उपन्यास के विषय में अपनी सम्मतियाँ भेजकर मुझे कृतार्थ करें। धन्यवाद,

जयहिन्द।

रवीन्द्र नाथ वहोरे 'अज्ञा...'

दीपावली १६६६
६, बहोरन टोला, चौक,
लखनऊ—३;
उत्तर-प्र...